THE BOOK WAS DRENCHED

ग़ालिब के पत्र

[दूसरा भाग]

लिप्यन्तरकार तथा सम्पादक
डाक्टर श्रीराम शर्मा

हिन्दुस्तानी एकेडेमी
इलाहाबाद

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186777

UNIVERSAL
LIBRARY

ग़ालिब के पत्र

[दूसरा भाग]

लिप्यन्तरकार तथा सम्पादक

डाक्टर श्रीराम शर्मा

हिन्दुस्तानी एकेडेमी

इलाहाबाद

प्रकाशकीय

ग़ालिब के पत्र भारतीय साहित्य की निधि हैं। किसी भी लेखक अथवा साहित्यकार के वास्तविक रूप और आन्तरिक चरित्र, जो उसके व्यक्तित्व के मूल्यांकन का प्रधान साधन हैं, उसके निजी पत्रों से अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर और उत्तम रूप में प्रकट होते है। मूर्धन्य साहित्यकारों के वैयक्तिक पत्रों में उनके प्रकृत और सहज रूप का परिचय मिलता है। इनसे उन्हें पूर्णरूप से परिचित होने का अवसर प्राप्त होता है। मिर्ज़ा असदुल्ला बेग 'ग़ालिब' अपने युग के सर्वोत्कृष्ट साहित्यकार थे। देश की भाषा और साहित्य समुन्नत हो रही थी। देश म बड़े-बड़े परिवर्त्तन हो रहे थे। वे अपने युग मे फ़ारसी के परम श्रेष्ठ और अद्वितीय साहित्यकार थे। उर्दू में लिखना उन्होंने अपने मित्रों के आग्रह पर शुरू किया था। उस भाषा में भी उन्हें वही स्थान और सफलता मिली जो फ़ारसी में मिली थी। उस समय वह स्वयं उर्दू को हिन्दी कहते थे। ग़ालिब के पत्रों के संकलन का नागरी लिप्यन्तर हिन्दी साहित्य की गौरव वृद्धि करेगा। लिप्यन्तरकार ग़ालिब के इस पत्र-साहित्य को विस्तृत क्षेत्र मे ले आने के लिए श्रीराम शर्मा तथा श्रीराम निवास शर्मा बधाई के पात्र हैं।

ग़ालिब के पत्र का प्रथम-खण्ड सन् १९५९ में प्रकाशित हुआ था। कागज और छपाई आदि के मूल्यों में वृद्धि हो जाने के कारण द्वितीय खण्ड का मूल्य प्रथम खण्ड की अपेक्षा कुछ अधिक रखना पड़ रहा है। विद्वानों और रसज्ञ-पाठकों ने प्रथम-खण्ड स्वागत किया था। उनके हाथों मे यह द्वितीय खण्ड रखते हुए हिन्दुस्तानी एकेडेमी को प्रसन्नता है।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी,
इलाहाबाद

विद्या भास्कर
सचिव

निवेदन

मिर्ज़ा असदुल्लाहख़ाँ 'ग़ालिब' सन् १८४८ ई० के आसपास हिन्दी में पत्र लिखने लगे। सब से पुराना पत्र ९ मार्च, १८४८ का लिखा हुआ है। १५ फरवरी, १८६९ को ग़ालिब का देहान्त हुआ। मृत्यु से कुछ समय पहले तक मित्रों और शिष्यों को पत्र लिखते रहे। २०-२१ वर्ष की अवधि में ग़ालिब ने सैकड़ों पत्र लिखे। पत्र क्या लिखते थे, मित्रों से बात-चीत करते थे।

अब तक ग़ालिब के जितने हिन्दी पत्रों का पता चला है, उन सब का समावेश इस पुस्तक के दोनों भागों में किया गया है। एक व्यक्ति के नाम पर लिखे गए पत्र तिथि-क्रम से संकलित हैं। अब तक उर्दू में भी ये पत्र एक ही स्थान पर उपलब्ध नहीं हैं। ग़ालिब ने स्थान-स्थान पर अपने तथा अन्य कवियों के जो फ़ारसी पद उद्धृत किये है, उनका हिन्दी अनुवाद यथास्थान दिया गया है।

द्वितीय भाग के सम्पादन में निम्नलिखित उर्दू-पुस्तकों से सहायता ली गई है।

(१) **नादिराते ग़ालिब**—सम्पादक, आफ़ाक़ हुसेन 'आफ़ाक़', प्रकाशक, इदारए नादिरात, कराची (मई १९४९ ई०)।

(२) **खुतूते ग़ालिब** (दोनों भाग)—सम्पादक, ग़ुलाम रसूल 'मेहर' प्रकाशक-किताब मंजिल, लाहौर (प्रकाशन की तिथि मुद्रित नहीं)।

इस खण्ड के आरम्भ में ग़ुलाम नबी 'हक़ीर' के नाम लिखे गये पत्र संकलित हैं। इन पत्रों से ग़ालिब के जीवन से सम्बन्धित बहुत-सी अज्ञात घटनाओं का पता चलता है। ग़ालिब के जीवन-चरित्र लिखने वालों ने दो-चार स्थलों पर इन पत्रों के उद्धरण दिये हैं।

ग़ालिब के इन पत्रों का हिन्दी और उर्दू, दोनों के लिये समान रूप से महत्व है। लल्लूलाल, मीर अम्मन, इंशा और सितारे हिन्द शिवप्रसाद तथा भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के काल को ये पत्र जोड़ते हैं। गालिब इस शृंखला की बीच की कड़ी है। पत्र-साहित्य में इन पत्रों का अपना स्थान है। भाषा और साहित्य के अतिरिक्त भी इन पत्रों का अपना महत्व है। इन पत्रों के माध्यम से पाठक उन्नीसवी शती के उत्तरार्द्ध के साथ सम्पर्क स्थापित कर सकता है। उन दिनों भारतीय जनता साहित्य, संस्कृति, समाज, आर्थिक-व्यवस्था सभी क्षेत्रों मे संघर्ष कर रही थी। ग़ालिब के समय मे केवल एक राजवंश का ही पतन नहीं हुआ, पुरानी सामाजिक-व्यवस्था पूरी तरह टूट गई। ग़ालिब जैसे महाकवि ने इस युगान्तर को अपनी सम्पूर्ण भावुकता के साथ इन पत्रों में चित्रित किया है। कोई भी पत्र छपने के लिये नही लिखा गया था। इसीलिए इन पत्रों से कवि की, कवि के माध्यम से तत्कालीन समाज की निर्बलता और शक्ति दोनों का पता चलता है।

उर्दू को नागरी लिपि मे रूपान्तरित करने मे कुछ बाधाएँ हैं। नागरी-लिपि मे अन्य भाषाओं को व्यक्त करने की सुविधा है, किन्तु लिपि का आधार ध्वनि ही नहीं हैं। पढ़ते-लिखते समय रूढ़ि से भी सहायता ली जाती है। फारसी-अरबी के शब्दों और मुहावरों को ज्यों का त्यों व्यक्त करने की रूढ़ि अब तक नागरी लिपि में नही है। इधर नागरी लिपि में उर्दू के अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं, किन्तु लिपि के सम्बन्ध में सर्वमान्य संकेतों के अभाव में रूपान्तकार अपने विवेक से ही काम लेता रहा है। उदाहरण के लिए 'इस्बात (अर० = प्रमाणित करना) को 'इसबात' लिखना चाहिये या 'इस्बात', हिन्दी की प्रवृत्ति के अनुसार 'इसबात' लिखने से भी उच्चारण 'इस्बात' ही किया जाएगा। ऐसे स्थलों पर हिन्दी की उच्चारण प्रणाली का अनुसरण किया जाये अथवा उर्दू का ? फिर उर्दू लिपि में स्वर-व्यंजन की स्थिति बहुत कुछ अनिश्चित है।

नागरी में इस प्रकार के विकल्प के लिए कोई स्थान नहीं है। लिपि सम्बन्धी ऐसे ही अनेक प्रश्न हैं।

लिप्यन्तरकार की अपेक्षा कम्पोजीटर और प्रूफ़ पढ़ने वाले की कठिनाइयाँ अधिक हैं। फ़ारसी-अरबी के शब्दों में दोनों को विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है। कई बार अभ्यस्त आँखें तथा हाथ इस सावधानी पर विजय पा जाते हैं। पुस्तक में छापे की जो थोड़ी-सी त्रुटियाँ दिखाई देती हैं, वे इसी लिए क्षम्य हैं। अनावश्यक विलम्ब से बचने के लिए प्रूफ़ प्रयाग में ही देखा गया है। इसलिये भी कुछ ग़ल्तियाँ रह गई हैं। अन्त में जो शुद्धि-पत्र दिया गया है, उससे पाठक को सहायता मिलेगी। कुछ त्रुटियाँ ऐसी है, जिनका उल्लेख शुद्धि-पत्र में नहीं है। ख और ख़ में कई स्थलों पर भ्रम होता है। 'व' और 'ब' भी कई स्थलों पर एक-दूसरे के लिये छपे हैं। 'क़' आदि के नुक़्ते अनावश्यक स्थलों पर छप गये हैं और कुछ आवश्यक स्थलों पर उनका उपयोग नहीं हुआ है। इन सबका उल्लेख शुद्धिपत्र में नहीं हो सकता था।

लगभग १२०० पृष्ठ की इस पुस्तक का प्रकाशन हिन्दुस्तानी एकेडेमी उत्तर-प्रदेश (इलाहाबाद) जैसी सस्था ही अपने हाथ में ले सकती थी। एकेडेमी के पदाधिकारियों के लिये केवल कृतज्ञता व्यक्त करना पर्याप्त नहीं है। एकेडेमी के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री आदरणीय डाक्टर धीरेन्द्र वर्मा और स्वर्गीय राहुल साकृत्यायन की प्रेरणा से ही दूसरा भाग इतनी जल्दी तैयार हो सका। एकेडेमी के सहायकमन्त्री डाक्टर सत्यव्रत सिन्हा ने इस पुस्तक के प्रकाशन में जो रुचि ली है, उसके लिये धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

गाँधी गाजार
हैदराबाद–२
गांधी जयन्ती १९६३ ई०

श्रीराम शर्मा

पत्र-सूची

१—मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम	..	१
२—मुंशी अब्दुललतीफ़ के नाम	..	१२२
३—नवाब अमीनुद्दीन अहमदख़ाँ के नाम	..	१२४
४—नवाब ज़ियाउद्दीन अहमदख़ाँ के नाम	..	१३३
५—मिर्ज़ा क़ुर्बानअलीबेगख़ाँ 'सालिक' के नाम	..	१३५
६—मिर्ज़ा शम्शादअलीबेगख़ाँ 'रिज़्वी' के नाम	..	१३७
७—मिर्ज़ा बाक़िरअलीख़ाँ 'कामिल' के नाम	..	१४०
८—मीर सरफ़राज हुसेन के नाम	..	१४३
९—मीर अफ़ज़लअली उर्फ़ मीरन के नाम	..	१४७
१०—ख़ाजा ग़ुलामग़ौसख़ाँ 'बेख़बर' के नाम	..	१५०
११—हकीम ज़हीरुद्दीन अहमदख़ाँ के नाम	..	१९१
१२—नवाब हुसेन मिर्ज़ा के नाम	..	१९३
१३—नवाब सज्जाद मिर्ज़ा के नाम	..	२०७
१४—नवाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ के नाम	..	२०९
१५—नवाब इब्राहीमअलीख़ाँ के नाम	..	२२१
१६—हकीम सयद अहमदहसन मौदूदी के नाम	..	२२६
१७—तफ़ज्जुल हुसेनख़ाँ के नाम	..	२३८
१८—मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' के नाम	..	२३९
१९—मीर हबीबुल्लाह् 'ज़का' के नाम	..	२७९
२०—चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम	..	३०४
२१—साहबे आलम मारहरवी के नाम	..	३६८

२२—शाह आलम के नाम .. ३७९
२३—अब्दुल रज़्ज़ाक़ 'शाकिर' के नाम .. ३८३
२४—शहज़ादा बशीरुद्दीन के नाम .. ४०१
२५—मुंशी हीरासिंघ के नाम .. ४०९
२६—बिहारीलाल 'मुश्ताक़' के नाम .. ४११
२७—केवलराम 'होशयार' के नाम .. ४१४
२८—मौलवी करामतअली के नाम .. ४१७
२९—मुस्तफ़ाख़ाँ बहादुर 'शेफ़्ता' के नाम .. ४२४
३०—गुलाम बिस्मिल्लाह् के नाम .. ४२७
३१—अज़ीज़ुद्दीन के नाम .. ४२८
३२—मुफ़्ती सैयद मुहम्मद अब्बास के नाम .. ४२९
३३—अब्दुलग़फ़ूरख़ाँ 'निसाख' के नाम .. ४३१
३४—मर्दानअलीख़ाँ 'राना' के नाम .. ४३४
३५—हकीम गुलाम मुर्त्तज़ाख़ाँ के नाम .. ४३५
३६—हकीम गुलाम रज़ाख़ाँ के नाम .. ४३६
३७—प्यारेलाल 'आशोब' के नाम .. ४३८
३८—गोबिन्दसहाय के नाम .. ४४२
३९—शाह करामत हुसेन 'हमदानी' बिहारी के नाम .. ४४४
४०—'सफ़ीर' बिलगिरामी के नाम .. ४४७
४१—अब्दुलहक़ के नाम .. ४५०
४२—शेख़ लतीफ़ अहमद बिलगिरामी के नाम . ४५१
४३—मौलवी ज़ियाउद्दीनख़ाँ 'ज़िया' के नाम .. ४५३
४४—सूफ़ी मुनीरी के नाम .. ४६२
४५—मुंशी नवलकिशोर के नाम .. ४६४
४६—मुहम्मद हुसेनख़ाँ के नाम .. ४६६

४७—मौलवी नेमान अहमद के नाम .. ४६९
४८—नवाब कल्बे अलीखाँ के नाम .. ४७६
४९—अज्ञात व्यक्तियों के नाम .. ४७८
५०—परिशिष्ट—पत्र-लेखक .. ४८३
५०—पत्र-प्राप्तकर्त्ता .. ४९०
५१—शुद्धि-पत्र .. ५०६

*

मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम

१

(६ मार्च १८४८ ई०)

साहब बन्दा,

मियाँ नसीमुल्लाह यहाँ आये। और वो हिकमत[1] इमामुद्दीनख़ाँ से और फलसफ़ा[2] मौलवी सद्रुद्दीन से पढ़ते थे, नागाह अज़ रू ए इज़्तिरार[3] दल को चले गये। वक़्ते विदा कहते थे कि वालिद[4] की बीमारी की ख़बर वतन से आई है, नाचार[5] मैं जाता हूँ और क़ुतुब दर्सी[6] यहीं छोड़े जाता हूँ। बाद हुसूले इफ़ाक़ते मरीज़[7] फिर आऊँगा। आज तक वो मुआवदत[8] कर कर नहीं आये। आप अज़ रहे मेहरबानी उनका हाल और उनके वालिदे माजिद[9] की सेहत व मर्ज़ का हाल मुंशी हरगोपाल 'तफ़्ता' से मालूम मुझको लिखिये। ज़रूर ज़रूर फ़क़्त।

२

(१ जून १८४८ ई०)

बन्दा पर्वर,

बहुत दिनों से मेरा ध्यान आपमें लगा हुआ था। बारे, आपके ख़त आने से बहुत ख़ुशी और फ़रहत[10] हासिल हुई। ये आपने क्या लिखा है कि मैं बदायूँ

---

१. चिकित्सा शास्त्र। २. दर्शन शास्त्र। ३. जल्दी के कारण। ४. पिता। ५. विवश। ६. पाठ्य पुस्तकें। ७. रोगी के स्वास्थ्य लाभ के पश्चात्। ८. लौटना। ९. पूज्य पिता। १०. हर्ष।

के हकीम की दवा कर रहा हूँ। तेरी बताई हुई दवा अभी नही कर सकता। आप गौर तो कीजिए मैंने तो दवा नही बताई। एक तरकीब पानी के मुदब्बर[1] करने की अर्ज़ की है।

साहबाने अमाराजे सादाविए मुज़मिना[2] को उस पानी का पीना नफ़ा करता है। और नफ़ा उसका बरसो में ज़ाहिर होता है और उस पानी के इस्तेमाल के ज़माने मे दवा को मुमानियत नही। जो दवा चाहिए, खाइए। जो शिज़ा चाहिए तनावुल फ़रमाइए[3]। सिर्फ़ ये पानी कब दवा हो सकता है? आप शौक़ से इस पानी को शुरू कीजिए और दवा तबीब[4] की, बदस्तूर किये जाइए। और शिज़ा मुआफ़िक़ तबीब के खाये जाइए। पानी जब पीजिए तब यही पानी पीजिए। जहाँ जाइए आदमी को हुक्म कीजिए कि एक सुराही उस पानी की ले आवे और भी आपक खयाल मे रहे कि अगर नागाह कोई ज़रूरत लाहिक़[5] हो और ये पानी मौजूद न हो और आप बहस्बे पानी ज़रूरत[6] पी लेवे तो भी महले अंदेशा[7] नही है। मुंशी हरगोपाल सतूदा खिसाल[8] के बाब मे जो कुछ लिखा था, मालूम हुआ। खुदा की क़सम, मुझको उनसे हरगिज़ मलाल नहीं हुआ। बल्के मुझको ये ग़म था कि कहीं वो अपनी ग़लतफ़हमी से मुझसे मलूल[9] न हुए हो। बहरहाल उस गुफ़्तगू मे मुंशी साहब ने एक फ़िक़्रा[10] अपनी मदह[11] मे बढ़वा लिया, याने-सिपहरे सुख़नरा माहे दो हफ़्ता[12]। आप उनसे मेरा सलाम कहिएगा। और ये कहिएगा कि मैं तुमसे राज़ी और खुश हूँ। ये चाहता हूँ कि तुम मुझसे राज़ी रहो और मुझको अपना खिदमतगुज़ार समझो। रुबाइयां[13] आपकी भेजी हुई मेरे पास

---

१. शुद्ध। २. पुराने वातरोगी। ३. खाइए। ४. चिकित्सक। ५. आवश्यक। ६. आवश्यकतानुसार। ७. आशंका का स्थल। ८. प्रशंसित। ९. दुःखी। १०. वाक्य। ११. प्रशंसा। १२. काव्य गगन के पूर्णचन्द्र। १३. चार चरण की कविता; प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ पंक्ति में तुक रहता है, रुबाई के चौथे चरण में प्रायः कोई सार्वभौम सत्य उद्धृत किया जाता है।

मौजूद है, बाद इस्लाह[1] के आप के पास भेज दूंगा। घबराइए नही और खातिर जमा रखिए।

मुग़ाँ शेवए बानुवाँ-बानू बादशाह की बीबी को कहते हैं और अलिफ़ नून (आँ) ज़मा[2] का है याने बीबियाँ। मुग़ाँ शेवा की वह तरकीब है जो गुले रुख़्सार[3] और माहे जबी[4] की तरकीब है। याने वो शख्स कि जिसका रुख़्सार मानिन्द गुल के है और पेशानी चाँद की-सी है और शेवा[5] मुग़ाँ[6] का-सा है। मुग़ आतिशकदा का कारफ़रमा और चूंकि बादशाहा ने पारस आतिश परस्त थे तो वो खिदमत आतिशकदो की अमायद[7] व अकाबिर[8] व अशराफ़[9] व उल्मा[10] को देते थे। और शराब को चूंकि वो बहुत उम्दा चीज़ और पाक और मुतबर्रिक[11] जानते थे और हर सिफ़ला[12] और फिरोमाया[13] को नही पीने देते थे। ये भी मुग़ो के तहवील मे रहती थी। ताकि वो जिसको लायक़ समझे और अहल[14] जाने उसको बक़द्रे मुनासिब[15] दे। बहरहाल वो लोग याने मुग़ बहुत खूबसूरत और खुशसीरत[16] आलिम फाज़िल[17] तरहदार, बज़लागो[18] हरीफ़ ज़रीफ़[19] हुआ करते थे। इस राह से पारसियों ने मुगाँ शेवा मदह माशूको की ठहराई है। याने चालाक और खुशबयान और तरहदार और तिरछा और बाँका मानिन्द मुग़ो के। और इसका नज़ीर हिन्दुस्तान मे ये है कि जैसे किसू बेगम या उम्दा औरत को कहे कि फ़लानी बेगम या फ़लानी औरत में कितना डोमनीपन निकलता है। क़िस्सा मुख्तसिर मुग़ाँ शेवा उस महबूब को कहते हैं कि जो बहुत गरम और शूख और शीरी हरकात और चालाक हो। मुग़ाँ शेवा

---

१. संशोधन। २. बहुवचन। ३. गुलाब जैसे गालवाली-सुन्दरी। ४. चन्द्रमा के समान मस्तकवाली। ५. ढंग। ६. पारसी, अग्निपूजक लोग। ७. जाति के सरदार। ८. महान (ब. व.)। ९. सभ्य (ब. व.)। १०. विद्वान (ब० व.)। ११. पवित्र। १२. नीच। १३. ओछा। १४. पात्र। १५. उचित परिमाण में। १६. सुस्वभाव। १७. विद्वान। १८. विनोदी। १९. हँसमुख।

बानुआँ-मुग़ाँ शेवा दिलबराँ। मुग़ाँ शेवा शाहिदाँ[1] खाही ब मजमा, खाही बेइन्फ़रादे तरकीबे मक़लूब[2] है, याने बानूए मुग़ाँ शेवा या बानुआने मुग़ाँ शेवा। क़स अला हाज़ही[3] और अलफ़ाज—

मदह जनाब सैयदुश्शोहदा मे क़ता है[4]

माज़ूरी अर ज़े हादसा रंजी अज़ाँ गर नीस्त
अज नाज़ुकी बतबा गवारा गिरीस्तन
मिस्कीं न दीदए ज़ मुग़ाँ शेवा बानुआँ
दर खाबगाहे बहमनो दारा गिरीस्तन

हासिले मानी ये कि शाइर अपने नफ़्स को या किसू और को मुखातिब कर कर कहता है कि तू माफ़ है अगर वकाए वो हवादिसे दहर[5] से आजुर्दा होता है इस वास्ते के तू बहुत नाज़ुक है और गिरिया व ज़ारी[6] की शिद्दत का मुत्तहमिल[7] नहीं हो सकता। ये बयान बसबीले ताना व तारीज़[8] वाक़े है। जैसा कि दूसरी बैत में कहता है कि ऐ शख्स तू ने खाबगाहे बहमन[9] व दारा[9] में परीज़ाद व नाज़ुक व मुग़ाँ शेवा बेगमात को रोते-पीटते नहीं देखा कि कैसे बादशाहाने जलीलुल क़द्र[10] की बीबियाँ थीं और कैसी तरहदार व नाज़ुक कि जैसे मुग़ होते हैं और फिर उन पर क्या मुसीबतें गुज़रीं? ज़ाहिरा तू ने ये क़िस्सा क़ुतुबे तवारीख़[11] में नहीं देखा। और वजह बहमन व दारा के नाम खास की ये है कि बहमन इब्ने इस्फ़न्दयार[12] को आग़ाज़े शबाब[13] में अज़दहा[14]

---

१. सुन्दरी, प्रेमिका। २. चाहे सामूहिक रूप में चाहे व्यक्तिगत रूप मे, अभीष्ट है। ३. तदनुसार। ४. क़ता-चार चरण की कविता, प्रथम, द्वितीय और चतुर्थ चरण में तुक रहता है किन्तु रुबाई की भाँति चतुर्थ चरण में कोई सार्वभौम सत्य नहीं रहता। ५. सामयिक घटनाएँ। ६. रुदन। ७. सहनशील। ८. उलहना। ९. एक ईरानी शासक। १०. अत्यधिक प्रतिष्ठित। ११. ऐतिहासिक पुस्तकें। १२. ईरान का एक बादशाह। इसने मिश्र पर विजय प्राप्त की थी। १३. चढ़ती जवानी। १४. अजगर।

निगल गया है और दारा इब्ने दाराब इब्ने बहमन ऐन जवानी में सिकन्दर की लड़ाई में अपने दो मुसाहिबों के साथ मारा गया।

वस्सलाम वल इकराम[1]।

निगाश्ता[2] यकशम्बा चारुम[3] जून १८४८।

असदुल्लाह्

३

(६ जनवरी १८५०)

शफ़ीक़[4] मेरे मुशफ़क़ मेरे, करमफ़रमा मेरे, इनायत गुस्तर[5] मेरे!

तुम्हारे एक खत का जवाब मुझ पर क़र्ज़ है, क्या करूँ? सख्त ग़मज़दा[6] और मलूल[7] रहता हूँ। मुझको अब इस शहर की इक़ामत[8] नागवार है। और मवाने और अवायक़[9] ऐसे फ़राहम हुए हैं कि निकल नहीं सकता। खुलासा मेरे रंज व अलम[10] का ये है कि मैं अब सिर्फ़ मरने की तवक़्क़ो[11] पर जीता हूँ। हैहात[12]—

मुनहसिर मरने पै हो जिसकी उमैद
नाउमैदी उसकी देखा चाहिए

आज इसी हुजूमे ग़म व अन्दोह[13] मे तुम्हारा और तुम्हारे बच्चों का खयाल आ गया। बहुत दिन गुज़रे कि न तुम्हारा हाल मालूम और न प्यारी भतीजी ज़किया का हाल, न मुंशी अब्दुल लतीफ़ और नसीरुद्दीन की हक़ीक़त

---

१. ईश्वर आपको सकुशल रखे और कृपा करे। २. लिखित। ३. चार। ४. कृपालु। ५. दयालु। ६. दुःखी। ७. उदास। ८. निवास। ९. बाधाएँ। १०. दुःख-वेदना। ११. सम्भावना। १२. हाय। १३. शोकाधिक्य।

मालूम। दुआगो[1] हूं तुम्हारा और सनाख्वां[2] हूँ तुम्हारा। बहरहाल लड़कों को दुआ कह देना और अगर मौलाना तफ़्ता हों तो उनको सलाम कहना कि भाई दो-एक जुज़्व[3] तुम्हारे उस कारनामे के देखे हैं, आइन्दा मुझको कसरते ग़म व हम[4] से फ़ुर्सत देखने की नहीं मिली।

निगाश्तए व फ़िरिस्तादए[5] दहुम जनवरी १८५० ई०।

अज़—असदुल्लाह

४

(१८५० ई०)

भाई साहब,

बन्दा गुनहगार हाज़िर हुआ है और बन्दगी अर्ज़ करता है और अफ़ो तक़सीर[6] का आरज़ूमन्द है। दो ख़त आप के आये हैं और उनका जवाब लिख नहीं सका। ज़ाहिरा शेख वज़ीरुद्दीन ने अर्ज़ किया होगा। अस्ल हक़ीकत ये है कि मेरा और आपका लहू मिलता है। जब वहाँ इहितराक़[7] की शिद्दतें हैं तो यहाँ उसका ज़ुहूर क्यों कर न हो? एक मुद्दत से मेरा पाँव फल रहा था, छोटे-छोटे दाने बतरीक़े दायरा कफ़ेपा[8] के मुहीत[9] थे। नागाह जैसे एक कौम में से एक शख़्स अमीर हो जाए। एक दाना इन दानों मे से बढ़ गया और पक गया और फोडा हो गया और वो क़रीब टखने की हड्डी के था। क़यास कीजिए क्या हाल होगा? ईद के दिन बादशाह के साथ ईदगाह न जा सका। दूसरे दिन लंगलंगां[10] क़िले गया। और ईद की नज़र[11] दी। आखिरकार तप चढ़ी

---

१. प्रार्थना करने वाला। २. प्रशंसक। ३. अंश। ४. शोकाधिक्य। ५. प्रेषित। ६. दोषक्षमा। ७. वेदना। ८. पाँव के पंजे के चारों ओर। ९. घेरने वाला। १०. लँगड़ाते-लँगड़ाते। ११. भेंट।

और सदाअे शदीद[1] आरिज़[2] हुआ। वो फोड़ा पका और फूटा। क्योंकर अर्ज़ करूँ? सोज़िश अर्ज करूँ? दस-बारह दिन बराबर ये हाल रहा। मरहम लगा किये। आखिरकार वो फोडा फूटा। उसमे मादए मुन्जमिद[3] जिसको कील कहते हैं—वो निकला। दो अगुल का जख्म पड गया, अब वो ज़ख्म भर गया है। दो फाहो मे अच्छा हो जाएगा। तप जो आरज़ी थी जाती रही। मगर सदाअ शायद मादी और बजाए खुद एक मर्ज़े हक़ीक़ी[4] था, कि हनोज़[5] बाक़ी है। बिल्लाहुल अज़ीम[6] अगर इस अर्से मे एक सफा लिखा हो। जहाँ तक तुमको भेज चुका हूँ, वहीं तक तहरीर है। एक फिक़रा उस पर जायद नहीं लिखा गया। और अगर यही दर्देसर है तो न लिखा जाएगा। इस सबब से तहरीर खत मे मुकस्सिर[7] रहा हूँ। मुआफ़ रखिएगा और खत का जवाब लिखिएगा। इन दिनों दिल्ली में तप व दर्देसर व अक़सामे-अमराज़[8] की शिद्दत[9] है। बारे, इत्तिला दीजिए कि आपका मिज़ाज कैसा है। और मेरा भतीजा और प्यारी भतीजी किस तरह है। पहले खत से मालूम हुआ था कि वो दवात-कलम लेकर अलग बैठती है और मुझको खत लिखा करती है और जब लड़ती है तो कहती है कि मै मिर्ज़ा साहब के हाँ चली जाऊँगी। अब आप उससे मिर्ज़ा साहब कहना मौक़ूफ करवाइए। उससे मुझको चचा कहवाया कीजिए। अगर खुदा चाहता है तो इन जाड़ों में एक बार बतरीक़े डाक कौल[10] आऊँगा और दो-चार दिन रहूँगा। तुमको देखूंगा और भतीजे को देखूंगा। तफ़्ता का हाल मालूम हुआ। हमने भी बादशाह की नौकरी की थी। वो हमारे शागिद है। क्योंकर राजा की नौकरी न करते? सुनो भाई, बात वो है जो तुम कहते हो। तफ़्ता को नौकरी से अपने जानो तन[11] की परवरिश मंजूर नहीं, दीवान के छपने की फिक्र है। क्या करूँ, दस्तगाह[12] नही और

---

१. अत्यधिक सिरदर्द। २. बाधक। ३. एकत्रित। ४. वास्तविक रोग। ५. अब तक। ६. महान ईश्वर की शपथ। ७. वंचित। ८. विभिन्न प्रकार के रोग। ९. अधिकता। १०. अलीगढ़। ११. प्राण और शरीर। १२. सामर्थ्य।

बेमक़दूर हूँ वर्ना क्या सौ-दो सौ से तफ़्ता की इआनत[1] न करता। अपने से बेज़ार, यारो से शर्मसार। क्योंकर कोई जाने कि मैं अपने दोस्तों को किस तरह चाहता हूँ। तिहीदस्त[2] की बात क्या और आबरु क्या ? हाँ साहब, अगर बाबू हरगोबिन्दसिंह आपके पास आएँ तो उनसे मेरी दुआ कहना, और ये मेरा हाल कह देना। और उनको इत्तिला देना कि तुम्हारा ख़त पहुँचा है, जवाब इस राह से नहीं लिखा कि तुम अपना अहवाल[3] मुझको लिखो। अब ज़्यादा क्या लिखूँ ? लड़को को दुआ कह देना। और शेख़ वज़ीरुद्दीन का हाल लिखना। वस्सलाम वल अकराम।

५

(२ जनवरी १८५१)

अपने भाई साहब क़िब्ला[4] की ख़िदमत मे बन्दगी अर्ज़ करता हूँ और अपनी भतीजी को दुआ कहता हूँ और अपने प्यारे भतीजे को प्यार करता हूँ। और उसकी तनदुरुस्ती की दुआ माँगता हूँ। सुना मैंने कि फिर उसको दस्त आने लगे। साहब, अँदेशा न करो। ज़ूं ज़ूं ये बढ़ता जाएगा और हरारत उसके मिज़ाज में आती जाएगी, वो वों ये हालत रफ़ा होती जाएगी। इन्शा अल्लाह ताला[5] अस्ल ख़ैरी जवारिशे ऊद[6] व जवारिशे मस्तगी[6] बनवा रखो। हर रोज़, बल्के गाह-गाह[7] उसको चटा दिया करो और ख़ुरिश हाय[8] नागवार मत दिया करो। अब मेरा हाल सुनो। मंजन पहुँचा। दर्द से मर रहा था। वल्लाह, बेतकल्लुफ़ कहता हूँ। मैंने इस पचपन बरस की उम्र में ऐसी सरीउल तासीर[9] दवा नहीं देखी। एक बार के लगाने से दर्द तो फ़ौरन जाता रहा। सुबह को वर्म बिल्कुल न था। डाढ़ के दर्द की मगर अक्सीर ये है लेकिन बावजूद इसके तकलीफ़ न

---

१. सहायता। २. रिक्तहस्त। ३. समाचार (ब० व०)। ४. प्रतिष्ठित। ५. ईश्वर ने चाहा तो। ६. एक यूनानी औषधि। ७. कभी-कभी। ८. अवाञ्छनीय भोजन। ९. शीघ्र प्रभाव करने वाली।

गई। भाई ये दर्द अज़ क़िस्म ओजाए नज़ला व रुतूबत[1] नहीं। डाढ़ गिरने को है, जगह छोड़ दी है, ऊपर को उठ आई है। हनोज़ कुछ इलाक़ा मसूढ़े से बाक़ी है। जब वो इलाक़ा जा चुके और डाढ़ गिर चुके तब फ़ुर्सत हो। चार डाढ़ें गिर चुकी हैं, ये पाँचवी गिरा चाहती है। चूँकि है इन्तिहा, मैं उसको उखड़वा नहीं सकता। बहरहाल आपकी इनायत से वो दर्द और वर्म[2] कि जो मन्शाए आज़ार था, जाता रहा। अब ये क़िस्सा तो जब तक ज़िन्दा हूँ, रहेगा। पाँव भी अब अच्छा है। ज़ख्म थोड़ा-सा बाक़ी रहा है। ज़हमत व तकलीफ़ व रंज व आशोब[3] नहीं है। तुम्हारा हाल उन दोनों ख़तों से मालूम हुआ। क्या करूँ, कुछ इख्तियार की बात नहीं। ख़ुदा तुम पर रहम करे। ये मर्ज़ नहीं, रोग है। इस रोग को ख़ुदा खोवे। मियाँ नसीमुल्ला साहब ने अच्छा किया। बेकारी से बेहतर है। अगर क़िस्मत यावरी करेगी और नेकनाम रहेगे, तरक़्क़ी कर जाएँगे। मौलाना तफ़्ता का हाल मालूम हुआ। अच्छा है कुछ दुनिया का भी धंदा लगा रहे। यक़ीन है कि कहीं से वो ख़त मुझको भी लिखेंगे। मुंशी हरगोबिन्दसिंह ने एक ख़त मुझको अकबराबाद[4] से भेजा था। उसमें अपनी मुलाक़ात का हाल जानी बाँकेराय से मारिफ़त तफ़्ता के लिखा था। मैंने उसका जवाब नहीं लिखा, क्योंकि वो जवाबतलब न था। हाँ साहब, अब बाबर बादनुमा[5] का हाल तमाम लिख चुका हूँ। अब मुझको ये लिख भेजिए कि वो वो जो मैंने आपको भेजा है, वो कहाँ तक है? 'ख़ात्मा' का फ़िक़रा या शेर जो कुछ हो वो लिखकर भेज दो ताकि मैं वहाँ से लिखकर तुमको दूँ। अब मैं देखूँ ये शशमाहा[6] मुझे कब मिलता है। बाद उसके मिलने के अगर आइन्दा माह बमाह कर देंगे तो मैं लिखूंगा, वर्ना इस ख़िदमत को मेरा सलाम है, अभी बाबर का हाल हुज़ूर में भी नहीं भेजा। कल मसविदा तमाम हुआ है। साफ़ हो रहा है। अब साफ़ कर कर दे दूँगा और माह बमाह

---

१. पीडा का कारण जुखाम या शोथ नहीं। २. शोथ। ३. उत्पात। ४. आगरा। ५. दिशादर्शक। ६. छमाही।

की इस्तिदुआ करूँगा। छमाही आख़िर होने को थी। इस वास्ते मुतवज्जेह होकर मैंने उसको तमाम किया। इस सबब स फ़ुर्सत तुमको ख़त लिखने की न हुई। लाहौला वला क़ुव्वता, कि देख रहा हूँ क़लम हाथ से छुटता ही नहीं। वल्लाह, इस वक़्त तुमको अपने पास बैठा हुआ समझा हूँ और तुमसे बातें कर रहा हूँ। सौदाए मुहब्बत इसी को कहते है। लिल जुनूने फ़ुनून[1]।

रोजे पजशम्बा, वक्त सुबह, दोअम जनवरी १८५१ ई०।

अज़—असदुल्लाह्

६

(२ मार्च १८५१)

भाई साहब को बन्दगी पहुँचे। इन दिनों मे हुज़ूरवाला हज़रत ख़ाजा साहब की दरगाह गये थे और अहक़रुल इबाद[2] भी साथ गया था। चुनाँचे आपका नवाज़िश नामा[3] जो मेरे ख़त के जवाब में था वो मेरे आदमियों ने वहीं दरगाह में मेरे पास पहुँचाया था। फ़ुर्सत जवाब लिखने की नहीं हुई। चार दिन हुए कि मैं दरगाह से शहर में आया। आते ही मैंने फ़स्द खुलवाई। इस सबब से दो दिन ख़त नहीं लिखा। आज लिखता हूँ। मैं ये समझा हुआ था कि जब दरगाह से आऊँगा तो तुम्हारा ख़त आया हुआ होगा। वो पाऊँगा। आदमियों से मालूम हुआ कि कौल का कोई ख़त नहीं आया। नाचार मुशव्विश[4] हुआ। तशवीश की दो वजहें हैं। एक तो ये कि ज़किया की चेचक का हाल पहले ख़त में लिखा था। अगरचे ये भी लिखा था कि दो-चार दाने नमूद[5] होकर जाते रहे और फ़ुर्सत हो गई, मगर फिर भी खयाल बाक़ी रहा। दूसरी वजहे तशवीश तुम्हारी तरफ़ से आया। मिज़ाज कैसा है, मर्ज़ का हाल क्या

---

१. अपनी कला में व्यस्त पागल। २. तुच्छ सेवक। ३. कृपापत्र। ४. चिन्ता करने वाला, परेशान। ५. प्रकट।

है ? अलावा इससे कहीं दौरा, कहीं कसरते कारोबार। ब हर रंग ध्यान तुम्हारी तरफ लगा हुआ है। मुझको भी बसबब फस्ले बहार[1] के हैजाने खून[2] है। इहितराक़[3] के शदायद[4] बनिस्बत और दिनों के ज्यादा है। लाज़िम यों था कि शाहतरा[5] पीता और मुसहिल[6] लेता मगर कुछ न हो सका। सिर्फ़ फ़स्द बासलीक[7] पर किनाअत की और आध सेर खून ले लिया। अब आइन्दा जो कुछ हो सो हो। एजेंट राजपूताना खुद भरतपुर के नवाह[8] मे है। यक़ीन है कि जानी बाँकेराय भी होंगे। और मुंशी हरगोपाल तफ़्ता भी साथ होंगे। तुम अपने अजज़ा[9] क्यों नही मँगवा भेजते। मैंने सिर्फ़ तुम्हारे लुत्फ़े तवा व ज़ौक के वास्ते इल्तेज़ाम[10] उस मशक्क़त का अपने ऊपर किया है। मँगवाओ और मंगवा कर मुझको इत्तिला दो और निशाने खात्मा इबारत लिखो, ताके बक़िया[11] भी लिख भेजूं। मुंशी अब्दुल लतीफ सल्लमहू अल्लाहो ताला[12] को दुआ पहुँचे। नसीरुद्दीन को दुआ। जकिया को दुआए दीदाबोसी और उसकी खैर व आफ़ियत[13] की इस्तेदुआ[14]। वस्सलाम।

निगाश्ता[15] यकशम्बा[16] दोअम मार्च १८५१ ई०।

७

(२८ मार्च १८५१)

भाई साहब को सलाम पहुँचे। भाई अलीबख्शखाँ और भाई तुर्रेबाज़खाँ और मिर्ज़ा जैनुलआबदीनखाँ और मजमुए अहबाब[17] सलाम कहते है और

---

१. बसन्त ऋतु। २. रक्त की गरमी। ३. जलन। ४ आधिक्य। ५. एक शाक। ६. विरेचन। ७. ढंग का। ८. आसपास। ९. हिस्सा, लेख के अंश। १० उत्तरदायित्व। ११. अवशिष्ट। १२. ईश्वर रक्षा करे। १३. कुशलता। १४ प्रार्थना। १५. लिखित। १६. रविवार। १७. समस्त पारिवारिक जन।

पोते के होने की मुबारकबाद और उसकी तुले उम्र[1] व दवाम ऐश[2] की दुआ देते हैं। बीबी मेरी तुम्हारी बीबी को सलाम और तुम्हारी बहू को दुआ कहती है और तुमको और तुम्हारी बीबी को जो तुम्हारी बेटी और तुम्हारी बहू को मुबारकबाद देती है और ज़किया को प्यार करती है और नसीरुद्दीन को दुआ कहती है। ये सब बातें तुम्हारे पयाम[3] के जवाब मे हैं। तुमने जो लिखा कि अपने घर मे मेरे घर की तरफ़ से सलाम और लड़के बालों की तरफ़ से बन्दगी कहना, ये उसका जवाब है। ये जवाब और सब इख़्वान व अहबाब[4] का सलाम व तहनियत[5] कई दिन से मेरे पास अमानत था। आज जुमे के दिन दोपहर के वक़्त गो न फ़ुर्सत थी कि मैंने ये लिख रखा अगर जीता रहा तो कल सुबह डाक के वक़्त ये ख़त रवाना करूँगा। इन्शा अल्लाहुल अज़ीज़[6]। मेरा दिल बहुत ख़ुश हुआ कि तुमने शेख इक्रामुद्दीन उर्फ़ अब्दुस्सलाम करके लिखा। अल्लाह ताला उसको सलामत रखे। और उसे मरातिबे आला[7] को पहुँचावे कि वो अपने अब व जद[8] का नाम रोशन करे और फ़ख़रे खानदान[9] हो।

मिर्ज़ा हसनअली बेग एक रोज़ मेरे पास आए थे कि मुंशी साहब चाहते हैं कि तू कौल आवे। मैंने कहा—साहब, ये दिन जाने के नहीं। अगर ख़ुदा चाहेगा तो अम्बा[10] के मौसम मे कौल और मारहरे जाऊँगा। मारहरे के पीरज़ादे के बेटे आये थे। मैंने उनसे भी कह दिया है कि कौल बरसात मे आऊँगा। अगर भाई ने रुख़सत दी तो मारहरे भी आऊँगा।

भाई, तुमने वो औराक़[11] खो दिये। अब मैं क्या करूँ? अगर वो तुम्हारे पास होते तो मुझको एक लगाव रहता और मैं मशक़्क़त खींच कर जो कुछ कि अब लिखा है वो लिखकर तुमको भेज देता। जब मैंने देखा कि तुमको ज़ौक़

---

१. दीर्घायु। २. शाश्वत ऐश्वर्य। ३. सन्देश। ४. आत्मीय जन। ५. बधाई। ६. ईश्वर ने चाहा। ७. उच्च पद। ८. बाप-दादा। ९. कुल का गौरव। १०. आम। ११. पृष्ठ (ब. व.)।

नहीं, मेरा भी दिल सर्द हो गया। खैर ये तो हँसी है, अब तुम वो औराक़ वहाँ से न मँगवाओ। मैं हज़रत हुमायूं का हाल तमाम लिख चुका हूँ। अब अज़सरे नौ[1] किसी कातिब[2] से लिखवा कर तुमको भेजूंगा। खातिर जमा रखना। अमीर तैमूर, चार पुश्ते, बाद उनके बाबर तक ऐसी गुज़री कि जिसमे किशवर-कुशाई[3] व लश्कर कशी[4] नही हुई। बाबर, हुमायूं ये तीन बादशाह उल अज़्म[5] का हाल बसबीले इज़्माल[6] लिख चुका हूँ। अब हज़रत अकबरशाह का हाल शुरू करूँगा। नौरोज़[7] का हगामा था और क़सीदे[8] की फ़िक्र थी। इस वास्ते अभी नस्र[9] की तरफ तवज्जोह नही हुई और अभी दो-चार दिन दम ले लूं तो अब फिर सरगर्मकार होकर अकबरशाह का हाल लिखना शुरू करूँगा। तुम्हारे वास्ते कातिब, खुशनवीस[10], सहीनवीस पैदा कर लिखवाता हूँ। घबराना नही। तफ़्ता का हाल आपने भी लिखा था और उनका खत भी आया था। मालूम हुआ कि वो कौल से अकबराबाद को गये। नाच-रंग, शराब व कबाब मे मह्व[11] होंगे।

साहब मेरे, कुछ अशार जानी बाँकेलाल के, तफ़्ता ने मेरे पास भेजे और एक खत उनका यानी जानीजी का अकबराबाद से बेतवस्सुत तफ़्ता, मुझको आया। ग़र्ज़ ये है कि नज्म व नस्र[12] उस शख्स की मरबूत[13] है। मैं उसको इतना नहीं जानता था। अब आप उससे औराक़ का तक़ाज़ा न कीजिए। मैं आपके वास्ते और भेजे देता हूँ। वस्सलाम।

निगाश्ता जुमा, २८ मार्च १८५१।

—असदुल्लाह्

---

१. फिर नये सिरे से। २. लिखने वाला। ३. देश विजय। ४. सैनिक अभियान। ५. दृढ़ निश्चयी शासक। ६. संक्षिप्त। ७. पारसियों के वर्ष का प्रथम दिन। ८. प्रशंसा में लिखी हुई विशेष प्रकार की कविता। ९. गद्य। १०. अच्छा लिखने वाला। ११. तल्लीन। १२. कविता और गद्य। १३. अव्यस्त।

८

(अप्रैल-जुलाई १८५१)

भाई साहब,

ये इनायतानामा भी पाया और जिसकी मुझे फ़िक्र थी वो भी आया। इख्तलाफ़े मुद्दत का मदार हरकारो की तबीयत पर है। हाल मुंशी अब्दुललतीफ़ और ज़किया का मालूम हुआ। गरमो का मौसम है, मै जानता हूँ उन दोनो को ज़हरमुहरा का इस्तेमाल मुफ़ीद[1] होगा। कभी कभी शरबते नीलोफर[2] मे घिस कर पिला दिया करे और चाट लिया करे। भाई लड़को का घर है। शरबते नीलोफ़र, शरबते बनफ़्शा, अर्क़े नाना[3] की सिकजबीन अर्क़े कासनी, अर्क़े बादयान[4] इस तरह की चीजे घर मे तैयार करो। गाह गाह इस्तेमाल मे आती रहे। हाँ साहब, नसीरुद्दीन का ज़िक्र आपने खत मे बहुत दिनो से नही लिखा। मगर वो भी कही हमारे शेख इकरामुद्दीन के साथ आगरे चला गया।

आपकी किताब की फ़िक्र मे हूँ। अगर अजल[5] अमान[6] देती है तो अब लिख कर भेज देता हूँ। हुमायूँ का हाल पन्द्रह सतर के मिस्तर[7] से चार जुज़्व मे आया है। एक बात तुमको ये मालूम रहे कि जब हुज़ूर मे हाज़िर होता हूँ तो अक्सर बादशाह मुझसे रेख्ता[8] तलब करते हैं। सो वो कही हुई गज़ले तो क्या पढ़ूँ? नई गज़ल कह कर ले जाता हूँ। आज मैंने दोपहर को एक ग़ज़ल लिखी है। कल या परसो जाकर पढ़ूँगा। तुमको भी लिखता हूँ। दाद देना कि अगर रेख्ता पायए सहर[9] या ऐजाज[10] को पहुँचे तो उसकी यही सूरत होगी या कुछ और शक्ल ?

---

१. लाभदायक। २. नीलोत्पल। ३. पोदीने का अर्क। ४. सौंफ का अर्क। ५. काल। ६. शरण। ७. पंक्तियुक्त कागज, जिसे नीचे रख कर लिखते हैं। ८. हिन्दी कविता। ९. जादू। १०. चमत्कार।

मुशी नबी बख्श 'हकीर' के नाम

कहते तो हो तुम सब कि बुते ग़ालिया मू[1] आय
इक मर्तबा घबरा के कहो कोई कि वो आय

हूँ कशमकशे नज़अ[2] मे हाँ जज्बे मुहब्बत
कुछ कह न सकूं पर वो मेरे पूछने को आय

है सायक़[3] वो शोलओ[4] सीमाब[5] का आलम
आता है समझ मे मेरे आता नही गो आय

ज़ाहिर है कि घबरा के न भागेगे नकीरैन[6]
हाँ मुह से मगर बादए दोशीना[7] की बू आय

जल्लाद से डरते है न वाअज़[8] से झगड़ते
समझे हुए है हम उसे जिस भेस मे जो आय

हाँ अहले तलब[9] कौन सुने तान ए ना याफ़्त[10]
देखा कि वो मिलता नही अपने ही को खो आय

अपना नही वो शेवा कि आराम से बैठे
उस दर पै नही बार[11] तो काबा ही को हो आय

की हमनफ़्सां[12] ने असरे गिरिया[13] मे तक़रीर
अच्छे रहे आप इससे मगर मुझको डुबो आय

इस अजुमने[14] नाज़ की क्या बात है 'ग़ालिब'
हम भा गये वाँ और तेरी तकदीर को रो आय

नुक्ताची[15] है ग़मे दिल इसको सुनाये न बने
क्या बने बात जहाँ बात बनाये न बने

---

१. सुगन्धित केशों वाली प्रेमिका। २. मृत्यु का संघर्ष। ३. बिजली। ४. अंगारा। ५. पारा। ६. यमदूत, जो मृत्यु के पश्चात कब्र मे आते है। ७. गत रात्रि की सुरा। ८. उपदेशक। ९. अभ्यर्थी। १०. न मिलने का ताना। ११. भेट का अवसर। १२. मित्र। १३. रुदन। १४. सभा। १५. छिद्रान्वेषी।

मैं बुलाता तो हूँ उसको मगर ऐ जज़्बए दिल
उसपै बन जाये कुछ ऐसे कि बिन आये न बने
खेल समझा है कहीं छोड न दे भूल न जाय
काश, यूँ भी हो कि बिन मेरे सताये न बने
ग़ैर फिरता है लिए यूँ तेरे खत को कि अगर
कोई पूछे कि ये क्या है तो छिपाये न बने
इस नज़ाकत का बुरा हो वो भले हैं तो क्या
हाथ आयें तो उन्हें हाथ लगाये न बने
कह सके कौन कि ये जल्वागरी किसकी है
पर्दा छोड़ा है वो उसने कि उठाये न बने
मौत की राह न देखूँ कि बिन आये न रहे
तुमको चाहूँ कि न आओ तो बुलाये न बने
बोझ वो सर से गिरा है कि उठाये न उठे
काम वो आन पड़ा है कि बनाये न बने
इश्क़ पर ज़ोर नहीं है ये वो आतिश[1] 'ग़ालिब'
कि लगाये न लगे और बुझाये न बने

६

(अप्रैल-जुलाई १८५१)

भाई साहब,

तुमको मुबारक हो नसीरुद्दीन का ब्याह और अब्दुस्सलाम का खतना। अलहम्दुलिल्लाह[2], बख़ैर व आफ़ियत[3] ये सब काम कर कर अलीगढ़ आ गये। मुंशी अब्दुल लतीफ़ साहब को अब्दुस्सलाम के खतने की मुबारकबाद मेरी तरफ़ से दीजिएगा और नसीरुद्दीन को उसकी शादी की मुबारकबाद

१. आग। २. प्रशंसा ईश्वर की। ३. सकुशल।

दीजिएगा। और बी जकिया को भाई के ब्याह की और भतीजे के खतने की तहनियत[1] कहिएगा और बाद इन सब ज़राफ़तों[2] के भाभी साहबा को मेरा सलाम और मुबारकबाद कहिएगा। फ़क़त।

वास्ते खुदा के अब कौल आ गये हो। वो अर्क़ शुरू करो, जिस तरह अर्ज किया गया। कभी शरबते नीलोफ़र के साथ और कभी शरबते मुरक्कब[3] के साथ। बन्द ए खुदा[4], एक पचास दिन मेरा कहा मानो और उस अर्क़ को पीओ। जब तमाम होने को आये नुस्खा तुम्हारे पास है, फिर खिचवाओ और दस दिन कम दो महीने उसका इस्तेमाल करो। जरूर ज़रूर।—फक्त।

क्या पूछते हो ज़ैनुल आबदीन खाँ का हाल, और क्या कहूँ उसकी बीबी का हाल ? पहले उसकी हक़ीक़त सुनो, भाई उसको नागाह रआफ़[5] हुआ। रआफ़ मे नाक से लहू आता है मगर उसको मुँह मे लहू आया। नाक से थोड़ा थोड़ा। और मुंह का क्या हाल था गोया मशक का दहाना[6] खोल दिया है। एक हफ़्ते मे खुदा झूठ न बुलवाये, आठ-दस सेर खून निकला-स्याह और बदबूदार। तवक़्क़ो जीने की बाकी न रही। और सब नाउमीद हो गये। बारे, खुदा ने बचा लिया, बच गया। इसको तसव्वुर कीजिए कि था क्या ? सिर्फ़ उस्तेखान[7] व पोस्त[8] रखता था। अब सूख कर काँटा हो गया। अगरचे हनोज़ साहबे फ़र्श[9] है और चलना-फिरना तो कहाँ पलंग पर से उठ भी नहीं सकता, मगर बीमे हलाक[10] नही है। इसकी बीबी का हाल सुनिए—तीन महीने से तप और खाँसी में गिरफ़्तार है। खुदा उस पर और उसके बच्चों पर रहम करे और उसको बचा ले। मैं कुछ नहीं कर सकता, मगर यूं समझो कि अगर ये बच जाएगा तो गोया मुर्दा जिया। बाक़ी हज़रत साहब और उनकी औलाद सब अहबाब खुश हैं।

—असदुल्लाह

---

१. बधाई। २. हास्य। ३. मिश्रित। ४. भगवान के भक्त। ५. नाक से रक्तस्राव। ६. मुँह। ७. हड्डी। ८. चमड़ा। ९. शय्याशायी। १०. मृत्यु का भय।

१०

(१८५१ ई०)

भाई साहब को सलाम और मुंशी अब्दुल लतीफ़ और नसीरुद्दीन और प्यारी जकिया को दुआ पहुँचे। हज़रत अर्क़ पिये जाइए और घबराइए नहीं। देखना क्या फ़ायदा करता है। मुझको तो मुफ़ीद पड़ा। यक़ीन है कि तुमको भी नफ़ा करेगा।

बन्दा पर्वर, पाखल[1] का मुरब्बा और अचार दोनों मौजूद है। खुदा हुज़ूर को सलामत रखे। जब चाहूँ माँग लाऊँ; मगर भेजूँ क्योंकर? डाँ डाक—उसका ये हाल है के मर्तबान, कमाल ये है कि टीन में रख कर भेजिए। उल्टा-सीधा लाकलाम[2] होगा। अगर मुरब्बा है तो शीरा, और अगर अचार है तो तेल गिर जाएगा। बहरहाल अचार पाखल का, कि, वो बनिस्बत मुरब्बे के ज़्यादातर सूदमन्द[3] है, ले आया हूँ और मेरे पास रखा है। जिस तरह हुक्म करो, उस तरह भेज दूँ।

हज़रत काले साहब और मियाँ निज़ामुद्दीन और भाई ग़ुलामहुसेनखाँ तुर्रेबाज़खाँ और मुग़लअलीखाँ और सब साहब सलाम कहते है। ज़ैनुल-आबदीनखाँ अच्छा है। बीबी भी उसकी फ़ुर्सत पाती चली है। मर्ज़ की सूरत खतरनाक नहीं रही। खुदा चाहे तो सेहत हो जाये—भाई खुदा के वास्ते हसनअली बेग को समझा दो, कि ये क्या तौर है कि एक लौंडे के वास्ते बीवी को छोड़ दिया है। वालिदा भी तुम्हारी उसकी बात नही पूछतीं। वो ग़रीब अपनी खाला[4] के हाँ पड़ी हुई है। अपनी माँ को लिखो कि बहू को मना कर ले आवें और तुम्हारे पास रवाना करें। यानी ये सलाह तुम मिर्ज़ा को समझाओ और बहुत-सा कहो। फ़क़त।

---

१. गूलर, कुछ लोग पाखल को गूलर से पृथक् एक स्वतंत्र फल मानते हैं। २. निर्विवाद। ३. लाभदायक। ४. मौसी।

मुंशी नवी बख्श 'हक़ीर' के नाम

११

(१८५१ ई०)

आदाब बजा लाता हूँ। बहुत दिन से आपका खत नहीं आया। बेगम में मेरा ध्यान लगा हुआ है। आप अक्सर मुझको भूल जाते हैं। और जब मेरी तरफ़ से शिकायत शुरू होती है तो हज़रत ब अदालते फ़ौजदारी करते हैं और कसरते अशग़ाले सरकारी[1] दस्तावेज़े उज़्र बनाते हैं, बहरहाल इतना तो भूलना मुनासिब नहीं। हर हफ़्ते में एक खत आपका और एक खत मेरा आता-जाता रहे। इन दिनों मे बसबब ईद के क़सीदे की फिक्र के मुझको फ़ुर्सते तहरीर[2] नहीं मिली। क़सीदे जब छापा होकर आएँगे तो मुआफ़िक़े मामूल[3] आपकी ख़िदमत में इरसाल[4] करूँगा।

मेरे एक दोस्त हैं, उन्होंने एक रुपया मुझको दिया है और ये चाहा है कि मैं वो रुपया आपके पास भेजूं और आप अपने भाई साहब के पास हातरस भेज दें। और वो एक रुपये के चाक़ू जैसे कि वहाँ बनते हैं, बहुत ताकीद कर कर और फरमाइशी तुहफ़ा बनवा कर आपको भेज दे। और आप ख्वाही[5] किसी के हात, ख्वाही डाक में मुझको भेज दें। मैं हैरान था कि रुपया आप तक क्योंकर पहुँचे? बारे, मिर्ज़ा साहब आज आ गये और उन्होंने कहा कि मैं कल कौल जाऊँगा। मैंने खत लिखकर मय रुपये के उनको दे दिया। मेहरबानी फ़रमा कर हातरस भेजिए और ताकीद लिखिए कि बहुत अच्छे चाक़ू, जितने आवें, ऐसे कि उनसे बेहतर न हों, बनवा कर भेज दें। जल्द-वस्सलाम।

मुंशी अब्दुललतीफ़ को दुआ पहुँचे। बेगम को और नसीरुद्दीन और अब्दुस्सलाम को दुआ पहुँचे। जनाब मीर तालिबअली छोलस के रईस, कि

१. शासकीय कार्यों की अधिकता। २. लिखने का अवकाश। ३. नियमानुसार। ४. प्रेषण। ५. चाहे तो।

जो हैदराबाद के रिसाले में मिर्ज़ा ज़ुल्फ़िक़ार अलीबेग रिसालदार की रिफाकत[1] में मुद्दतसे रिसाला है, वो अपने को आपके वालिद माजिद का आशना[2] बताते हैं और आपको सलाम कहते हैं।

हक़ ताला तुमको खुश व खुर्रम[3] व तनदुरुस्त, तुम्हारी औलाद के सर पर सलामत रखे और तुम उनका बुढ़ापा देखो और उनके बच्चों को खिलाओ। मुंशी हर गोबिन्द सिंघ आये और बेगम का मुझे पयाम दिया कि चचा मैंने कान छिदवाये हैं। सो तुम मेरी तरफ़ से उसको दुआ कहना और कहना तुमको मुबारक हो और तुमको जमर्रुद[4] और याकूत[5] के पत्ते-बालियाँ पहननी नसीब हों।

१२

(४ अगस्त, १८५१ ई०)

भाई साहब,

आपका खत बहुत दिन के बाद आया। खैर व आफ़ियत मालूम हुई। दिल खुश हुआ। अब हवा सर्द हो गई है। इन्शा अल्लाह् ताला शेख इकरामुद्दीन भी माल खैर[6] आ जावेंगे। आपके खत का जवाब जो देर मे लिखा है, इस सबब से लिखा है कि तक़रीबे ईद[7] क़रीब आ गई थी। क़सीदे की फिक्र मे सरगिर्दां[8] था। बारे, ईद हो चुकी। क़सीदा पढ चुका। अब जवाब आपके खत का लिखा। कहोगे कि क़सीदा मुझको क्यों न भेजा। तिहत्तर शेर है और सिर्फ़ मैं लिखने-वाला। ये लिखना फ़िक्रे शेर मे कम नहीं। इन्शा अल्लाह् लिखूंगा और भेजूंगा।

---

१. साथ। २. मित्र। ३. प्रसन्न। ४. पन्ना। ५. लाल (रत्न)। ६. कुशलतापूर्वक। ७. ईद का समारोह। ८. व्यस्त।

तहरीरे तारीख इसी सबब से मुल्तवी रही, अब इस तरफ़ मुतवज्जेह[1] हूँगा। आपके वास्ते लिखवाता हूं। कातिब के आगे कारे ज़रूरी[2], फ़रमाइश से हाकिम की, आ गया है। उसको वो तमाम करे तब उस तहरीर की तरफ़ तवज्जेह करे। आप खातिर जमा रखें। जब तक आपके पास न पहुँच ले और आप उसको न देख ले तब तक खुद मेरा दिल खुश न होगा।

वा ए बरजाने सुखनगर ब सुखन्दाँ न रसद[3]

यहाँ सब तरह खैर व आफ़ियत है। मखदूमज़ादा भी तनदुरुस्त होता चला है। मैं बदस्तूर एहतराक़[4] की बला मे मुब्तिला हूँ मगर इल्तिफ़ात[5] नहीं करता। मेरे सबअिख्वान व अहबाब[6] तुमको सलाम कहते हैं।

ज़कियां को मेरी तरफ़ से दुआ कह देना और उसको मेरी तरफ़ से प्यार करना। मुंशी अब्दुल लतीफ़ साहब को दुआ और नसीरुद्दीन को दुआ। जब मियाँ अब्दुस्सलाम वतन से आ जायें तो मुझको इत्तिला देना। वस्सलाम।

मुरसिला सेशम्बा, चारुम अगस्त १८५१ ई०।

अब--असदुल्लाह्

१३

(३ सितम्बर, १८५१ ई०)

भाई साहब किब्ला,

ज़कियां और अब्दुस्सलाम का आना मुबारक हो। बड़े लड़के को भी परवर्दगार तनदुरुस्ती बख्शे। हाँ साहब, अखबार में अकबराबाद और अज़ीमाबाद की वबा[7] की धूम सुनी जाती है। कौल का कहीं ज़िक्र न था। अब आपके लिखने से मालूम हुआ। हक़ताला अपने सब बन्दो को अम्न व अमान[8] मे रखे।

---

१. ध्यान देने वाला। २. आवश्यक कार्य। ३ उस कविता पर खेद है, जो किसी काव्यमर्मज्ञ के पास न पहुँचे। ४. जलन। ५. दयादृष्टि। ६. आत्मीय जन। ७. महामारी। ८. शान्ति।

इस शहर मे अम्न है मगर हाँ जैसा कि शुरू फ़सल मे तग़टयुर[1] हो जाता है और तप व लरज़ा[2] व ज़ुकाम फैल जाता है—वो है। वबा नहीं है। गरमी बहुत पडती है। दो दिन से हवा सर्द हो गई है। अब्र आने लगा है। बारिश नही हुई। इन्शा अल्लाहो ताला आजकल मे मेह बरसेगा। हुज़ूर वाला[3] क़ुतुब साहब की दरगाह मे तशरीफ़ रखते हैं। इस महीने की याने ज़ीक़ाद की बीसवी को आवेगे। मुझको दो-चार दिन के वास्ते दरगाह जाना ज़रूर था, मगर मेरे पाँव में दो-एक फोड़े निकले हैं। इस उज़रे लंग[4] से नहीं गया।

तारीख का हाल क्या पूछते हो ? सिर्फ़ हुमायूँ का हाल लिख चुका हूँ। अकबर बादशाह का अहवाल शुरू भी नही हुआ। भाई, मुझसे ये दर्दे सर हो नहीं सकता। बस ये इतना ही रहा। एक कातिब है, कहुत ख़ुशनवीस और सहीनवीस। उनको मैंने मसविदे दिये और उनसे कहा कि उसकी दो नकले मुझको कर दो, एक तुम्हारे वास्ते और एक जानी बाँकेलाल के वास्ते। वो एक लिख कर लाये। मैंने वो जानीजी को भेज दी। ख़याल किया कि भाई को दस रोज़ के बाद भेज दूंगा। नागाह कातिब को एक किताब तारीख़ की सेशन जज ने लिखने को दी। वो लिख रहे है। इस सबब से दिरग[5] हो गई है। आप घबरावे नही।

जारूब ला बियार के ईं शिर्के फ़िल वजूद
बागर्दे फर्शों मीना वा ऐवाँ दरबरस्त[6]

---

१. परिवर्तन। २. शीत-ज्वर। ३. बादशाह। ४. लँगड़ाने के कारण। ५. विलम्ब। ६. ईश्वर के अस्तित्व मे दूसरे को सम्मिलित करना महल के फर्श पर पड़ी हुई धूल के समान है। जिस प्रकार झाड़ू से फ़र्श की धूल दूर कर दी जाती है उसी प्रकार 'नहीं' (ईश्वर के अतिरिक्त अन्य शक्ति नहीं है) की झाड़ू से हृदय में स्थित ईश्वर के अस्तित्व में किसी दूसरे का सम्मिलन हटा दो। (अरबी में 'ला' झाड़ू के आकार का होता है और उसका अर्थ नकरात्मक है)।

तरकीबे अल्फ़ाज़ यों है कि शिर्के फ़िल वजूद वा गर्दे फ़र्श बराबरस्त व सीना ब ऐवाँ बराबस्त याने दिल बमंज़िले ऐवाँ बराबरस्त, याने दिल बमंज़िले ऐवान के है और शिर्क फ़िलवुजूद बमंज़िल गर्दे फ़र्श के है। उस गर्दे फर्श को झाड़ा चाहिए। गर्द झाड़ते हैं झाड़ू से लाअे नाफिया को झाड़ू मुक़र्रर किया। खुलासा मे है के लाअे नाफिया की झाड़ू ला और दिल के ऐवान[1] से शिर्के फ़िलवुजूद की गर्द झाड डाल। अब समझिए के शिर्के फिलवुजूद क्या और लाये नाफ़िया क्या? शिर्क कई क़िस्म पर है। शिर्के फिल सिफ़ात। शिर्के फिल अफ़ाल। इन शिर्कों को सब जानते हैं। मगर शिर्के फिलवुजूद बहुत पोशीदा है और सब इसमें मुब्तिला हैं। याने अशिया[2] के वास्ते वुजूद व जुदागाना करार देना और खल्क़[3] और खालिक़[4] को अलग अलग समझना। मजहब, वहदत[5] वुजूद का ये है कि मौजूदे हकीक़ी हक़ है और उसके सिवा कोई मौजूद नहीं। ला मौजूद ला इलाहा ला मुअस्सर फिल वुजूद व इल्लिल्लाह्[6] वास्ते नफ़ी के है। अहले जाहिर[7] ला इलाहा इल्लिल्लाह् को यों समझते हैं कि सिवाय अल्लाह् के कोई लायक़ इबादत के नहीं। बस वो नफ़ी ए इस्तेहक़ाक़[8] इबादत करते हैं और सूफ़िया कहते है कि नहीं कोई मौजूद सिवाय अल्लाह् के। पस, ये लोग अशिया की मौजूदियत के अकीदे को शिर्के फ़िल वुजूद कहते है और अहले ज़ाहिर को शिर्के खफी[9] जानते है।

बालाए तिफ़्ल यक शबा दर खम ज़ रास्ती
बा क़ामते खमीदए पीराँ बराबरस्त[10]

---

१. महल। २. सामग्री। ३. ससार। ४. विधाता। ५. एकता। ६. ईश्वर के अतिरिक्त कुछ नही है, ईश्वर के अतिरिक्त कोई प्रभावशाली नहीं है। ७. सांसारिक लोग। ८. अस्तित्वहीन। ९. गुप्त रूप से ईश्वर की सत्ता में किसी दूसरे को सहायक मानना। १०. प्रतिपदा का झुका हुआ चाँद ऐसा लगता है जैसे बूढ़ों का झुका शरीर।

खयाल मे होगा कि ये शेर मिनजुम्ला उन अशार के है कि जो माहे नौ[1] की तशबीह[2] में वाक़े हुए हैं। एक तशबीह ये भी है। तिफ़्ले यक शबा[3] पहली रात का चाँद। बाला यहाँ बमाने क़द के है, न बमाने ऊपर के। रास्ती बमाने सच के है, न बमाने सीधे के।

बरदस्ते शाह तेग़ो कमाँ रास्त जायेगाह
बातेग़ों बाकमाँ ब चे बुरहाँ बराबरस्त[4]

वाह भाई, तुम और इस शेर के माने पूछो। ये दो तशबीहे माहे नौ की हैं, तलवार और कमान। शायर कहता है कि तलवार और कमान बादशाह के हाथ मे हुआ करती है और ये ज़ाहिर है कि हिलाल[5] बादशाह के हाथ मे नहीं फिर किस बुरहान[6] मे और किस दलील से शोअरा उसको तलवार और कमान के बराबर जानते है।

दानम न तेग मसकल ए तेग बादशास्त
न शिगुफ़्त गर बतेग़ बदीं साँ बराबरस्त[7]

ये बैत[8] मुताल्लिक़ पहली बैत से है। पहले शेर में आपने एक शुबा वारिद किया कि तलवार बादशाह के हाथ मे चाहिए और हिलाल वहाँ नहीं है। पस, उसको तलवार क्यों कर कहिए। अब आप ही मुजीब[9] होता है कि हाँ मै भी जानता हूँ कि ये तलवार नही मगर बादशाह की तलवार का मसकला[10] है और अजब नही कि बादशाह की तलवार के बराबर गिना जावे। और हाँ ये

---

१. नया चाँद। २. उपमा। ३. एक रात का शिशु। ४. बादशाह के हाथ मे तलवार और धनुष उपयुक्त है। तलवार और धनुष की समता उसके (चाँद के) साथ किस तर्क से की जा सकती है। ५. शुक्लपक्ष की द्वितीया का चाँद। ६. तर्क। ७. मै तलवार नहीं जानता अपितु वह बादशाह की तलवार का मसकला है। यह विचित्र नहीं कि बादशाह की तलवार का मसकला तलवार के बराबर गिना जाये। ८. पद। ९. उत्तरदाता। १०. धार चढ़ाने की मशीन।

पूछिए कि मसकला क्या ? मसकल आला है तलवार सैकल करने का और वो एक चीज़ है लोहे की, घोड़े के नाल की सूरत।

तेग़े मरा अगर चे बुवद ख़ुफ़्ता दर नियाम
पौलादे बा बदख़्श बदख़्शाँ बराबरस्त[1]

बदख़्श फ़ारसी में इस्म[2] है याक़ूत[3] का और ये जो शहर का नाम बदख़्शाँ है, इसी सबब से है कि वहाँ याक़ूत की कान[4] है। तेग़े मरा में जो 'रा' है, ये इज़ाफ़त[5] के माने देता है, यानी मेरी तलवार की फ़ौलाद याने लोहा। अगरचे तलवार म्यान में हो, लेकिन याक़ूत के बराबर यानी सुर्ख़। अगरचे तलवार न खींचूं और किसी को न मारूँ तो भी मेरी तलवार ख़ून आलूदा[6] है और मानिन्द याक़ूत के सुर्ख़ है। ख़ालिक़ ने इसकी सरिश्त[7] में ये सिफ़त वदीअत[8] रखी है। वस्सलाम वलअकराम।

शम्बा, सेशुम[9] सितम्बर १८५१ ई०।

—ग़ालिब

१४

(सितम्बर, १८५१– मार्च, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आपका ख़त पहुँचा। हज़रत आपने मौलवी क़मरुद्दीनख़ाँ को इतना तंग नाहक़ किया। मेरा मुद्दआ[10] इसी क़दर था कि ख़त का पहुँचना मालूम हो जाये

---

१. मेरे लिए यह तलवार यद्यपि म्यान में बन्द है, लेकिन उसका लोहा बदख़्शा के लाल की तरह लाल है। २. संज्ञा। ३. लाल (रत्न)। ४. खान। ५. सम्बन्धकारक का चिन्ह। ६. सनी हुई। ७. स्वभाव। ८. धरोहर। ९. तीसरा। १०. अभीष्ट।

और काग़ज़ तल्फ़[1] न हो। वर्ना मुझको उनसे किसी तरह का रंज नहीं है। मैंने अगर कुछ तुमको लिखा था तो लिखना बतरीक़े इख़्तेलात[2] व इनबिसात[3] था, न बसबीले मलाल[4]। बहरहाल मसविदे के पहुँचने से ख़ातिर जमा हो गई। अब उनके ख़त के आने की कुछ हाजत नहीं। मैं उनका ख़ादिम[5] और दोस्त दिली हूँ और उनकी प्यारी प्यारी बातें मुझको पसन्द हैं। अब मेरा ये रुक़्क़ा उनको मुक़र्रर[6] दीजिएगा। यहाँ लड़के-बाले सब ख़ैर व आफ़ियत से हैं। तुमको बन्दगी और अपने भाई-बहनों को सलाम कहते हैं। मेरी तरफ से बेग़म को दुआ पहुँचे और अब्दुस्सलाम और कुलसूम को दुआ पहुँचे। मुंशी अब्दुललतीफ की ख़ैर व आफियत लिखते रहिएगा।

मीर कासिमअली का कोई ख़त अगर कहीं से आया हो तो मुझको इत्तिला दीजिएगा।

१५

(६ मार्च, १८५२ ई०)

क़िब्ला माफ़ रखिएगा। कई दिन के बाद आपको ख़त लिखता हूँ। मुंशी हरगोपाल साहब के ख़त से आपकी और लड़के-वालों की ख़ैर व आफ़ियत मालूम होती रहती है और चार-पाँच दिन हुए, आपका नवाजिशनामा[7] भी आया था। मियाँ तफ़्ता ने कुछ हाल आपके आशोबे चश्म[8] का लिखा था। फिर उनके ही ख़त से ये भी दरियाफ़्त हुआ के कुछ फ़ुसंत है। हक़ ताला तुम्हारी चश्मे जहाँबी[9] को रोशन और तुमको तुम्हारे फ़रज़न्दों के सर पर सलामत रखे। मेरे वजअ उस्मद्र[10] की इतनी फ़िक्र न चाहिए। मेरे अमराज़[11] बेश्तर

---

१. नष्ट। २. मित्रता के कारण। ३. आनन्द। ४. दुःख। ५. सेवक। ६. दुबारा। ७. कृपा-पत्र। ८. आँखों का दुखना। ९. नेत्र। १०. छाती का दर्द। ११. रोग (ब० व०)।

दौरे हैं। आगे एक क़ूलंज[1] का दौरा था। अब वजउस्सद्र का दौरा शुरू हो गया है। जब ये दर्द उठ खड़ा होता है--चार पहर, छ पहर, दो पहर रहता है। फिर रफ़ा हो जाता है। मुंशीजी की ग़ज़लें आई हुई थीं। वो उनका अपने पास पहुँचना जल्द चाहते थे और मुझको उस दिन वो दर्द शुरू हुआ था। मैंने लिख भेजा कि आजकल गज़लों को नहीं देख सकता। बारे, तीसरे दिन मैंने उनकी ग़ज़ले भेज दी। उन्होंने नाहक तुमसे उनका ज़िक्र किया। जो तुम मुतफक्किर[2] हुए। क़िस्सा मुख्तसर, अच्छा हूँ।

हकीम इमामुद्दीन खाँ साहब से अब रुजू नहीं करता। हकीम अहसनुल्लाखाँ साहब मेरे चारागर[3] हैं। उन्होंने फ़रमाया कि आमदे फसले नौ[4] है, तू मुसहिल[5] ले डाल। चुनाँचे दस बारह मुंजिज[6] और तीन मुसहिल हुए। तीसरा मुसहिल था आज। तब्रीद[7] पीकर तुमको ये खत लिख रहा हूँ और आदमी रुक्का लेकर खाँ साहब के पास गया हुआ है। देखो मुज़्दए अम्नो फराग[8] लाता है या पर्सों एक मुसहिल और भी होता है। ये सबब था जो आपके खत का जवाब देर में लिखा। अब आप मेहरबानी फरमा कर अपने मिजाज का हाल उसी तफसील से मुझको लिखिए और बच्चों की खैर व आफियत लिखिए।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को दुआ पहुँचे। ज़कियाः बेगम को दुआ पहुँचे और ये मालूम हो कि तुम अब क्या पढ़ती हो और तुम्हारा सबक़ अब कहाँ तक पहुँचा है? इसकी हमको इत्तिला दो। नसीरुद्दीन को और अब्दुस्सलाम

---

१. पसली के नीचे उठनेवाला दर्द, आँतों का रोग। २. चिन्तित। ३. चिकित्सक। ४. नई ऋतु का आगमन। ५. विरेचन। ६. विरेचन से पूर्व मलों को कोमल करने के लिए दी जाने वाली औषधि। ७. ठंडाई। ८. सन्तोष तथा निश्चिन्तता की शुभ सूचना।

को दुआ पहुँचे। मेहमाने नौ रसीदा[1] का नाम भी भूल गया हूँ, उसको दुआ कहिए और उसका नाम मुझको लिखिए।

वस्सलाम माल इक्राम[2] अज़ असदुल्लाह् निगाश्ता[3] सुबह् चारशम्बा[4] नहुम मार्च १८५२ ई०। बाद आशमीद ने तब्रीद।[5]

१६

(१५ मई, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आज हफ़्ते का दिन, पन्द्रहवीं मई की सुबह् का वक़्त है। मैंने दो ख़त तुमको लिखे हैं। एक ख़त तो अभी डाक में रवाना किया है। और एक ख़त हकीम इलाहीबख़्श साहब को देता हूँ। ये साहब शुरफ़ा ए सिकन्दरा[6] में से हैं। और दोस्त और शागिर्द उसके हैं कि जिनका मैं बग़ैर देखे, आशिक़ हूँ। याने जनाब साहबे आलम साहब मारहरवी सल्लमल्लाहो ताला[7]—ये उनका ख़त मेरे नाम लाये थे। कई महीने यहाँ रहे और हकीम इमामुद्दीन खाँ साहब से 'मुफ़र्रहुल क़ुलूब' पढ़ी। बहुत ख़ूब आदमी और मुहज़्ज़िब[8] हैं। हुस्नेतबा[9] भी रखते हैं। यहाँ उनकी नौकरी का कहीं उस्लूब[10] न हुआ और ज़माने ने मसाअ्दत[11] न की। अब ये अपने घर जाते हैं। कील में पहुँच कर आपसे मिलेंगे। उनकी तौक़ीर[12] कीजिएगा। और उनको अपना दोस्ते देरीना[13] तसव्वुर फ़रमाइएगा। और इसका ख़याल आपको रहे कि उस ज़िले में ठेकेदार

---

१. नवागन्तुक अतिथि। २. दयालु। ३. लिखित। ४. बुधवार। ५. तेल पीने के पश्चात्। ६. सिकन्दरा के प्रतिष्ठित व्यक्ति। ७. महान् ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे। ८. सुसस्कृत। ९. सुरुचि। १०. ढंग। ११. सहायता। १२. आवभगत। १३. चिरमित्र।

और माल गुज़ार बहुत है। अगर किसूकी ख़ाहिश तबीब[1] की हो तो उनको इनसे बख़ूबी मिलवा दीजिएगा और इस बाब मे कुछ ऐसी जल्दी नहीं है। तुमको ख़याल रहे।

ज्वाला सिंघ कल आया। उसके लाये हुए ख़त का जवाब आज डाक मे रवाना हो गया। मिर्ज़ा हसनअली बेग आज़िम कौल है। इन्शा अल्लाह ताला पाख़ल[2] का मुरब्बा या अचार जो हाथ आएगा, वो उनके हात भेज दूंगा। अगर ख़ुदा ने चाहा तो अजज़ाए तारीख़[3] भी उन्ही को दे दूंगा। औरों को दुआ ख़त मे क्या लिखूं? हकीम जी ख़ुद ज़बानी सबसे कह देंगे।

वस्सलाम अज़ असदुल्लाह, रक़मज़दा[4] सुबह शम्बा, १५ मई १८५२ ई०।

१७

(२१ मई, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आगे इससे दो ख़त तुमको भेज चुका हूं। एक बतरीक़ए डाक और एक हकीम इलाहीबख़्श के हाथ। कल मैं क़िले से आता था। राह में मिर्ज़ा हसनअली बेग मिले। उन्होंने कहा—मैं कल जाऊँगा याने आज। ये तुमको मालूम रहे कि कल पजशम्बा[5] था। २९ रज्जब और २० मई की। आज जुमा[6] है। ग़र्ज़ कल रात को पाख़ल का मुरब्बा मर्तबान मे रख कर और उसको मोमीजामा में बन्द किया। और उस पर अपनी मुहर कर कर कल्लू के हाथ मिर्ज़ा के पास भिजवा दिया। कल्लू उनको मुरब्बा देकर रात को अपने घर रहा। जब सुबह हुई और कल्लू आया तो उसने बयान किया कि मिर्ज़ा हसनअली बेग ने बन्दगी कही है और कहा है कि मैं कल न जाऊँगा। परसों जाऊँगा।

---

१. चिकित्सक। २. गूलर। ३. इतिहास के अंश। ४. लिखित। ५. गुरुवार। ६. शुक्रवार।

और मर्तबान को अच्छी तरह एहतियात से ले जाऊँगा। हज़रत को मालूम रहे कि हकीम अहसनुल्लाखाँ की इनायत से मुरब्बा हाथ आ गया है वर्ना अक्सर सायलों[1] को सरकारे शाही से अचार मिलता है। मुरब्बा नहीं हाथ आता। अब इख्तियार मिर्ज़ा साहब का है कि जब चाहे और जिस तरह चाहे उसको ले जाएं। बन्दा बरी उज्जिम्मा[2] है।

अजज़ा ए तवारीख तैमूरिया[3] लिखे जाते हैं और क़ायदा ये है कि जो कोई जुज़्व लिखा जाता है, वो मेरे पास आता है। मैं उसके हाशिये पर मानी उल् लुगात[4] लिखता जाता हूँ। चुनाँचे तीन जुज़्व लिख चुका हूँ। याने तीन जुज़्व लिखे हुए मेरे पास आ चुके हैं और मैं उनका हाशिया लिख चुका हूँ। जब सब आ चुके तो बसबोले पार्सल इरसाल[5] करूँगा। छोटी तक़्ती[6] खुशनायन्दा[7] पर ग्यारह सतर के मिस्तर से लिखे जाते हैं। यक़ीन है कि ग्यारह, बारह जुज़्व होंगे। गोया दो सुल्स[8] तहरीर बाक़ी है। खुदा करे जल्द तमाम हो ताकि मेरी शर्मसारी रफ़ा हो।

ज्वालासिंघ दो बार मेरे पास आया। मैंने रुक्क़ा लिख कर एक ऐसे शख्स के पास भेज दिया कि वो मरजा[9] है उस महकमे के अहले मुकदमे का। अगर हाजत[10] होगी और ज्वालासिंघ ख़ाहिश करेगा तो मैं उसको मौलवी साहब के भी सामने कर दूँगा। तुम मुझको हर्काम इलाहीबख्श का हाल लिखो कि वो तुमसे मिले और सिकन्दरा रवाना हो गये।

तफ़्ता का हाल लिखो कि यही है या अकबराबाद को गये। मेरा दिल गवाही देता है कि आज शाम तक तुम्हारा खत मेरे पास आ जाये। अक्सर

---

१. अभ्यर्थी। २. उत्तरदायित्व से मुक्त। ३. तैमूरवंश के इतिहास के अध्याय। ४. शब्दार्थ। ५. प्रेरणा। ६. पुस्तक की लम्बाई-चौड़ाई। ७. रुचिकर। ८. दो तिहाई। ९. जिससे पास रुजू होते हैं। १०. आवश्यकता।

ऐसा हुआ है कि सुबह को मैंने खत डाक मे भेजा है और शाम को हरकारे ने तुम्हारा खत आकर दिया है। यहाँ अजब इत्तिफ़ाक़ है कि जेठ का महीना है और रोज मेंह बरसता है और जाड़ा पड़ता है। लोग शब[1] को रज़ाइयाँ ओढ़ते हैं और मैं लिहाफ़। नौ रोज़ से यही सूरत देखता हूँ कि दिन-रात मेह बरसता है और सर्दी को शिद्दत है। दो दिन गरमी पड़ी और तीसरे दिन मेह आया और दो-चार दिन बारिश रही। तुम भी लिखो कि तुम्हारे शहर मे क्या आलम है।

सुना होगा तुमने मोमिनखाँ मर गये। आज उनको मरे हुए दसवाँ दिन है। देखो भाई हमारे बच्चे मर जाते है। हमारे हम उम्र[2] मरे जाते है। क़ाफ़िला चला जाता है और हम पा दर रिकाब[3] बैठ है। मोमिनखाँ मेरा हम अश्र[4] था और यार भी था। बयालीस-तेतालीस बरस हुए, याने चौदह-पन्द्रह बरस की मेरी और उस मरहूम[5] की उम्र थी कि मुझमे-उसमें रब्त पैदा हुआ। इस अर्से मे कभी किसी तरह का रंज व मलाल दरमियान नही आया। हज़रत चालीस बरस का दुश्मन भी नही पैदा होता। दोस्त तो कहाँ हाथ आता है। ये शख्श भी अपना वज़ का अच्छा कहने वाला था। तबीयत उसकी मानी आफ़रीं[6] थी। आज अपने दरियाफ़्त किया होगा कि जो चाहा तुमसे बाते करने को, ये मैं बाते कर रहा हूँ। खत नही लिखता, मगर अफ़सोस कि इस गुफ़्तगू मे वो लुत्फ़ नही जो मुकालिम ए ज़बानी[7] मे होता है। याने मैं ही बक रहा हूँ। तुम कुछ नही कहते। वो बात कहाँ कि मेरी बात का तुम जवाब देते जाओ और तुम्हारी बात का मैं जवाब देता जाऊँ। क्या करूँ, अजब तरह से ज़िन्दगी बसर कर रहा हूँ। मेरे हालात सरासर मेरे खिलाफ़ तबीयत[8] है। मैं तो ये चाहता हूँ कि चलता-फिरता रहूँ। महीना भर वहाँ, और दो महीने वहाँ, और सूरत ये के गोया मुश्कें बँधा हुआ पड़ा हूँ, कि हरगिज़

---

१. रात। २. समवयस्क। ३. पाँव घोड़े की रकाब में। ४. समकालीन। ५. स्वर्गीय। ६. अर्थोत्पन्न करने वाली। ७. वार्तालाप। ८. स्वभाव विरुद्ध।

जुबिश नहीं कर सकता। ला हौल वला क़ुव्वता इल्लाबिल्लाह्[1]। काग़ज तमाम हो गया और हनोज़ बातें बहुत बाक़ी है। इस खत में मैंने अपने बच्चों को भी दुआ नहीं लिखी। भाई, तुम कह देना। अपने खत में उनकी खैर व आफियत लिखना।

२१ मई, १८५२ ई०, बरोज़ जुमा।

१८

(मई या जून, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आपका खत आया। पाखल के मुरब्बे का पहुँचना मालूम हुआ। यारब, ज़किया और मेरे अब्दुस्सलाम की आँखें अच्छी हो गई हों। बारह जुज़्व अजज़ाए नवादिर के पहुँचते हैं। इनकी जिल्द बँधवा लेना, वर्ना औराक़[2] तबाह हो जाएँगे। वो चार रुपये जो आपने शेख बल्शुद्दीन के हाथ भेजे थे, वो मैंने नवाब साहब को याने वो जो किताबत[3] करते हैं, दे दिये थे। एक नुस्खा उन्होंने लिखा, वो मैंने उनसे लेकर एक और जगह भेज दिया, फिर उनको कसरते कार[4] से फ़ुर्सत इस तहरीर की न हुई। अब उन्होंने अज़राहे मेहरबानी ये लिख कर मुझको इनायत किये। आपने एक खत मे मुझको लिखा था कि उजरते कातिब[5] में जो कुछ चाहे हो वो मुझसे मँगवा भेजो। वल्लाह, मैंने अपने पास से कुछ नहीं दिया। सिर्फ़ इसी चार रुपये मे काग़ज और मुज्दएकातिब[6] है। आप खातिर जमा रखिए। महसूल डाक दीजिए और

---

१. ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य का भय नहीं। २. पृष्ठ (ब. व.)। ३. लिखने का काम। ४. कार्य-आधिक्य। ५. लिखने वाले का पारिश्रमिक। ६. लिखने वाले की मजदूरी।

किताब ले लीजिए, हाँ भाई, शेख़ वज़ीरुद्दीन बहुत तबाह और ख़राब है। इसका दादा मौज़िज़ आदमी था और मेरा बड़ा दोस्त था। ये तुम्हारा भी नियाजमन्द है, हत्तुलवसा[1] ख़याल दौड़ाओ और गुंजाइश निकालो। अगर कहीं नौकर करा सको तो गोया मुझ पर एहसान होगा।

ज्वालासिंघ कल तीन बार मेरे पास आया है। कुछ हरजागो[2] आदमी है। मैंने उसे रुक्का लेकर एक ऐसे शख़्स के पास भेज दिया था, जो हाकिम की ज़बान और हाकिम के जिगर का टुकड़ा है। मेरा जो काम था मैंने किया। अगर वो कहेगा तो हाकिम से भी मिला दूँगा। कल तफ़्ता का ख़त आगरा से आया, बहुत दिन के बाद। अच्छी तरह है। अर्ज़ी शेख़ की पहुँचती है। इसका जवाब मुनासिब लिखिए और कोशिश कीजिए।

भाई, ख़ुदा के वास्ते ग़ज़ल की दाद देना। अगर रेख़्ता[3] ये है तो मीर[4] व मिर्ज़ा[5] क्या कहते थे। अगर वो रेख़्ता था तो फिर ये क्या है? सूरत इसकी ये है कि एक साहब शाहज़ादागाने तैमूरिया में से लखनऊ में ये ज़मीन[6] लाये। हुज़ूर ने ख़ुद भी ग़ज़ल कहो और मुझे भी हुक्म दिया। सो मैं हुक्म बजा लाया और ग़ज़ल लिखी। पहले तुम एक बात मेरी सुन लो, फिर ग़ज़ल पढ़ो। शेख़ वज़ीरुद्दीन बीमार होकर डाक से कौल को रवाना हुआ है। मैं अगरचे ख़िदमतगुज़ारे ख़ल्क़[7] पर उनकी कुछ ख़िदमत बजा न ला सका और उनसे शर्मिंदा रहा। तुम उनकी दिलजोई करना। आदमी उनके घर भिजवाना और उनकी

---

१. यथासम्भव। २. बकवास करने वाला। ३. हिन्दी कविता। ४. 'मीर' मीर मुहम्मद तक़ी बिन अब्दुल्ला, उर्दू के महाकवि। ५. मिर्ज़ा मज़हर जाने जाना, उर्दू के महाकवि, आचार्य, आध्यात्मिक महापुरुष। ६. ग़ज़ल का अन्त्यानुप्रास, अन्त्यानुप्रास से पहले का अनुप्रास और छन्द। ७. संसार का सेवक।

ख़बर पूछना और भाई अगर हो सके तो किसू के अपने इलाक़े मुख़्तारकारी, सिरश्ते की अरायज़[1], नक़लनवीसी कुछ न कुछ उनके वास्ते कर देना। ज़रूर ज़रूर—

लो अब ग़ज़ल पढ़ो—

सब कहाँ कुछ लाल ओ गुल मे नुमायाँ हो गई
ख़ाक मे क्या सूरते होगी कि पिन्हाँ[2] हो गई
याद थी हमको भी रंगारंग बज़्म आराइयाँ[3]
लेकिन अब नक़्शो निगारे[4] ताके निसियाँ[5] हो गई
थी बनातुन्नाश[6] गर्दू दिन को पर्दे मे निहाँ[7]
शब को उनके जी मे क्या आई कि उर्यां[8] हो गई
क़ैद मे याक़ूब ने ली गो न यूसुफ़ की ख़बर[9]
लेकिन आँखे रोज़ने दीवार[10] ज़िन्दाँ[11] हो गई
सब रक़ीबो[12] से हूँ नाख़ुश पर ज़नाने मिस्र से
है ज़ुलेख़ा[13] ख़ुश के महवे[14] माहे कनआँ[15] हो गई
जू ए ख़ूं[16] आँखो से बहने दो कि है शामे फ़िराक़[17]
मैं ये समझूंगा के शम ए दामफ़ीरोज़ाँ[18] हो गई

---

१ प्रार्थना-पत्र (ब व.)। २ गुप्त। ३ गोष्ठी की सजावट। ४. चित्रकारी, अलंकरण। ५ भूल की ताक। ६ सप्तर्षि (तारे)। ७. गुप्त। ८. नग्न। ९. याकूब के बारह पुत्र थे। इनमे से एक का नाम यूसुफ था। बडे भाइयो ने यूसुफ को कुएँ मे लटका कर पिता को सूचना दी थी कि यूसुफ़ की मृत्यु हो गई। रोते-रोते याकूब की आँखे चली गई थी। १० दीवार का छिद्र। ११. कारागार। १२. प्रति प्रेमी। १३. मिश्र की रानी, यूसुफ़ की प्रेमिका, आगे चलकर यूसुफ ने उससे विवाह किया। १४. तल्लीन। १५. यूसुफ़। १६. ख़ून की नदी। १७. वियोग की रात। १८. अधिक प्रकाशमान।

मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम

इन परीज़ादों से लेंगे ख़ुल्द[1] में हम इन्तक़ाम[2]
क़ुदरते हक़[3] से यही हूरे अगर वाँ हो गई

नींद उसकी है नसीब उसके है राते उसकी है
तेरी ज़ुल्फ़े जिसके बाज़ू पर परीशाँ हो गई

मै चमन मे क्या गया गोया दबिस्ताँ[4] खुल गया
बुलबुले सुनकर मेरे नाले[5] ग़ज़लख़ाँ[6] हो गई

वो निगाहे क्यो हुई जाती है या रब दिल के पार
जो मेरी कोताहि ए किस्मत[7] से मिज़्गाँ[8] हो गई

बस के रोका मैने और सीने मे उभरें पै ब पै[9]
मेरी आहे बख़िय ए चाके गिरीबाँ[10] हो गई

वाँ गया भी मै तो उनकी गालियो का क्या जवाब
याद थी जितनी दुआएँ सर्फे दरबाँ[11] हो गई

हम मुवह्हिद[12] है हमारा केश[13] है तर्के रुसूम[14]
मिल्लतें[15] जब मिट गई अजज़ाए ईमाँ हो गई

जो फ़िज़ा[16] है बादा[17] जिसके हाथ मे जाम[18] आ गया
सब लकीरे हाथ की गोया रगेजाँ[19]

रग से ख़ूगर[20] हुआ इन्साँ तो मिट जाता है रज
मुश्किले मुझ पर पड़ी इतनी कि आसाँ हो गई

---

१. स्वर्ग । २. बदला । ३. ईश्वर का सामर्थ्य । ४. पाठशाला । ५. रुदन । ६. गज़ल गायक । ७. भाग्य की अनुदारता । ८. पलके । ९. पग-पग । १०. फटे गरीबाँ (कुर्त्ते का गला) की बखिया । ११. द्वारपाल का खर्च । १२. एकेश्वरवादी, एक सम्प्रदाय जो केवल ईश्वर को मानता है । १३. धर्म । १४. रुढ़ियों का निवारण । १५. जाति । १६. आयुवर्धक । १७. शराब । १८ मधुप्याला । १९. महाध्मनी । २०. अभ्यस्त ।

यूँ ही गर रोता रहा 'ग़ालिब' तो ऐ अहले जहाँ[1]
देखना इन बस्तियों को तुम के वीराँ[2] हो गई

१६

(१६ नवम्बर, १८५२ ई०)

भाई साहब,

आपके दो खत आये। पहले खत मे आपने एक बैत के माने पूछे है वो सुनिये--

तू गोई, मगर मेहर जेरे जमी
फीरोजाँ फोह बूवद पुश्तेनिगी[3]

ये शेर शबे मेराज[4] तौसीफ[5] मे है कि वो शब ऐसी रौशन थी कि बसबबे रोशनी के ज़मीन ऐसी चमकती थी कि जैसे डाँक[6] से नगीना चमक जाता है। आफताब रात को तहतुल अर्ज[7] होता है। और डाँक भी नगीने के तले लगाते है और नगीना बकद्रे डाँक की हकीकत के चमकता है। पस, जिस नगीं के नीचे आफताब डाँक होगा, वो नगी कितना दरख्शाँ[8] होगा। फोह फारसी लुगत[9] है बमानी डाँक के।

दूसरे खत का जवाब क्या लिखूं? तुमसे शर्मिन्दा हूँ, पडित ज्वालानाथ साहब से शर्मसार। मै तवारीखे तैमूरिया लिखता हूं तो सिर्फ हालात व

---

१. ससार के लोगो। २ उजाड़। ३. तू कहता है, किन्तु सूर्य जब पृथ्वी के नीचे जाता है, तो उसकी चमक बढ़ जाती है। जैसे नगीने के नीचे डाँक लगाने से वह और चमकता है। ४. जिस रात हजरत मुहम्मद ने ईश्वर का साक्षात्कार किया। ५. प्रशसा। ६. चमकदार पन्नी। ७. पृथ्वी के नीचे। ८. प्रकाशमान। ९. शब्द।

वाक़ेआत[1] लिखता हूँ। मुल्क की जमाबन्दी और अज़ला[2] व मुज़ाफ़ात[3] की तहक़ीकात से मुझे काम नहीं। और अलीगढ़ कौल का सूबा नहीं, सरकार हो तो हो। और इस तरह का मामूरा[4] नहीं कि कभी किसी अहद मे बादशाह का तख्तगाह[5] रहा हो। जैसे बदायूँ और जौनपूर और कड़ा मानिकपूर, कि,ये भी मानिन्द कौल के छोटी-छोटी बस्तियाँ है और तख्तगाह रही है। कौल मे कभी ऐसा इत्तिफाक नहीं हुआ।

दफ़्तरे शाही का हाल क्या लिखूं? हजरत फ़िरदौस मजिल शाहआलम के अहद का कागज सो भी वो कि जनरल लार्ड लेक साहब के अरायज[6] और बादशाह के शुक्कों[7] की नकल वो तो है और बाकी तमाम दफ़्तर मुआफ़िक मसल मशहूर के गाव खुर्द हो गया।[8] जो किताबे कि हिन्दुस्तान मे मुतारिफ[9] है, वो भी तो नहीं। मुल्क के बंदोबस्त और परगनाबन्दी और जमाबन्दी का क्या जिक्र? जो कुछ पंडित साहब ने अज रू ए तर्जुमा आईने अकबरी[10] लिखा है उसमे ज़्यादा कहीं से हात न आएगा। अगर रुक्के मे ये लिखा होता कि ये अज रू ए तर्जुमा आईने अकबरी है, तो मैं कहीं से आईने अकबरी बहम पहुंचा कर उसमे देखता। अब मैं कहां से दरियाफ्त करूँ? पंडित साहब को मेरा सलाम कहिए और ये खत उनको पढा दीजिये। मैं फने तारीख़ व मसाहत[11] व सियाक[12] से इतना बेगाना हूँ कि इन फनों को समझ भी नहीं सकता। कारपर्दाजाने दफ़्तरे शाही[13] खुलासा ए हालात अज रू ए कुतबे उर्दू मे लिख कर मेरे पास भेज देते है। मैं उसको फारसी कर कर हवाले करता

१ घटनाएँ। २ जिले। ३ नगर के आसपास का प्रदेश। ४. आबाद। ५ राजधानी। ६. आवेदन-पत्र (ब० व०)। ७ आदेश-पत्र। ८. गाय खा गई, नष्ट हो गया। ९. परिचित। १०. 'आईने अकबरी' के अनुवाद के अनुसार। ११ ज्यामिति। १२ गणित। १३. शाही कार्यालय के व्यवस्थापक।

हूँ। मेरे हाँ एक किताब भी नही। मै इसी क़दर हूँ कि नज्म व नस्र[1] अपनी इस्तेदाद[2] के लिख सकता हूँ। मुअर्रिख[3] नही हूँ।

मा किस्सए सिकन्दरो दारा न खान्दएम
अज मा बजुज हिकायते मेहरो वफा मपुर्स[4]

भाई साहब, तुम्हारी जान की कसम। मै इस फन से इतना बेखबर हूँ कि ये भी अच्छी तरह नही समझा कि पडित साहब ने क्या कुछ लिख लिया है और वो क्या है, जिसकी उनको ख्वाहिश है। मेरे भाइयो मे नवाब जियाउद्दीन अहमदखाँ खल्फ[5] नवाब अहमदबख्शखाँ मरहूम[6] के वो फने नज्म व नस्र मे मेरे शागिर्द है। अब जो उनकी तबीअत फने तारीख की तरफ आई तो उसमे यगाना[7] रोजगार और बडे दाना व होशियार हो गये है। मैने उनसे चाहा था कि कुछ दरियाफ्त करके लिख भेजूँ। सो उन्होंने कहा कि 'आइने अकबरी' के सिवा और किसी किताब मे कुछ पता न पाया जायगा। हाँलाकि कोई किताब उस बाब की ऐसी नही कि उनकी नजर से न गुजरी हो और खुलासा इसका हाफिजे[8] मे मौजूद न हो। मेरा वो हाल जिस पर मुझको भरोसा, उसका ये बयान। बादशाह के कुतुबखानो की वो सूरत। बन्दगी और शर्मिन्दगी।

निगाश्ता व खाँ दाश्ता[9] जुमा, १९ नवम्बर, १८५२ ई०।

अज—असदुल्लाह्

---

१. कविता और गद्य। २. योग्यता। ३. इतिहास लेखक। ४. हमने सिकन्दर और दारा की कहानी नही पढ़ी है। हमसे प्रेम-कथा के अतिरिक्त कुछ न पूछो। ५. पुत्र, उत्तराधिकारी। ६. स्वर्गीय। ७. अद्वितीय। ८. स्मरण-शक्ति। ९. प्रेषित।

मुंशी नबी बख्श 'हक़ीर' के नाम

२०

(८ जनवरी, १८५३ ई०)

भाई,

मुझको तुमसे बड़ा ताज्जुब है कि उस बैन के माने में तुमको ताम्मुल[1] रहा। इसमें वो इस्तिफ़्हाम[2] आ पड़े हैं कि वो बतरीके तान व तारीज[3] माशूक से कहे गये हैं।

मौत की राह न देखूं, क्यों न देखूं ? मैं तो देखूं ही गा, कि, बिन आये न रहे। क्योंकि मौत की शान में से ये बात है कि एक दिन आये ही गी। इंतिज़ार जाया न जाएगा। तुमको चाहूँ ? क्या ख़ूब ? क्यों चाहूँ कि न आओ तो बुलाये न बने। माने अगर तुम आपसे आये तो आये और अगर न आये तो फिर क्या मजाल कि कोई तुमको बुला सके। गोया ये आजिज़ माशूक़ से कहता है कि अब मैं तुमको छोड़ कर अपनी मौत का आशिक हुआ हूँ। इसमें ये ख़ूबी है कि बिन बुलाये, बग़ैर आये नहीं रहती। तुमको क्यों चाहूँ कि अगर न आओ तो तुमको बुला न सकूं। बात ये है कि पढ़ने में तुमको चाहूँ, कि, न आओ—ये जुम्ला मिला हुआ समझ में आता है तो आदमी हैरान होता है। तुमको चाहूँ, अलग है कि न आओ तो बुलाये न बने—ये जुम्ला अलग है, तुमने ग़ौर न की वर्ना ख़ुद बख़ुद कैफ़ियत इस तारीज व इस्तिफ़्हाम[4] की हासिल हो जाती।

हाँ साहब, अजमेर से ख़त आ गया। पार्सल पहुँच गया। तरद्दुद रफ़ा हुआ। अब जो कुछ होना है वो हो रहेगा। महले तशवीश व तरद्दुद[5] नहीं। हकीम नसीमुल्लाह् साहब की रवानगी में पाँच-छः रोज़ और है। अगर

---

१. सन्देह। २. जिज्ञासा। ३. उलहना। ४. आक्षेप और जिज्ञासा। ५. सन्देह और आशंका का स्थान।

हाथ आ गया तो पाखल का मुरब्बा, अचार, जो कुछ होगा उनके हाथ भेज दूंगा।

मुंशी अब्दुललतीफ साहब को दुआ पहुँचे। नसीरुद्दीन को दुआ पहुँचे। हमारे शेख इकरामुद्दीन और तुम्हारे अब्दुस्सलाम को दुआ पहुँचे। लो साहब, अब कोई मुझसे गिला नहीं कर सकता। मैं सब के बाद अपनी प्यारी भतीजी जकिया बेगम को दुआ लिखता हूँ। हक़ताला उसको जीता रखे और मुझको उसकी सूरत दिखलावे, वर्ना अब आगे बढ़ कर जब वो बीबी साहबज़ादी बन जाएगी तो हमारे सामने काहे को आएगी? हमसे छुपेगी। किस वास्ते कि मैं सचमुच का चचा तो हूँ नहीं, जबर्दस्ती अपनी तरफ़ से चचा बन गया हूँ। तफ़्ता को मेरा सलाम कह देना और कह देना कि तुमको अब कोई नई बात नहीं है जो लिखूं। वस्सलाम।

मुहर्रिरा शम्बा हश्तुम जनवरी १८५३ ई०।

अज़—असदुल्लाह्

२१

(फरवरी-मार्च, १८५३ ई०)

भाई साहब,

कई दिन हुए कि आपका उतूफ़तनामा[1] पहुँचा। जवाब क्या लिखता? हकीम नसीमुल्लाखां रवाना हो गये थे। पाखल के मुरब्बे का हाल उनसे ज़बानी कह दिया था। सुन लिया होगा? हयातबख्श बाग खासए ख़ुसरवी[2] में एक दरख्त है पाखल का। मीज़ान[3] व सुम्बुला[4] में वो बार लाता है। इसका अचार-मुरब्बा बन जाता है। अबके वो नखल[5] बार न लाया[6]। नाचार अबके मुरब्बा-अचार न बनाया। तुम्हारा कमतरीन भाई मजबूर है। बन्दा परवर लफ़्ता से मुलाक़ात होती रहती होगी। मुझको लिखिए कि अब वो कैसे हैं और

१. कृपा-पत्र। २. बादशाह का निजी। ३. तुला (राशि)। ४. कन्या (राशि)। ५. पेड। ६. न फलना।

किस फ़िक्र में है। अजमेर जाएँगे या नहीं? मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को दुआ पहुँचे। ज़किया बेगम को दुआ पहुँचे। और ये मालूम हो कि तुमने लिखा था वो मुझको मालूम हुआ और मेरी खातिर जमा हुई। परवरदिगार तुमको जीता रखे और इफ़्फ़त[1] व इस्मत[2] व हुर्मत[3] और माल वा दौलत अता करे। नसीरुद्दीन और अब्दुस्सलाम को दुआ पहुँचे।

२२

(१७ मार्च, १८५३ ई०)

लो भाई, अब तो ज़किया हमारे-तुम्हारे बराबर हो गई। आखिर हम तुम भी तो इस उम्र में सूर ए मुबारिका अलम नश्रह[4] पढ़ते होंगे। इन्शा अल्लाह् ताला अम्मा यतासालून[5] का सीपारा[6] तमाम न होगा कि मैं आनकर उनका सबक़ सुनूंगा। वल्लाहुअला कुल्ले शईन कदीर।[7]

मुसहिल मैंने इस वास्ते लिया था कि मेरे आज़ार[8] में दर्द रहता था। और फ़ुज़ूल मेरे मेदे में जमा हो गये थे, सो इनायते एज़दी[9] से मक़सूद[10] हासिल हो गया। अब मैं सबुकसार[11] और तनदुरुस्त हूँ। इमामुद्दीनखाँ से मेरा ऐतक़ाद, उनकी मुझ पर इनायत बदस्तूर, लेकिन अहसनुल्लाखाँ साहब से रब्त बढ़ गया और अक्सर मुलाक़ात होती रहती है और ये भी पाय ए इल्म व अमल[12] में किसी से कम नहीं है, इस वास्ते नहीं कि राय के मुताबिक़ तन्क़िया[13] किया गया।

---

१. पवित्रता। २. निष्कलकता। ३. मर्यादा। ४. क़ुरान का एक आरम्भिक सूरा (अध्याय)। ५. अम्मायता सालून नामक कुरान का एक खंड। ६. कुरान का एक खंड। ७. ईश्वर प्रत्येक पदार्थ पर अपनी सामर्थ्य रखता है। ८. अंग। ९. ईश्वरीय कृपा। १०. अभीष्ट। ११. हल्का, मुक्त। १२. ज्ञान और योग्यता। १३. विरेचन, आँत की सफ़ाई।

हकीम नसीमुल्लाह साहब तुमसे मिले या मुंशी अब्दुललतीफ से मिले और कुछ न कहें, मुझको इससे कुछ काम नहीं। मुद्दआ ये कि पाखल के मुरब्बे का पयाम उनकी तह्वील[1] है। वो आपसे कह दे। हरचन्द वो क्या है जो कहा चाहिए। मगर मुझ पर से एहतिमाले[2] कुसूर जाता रहता है और वो पयाम ये है कि पाखल का हयातबख्श बाग़ में कुल एक दरख्त है और वो अक्तूबर-नवम्बर में बार लाता है। उसके असमार[3] का अचार-मुरब्बा बना लेते हैं। अब के साल वो दरख्त कमबख्त बारवर[4] न हुआ। इस राह से मुरब्बा हाथ न आया।

जैपुर से हनोज़ कोई अम्रे फैसल[5] नहीं मालूम हुआ। किताब और अर्ज़ी राजा साहब के पास भेजी है और वो खुश हुए हैं। और दीवान को अपनी नजर में रखते हैं, और पहुँचने वाले से अर्ज़ी के जवाब का वादा है। नये एजेंट के आने का हंगामा था। वो भी खत्म हुआ। अब देखिए क्या होता है। दिल बुझ गया है, जो इब्तिदा में रंग उम्मीद का था वो अब नहीं है।

नीम की पत्तियाँ तुम पीते हो। खूब करते हो—ये के इसको खाकर एक बेसन की टिकिया घी डाल कर खाते हो। ये तरकीब आमियाना[6] है। हाँ, ये मुसल्लम, कि, चने की रोटी इन अमराज[7] में अगर गिज़ा मुनहसिर[8] इसी पर की जाए और एक मुद्दत तक ये तरीक निभ जाए तो बहुत नाफे[9] है। मैं एक बात तुम्हें और बताता हूँ। तुम नीम की मस्ती[10] पिया करो, याने बाजा नीम रिसता है और उसमें से एक रतूबत[11] निकल कर जम जाती है। इसे नीम की मस्ती कहते हैं। सबील[12] इसकी यही है कि वो पैसे भर से शुरू करो और पाँच माशा बढ़ाते जाओ। जब पाँच तोला पर आ जाओ तो परहेज़ बदस्तूर। बेशतर चने की रोटी खाया

१. अधिकृत, हस्तान्तरित। २. सन्देह। ३. फल (ब. व.)। ४. फलवाला। ५. निर्णय। ६. सामान्य, साधारण जनता की। ७. रोग (ब. व.)। ८. निर्भर। ९. लाभकर। १०. नीम का मद जल। ११. द्रव। १२. उपाय।

करो। दवा पीकर टिकिया खानी जायद है। चने की रोटी के साथ वक़्तगिज़ा[1] के घी बकदरे बर्दाश्ते तबा[2] खाओ। घिया, तोरी, खिरने का साग, बथवे का साग, खीरा, ककड़ी, जिमका क़लिया[3] मोरगूब[4] हो खाओ। देखो तो ये तरकीब मुआफिक आती है या नही। बमुशी अब्दुललतीफ दुआ ब रसद। नसीरुद्दीन व ज़किया बेगम व अब्दुस्सलाम व कुलसूम बेगम दुआ खानन्द[5]।

पजशम्बा,[6] १७ मार्च १८५३ ई०।

—अज़-असदुल्लाह्

२३

(४ अप्रैल, १८५३ ई०)

हजरत,

अजब तमाशा है। मुंशी हरगोबिन्दसिंघ का इजहार तो ये है के मुंशी साहब तो मेरे सामने हाजरुस मे हो आये और करीना[7] वाँ इस पर है कि तुम हनोज हाजरुस हो और कौल नही आये। करीना ये कि खत आपने मुझको नही लिखा। कसोदे के लिफाफे की रसीद नही लिखी। क्यों साहब मैंने क्या तक्सीर[8] की है? मेरी क्या खता है? मुझको आप क्यो भूल गये? मैं भी तुमको खत न लिखता लेकिन क्या करूँ? मुंशी हरगोबिन्दसिंघ ने बेगम का पयाम भेजा। नाचार उसका जवाब लिखना पडा। इस जिम्न मे तुमको भी कई सतरें लिखी हैं। वो कहते थे, कि बेगम ने कहा है, कि, चचा मैं कुरान पढती हूँ। पस, मेरी तरफ मे दुआ कहा चाहिए और कहा चाहिए कि

---

१. भोजन करते समय। २. जितना सहन हो सके। ३. भूना मांस। ४. रुचिकर। ५. आशीर्वाद माँगना। ६. गुरुवार। ७. अनुमान। ८. अपराध।

बुआ तुम बहुत भला करती हो कि कुरान पढ़ा करती हो। परवरदिगार तुमको उम्र, दौलत व इस्मत[1] और तनदुरुस्ती और राहत दे। मुंशी अब्दुल्लतीफ साहब को दुआ और नसीरुद्दीन व अब्दुस्सलाम और कुलसूम को दुआ पहुंचे।

हाँ भाई साहब, अब मैं जुदा खत क्या लिखूं, जरूर जरूर याद कर कर मुंशी हरगोपाल साहब को मेरी दुआ कहो और ये कहो के भाई वो तो मैं तुमको इत्तिला दे चुका हूं कि अहालीए राज जैपुर[2] ने हरदेवसिंघ से बाद होली रुख्सत करने का वादा किया है और जानी साहब ने उसके वास्ते सॉडनी भेजनी चाही है। अगर वादा वफा[3] हुआ होता और हरदेवसिंघ अजमेर पहुँचा होता तो अलबत्ता राजा का शुक्का[4] और रावल का खत और वो मेरे भेजे हुए लिफाफे बाबू साहब मुझको भेज देते और उनवाने-चिगूनगी ए रुख्सत[5] मे इत्तिला देते। नहीं मालूम कि रुख्सत अमल मे आई या न आई। अगर आइ तो जानीजी शायद अजमेर मे नहीं हैं। भरतपूर गये हुए हैं। अब मुझे वो तशवीश लाहक है। एक तो ये जिसका जिक्र किया, बल्कि सच पूछो ये कुछ नहीं एक बागीचा है। असल तशवीश बाबू साहब की तरफ से है। तुम अगर वहाँ नही हो, मगर, बनिस्बत मेरे, तुमको इत्तिला होती रहती है। क़िस्सा मुख्तसर, जो कुछ तुमको मालूम हुआ है, फौरन मुझको लिख भेजो। बल्कि मैं उस वक्त तक मुतजिर[6] हूं कि शायद कोई खत तुम्हारा आ जाये। भाई तुमको मेरे सर की कसम। ये सतरे मियाँ तफ्ता को पढा देना। वस्सलाम।

मुहर्रिरा शम्बा, चारुम अप्रैल १८५३ ई०।

अज्ञ-असदुल्लाह्

---

१. पातिव्रत्य। २. जयपुर राज्य के अधिकारी। ३. ऊँटनी। ४. राजा का आदेश। ५. अवकाश कैसे प्राप्त होगा इसके सम्बन्ध मे। ६. प्रतीक्षक।

मुंशी नबी बख्श 'हकीर' के नाम

२४

(१० अप्रैल, १८५३ ई०)

भाई साहब,

कैसी तारीख और कैसी नकल ? क्या फरमाते हो ? पहले मुझसे हकीकत तो पूछ लिया करो । मेरा तो ये अकीदा[1] है कि जो नज्म व नस्र तुम्हारी नजर से न गुज़रे वो जाये है ।

वाये बरजाने सुखन गर बसुखन्दाँ न रसद[2]

अब सुनिए माजरा क्या है ? जब हुमायूँ के हाल तक पहुँचा तो मैंने अजराहे उज्र व हीला, बल्कि वसीले इजहारे हकीकत वाकई हकीम साहब कार फरमा से कहा कि, मुझसे इन्तिखाबे हालात[3] मुमकिन नही । आप मुद्दआ कुतुबे सियर[4] निकाल कर जबाने उर्दू मे एक मसविदा इसका लिखवा कर मेरे पास भेज दिया कीजिए । मै उसको फारसी कर कर तुमको दे दिया करूँगा । उन्होने उसको कुबूल कर के इब्तिदाए आफरीनश[5] आलम व आदम से मेरे पास मसविदए उर्दू भेजा तो अब गोया एक और किताब लिखनी पडी। मैंने उसका छोटा-सा दीबाचा[6] लिखकर एक और ही अन्दाज की इबारत मे लिखना शुरू किया। आदम से लेकर चंगेजखाँ तक उन्होंने मेरे पास मसविदा भेजा। मैंने अपने तौर पर लिखा और मसविदा हवाले किया । रमज़ान के महीने से, कि, आज उसको दस महीने हुए वो मसविदा आना मौकूफ हो गया । बहमाजहत[7] चार जुज़्व[8] होंगे । दो-चार बार मैंने उनमे

१. विश्वास । २. यदि काव्यमर्मज्ञ ने कविता न पढी तो वह व्यर्थ है। ३. घटनाओं का चुनाव । ४. आत्मकथा। ५. सृष्टि का आरम्भ। ६ भूमिका। ७. प्रत्येक प्रकार मे । ८. फर्मा (छपाई) ।

तकाज़ा किया। यही जवाब सुना कि अब रमज़ान है। फिर कहा कि ईद का हंगामा है। मैंने सोचा कि मुझको क्या? मैं क्यो तालिबे मशक़्क़त[1] हूँ। तकाज़ा मौक़ूफ़ किया। वो चार जुज़्व मेरे लिखे हुए हकीम साहब के पास होंगे। अब कहाँ उनसे माँगूं और क्यो माँगूं? जाने दो। दूर करो। जो बिना उठी ही नही उससे गर्ज़ क्या?

जैपूर का हाल क्या पूछते हो? एक गदाई[2] की तरह निकली थी। एक दोस्त मददगार हुआ और उस तरह को उसने कमाल को पहुंचाया। रावल मुख्तारराज और सादुल्लाखाँ वकीले राज ये दोनों ज़रियए हुसूले मुद्दआ[3] ठहरे। वहाँ का रग ये हो गया कि रावल भागता फिरता है और वकील इस्तीफा बगल मे दाबे रहता है। राजा लडका है और कोई मुहर्रिक[4] नही। बस, अब इस अम्रेख़ास[5] को भी हमने फ़ेहरिस्ते हसरते हाए देरीना[6] मे लिख दिया। वल्लाहो अला कुल्ले शइन क़दीर[7]। सब बच्चों को, खुर्शीद बेगम को दुआ कहना और मेरी तरफ से प्यार करना।

यकशम्बा दहुम अप्रैल, १८५३ ई०। वस्सलाम।

—अज—असदुल्लाह्

२५

(१०-२३ अप्रैल, १८५३ ई०)

भाई,

यहाँ बादशाह ने किले मे मुशाइरा मुकर्रर किया है। हर महीने मे दो बार मुशाइरा होता है पन्द्रहवी को और उन्तीसवी को। हुज़ूर फारसी का

१. श्रम का इच्छुक। २. भिक्षावृत्ति। ३ वाञ्छनीय वस्तु की प्राप्ति के साधन। ४. प्रस्तावक। ५. विशेष कार्य। ६. दीर्घकालीन आकांक्षाओं की सूची। ७. ईश्वर का प्रभुत्व सब वस्तुओ पर है।

एक मिस्रा और रेख्ता का मिस्रा तरह करते हैं।[1] अबके जमादिउस्सानी[2] को तीसवी को जो मुशाइरा हुआ उसमे मिस्र[3] ए फ़ारसी ये था--

'जी तमाशागाह गिरियाँ मी रवद'

रेख्ता का मिस्रा ये था--

खुमारे इश्क़ हमे किस क़दर है क्या कहिए
नज़र है क्या कहिए, ख़बर है क्या कहिए

मैंने एक ग़ज़ल फ़ारसी और एक रेख्ता मुआफ़िक़ तरह के और दूसरा रेख्ता इसी तरह मे से एक और सूरत निकाल कर लिखा। वो तीनो ग़ज़ले तुमको लिखता हूँ। पढ लेना और मियाँ तफ़्ता को भी दिखा देना। बच्चो को दुआ कह देना। तुम्हारा दूसरा खत मय रुक्क़ए मलफ़ूफ़ा[4] पहुँच गया है।

वस्सलाम वल इक्राम।

चाक अज़ जेबम ब दामाँ मी रवद
ता चे बर चाक अज़ गरीबाँ मी रवद[5]
जौहरे तबअम दरख्शानस्त लेक
रोजम् अन्दर अब्र पिन्हाँ मी रवद[6]

---

१. समस्यापूर्त्ति के लिए एक चरण देते हैं। २. एक मास का नाम। ३. चरण। ४ इस मनोरंजन-गृह से रोता हुआ जाता है। ५. लिफ़ाफ़े मे बन्द रुक्के के साथ। ६ जेब से लेकर दामन तक कुर्त्ता फट गया है। इस फटाव का क्या होगा जो गले से प्रारम्भ हुआ है। ७. मेरे स्वभाव की विशेषता चमकती है किन्तु मेरा दिन घनघोर बादलों मे छिप जाता है।

गर बुवद मुश्किल म रज, ऐ दिल के कार
चूँ रवद अज़ दस्त आसां मी रवद[1]
जुज सुखन कुफ्रे व ईमाने कुजास्त
खुद सुखन दर कुफ्रो ईमां मी रवद[2]
हर शमीमे रा मुशामे दर खुरस्त
बू ए पैराहन ब कनआँ मी रवद[3]
आयद व अज जौक न नामम के कीस्त
ता रवद पिन्दास्ती जाँ मी रवद[4]
मी बुरद अम्मा न यकजा मी बुरद
मी रवद अम्मा परीशाँ मी रवद[5]
हर के बीनद दर रहश गोयद हमी
किब्ल ए आतिश परस्तां मी रवद[6]

---

१. हे मन, कोई कार्य कठिन हो तो दुःखी मत हो, काम हाथ से छूट जाता है तो सरल हो जाता है। २ 'पाप' और 'पुण्य' शब्द के अतिरिक्त कुछ नहीं है। कथन स्वयं पाप और पुण्य में विलीन हो जाता है। ३ प्रत्येक सुगन्धि के सूंघने के लिए अच्छी नाक होनी चाहिए। कपड़े की गन्ध कनआँ तक जाती है। (कनआं = यसुफ के पिता याकूब का निवास-स्थान) यूसुफ के भाइयों ने यूसुफ को कुएं में लटका कर, पिता से कहा था कि यूसुफ को भेड़िया खा गया। भाई यूसुफ के कपड़े ले गए थे। पिता को इन वस्त्रों में यूसुफ़ की गन्ध आई थी। ४ वह प्रेमी आता है किन्तु मैं अपने आनन्द में ऐसा डूबा हुआ हूँ कि उसे पहचान नहीं सकता। जब चला जाता है तो अनुभव करता हूँ कि मेरे प्राण ही चले गए। ५ ले जाता है किन्तु एक साथ नहीं ले जाता है। समय बीतता है किन्तु कष्ट से बीतता है। ६. जो उसे रास्ते में देखता है, यही कहता है—अग्नि-पूजक जिसकी पूजा करते हैं वह जा रहा है।

मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम

अव्वले माहे-मै अज़ शर्म तो माह
आख़िरे शब अज़ शबिस्ताँ भी रवद[1]
बुगुज़र अज़ दुश्मन दिलश सख़्तस्त सख़्त
आवरू ए तीरो पैकाँ मी रवद[2]
कीस्त ता गोयद बदाँ ऐवाँ नशी
ऊँचे बर 'ग़ालिब' जे दरबाँ मी रवद[3]

दिया है दिल अगर उसको बशर[4] है क्या कहिए
हुआ रक़ीब[5] तो हो नामाबर[6] है क्या कहिए
ये ज़िद के आज न आये और आये बिन न रहे
क़ज़ा[7] से शिकवा[8] हमे किस कदर कहिए
रहे है यूँ गहो बेगह[9] के कू ए दोस्त[10] को अब
अगर न कहिए के दुश्मन का घर है क्या कहिए
ज है करिश्मा के यूँ दे रखा है हमको फरेब
के बिन कहे भी हमे सब खबर है क्या कहिए
समझ के करते है बाज़ार मे वो पुरसिशे हाल[11]
के ये कहे के सरे रह[12] गुजर है क्या कहिए

---

१ दूज का चाँद तुम्हे देखकर इतना शरमाता है कि वह रात के पिछले पहर मे (आकाश से) चला जाता है। २ शत्रु का हृदय कठोर होता है अत. तू शत्रु से बच। तीर की तीक्ष्णता और तीर का प्रताप उसके आगे लुप्त हो जाता है। ३. राजप्रासाद मे बैठे हुए उस (प्रेमी) से कौन कहे कि 'ग़ालिब' और द्वारपाल मे कैसा बर्ताव हो रहा है। ४. मनुष्य। ५. प्रतिप्रेमी। ६. पत्रवाहक। ७. मृत्यु। ८. शिकायत। ९. समय-असमय। १०. मित्र की गली। ११. कुशल-प्रश्न। १२. मार्ग मे।

तुम्हे नही है सरिश्तए[1] वफ़ा का खयाल
हमारे हाथ मे कुछ है मगर है क्या कहिए
उन्हें सवाल पै ज़ामे जुनूँ[2] है क्यों कुढ़िए
हमे जवाब से क़त ए नज़र[3] है क्या कहिए
हसद[4] सज़ाए कमाले सुख़न है क्या कीजे
सितम बहाए म ताए[5] हुनर है क्या कहिए
कहा ये किसने कि 'गालिब' बुरा नही लेकिन
सिवाए इसके कि आशुफ़्ता सर[6] है क्या कहिए

कहूँ जो हाल तो कहते हो मुद्दआ[7] कहिए
तुम्ही कहो कि जो तुम यो कहो तो क्या कहिए
न कहियो तान[8] से फिर तुम के हम सितमगर है
मुझे तो खू[9] है कि जो कुछ कहो बजा कहिए
वो नैशतर[10] सही पर दिल मे जब उतर जाये
निगाहे नाज़ को फिर क्यो न आशना[11] कहिए
नही ज़रिय ए राहत[12] जराहते पैकाँ[13]
वो ज़ख्मे तेग है जिसको कि दिलकुशा[14] कहिए
जो मुद्दई बने उसके न मुद्दई बनिए
जो ना सज़ा कहे उसको न ना सज़ा कहिए
कही हक़ीक़ते जाँ कहिए मरज़ लिखिए
कही मुसीबते नासाज़ी ए दवा कहिए

---

१. प्रेम का ढंग। २. उन्माद। ३. उपेक्षा। ४. ईर्ष्या। ५. कला की सम्पत्ति। ६. विक्षिप्त (प्रेमी)। ७. अभीष्ट। ८. व्यग, उलहना। ९. स्वभाव। १०. नश्तर, शल्य। ११. परिचित। १२. छुटकारे का उपाय। १३. तीर का घाव। १४. चित्ताकर्षक।

मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम

कभी शिकायते रंजे गिराँनशीं[1] कीजे
कभी शिकायते सन्ने गुरेज़या[2] कहिए
रहे न जान तो क़ातिल को ख़ूँ बहा दीजे
कटे जबान तो ख़ंजर को मरहबा[3] कहिए
न हो निगार[4] मे उल्फत[5] निगार तो है
रवानिए रविशो मस्तिए अदा कहिए
न हो बहार[6] को फ़ुर्सत न हो बहार तो है
तरावते चमनो[7] खूबिए हवा[8] कहिए
सफीना[9] जब के किनारे पै आलगा 'ग़ालिब'
ख़ुदा से क्या सितमो जौरे नाख़ुदा[10] कहिए

२६

(१३ अप्रेल, १८५३)

भाई साहब,

बड़ा ताज्जुब है तुम इस शेर के माने पूछते हो—

अव्वले माहस्त अज़ शर्मे तो माह
आखिरे शब अज़ शविस्ताँ मी रवद

'अव्वल माह' यहाँ बमानी महीने के है और अव्वल से ८, ९, १० तारीख़ मक़सूद[11] है। अव्वल रातों में बाद आधी रात के चाँद छिप जाता है। बस शाइर कहता है कि हनोज़ इब्तिदाए हाल है और क़मर[12] ज़ायदुवन्नूर[13] है और

१. अटल दुःख। २. टालमटोल। ३. धन्य-धन्य। ४. चित्र। ५. प्रेम। ६. बसन्त। ७. उद्यान की सरसता। ८. वायु की विशेषता। ९. जहाज। १०. नाविक का अत्याचार। ११. अभीष्ट। १२. चाँद। १३. प्रकाश की अधिकता।

बावजूद इस रोज अफ़जूनी ए दौलत[1] के तेरी शर्म से आखिर शब को भाग जाता है और तमाम रात तेरे मुक़ाबिल नहीं रह सकता। इसको हुस्ने तालील[2] कहते हैं। याने चाँद का अवायल माहेमरी[3] मे आखिरे शब[4] गुरूब[5] होना जरूरी है। शाइर ने उसकी एक और वजह क़रार दी है। फ़क़त।

बारे, मियाँ तफ्ता की मुहब्बत गनीमत है। मेरी जगह खाली। अपसोस, कि, मैं नहीं। अब्दुल लतीफ मेरी जान है, मेरा जिगर है, मेरा फर्ज़न्द है। तुम उसके मुकदमे मे बोलने वाले और वास्ताए हुसूले मुद्आ[6] होने वाले कौन? उसको किसने मना किया है? उसको कौन मना करता है? नज्म व नस्र जो उसको मंज़ूर हो, मेरे पास भेजे, तकाज़ा न करे। मैं अपने तौर पर देखूंगा और तुमको भेजूंगा। इस शर्म ने मुझको मारा। जब अब्दुस्सलाम पैदा हुआ और मैंने मुबारकबाद लिखी, तो जनाब मुर्शी साहब याने मियाँ अब्दुललतीफ़ ने जवाब न लिखा। आखिर तुमने मुझको लिखा कि भाई वो तो शरमाता है, तुमको जवाब क्या लिखे। अब ये नस्र का, वास्ते इस्लाह[7] के भेजना भी कोई ऐसा अम्र है कि जिसमे हजरत को शर्म आती है। खुदा की पनाह। जकिया बेगम को दुआ कहो—ज्यादा ज्यादा।

१३ अप्रैल १८५३ ई०।

२७

(२६ मई, १८५३)

भाई साहब,

आपका इनायतनामा[8] मुक़ाम हातरस से पहुँचा। बेगम का कौल मे आ जाना खूब हुआ। देखिए, तुम कब तशरीफ लाते हो? खत का न लिखना

---

१. वृद्धिगत। २. भ्रान्तिमान् अलकार। ३. चान्द्रमास का प्रारम्भ। ४. रात का उत्तरार्द्ध। ५. अस्त। ६. अर्थसिद्धि। ७. संशोधन। ८. कृपा-पत्र।

फ़रामोशकारी[1] की राह से नहीं है। ये ख़याल कि अभी हातरस से न आये हों मान ए तहरीर[2] रहा। मुंशी हरगोपाल साहब को एक ख़त में कुछ हाल जैपूर का लिखा था। सो ये भी उनको लिखा था कि अगर भाई हातरस से आ गये हों तो उनको ये ख़त पढ़वा देना। और जब वो आवें तो मुझको ख़बर करना। आज इस बात को सात दिन हुए। उनका अभी कोई ख़त नहीं आया।

गरमी का क्या हाल पूछते हो? मेरा तो बाऐनही[3] वो हाल होता है जो जबान से पानी पीनेवाले जानवरों का होता है। बक़ौल ज़ुहूरी।

"हाले सग हाले गुरबा हाले शिग़ाल[4]"

जब मुझको इस मौसम मे देखो तो जानो कि मै क्यो कर ज़िन्दगी बसर करता हूँ।

एक नई बात सुनो। शहर मे एक वबा[5] आई है। याने वकीले कम्पनी ने सनीने माजिया[6] के काग़ज देख कर रुसूमे सरकारी जिस शरूश पर लेनी थीं उसका मुतालिबा किया है और मुतालिबा क्या मुआख़ज़ा[7] याने बहुत शिद्दत, अज़ाँ जुम्ला मुझ पर भी बाबत रुसूमे सरकारी पान सौ रुपये आठ आने निकले और उसकी तलब बक़ैदे हुक्म क़ैद हुई। मै आठ आने को मुहताज पान सौ कहाँ से लाऊँ? बारे, हज़रत, अँगरेज़ी तनख़ाह मे से पाँच रुपये महीने बतरीक़े क़िस्त मुकर्रर कर दिया। बासठ रुपये आठ आने महीना पाता था। सत्तावन रुपये आठ आने रह गये। पाँच रुपये महीने का साठ रुपये सालाना हुआ। अब ये तवक़्क़ो कहाँ कि पूरी तनख़ाह पाऊँगा। यों समझिए कि

---

१. भुला देना। २. लेखन में बाधा। ३. यथार्थ मे। ४. कुत्ते का हाल, बिल्ली का हाल, लोमड़ी का हाल, ५. महामारी। ६. गत वर्ष। ७. प्रतिकार, भूल की खोज।

सत्तावन रुपये का पेन्शनदार हूँ। बारे, कल फ़ैसला हुआ। तीन दिन तक सवार न हुआ और क़िले न गया। कल गया था। और आज गया था। अब खैर व आफियत है। चूँकि लड़के-बालों में से कोई तुम्हारे पास नहीं है और मैं खत बमुकाम हातरस भेजता हूँ, इस वास्ते किसी को दुआ नही लिखता, पर देता हूँ दुआ।

वस्सलाम माल इक्राम २९ मई १८५३ ई०।

—अज़ असदुल्लाह्

२८

(२२ जून, १८५३ ई०)

भाई साहब का इनायतनामा पहुँचा। आपका हातरस से कौल आ जाना हमको मालूम हो गया था। हमारा एक वकाए निगार[1] उस जिले मे रहता है। हक़ताला उसको जीता रखे।

गरमी का हाल क्या पूछते हो? इस साठ बरस मे ये लू और ये धूप और ये तपिश नही देखी। छठी-सातवीं रमज़ान को मेह खूब बरसा। ऐसा मेह जेठ के महीने मे भी कभी नही देखा था। अब मेह खुल गया है, अब्र घिरा रहता है, हवा अगर चलती है तो गरम नही होती और अगर रुक जाती है तो कयामत[2] आती है। धूप बहुत तेज है। रोज़ा रखता हूँ मगर रोज़े को बहलाये रहता हूँ। कभी पानी पी लिया, कभी हुक्का पी लिया, कभी कोई टुकड़ा रोटी का खा लिया। यहाँ के लोग अजब फहम और तुरफा रविश[3] रखते है। मैं तो रोज़ा बहलाता रहता हूँ और ये साहब फरमाते हैं कि तू रोज़ा नही रखता। ये नही समझते कि रोज़ा न रखना और चीज़ है और रोज़ा बहलाना और बात है।

---

१. मवाददाता। २ प्रलय। ३. अमीरों की चाल-ढाल।

मुंशी नबी बख्श 'हक़ीर' के नाम

जैपूर का हाल आपको मुंशी साहब के इज़हार से या उनके नाम के ख़ुतूत देख कर मालूम हो गया है, मुकर्रर[1] क्यों लिखूं ? ख़ैर ग़नीमत है। ये क्या फ़र्ज़ था कि जो हम चाहते थे वही होता।

हाँ भाई, परसों किसी शख़्स ने मुझसे ज़िक्र किया कि उर्दू अख़बार देहली म था कि हातरस मे बलवा हुआ और मजिस्ट्रेट ज़ख़्मी हो गया। आज मैंने एक दोस्त के हाँ से उस अख़बार का दोवर्क़ा मँगाकर देखा। वाक़ई उसमे मुन्दर्ज[2] था के राहें चौड़ी करने पर और हवेलियाँ और दूकानें ढाने पर बलवा हुआ और रिआया ने पत्थर मारे और मजिस्ट्रेट ज़ख़्मी हुआ। हैरान हूँ कि अगर यूँ था तो साहब वहाँ से चला क्यों न आया ? और अगर हाकिम नहीं आया तो आप क्यों कर तशरीफ लाये। हवसनाना[3] ख़ाहिश है कि आप इस हाल को मुफ़स्सिल[4] लिखिए।

हाँ साहब, मुंशी अब्दुललतीफ साहब इरादा कर कर रह गए। अपनी नस्रें क्यों नहीं भेजते। क्या मेरे ख़ुतूत उर्दू ज़बान मे देखकर वो ऐसा गुमान करते हैं कि ये फ़ारसी नस्र लिखनी भूल गया। मेरी तरफ से उनको दुआ कहो कि साहब हम तुम्हारी नस्र देखने के मुश्ताक़[5] हैं।

शेख़ नसीरुद्दीन और ज़किया बेगम और शेख़ अब्दुस्सलाम और कुलसूम बेगम को दुआ पहुँचे और बेगम को ये मालूम हो के बुआ मैं अभी कुछ नहीं कहता। अगर इत्तिफ़ाक हुआ तो करीब ईद के या बाद ईद के मै तुमको देखूंगा और तुम्हारा कुरान पढना सुनूंगा। लेकिन तुम अपने बावा से ये बात न कहना, अपने दिल मे रखना। किस वास्ते कि अगर वो सुन लेंगे तो मुझसे उसकी तफ़सील पूछेंगे।

निगाश्ता व रवांदाश्ता चारशम्बा, १४ रमज़ान (१२६९ हि०) व २२ जून १८५३ ई०।

---

१. दुबारा। २. उल्लिखित। ३. आकांक्षायुक्त। ४. विस्तृत। ५. उत्कंठित।

२९

(२१ अगस्त, १८५३)

पीर व मुर्शद,

गुलाम की क्या ताकत कि आप से खफ़ा हो। आपको मालूम है कि जहाँ आपका ख़त आया मैंने शिकवा लिखना शुरू किया, हाँ, ये पूछा चाहिए कि अब के गिले[1] की निगारिश[2] क्यो मुल्तवी रही। सुनिए, मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ इब्ने[3] मिर्ज़ा नज्जफ़अलीखाँ अलीगढ़ से आये। उनसे पूछ गया—हमारे भाई साहब मिले थे, उन्होने कहा—साहब, न वो वहाँ हैं, न मुशी अब्दुललतीफ। यानी दोनो साहब दौरे मे साहब मजिस्ट्रेट के साथ हातरस गये है। अब आप ही कहिए कि मै ख़त किसको लिखता और कहाँ भेजता। मुन्तज़िर था के आपका ख़त आये तो उसका जवाब लिखूं। कल हज़रत का नवाज़िशनामा आया। आज जवाब लिखा। आप ही फरमाइए कि मैं आपसे खफ़ा हूँ या नही।

बादशाह का हाल क्या पूछते हो? और अगर तुमने पूछा है तो मै क्या लिखूं? दस्त मौक़ूफ़ हो गये मगर कभी-कभी आ जाते है। तप जाती रही, मगर गाह गाह हरारत हो आती है। हिचकी उस शिद्दत की नही रही। गाह गाह छाती जलती रहती है और डकार-सी आती है। हवादार[4] पलंग के बराबर लगा देते है और हज़रत को पलंग पर से हवादार पर बिठा देते हैं। इस हरयत[5] से बरामद भी होते है। क़िले ही क़िले मे फिर कर फिर महल मे दाखिल हो जाते है। यों तसव्वुर[6] कीजिए और मशहूर भी यों ही है कि मर्ज़

---

१. शिकायत। २. लेखन। ३. पुत्र। ४. एक वाहन। ५. हाल। ६. कल्पना।

जाता रहा और ज़ोफ़[1] बाक़ी है। बहरहाल जब तक सलामत रहे ग़नीमत है। लेकिन वो मेरा मुद्दआ के गुस्ले सेहत[2] करे और नजरे ले और मैं रुख़्सत लूं और बसबीले डाक बाँदा को जाऊँ, देखिए कब तक हासिल हो। डाक का लुत्फ़ आधा रह गया, याने वो आम कहाँ और बरसात कहाँ? मगर ख़ैर क़ौल मे भाई का मिलना और बच्चों का देखना और बाँदा मे भाइयों का मिलना और बच्चों का देखना ये देखा चाहिए, कब मयस्सर हो। इस बूढ़ी डाढ़ी पर अपने फ़र्जन्द को दम क्या दूँगा। भाई, ख़ुदा की कसम ये सफर मेरे दिलख्वाह[3] और मुआफ़िक़े मिज़ाज[4] था, और है, मगर गौर करो कि क्या इत्तिफ़ाक हुआ। अगर और सूरत भी हो जाती तो भी मै अब तक तुम्हारे पास होकर बाँदे को रवाना हो जाता। क्या करूँ, इस सूरत मे रुख़्सत नहीं माँगी जाती। और रुख़्सत लिए बग़ैर जाना नही हो सकता। अरफ़्तो रब्बी व फस्खुल अज़ायम[5]। तफ़्सील फिर लिखूँगा। बच्चों को दुआ।

२१ अगस्त, १८५३ ई०।

—असदुल्लाह, फ़क़त

३०

(३ सितम्बर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

ये शेर किसका है—

बढ़ गई ताज़ीम[6] मेरी इन्तनाए दख़्ल[7] से
उठ खड़े होते हैं मुझको उसके दरबाँ देखकर

---

१. कमजोरी। २. स्वास्थ्यदायक स्नान। ३. अभीष्ट। ४. स्वभाव के अनुकूल। ५. मैंने अपनी असफलता से ईश्वर को पहिचाना। ६. आदर। ७. प्रवेश पर प्रतिबन्ध।

हाँ, और किसका होगा, या मेरा, या मेरे भाई का। वल्लाह्, क्या शेर है! ये रविश ख़ास[1] है। हर कोई इसको नहीं जानता।

बारे, इन दिनों में दो आदमियों की ज़बानी आपकी ख़ैर व आफ़ियत मालूम हुई। एक तो महबूबख़ाँ रिसलदार और दूसरे मियाँ मुहम्मद हुसेन दिल्ली के रहने वाले, कि वो सदरुस्सुदूर[2] की मुलाक़ात को कौल गये थे। ग़ज़ल भी तुम्हारी उन्होंने मुझको दिखाई। सारी ग़जल ख़ूब है। मगर इस शेर का आलम और है।

आप मेरे अज़्म[3] को बिल्कुल वैसा ही बिल जज़्म[4] तसव्वुर कीजिएगा। बादशाह अच्छे हो गये। गुस्ले सेहत करने की देर है। गुस्ले सेहत का दरबार हुआ और मैंने मुबारकबाद का कसीदा या क़ता पढ़ा और रुख़सत ली और डाक गाड़ी मे बैठा और कौल पहुँचा। और वहाँ आठ पहर रहा और आगे को रवाना हुआ।

एक शेख़ मोमिनअली साहब सदर अमीन कौल यहाँ आये थे। एक दिन वो मेरे हाँ तशरीफ लाये। मैं सवार हो गया था, न मिला। दो दिन के बाद उनके हाँ गया। मिला। तुम्हारा भी जिक्र आया। तुम्हारी बहुत तारीफ़ करते थे। मैं मुन्तजिर था कि वो अब फिर आएँगे, ता[5], ये कि, दिन चारेक हुए कि मैंने क़िले में हकीम इमामुद्दीनख़ाँ मे पूछा कि सदर अमीन कौल जिनका आप इलाज करते थे, वो अब कैसे है। उन्होंने फ़रमाया कि वो कौल को गये। ग़र्ज़ ये कि अगर आपसे मुलाक़ात हो तो फ़रमाइएगा कि असदुल्लाह् रूसियाह[6] बाद सलाम अर्ज़ करता है कि वो रुतबा मेरा तो कहाँ कि मैं आप से शिकवा करूँ कि मुझसे मिलकर आप न गये, मगर हाँ अफ़सोस करता हूँ कि मुझको खबर क्यों न हुई, वर्ना मैं तौदी[7] को पहुँचता।

---

१. विशेष शैली। २. प्रधान न्यायाधीश। ३. इच्छा। ४. दृढ़ निश्चय। ५. जिससे। ६. काला मुँह वाला। ७. विदा।

मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम

हज़रत, बहुत दिन से मुंशी हरगोपाल साहब का ख़त नहीं आया। ख़ुदा जाने सिकन्दराबाद में है या कहीं और तशरीफ़ ले गये हैं। तमाशा ये कि बाबू जानी बाँकेलाल का ख़त भी बहुत दिन से नहीं आया। कुछ उनका हाल मालूम नहीं। आपको उन दोनों साहबों का हाल जो कुछ मालूम हो मुझको लिखिए। मुंशी अब्दुल लतीफ और मियाँ नसीरुद्दीन और बी ज़किया बेगम और अब्दुस्सलाम को दुआ पहुँचे।

निगाश्ता एक शम्बा मोअ्रम सितम्बर १८५३ ई०।

—अज़ असदुल्लाह्

३१

(२ अक्तूबर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

तुम्हारा ख़त आया और हाल जीतसिंघ का मालूम हुआ। फिर वो बिरहमन[1] साहब आये। उनकी ज़बानी आपकी ख़ैर व आफ़ियत मालूम हुई। हक़ ताला तुमको, मय फ़र्ज़न्दों के, सलामत रखे और मुझको तुम्हारी मुलाक़ात से और बच्चों के दीदार[2] से शाद[3] करे। भाई मैं वो किस्मत लाया हूँ कि जो चाहूँ वो न हो।

मरा मादर दुआ कर्दस्त गोई
के अज तू दूर बादा उंचे जूई[4]

डाक के सफ़र की ख़ुशी, कौल पहुँचने की मसर्रत[5] भाई से मिलने की फ़रहत,[6] फ़र्ज़न्दों के देखने का लुत्फ, राह में जाबजा[7] आम ख़रीदने का ज़ौक़[8]

१. ब्राह्मण। २. दर्शन। ३. प्रसन्न। ४. तुम यह समझ लो कि मेरी माता ने मुझे यह आशीर्वाद दिया है कि मैं जिसकी खोज करूँ वह मुझसे दूर रहे। ५. हर्ष। ६. आनन्द। ७. यत्र-तत्र। ८. ख़ुशी।

क्या कहूँ कि कैसी हसरत रह गई। तुमको मालूम है, रुपया फ़ुतूह[1] का आया हुआ था। चाहता था कि उसको इस सफर मे खर्च करूँ। यहाँ ये रंग दरपेश आया। अब सुनता हूँ कि हुजूर बाद मुहर्रम जश्ने गुस्ले सेहत[2] करेंगे। अज्म[3] मेरा बदस्तूर मगर रुपिया कहाँ ? बहरहाल रुख्सत के माँगने का मौक़ा तो आये। क़र्ज़-वाम[4] कर कर भी क़स्द[5] करूँगा। अगर इस असना[6] मे कोई शोबदा[7] ताज़ा न उठा।

मुन्शी हरगोबिन्द सिंघ कौल आये है। आपसे मुलाक़ात हो तो मेरा सलाम कहना और ये फ़रमाना के आपका खत आया। हाल ज़ाहिर हुआ। दुआएँ माँगता हूँ कि तुम्हारा फिर तुमको मिल जाये और तुम दिल्ली मे आओ।

मुन्शी हरगोपाल तफ़्ता भरतपुर मे और जानी जी आगरे गये हुए है।

लेफ़्टिनेंट गवर्नर बरेली मे मर गये। देखिए अब उनकी जगह कौन मुक़र्रर होता है। देखो, इस क़ौम का क्या इन्तिज़ाम है। हिन्दुस्तान का अगर कोई इतना बड़ा अमीर मरा होता तो क्या इन्क़िलाब[8] हो जाता। यहाँ किसी के कान पर जूँ भी नही फिरती कि क्या हुआ और कौन मर गया।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को बाद दुआ के मालूम हो कि मियाँ अशरफ़अली कौल मे आये और मुझसे मिले। तुम्हारी बहुत तारीफ करते थे। नसीरुद्दीन और ज़किया बेगम व अब्दुस्सलाम व कुलसूम बेगम को दुआ पहुँचे।

यकशम्बा, दोअ्रम अक्तूबर १८५३ ई०।

—अज़ असदुल्लाह्

---

१. ऊपर की आय। २. स्वास्थ्य लाभ के स्नान का उत्सव। ३. इच्छा, संकल्प। ४. ऋण। ५. इच्छा। ६. समय, अन्तर (समय का)। ७. चमत्कार। ८. क्रान्ति।

मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम

३२

(६ अक्तूबर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

ये नई तर्ज़ रविश है कि ख़त की रसीद तो नहीं लिखते और उल्टा शिकवा करते हो। ज़ाहिरा ये लतीफ़ा[1] ख़याल में आया होगा कि यारों फ़रामोश करदन्द इश्क़[2]। और ये दर्ज न हो सकता था बग़ैर शिकायत के।

नाचार ख़त के भेजने से क़तै नज़र[3] की। डाक किताब मय रसीद मेरे पास मौजूद है। रोज़े यकशम्बा[4], दोअम अक्तूबर १८५३ ई० को ख़त रवाना हुआ है। मजा इसमें ये है कि आपका ख़त यकशम्बा दोअम[5] अक्तूबर का लिखा हुआ है। तुम ख़याल करो। मुझमें तुममें अक्सर ऐसा वाक़ै[6] होता है कि जिस दिन मैं तुमको ख़त लिखता हूँ, उसी दिन तुम मुझको ख़त लिखते हो।

अगली ग़जल पहले तो मियाँ हुसैन मुहम्मद देहलवी लाये और फिर आपने अपने ख़त में भेजी। एक शेर इसमें मेरे अन्दाज़ का था। वो मैंने आपको लिख भेजा था और बाक़ी और अशार[7] सब अच्छे और बे-ऐब और हमवार। अगर जगह इस्लाह[8] की होती तो मैं कभी चश्मपोशी न करता। तुमसे मेरा ये मामला नहीं है कि ख़ुशामद करूँ। तुम्हारा कलाम, मेरा कलाम। तुम्हारा नक़्स मेरा नक़्स[9]। अब देखो इस ग़ज़ल में एक शेर मौक़ूफ़ कर दिया गया और मत्ले[10]

---

१. चुटकुला, कहावत। २. मित्रों ने स्नेह भुला दिया। ३. उपेक्षा। ४. रविवार। ५. दूसरी। ६ घटित। ७. शेर (कविता, ब० व०)। ८. संशोधन। ९. त्रुटि। १०. ग़जल का पहला शेर जिसके दोनों चरणों में अन्त्यानुप्रास होते हैं।

में और एक बैत[1] मे तग़य्युरे अल्फ़ाज[2] हो गया। जिन शेरों पर साद[3] है वो बहुत खूब है। वाह वाह, सुभान अल्लाह्, और जिन पर साद नही वो खूब है बस।

अजी पीर व मुर्शद, ये नस्र जिसको आपने खत ताबीर[4] किया है और वाक़ई कि वो खत है, मगर 'मोना बाज़ार' के बराबर या 'सेनस्री जुहूरी' के बराबर या आधी 'पज आहग' के बराबर। आप उसके कातिब का नाम इनायतुल्लाखाँ लिखते है। कही सह्व[5] न हुआ हो। अताउल्लाखाँ साहब एक बुजुर्ग वहाँ है। शायद उनकी तहरीर हो।

बायदमताए नेका अज़ हर दुकाँ[6] के बाशद[7] क्या कहना है, बहुत खूब है और बहुत पाक़ीज़ा। फ़लावा कितना अच्छा है। मज़ामीन[8] कैसे बुलन्द है। तरक़ीबे अल्फ़ाज़[9] कितनी दुरुस्त है। मै आपका एहसानमन्द और शुक्रगुज़ार हूँ कि आपकी इनायत से ये नज्म व नस्र मैने देखा। मै हक़ गुज़ारे सुखन और हवाखाहे अहले सुखन[10] हूँ। जहाँ इस्लाह का जगह होता है, वहा फ़र व गुज़ाश्त[11] नही करता। माहाज़ा[12] फ़िज़ूल नहीं हूँ। कलाम बे ऐब व बेसक़ल[13] मे दखल नही करता। आप ये औराक़ उन साहब को दे दीजिये और मेरा सलाम कहिए और ये सतरे उन्हे दिखला दीजिए।

बाद मुहर्रम सुना जाता है कि जश्ने गुस्ले सेहत होगा। बादशाह अच्छे है। रहा ज़ाफ़[14] वो लाज़िम ए उम्र[15] बहर तक़दीर बाद अश्र ए मुहर्रम[16] तालिबे

---

१. एक शेर। २. शब्द परिवर्तन। ३. ठीक होने का चिह्न। ४. वर्णित। ५. भूल। ६. कोई दूकान हो, हमे चीज़ अच्छी मिलनी चाहिए। ७. विषय। ८. वाक्य-विन्यास। ९. कवियों का शुभचिन्तक। १०. भूल-चूक। ११. अतः। १२. निर्दोष और शुद्ध। १३. दुर्बलता। १४. आयु की अनिवार्यता। १५. मुहर्रम की दसवीं तारीख के पश्चात्।

रुख़सत[1] हूँगा। मगर मौक़ा देख और तदबीर मसारिफ़े सफ़र[2] कर कर। कल दिन भर ताबिशे आफ़ताब[3] और गरम हवा ऐसी रही कि जैसी जेठ-असाढ़ मे होती है। शाम होते-होते वो सर्दी हो गई कि अग़नियां[4] ने दुशाले तोशाख़ाने[5] मे से निकलवाये और ग़ुरबा[6] ने गठड़ियाँ खोल-खोल कर रज़ाई और पट्टू निकाले। अब्रे स्याह[7] तमाम रात मुहीत आसमान[8] पर रहा, मगर मेह नही बरसा। अब सुबह होते वो पानी पड़ा कि जल-थल भर गये। क़िले नही जा सका। मेंह बरस रहा है और मै ये ख़त लिख रहा हूँ, अगर यही आलम है तो आज इस ख़त को नही भेज सकूंगा। बड़े ज़ोर से मेह बरस रहा है। पज-शम्बा[9] ६ मार्च माहे अक्तूबर १८५३ ई०।

बच्चों को दुआ। परवर्दगार सब को जीता रखे और मुझको उनका दीदार दिखलावे। यहाँ चना, गेहूँ, बेसन, बाईस सेर और घी दो सेर-सवा दो सेर है। उधर का हाल आप लिखिए, कि क्या है। यहाँ मंगल को चाँद दिखलाई दिया। बुध को मुहर्रम की पहली ठहरी। आज दूसरी है। वहाँ का हाल मुक़र्रर लिखिएगा। फ़क्त।

२ मुहर्रम [१२७० हि०] पजशम्बा, ६ माहे अक्तूबर १८५३ ई०।

३३

(८ नवम्बर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

ये आपके दिल मे किसने शुबा डाल दिया कि गिरियाँ[10] और अफ़शाँ[11] को

---

१. अवकाश का प्रार्थी। २. यात्रा-व्यय का यत्न। ३. सूर्य की तपन। ४. अमीर लोग। ५. भण्डार। ६. दरिद्र। ७. काले बादल। ८. घेरनेवाला। ९. गुरुवार। १०. रुदनशील। ११. छिड़का हुआ।

आपने ईता[1] तसव्वुर किया। बात को तूल देता हूँ और मुफ़स्सल[2] लिखता हूँ। सुनिए, सीग़ ए अम्र[3] के बाद जो अलिफ़ आता है वो इफ़ादा मानीए फ़ाइलियत[4] देता है। 'दाँ' सीग़ ए अम्र है दानिस्तन मे से और ये भी याद रहे कि अम्र मुज़ारे[5] से पैदा होता है और कायदा इसका गिरा देना है दाल का[6] और ये कुल्लिया[7] है रवद-रो, शवद-शो, आरद-आर, गोयद-गोय। पस दाल के आगे अलिफ[8] आया-दाना हो गया। रव के सामने अलिफ आया रवा हो गया। गोय के आगे अलिफ आया गोया, दीदन का मुज़ारे बीनद। अम्र मे अलिफ़ के आने पर—बीना। रवा याने रविन्दा, गोया याने गोयन्दा। दाना याने दानन्दा। बीना याने बीनिन्दा। ये सब ईता है याने ये अलिफ सब एक किस्म के है या अलिफ या अलिफ नून जमा का[9]। जैसे खूबाँ और बुताँ, नेकाँ और बदाँ। ये सब ईता है। याने अलिफ़ नून सब एक क़िस्म के है। इसी तरह एक अलिफ़ नून हालिया[10] कि वो भी अम्र के सीग़े के बाद आता है। खन्दीदन मसदर[11], खन्द मुज़ारे[12], खन्द अम्र[13]। गिरीस्तन मसदर, गिरीयद मुज़ारे, गिरी अम्र। उफ़्तादन मसदर, उफ़्तद मजारे, उफ़्त अम्र। खास्त मसदर, खीज़द मुज़ारे, खेज़ अम्र। खन्दा, गिरियाँ, उफ़्ताँ, खीज़ाँ ये सब अलिफ़-नूने हालिया है और ईता है। अब देखा चाहिए कि अफ़्शाँ क्या लफ़्ज है? अफ़्श अम्र और अलिफ-नूने हालिया नही है। अफ़्श कोई लुगते जामिद[14] भी नही। अफ़्शान्दन मसदर, अफ़्शान्द

---

१. एक प्रकार अन्त्यानुप्रास। २ विस्तृत। ३. क्रिया का आज्ञार्थक रूप। ४. लाभ (विद्या)। ५. कर्त्ताकारक का अर्थ। ६. क्रिया का वह आज्ञार्थक रूप जिससे वर्त्तमान और भविष्य का बोध हो। ७. 'द' अक्षर को हटा देना। ८. सामान्य। ९. 'अ'। १०. बहुवचन के लिए आने वाला 'आँ'। ११. क्रियार्थक सज्ञा। १२. क्रिया का ऐसा रूप जिससे भविष्य और वर्तमान दोनों का बोध होता है। १३. आज्ञार्थक। १४. ऐसा शब्द जिसका किसी अन्य शब्द से उद्भव नही हुआ तथा जिससे कोई दूसरा शब्द उद्भूत नहीं होता।

माजी[1], अफ़्शान्द मुज़ारे, अफ़्शाँ अम्र पस ये अलिफ़-नून असली है, मिस्ले[2] परीशाँ और हैराँ और इमाँ और पिन्हाँ के। अगर ये अलिफ-नून हालिया के साथ काफ़िया हो तो किसकी मजाल है कि इसको ईता कहे। मगर वो कि जो क़वायद कुल्लिया[3] और अफ़सरिया और बाजिया[4] फारसी ज़बान की न जानता हो।

पीर व मुर्शद, ईद को बादशाह माँदे हुए, जो कुछ कहा था वो रहने दिया कि कभी फिर काम आएगा। बकरीद को कुछ कहा ही नही। एक रुबाई पढ़ दी थी। जश्ने गुस्ले सेहत, उसका कुछ पता नही। सुनते है कि होगा। कसीदा कह रखा है। अगर हुआ तो पढ दूंगा और वो 'सिराजुल अखबार' मे छापा जाएगा और आपकी भी नजर से गुज़रेगा; बल्कि क़स्द ये है कि इसी महफ़िल मे वाँदे के जाने को रुख्सत भी ले लूं तो इस मुरत मे यकीन है कि बाद उस कसीदे के मैं भी आपकी नज़र से गुजर जाऊँ।

बेगम का हाल मालूम हुआ। भाई ये लडकी जईफ़ुल बुनियान[5] है। हक ताला उस पर अपना फज्ल[6] रखे। तुम भी पढने की उस पर शिद्दत न किया करो। तुम्हारी कम फुर्सतो का हाल मुझको मालूम है। बहुत बड़ा मुक़द्दमा है। ये फैसल होते ही होगा।

टामस मेटकाफ साहब एजेंट व कमिश्नर देहली मर गये। हम लोगो के जानने वाले एक यही साहब रह गये थे। जनाजा उनका इस धूम से उठा था कि कुछ कहा नही जाता। कश्मीरी दरवाजे से उनकी कोठी तक लाख आदमी की भीड़ थी, सिकन्दर साहब की गिरिजाघर मे फ्रेज़र साहब के पास उनको रखा है।

---

१. भूत। २. समान। ३. सामान्य नियम। ४. विशेष। ५. निर्बल शरीर वाली। ६. कृपा।

मुशी अब्दुललतीफ़ साहब को और ज़किया बेगम को और मियाँ नसीरुद्दीन को और जो लड़के-बाले यहाँ हैं उनको दुआ पहुँचे।

दो शम्बा, हफ़्तुम नवम्बर १८५३ ई०।

—अज़-असदुल्लाह

३४

(२२ दिसम्बर, १८५३ ई०)

भाई साहब,

मैं भी तुम्हारा हमदर्द हो गया, याने मगल के दिन, १८ रबीउल अव्वल को शाम के वक़्त वो फूफी, कि, बचपन से आज तक उसको माँ समझा था और वो भी मुझको बेटा समझती थी, मर गई। आपको मालूम रहे कि परसो-मेरे गोया नौ आदमी मरे। तीन फूफियाँ और तीन चचा और एक बाप और एक दादी और एक दादा—याने इस मरहूमा[1] के होने से मैं जानता था कि ये नौ आदमी ज़िन्दा हैं और उसके मरने से मैंने जाना कि ये नौ आदमी आज यक बार मर गये इन्नालिल्लाह व. इन्नाइलहे राजेऊन[2]।

निगाश्ता पजशम्बा, २० रबीउल अव्वल (१२७० हि०) २२ दिसम्बर, १८५३ ई०।

—अज—असदुल्लाह

३५

(२३ जनवरी, १८५४ ई०)

भाई जान,

तुम्हारा वो खत कि जो शेख रहमतुल्ला साहब के ज़रिये के खत के जबाब में था—पहुँचा। तफ़क्कुद[3] उनके हाल पर मबजूल[4] रहे।

---

१. स्वर्गीया। २. हम उसी के हैं, हमको उसी की तरफ़ जाना है। ३. लालसा। ४. प्रयुक्त।

मुंशी नबी बख्श 'हक़ीर' के नाम

यहाँ चेचक का ज़ोर-शोर नहीं, बल्कि इन दिनों में उसका कहीं मज़कूर[1] नहीं। कौल में अतफ़ाले खुर्दसाल[2] को खैर रहे। ज़किया व अब्दुस्सलाम का हनोज़ आगरे में रहना मुनासिब है। ये हंगामा जहाँ होता है, चन्दरोज़ा होता है। जब ये वबाए ख़ास[3] जाती रहे और हवा साफ़ हो जावे, तब आवे।

वो मस्नवी[4] और ऐलाननामा मैंने तुम्हारे पास भिजवाया है। वजह ये कि जब हुज़ूर ने हुक्म के अमायदीन[5] अहले तसन्नुस[6] जो अतराफ़ व जवानिब[7] देहली में हैं, एक-एक नक़ल उनको भेजी जाये। मैंने दफ़्तर में बक़ैदे अलागढ़ कौल मुफ़्ती सद्रुद्दीनखाँ साहब का और तुम्हारा नाम लिखवा दिया और कालपी में नवाब अनवारुद्दौला और बरेली में सैयद अहमद का नाम लिखवा दिया। और कोई ऐसा सुन्नी[8] गिरामायी[9] में न आया।

मिर्ज़ा नजफ़अलीखाँ मरहूम तुम्हारे दोस्त होंगे। वो यहाँ मर गये। उनके फ़र्ज़न्दे अर्जुमन्द[10] मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ को मैं अपना फ़र्ज़न्द का जगह मानता हूँ और उनकी सआदत-मन्दियाँ[11] और ख़ूबियाँ क्या बयान करूँ कि मैं उनका आशिक हूँ। वो अब कौल का गए हैं। तुमको लाज़िम है कि उनके हाँ जाओ और फ़ातिहा[12] पढ़ो और उनका हाल उनकी ज़बानी सुनो। वो साहबज़ादे ए नाज़ पर्वर्दा[13] गर्म व सर्दे ज़माना नादीदा[14] हैं। दो-एक हवेलियाँ उनके वालिद माजिद की वहाँ हैं। खुदा जाने वो क्या करेंगे। आपको उनकी मुरब्बीगीरी[15] करनी चाहिए, मगर वो पजशम्बा को रवाना होने वाले हैं।

---

१. वर्णित। २. शिशु, कम आयु के बालक। ३. विशेष महामारी। ४. कविता की एक शैली, एक ही छन्द में कोई कहानी या उपदेश रहता है। ५. सामन्त, सरदार। ६. सुन्नीबन्धु। ७. आसपास। ८. सुन्नी धर्मी व्यक्ति। ९. सुपुत्र। १०. आज्ञाकारिता। ११. मृतक के लिए की जाने वाली प्रार्थना। १२. प्यार से पाले हुए। १३. सुख-दुःख के अनुभव से रहित। १४. पालन-पोषण।

आज दोशम्बा को ये खत मैं तुमको भेजता हूँ। यकीन है कि कल पहुँचेगा। बमुजर्रिद[1] इसके पहुँचने के आप उनसे मिलिएगा। मातमज़दा[2] का बुलाना मुनासिब नहीं। आपको बतरीके ताज़ियत[3] जाना चाहिए और जो खत आपके नाम का है उनको पढवा दीजिएगा।

मौलवी अब्दुललतीफ की खिदमत में मेरी तरफ से ये शेर मौलाना शर्फुद्दीन मुसन्निफ[4] 'नाम ए हक' का पढ दीजिएगा—

दर तलब करदने हकीकते कार
अज खुदा शर्मदारो शर्म मदार[5]

रक़मजदा[6] व खॉदादाश्ता[7] चाश्तगहे[8] दोशम्बा, २३ जनवरी १८५४ ई०, ज़रूरी व जवाब तलब।

—अज़-असदुल्लाह्

३६

(२३ फ़रवरी, १८५४ ई०)

भाई साहब,

मैं नहीं जानता कि तुम कहाँ हो। तन्हा मियाँ अब्दुललतीफ को अलीगढ में समझा हुआ था। कल मुंशी हरगोपाल साहब का खत आया। उससे मालूम हुआ कि आप भी यहीं हैं। बारे, कहिए कि ज़किया व अब्दुस्सलाम कब आयेंगे। मुझसे तो वो अगर कौल मे हैं, तो भी दूर हैं। मगर तुम्हारे वास्ते पूछता हूँ कि उनकी दूरी पर शाक़[9] है।

---

१. साथ ही। २. शोकग्रस्त। ३. शोक प्रकाशन के लिए। ४. लेखक। ५. पत रखने वाले ईश्वर मे अपनी आकांक्षा की पूर्ति में किसी प्रकार की शिक्षक न रख। ६. लिखित। ७. प्रेषित। ८. पूर्वाह्ण। ९. कठिन, दूभर।

लो हज़रत, यहाँ भी चेचक का ज़ोर शुरू हुआ। बारे, य ख़ुदा का फ़ज़्ल है के अजाम बख़ैर[1] है। जिस ज़माने मे आपने लिखा था कि कौल मे शिद्दत है, उस ज़माने मे यहाँ कुछ ज़िक्र न था। अब हगामा गर्म है। ज़ाहिरा कौल की राह से तशरीफ़ लाई है, बहरहाल बच्चो की ख़ैर व आफ़ियत और उनके आने का हाल के आ गये और अगर नही आये तो कब आएँगे, मुफ़स्सल लिख भेजिएगा। मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब को दुआ पहुँचे।

२३ फ़रवरी, १८५४ ई०। —असद

३७

(२७ मार्च, १८५४ ई०)

भाई साहब,

आपका ख़त आया। हाल लड़के-बालो का और तुम्हारा मालूम हुआ। हक़ताला तुमको और उन सबको सलामत रखे। ये काफ़िर इहेतराक़[2] की बीमारी जिस रग से ज़ुहूर करे, ज़ायल[3] होना नही जानती। तखफ़ीफ़[4] इसमे बमजिले सेहत है। मुझको देखो, अगरचे मेरे-तुम्हारे हालात मुत्तफ़ावित[5] है, लेकिन असल मर्ज़ एक है। अब के मेरे हाँ उसका ज़ुहूर बसूरते तप व लरज़ा[6] के हुआ। आठ दिन ग़िज़ा न खाई। अब अगर तपन रही, लेकिन और अवारिज़[7] पैदा हो गये। चुनाँचे कल पाँचवीं मुसहिल[8] था और कल फिर होगा।

मिर्ज़ा तफ़्ता से इन्दल मुलाक़ात[9] कह देना कि ये औराक़े अशार[10] जो बीसरी बार आये है, हनोज़ उनके देखने की फ़ुर्सत नहीं हुई।

---

१. सकुशल। २. दुष्ट जलन। ३. दूर होना। ४. कमी। ५. भिन्न। ६. कम्पन, जाड़े की थरथराहट। ७. रोग। ८. विरेचन ९. भेंट के समय। १०. शेर के पृष्ठ।

सनाउल्लाख़ाँ 'सना' फ़तहपूरी मस्जिद के एक हुजरे में मय अपने फ़र्ज़न्द के रहते हैं। इहेतरामुद्दौला हकीम अहसनुल्लाख़ाँ बहादुर से उनको मिलवा दिया। आज पाँचवाँ दिन है कि जनाब हकीम साहब मेरे देखने को आये थे। सनाउल्लाख़ाँ मय क़सीदे के मौजूद थे। उनसे कसीदा पढवा दिया। दूसरे दिन वो उनके घर गये। उन्होंने पाँच रुपये उनको दिये। फिर उनको मय क़सीदे के भाई ज़ियाउद्दीनख़ाँ, जो छोटे बेटे नवाब अहमदबख़्शख़ाँ के हैं, उनके पास भेजा। पाँच रुपये उन्होंने दिये। ये दहाका वसूल हो गया है। कल सनाउल्लाख़ाँ मेरे पास नही आये। आज शायद आये। अब वो छोटम नामी एक रंडी है। महाराज हिन्दूराव की नौकर है। इसको वो अपना शागिर्द बताते हैं उससे रुख़सत होने की फिक्र में हैं। जब वो उनको कुछ देगी तब वो कौल को तुम्हारे पास रवाना होंगे।

मुंशी अब्दुललतीफ को आया मेरी दुआ कहते हो या नही। मैं उनकी नस्र के देखने का मुश्ताक[1] हूँ। बाकी और सब लड़के-बालों को, ख़ुसूसन[2] बेगम को दुआ पहुँचे। भाई, औरतों के वास्ते इतना काफी है कि हर्फ़शनास[3] हो जायें और कुरान शरीफ नाजिरा[4] पढ़ लिया करे। उस पर पढने के वास्ते शिद्दत न किया करो।

दोशम्बा, २७ मार्च १८५४।

—असदुल्लाह्

३८

(४ जून, १८५४ ई०)

भाई साहब,

अलहम्दुलिल्लाह्[5], कि, और तो सब तरह ख़ैर व आफ़ियत है, मगर

१. इच्छुक। २. विशेष रूप से। ३. साक्षर। ४. दृष्टि से देखकर। ५. प्रशंसा ईश्वर की।

गरमी की वो शिद्दत है कि अयाज़न बिल्लाह[1] मैं आप इहेतराक़[2] का मारा दूसरे ये मुसीबत । एक वक़्त का खाना खाने वाला सो वो अब मौक़ूफ़ । ग़िज़ा मुन्हसिर[3] दही पर है । कहाँ तक दही खाऊँ ? क्या करूँ ? अगरचे ताब मुझ में रोज़ा रखने की कहाँ, मगर बदतर रोज़ादारों से हूँ । रोज़ादारों को क्या कहूँ, क्या हाल है ? मेरे चार ख़िदमत गुज़ार हैं । चारों रोज़ादार, आख़िरे रोज़ मुझको यों नज़र आता है कि चार मुर्दे फिर रहे हैं । ये परेशानी और ये बेसामानी, न ख़सख़ाना न बर्फ़े आब[4]—

आराम के असबाब कहाँ से लाऊँ ?
सामाने ख़ुरो ख़ाब[5] कहाँ से लाऊँ ?
रोज़ा मेरा ईमान है 'ग़ालिब' लेकिन
ख़सख़ाना व बर्फ़ाब कहाँ से लाऊँ ?
इफ़्तारे सोम[6] की जिसे कुछ दस्तगाह[7] हो
उस शख़्स को ज़रूर है रोज़ा रखा करे
जिस पास रोज़ा खोल के खाने को कुछ न हो
रोजा अगर न खाये तो नाचार क्या करे ?

ये रुबाई और ये क़ता कल हुज़ूर में पढ़ा था । बहुत हँसे और ख़ुश हुए। इहेतराक़ में मर रहा हूँ, मगर आमों को ताकता हूँ कि कब निकलें । बंगाले में यक़ीन है कि आम चल निकले होंगे । दो बरस कलकत्ते मे रहा हूँ । जून महीने में आम बिकते हैं । दिन तीनेक हुए एक मेवाफ़रोश पाँच आम लाया था । मज़ा न था, लू के पके हुए थे ।

---

१. ईश्वर रक्षा करे। २. जलन । ३. निर्भर । ४. बर्फ़ का पानी । ५. खाना और सोना । ६. दिन भर रोजा रखकर सन्ध्या का भोजन करना । ७. सामर्थ्य ।

भला ये तो सब बातें हो लीं, मगर अँगरेज़ी डाक का हाल कहिए। नहीं मालूम क्या बंदोबस्त हुआ है कि बिलकुल डाक का इंतिज़ाम व ऐतमाद जाता रहा। एक-दो ख़त अँगरेज़ी, एक फ़रंगी के तल्फ़[1] हो गए। उसने यहाँ की डाक में गुफ़्तगू की, कोई उसका मुजीब[2] न हुआ। उसने बड़े पोस्ट-मास्टर से शिकायत की। जवाब पाया के कुछ जवाब न पाओगे। तुमने दिया, हमने भेज दिया। अब पहुँचे या न पहुँचे। मेरठ से भी फ़रियाद आई है। आगरे के ख़तों से भी सुना जाता है। अगरचे मेरा कोई ख़त अब तक तल्फ़ नहीं हुआ है, मगर वबाए आम[3] में बचाव कहाँ? नाचार मैंने ये क़ायदा क़रार दिया है कि आगरे में मेजर जान जाकूब साहब और कौल में तुम और बाँदा में मेरा मामूँ का बेटा भाई है, और दो-एक दोस्त अज़लाए मुतफ़र्रिक़ा[4] में उनको लिख भेजा है कि वो मुझको और मैं उनको ख़त बैरंग भेजा करूँ। भाई, हिसाब बराबर है, मगर इस सूरत में ख़ातिर जमा रहती है। अब अगर तुम्हारा ख़त पोस्ट पेड़ आएगा तो मैं आज़ुर्दा हूँगा। बैरंग भेजा करो और मुंशी हरगोपाल को भी समझा दो, बल्कि ये तहरीर दिखा दो। बहुत पोस्ट पेड़ ख़त ज़ाया होते हैं। बैरंग पर ऐतमाद है।

लड़के-बालों को दुआ पहुंचे। बहुत दिन हुए कि ख़ैर व आफ़ियत नहीं सुनी। सब का हाल लिखो। ख़ुसूसन बेगम की ख़ैरियत। हुसेनअली कोर्निश[5] अर्ज़ करता है।

जुमा, ४ जून १८५४ ई०।

—असदुल्लाह्

---

१. नष्ट। २. उत्तरदाता। ३. सामान्य जनों की महामारी। ४. विभिन्न जिले। ५. अभिवादन।

मुंशी नबी बख्श 'हक़ीर' के नाम

३९

(१८ जून, १८५४ ई०)

भाई साहब,

क्या कहूं कि कितना हँसा हूँ तुम्हारी इस बात पर, कि, तू तो क़ता या रुबाई कह कर अलग हो गया और मुझको तीस रोज़े रखने पड़े। गोया अलग-अलग मुझ पर और तुम पर रोज़े फ़र्ज़ न थे, बल्कि एक काम ब शराक़त[1] मुझको और तुमको सुपुर्द हुआ था। इसमे मैंने तो कुछ न किया और आपने अपने हिस्से और मेरे हिस्से का काम सिर्फ़ तुमने किया। ख़ुदा हजरत को सलामत रखे।

भाई साहब, मै न समझा कि ज़किया बेगम अम्मायता सा अलून का सिपारा पढ़ चुकी या हिफ़्ज़[2] कर चुकी। अल्लाहो अकबर[3] अगर हिफ़्ज़ किया है तो बड़ा काम किया है और बहुत बड़ा काम करे, अगर तीसों सिपारे हिफ़्ज़ करे। बारे, ये तो कहो कि तुमने तो उसको पढ़ते सुना होगा। हर्फ़शनास[4] हो गई है और और मुफ़र्रेदात[5] निकाल कर आप उनको पैवन्द दे लेती है या यों ही तोते की तरह 'हक़ अल्लाह्, पाकज़ात अल्लाह्' पढ़ती है।

मुंशी अब्दुललतीफ़ और हमारे शेख़ इकरामुद्दीन और शेख़ नसीरुद्दीन और कुलसूम बेगम और बी हाफ़िज़ा[6] बेगम जिनका ज़िक्र हो चुका है, सबको दुआ पहुँचे और सब बख़ैर बख़ूबी सलामत रहे।

---

१. साझे में। २. कंठस्थ। ३. ईश्वर, महान्। ४. साक्षर। ५. वर्णमाला के अक्षर। ६. जिसे कुरान कंठस्थ होती है।

दिल कुढ़ता है मिर्ज़ा हुसेनअली बेग रिसालदार के हाल पर, बीबी ने उनका पाँच-छै हज़ार रुपया नक़द व जिन्स तबाह कर दिया। रुपये क्या गोया घर खाक में मिला दिया। अब वो ग़रीब क्या करे ? मेरे पास दो-तीन बार आये। एक दिन तन्हाई में अपना हाल कहा। मैं देखता था कि इस शख़्स को अब रोना आता है। सच है—

जने बद दर सराये मर्दे निको
हम दरीं आलमस्त दोज़खे ऊ[1]

यहाँ दिल्ली मे एक इस्तेलाह[2] नये नवाब की और ये लफ़्ज़ आम है। हिन्दू हो या मुसलमान, इस पर सादिक़[3] आ जाता है। सूरत ये कि जहाँ कोई शख़्स मरा, बशर्ते आँ के दौलतमन्द हों, उसका बेटा माल पर मुतसर्रिफ़[4] हुआ। बदमाश लोग फ़राहम हुए और उसको खुदावन्दे नेमत, जनाबे आली कहना शुरू किया। फ़लानी रंडी आप पर मरती है, फ़लाना अमीर अपनी मजलिस मे आपकी यों तारीफ़ करता था। आपको लाज़िम है उस रंडी का बुलाना और उस अमीर की दावत करनी, दुनिया इसी वास्ते है। रुपया साथ-साथ नहीं जाता। आपके बावा क्या ले गये जो आप ले जायेंगे। ग़र्ज़, कि, बन्दा आज तक तीन नये नवाब देखा चुका है। एक तो खत्री टोडरमल लाख रुपये का आदमी था। पान-सात बरस में सब कुछ खोकर शहर से निकल गया और मफ़क़ूदुल ख़बर[5] हो गया। दूसरा एक पंजाबी लड़का—सआदत नाम। पचास-चालीस हज़ार रुपये खोकर तबाह हो गया। तीसरा खान मुहम्मद नाम, सादुल्लाखाँ का बेटा, कि, वो भी बीस-पच्चीस हज़ार रुपये लुटा कर और बग्घियों पर चढ़कर अब जूतियाँ चटकाता फिरता है। गर्ज़, कि, मर्दों को नये-

---

१. सभ्य मनुष्य के घर में कर्कश स्त्री हो तो उसके लिए इसी संसार में नरक है। २. परिभाषा। ३. सच्चा। ४. अधिकार करने वाला। ५, जिसका कोई समाचार न मिले।

नवाब बनते सुना था, औरतों मे इस नेकबख्त को देखा। अस्ल उसकी ये है— एक ख़ानगी है मक्कारा और अय्यारा। अब बुढ़ापे में उसने मेरे हक़ीकी साले याने ज़ैनुलआबदीनख़ाँ मरहूम के मामूं को दाम[1] में लाकर उनके घर में बैठी है। और नेकबख्त बहू-बीबियों को लूटती-फिरती है। उसी ने रिसालदार की बीबी से मिलकर उसको नया नवाब बनाया और सारा घर लुटवाया। चुनाँचे रिसालदार की जबानी आपको मुफ़स्सल मालूम होगा। बेचारे ने हरचन्द चाहा कि ये मेरे साथ चले, हरगिज़ न गई—

दर कुजे दमागम मतलब जाए नसीहत
की हुजरा पुरज़ जमज़मए चगो रबाबस्त[2]

अब ये तन्हा आपके पास आते है। उनकी रामकहानी उनकी ज़बानी सुनिएगा।

हुसेनअली आपको बन्दगी और अपने बहन-भाइयों को आला कदरे मरातिब[3] सलाम-बन्दगी कहता है। अ, ब, ज, ह, ख़ पढ़ता है। ख़ुदा मेरी शर्म रख ले और इसमे कोई इस तरह का क़ुसूर न रह जाये, जो लोग मुझको नाम रखें कि क्या बुरी तरह परवरिश की।

निगाश्ता दोशम्बा, २२ रमज़ान १२७० हि० व १८ जून १८५४ ई०।

लो साहब अब के जुमे को अलविदा और अगले मंगल या बुध को ईद होगी।

—अज़-असदुल्लाह्

---

१. जाल। २. मेरे मस्तिष्क के किसी कोने से उपदेश मत माँग, मस्तिष्क का कक्ष चंग और रबाब की गुजन से भरा है। ३. अत्यधिक प्रतिष्ठा के साथ।

४०

भाई साहब,

ये जो आपने लिखा कि तेरे वो अशार सुने जाते हैं कि जो कभी नहीं सुने थे, हाल ये है कि मैंने इन दिनों में दो ग़ज़लें लिखी हैं। एक तो 'दरिया न हुआ, सहरा न हुआ,' सो वो आपके पास भेज चुका। दूसरी ग़ज़ल—'खाँ क्यों हो और गुमाँ क्यों हो, वो अब भेजता हूँ। इन दो ग़ज़लों के अलावा हाल में कोई ग़ज़ल नहीं कही। पस, अगर इसके सिवा कोई कुछ आपके सामने पढ़े तो वो या मेरा कलाम न होगा या साबिक़ की कोई ग़ज़ल होगी कि वो आगे आपने न सुनी होगी।

बन्दा परवर, पन्द्रह रोज़ों का अज्र[1] जो आपने मुझको दिया वो फ़ौरन मैंने उल्टा फेर दिया। मेरे किस काम का ? न आम है कि खाऊँ, न शरबत है के पीऊँ ?

भाई, अब तहनियते ईद[2] में दो क़सीदे किस अन्दाज़ के लिखे हैं कि देखोगे तो हज़[3] उठाओगे। परसों या अतरसों रवाना करूँगा, हरगोपाल साहब को भी दिखा दीजिएगा। रिसालदार के घर के बाब में जो कुछ तुमने कहा, वो मुताबिक़े वाक़िआ[4] नहीं है। याने उस नेकबख़्त ने ज़िद से ये काम नहीं किया। इँ हिकायत गबयाने दीगरस्त[5]। एक ज़ने मर्दे[6] अफ़गन बदरविश, बदफ़न ने उसको लूट-खाया। मेहमानदारी ए हर रोज़ा व गुल व मेवा व नक़्श व निगार, रंग व बू[7]। ये ऐयाशी व बदमाशी है, न आज़र्दगी[8] व दिल आज़ारी।

---

१. प्रतिफल। २. ईद की बधाई। ३. आनन्द। ४. घटना के अनुसार। ५. इस कहानी की बात दूसरी है। ६ ऐसी स्त्री जिसने पुरुष को परास्त कर दिया। ७. गंध। ८. खिन्नता।

मुशी नवी बख्श 'हकीर' के नाम

मैं अपने बच्चों को प्यार करता हूँ और दुआएँ देता हूँ। हुसेनअली तुमको बन्दगी और बडे भाई मुशी अब्दुललतीफ़ को आदाब और बहनों को सलाम और भतीजा-भतीजी को इस राह से कि वो उम्र मे और रिश्ते मे छोटे है, दुआ कहता है--

किसी को देके दिल कोई नवा सजे फुगाँ[1] क्यों हो ?
न हो जब दिल ही सीने मे तो फिर मुँह मे ज़बाँ क्यों हो ?
वो अपनी खू[2] न छोडेंगे हम अपनी वज़ा क्यों छोडे ?
सबुकसर[3] बन के क्या पूछे कि हमसे सरगिराँ[4] क्यों हो ?
वफा[5] कैसी, कहाँ का इश्क जब सर फोडना ठैरा
तो फिर ऐ सगदिल[6] तेरा ही सगे आस्ताँ[7] क्यों हो ?
कफस[8] मे मुझसे रूदादे चमन[9] कहते न डर हमदम[10]
गिरी है जिस पै कल बिजली वो मेरा आशियाँ[11] क्यों हो ?
ये कह सकते हो, हम दिल मे नही है, पर ये बतलाओ
कि जब दिल मे तुम्ही तुम हो तो आँखों से निहाँ[12] क्यों हो ?
गलत है जज्बे दिल[13] का शिकवा देखो जुर्म किसका है
न खींचो गर तुम अपने को कशाकश दरमियाँ क्यों हो ?
यही है आज़माना तो सताना किसको कहते है
अदू[14] के हो लिये जब तुम तो मेरा इम्तिहाँ क्यों हो ?
कहा तुमने कि क्यों हो गैर के मिलने मे रुस्वाई
ब जा[15] कहते हो, सच कहते हो, फिर कहियो के हाँ क्यों हो ?

---

१. आर्त्तनाद का गायक। २. स्वभाव। ३. ओछा। ४. अप्रसन्न। ५. प्रेम। ६. पत्थर का हृदय रखने वाला। ७. पत्थर की देहली। ८. पिजरा। ९. उद्यान की कहानी। १०. मित्र। ११. घोंसला। १२. परोक्ष। १३. हृदय की भावना। १४. शत्रु। १५. उचित।

निकाला चाहता है काम क्या तानों से तू 'ग़ालिब'
तेरे बेमेह्र[1] कहने से वो तुझ पर मेह्रबाँ क्यों हो ?
किता-इफ़्तारे सोम[2] की जिसे कुछ दस्तगाह हो
उस शख़्स को ज़रूर है रोज़ा रखा करे
जिस पास रोज़ा खोल के खाने को कुछ न हो
रोज़ा अगर न खाये तो नाचार क्या करे ?

४१

(जुलाई, १८५४ ई०)

भाई साहब,

क़सीदा मदहिया[3] हज़रत वली अहद बहादुर[4] में 'शीन' की ज़मीर[5] मत्ले[6] से लेकर दूर तक बतर्ज़ के राजे है—

ज़े है बुताने मुग़ाँ शेवा दाद ख्वाहानश
ज़े दस्त हाए हिना बस्ता गुल बदामानश[7]

ज़े है का मोरिद मज़कूर नही याने माशूक़ । शायर कहता है वाह अजब माशूक़ है कि बुताने मुग़ाँ शेवा दाद ख़ाह उसके है, मुग़ाँ शेवा सिफ़त है बुताँ की । मेरे माशूक के दादख़ाह उसके है ऐसे माशूक कि जो मुग़ाँ शेवा है। और मुगों की जहाँ रविशे है, एक ये भी है कि हाथों मे महँदी लगाये रहते है और माशूकों के हाथ भी हिनाई[8] होते है । और दादख़ाह का काम दामन

---

१. निष्करुण । २. रोजा खोलना । ३. प्रशसात्मक । ४. युवराज । ५. तृतीय पुरुष में 'श' का प्रयोग । ६. गज़ल का पहला शेर । ७. उस (प्रेयसी) के हाथ मेहदी से रचे हुए है और आँचल फूल से भरा है । अतः वह प्रशसा की पात्री है । ८. मेंहदी के।

पकड़ना है। जब माशूक़ उसके दामनगीर हुए और हाथ उनके हिनाई हैं तो गोया वो दस्तहाए रंगीन फूल हैं। उसके दामन में अल हासिल इस बैत तक—गहे ज़ मेहरे बदल जागुज़ीदा पैकानश।

'शीन' की ज़मीर बतरफ़े माशूक़ राजे है। बाकी और अशार मे और तरफ़ है कि क़रीना[1] इस पर दाल है।

तुम किस रेख्ते को नया समझते हो ? "कहा किये और हुआ किये"—ये गज़ल पुरानी है। "दरिया मेरे आगे—सहरा मेरे आगे" इस पर भी एक साल गुज़र चुका है। किले मुबारक के मुशाअरे की गज़ल है—

बाज़ीचए अतफ़ाल[2] है दुनिया मेरे आगे
होता है शबो रोज़ तमाशा मेरे आगे
इक खेल है औरंगे सुलेमाँ[3] मेरे नज़दीक
इक बात है ऐजाज़े मसीहा[4] मेरे आगे
जुज[5] नाम नहीं सूरते आलम[6] मुझे मंजूर
जुज वहम नही हस्तिए अशिया[7] मेरे आगे
होता है निहाँ[8] गर्द मे सहरा[9] मेरे होते
घिसता है जबी[10] खाक पै दरिया मेरे आगे
मत पूछ कि क्या हाल है मेरा तेरे पीछे
तू देख कि क्या रंग है तेरा मेरे आगे

---

१. क्रम। २ बच्चों का खिलौना। ३. सुलेमान का सिहासन। सुलेमान का शासन जलचरों तथा नभचरों पर भी था। ४. ईसा मसीहा का चमत्कार, वे प्राणियों को जीवित कर सकते थे। ५. अंश। ६. विश्वदर्शन। ७. पदार्थ का अस्तित्व। ८. गुप्त। ९. रेगिस्तान। १०. माथा।

सच कहते हो खुदबीं[1] व खुदारा[2] हूँ न क्यो हूँ ?
बैठा है बुते आईना सीमा[3] मेरे आगे
फिर देखिए अन्दाज़े गुल अफ्शानिए गुफ्तार[4]
रख दे कोई पैमानए सहबा[5] मेरे आगे
नफरत का गुमा गुज़रे है मै रश्क से गुज़रा
क्यों कर कहूँ, लो नाम न उनका मेरे आगे
ईमाँ मुझे रोके है जो खीचे है मुझे कुफ्र
काबा मेरे पीछे है कलीसा[6] मेरे आगे
आशिक हूँ पै माशूक फरेबी है मेरा काम
मजनूं को बुरा कहती है लैला मेरे आगे
खुश होते है पर वस्ल[7] मे यूँ मर नही जाते
आई शबे हिज्राँ[8] की तमन्ना मेरे आगे
है मौजजन[9] इक कुल्जुमे खूं[10] काश यही हो
आता है अभी देखिए क्या क्या मेरे आगे
गो हाथ को जुम्बिश[11] नही आँखो मे तो दम है
रहने दो अभी सागरो मीना[12] मेरे आगे
हमपेशा[13] व हममश्रबो[14] हमराज़ है मेरा
'गालिब' को बुरा क्यों कहो अच्छा मेरे आगे

---

१. आत्मदर्शी। २. ईश्वर के लिए। ३. माथा, मैनाणी। ४. वार्तालाप की फुहार। ५. शराब का प्याला। ६. गिरजाघर। ७. सयोग। ८. वियोग की रात। ९. तरंगित। १०. रक्त का समुद्र। ११. गति। १२. चषक और शराब का जग। १३. समव्यवसायी। १४. एक स्थान पर पीने वाला।

मुंशी नबी बख्श 'हक़ीर' के नाम

४२

(१० अगस्त, १८५४ ई०)

भाई साहब,

आपके इनायत नामे से भाबी साहिबा के मिजाज की नासाज़ी[1] और बच्चो की नाखुशी मालूम हुई। परवर्दगार सबको अपनी अमान[2] मे रखे। दिन बुरे है। यहाँ भी तप का मर्ज आम है, मगर अजाम बखैर है। ये सब खूबियाँ मेंह न बरसने की है। खुदा से दुआ माँगता हूँ और आपसे चाहता हूँ कि अब जल्द आप सब की खैर व आफियत लिखें।

मिर्ज़ा यूसुफअलीखाँ अगर अभी वहाँ से न चले हों तो उनको मेरी दुआ कहना और ये कहना कि मियाँ तुम्हारा खत आया। तुम्हारे सब दोस्तो को सलाम कह दिया। वो सब सलाम कहते है। अब तुम मुंशी साहब पर सब उम्र[3] हवाले करके चले आओ। दिरग[4] न करो।

ग़ज़ल देखी। भाई साहब, इन जमीनों[5] मज़ामीने आशिकाना[6] की गुंजाइश कहाँ? मुआफ़िक इस ज़मीन के अशार मरबूत[7] है।

मुंशी अब्दुललतीफ़ और उनके फ़र्ज़न्द, बेगम और उसकी हमजोलियो को दुआ।

रोज़े जुमा आज़ दहुम, अगस्त १८५४ ई०।

अज़-असदुल्लाह्

---

१. अस्वस्थता। २. शरण। ३. विषय। ४. विलम्ब। ५. गजल का अन्त्यानुप्रास, पूर्वान्त्यानुप्रास और छन्द। ६. शृगार रस सम्बन्धी विषय। ७. अभ्यस्त।

४३

(१५ अगस्त, १८५४ ई०)

भाई साहब,

परसों शाम को मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ शहर में पहुंचे और कल मेरे पास आये। बेगम की पर्दानशीनी और घर में बहुत लोगों की बीमारी और फिर तुम्हारी उनके हाल पर इनायते और शाम की सुहबतों में सुख़नवरों[1] की हिकायतें[2] सब बयान की, हैरान हूं कि मेह हर तरफ़ खूब बरस रहा है, फिर बीमारी का शीवा[3] क्यों है ? यहां भी अक्सर लोग तप में मुब्तिला हैं। हकनाला अजाम बखैर करे और अपने बन्दों पर रहम फ़रमाए।

अगले खत में लिख चुका हूं कि मरीज़ों की सेहत की खबर जल्द लिखिएगा। ज़ाहिरा अब तक कुछ न कुछ क़िस्सा चला आता है कि आपका इनायतनामा अब तक नहीं आया।

हकीम इलाहाबख्श सिकन्दराबादी आपके पास पहुंचे हैं। बहुत नेकबख्त और माक़ूल आदमी हैं। उनका परवरिश का खयाल रहे और शेख रहमतुल्लाह साहब जो आगे आपको बदौलत कामयाब हो चुके हैं, अगर वहाँ हों तो उनका भी आपको खयाल रहे और मेरा सलाम कह दीजिए और अगर वहाँ न हों तो उनका हाल मुझको लिखिए।

मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ कहते थे कि आप उस क़सीदे के तालिब[4] हैं, जो बतरीक़े मर्सिया[5] लिखा गया है और उसमें शाह अवध की मदह[6] भी मुन्दरिज है, अगर हाथ आ गया तो छापे का वर्ना क़लमी भेज दूंगा। बादशाहे

---

१. कवि। २. वृत्तान्त। ३. प्रकटीकरण। ४. आकांक्षी। ५. करुण रस पर लिखी जानेवाली कविता की एक शैली। ६. प्रशंसा।

अवध तक पहुँच गया है। अगर कुछ जुहूर[1] मे आया तो वो भी तुमको लिखूँगा।

बेगम को दुआ पहुचे। क्यों भइ, अब हम कौल आये भी तो तुमको क्यों कर देखेंगे? क्या तुम्हारे मुल्क मे भतीजियाँ चचा से पर्दा करती हैं। भाई, खुदा के वास्ते सब की खैर व आफ़ियत जल्द लिखो। मुंशी हरगोपाल के खत से इतना मालूम हुआ कि मियाँ अब्दुल लतीफ के घर मे अच्छी तरह हैं, औरो का हाल नही मालूम हुआ।

वस्सलाम माल अक्राम। सेशम्बा, १५ माहे अगस्त १८५४ ई०।

—अ ग़-असदुल्लाह्.

४४

(१५ सितम्बर, १८५४ ई०)

भाई साहब को बन्दगी पहुँचे। यहा का माजरा अर्ज़ करूंगा। पहले ये तो पूछिए कि यहाँ कौल का क्या वाक़ा मशहूर है। ला हौल विला क़ुव्वत इल्लाह बिल्लाह[2]। हर अजुमन मे यही ज़िक्र कि, कौल मे बड़ी खानाजगी[3] हुई और हिन्दू-मुसलमानों मे तलवार चली। दस-बीस आदमी तरफ़ैन[4] के मारे गये। मै चाहता था के तुमको लिखूँ कि इस अर्से मे तुम्हारा खत आ गया और हाल मालूम हुआ। मै जानता हूँ ऐसा ही मशहूर होगा कि दिल्ली मे तलवार चली। सो हज़रत न तलवार चली, न खानाजगी हुई। दो दिन हिन्दू-दुकानदारो ने दूकाने बन्द कर दी थी। सो, साहब मजिस्ट्रेट बहादुर और कोतवाल ने सारे शहर का

---

१. प्रकट मे रूप मे। २. ईश्वर के अतिरिक्त और कोई सामर्थ्य नही है। ३. गृह-युद्ध। ४. दोनों पक्ष।

गश्त किया। बमुलातफ़त[1] व मुलायमत[2] बलाकीद[3] व तहदीद दूकाने खुलवाईं। बकरियाँ भी कुर्बान हुईं, गायें भी।

मैंने अबके ईद को कसीदा नही लिखा। एक मुजल्लद[4] इस तारीख का तमाम कर कर वो नज़्र किया।

इसका हाल सुनिए कि वो सूरत जो पहले थी वो नही रही। आगे आग़ाज़ अमीर तैमूर के हाल से था। अब शुरू तहरीर आफ़रीनशे आलम[5] व जुट्टूरे आदम[6] से है। मैंने किताब का नाम 'परतोस्तान' रखा और दो मुजल्लद[7] पर मुन्कसिम[8] किया। पहला मुजल्लद इब्तिदाए आलम से हज़रत नसीरुद्दीन हुमायूं तक, इसका नाम 'मेहरे नीमरोज़' रखा। दूसरा मुजल्लद जलालुद्दीन अकबर के हाल से हज़रत वाली अस्र[9] तक। इसका नाम माहे नीममाह, सो वो 'मेहरे नीम रोज़' तमाम हुआ और नज़रे हुज़ूर किया। अब अगर ज़ीस्त[10] वफ़ा करेगी तो 'माहे नीममाह' लिखा जाएगा। तौक़ीए खुशनूदी[11] मुझको मिल गया, याने शुक्रा[12] मुश्तमिल तहसीन[13] व इजहारे इनायत[14] पर। इसी को खिलते फ़ाखिरा[15] और जागीर तसव्वुर करता हूँ। मुझमे कही जाने का दम नही। अगर बादशाह का तवस्सुल[16] न होता तो भी यही पड़ा रहता। बस मैं इसको ग़नीमत जानता हूँ। मेरा क़द्रदाँ कौन कि मै उस पर नाज़ करूँ। बक़ौल डूम के—जो समझे वो हमारा ग़ुलाम, जो न समझे हम उसके ग़ुलाम।

---

१. दया के साथ। २. कोमलता। ३. चेतावनी के साथ। ४. जिल्दबन्द पुस्तिका। ५. युगादि। ६. आदम का प्रकटीकरण। ७. जिल्दबन्द। ८. विभक्त। ९. समकालीन नरेश। १०. जीवन। ११. प्रसन्नता का प्रमाण-पत्र (शाही)। १२. शाही आदेश। १३. साधुवाद। १४. कृपा-प्रकाशन। १५. बहुमूल्य वेश (राज्य द्वारा प्रदत्त)। १६. आधार।

मुंशी नबी बख़्श 'हक़ीर' के नाम

ज़िन्दगी बर गर्दनम उफ़्ताद 'बेदिल' चारा नीस्त
चार बायद ज़ेस्तन नाचार बायद ज़ीस्तन[1]

हाँ साहब, युसुफ़अलीख़ाँ ने लखनऊ वाले क़सीदे का छापा जहाँख़ाँ की मारिफत तुमको भेजा है। नहीं जानता जहाँख़ाँ कौन है। यूसुफ़अलीख़ाँ की ज़बानी लिखता हूँ। पस, अगर पहुँच गया तो ख़ैर, वर्ना तुम जहाँख़ाँ से माँग लो।

साहब, यहाँ एक तप फैली है कि कोई घर न होगा, जिसके आधे आदमी तप में मुब्तिला न हों। कल्लू दारोग़ा, उसकी माँ, मदारी की घरवाली, उसके बच्चे सब बीमार। तुम्हारी भाबी याने मेरी बीबी और हुसेन अलीख़ाँ की पालने वाली के वो घर की मदारुलमहाम[2] है, बीमार। मज़ा ये कि उन दोनों का रोज़े नौबत[3] एक है। ख़ुदा का शुक्र है कि हुसेनअली अच्छा है। आपको बन्दगी कहता है और अपनी बहन को सलाम और अपनी चाची को आदाब। मैं अब से बेगम को जकिया बेगम न कहूँगा। अब मैं उसको हाफिजजी[4] लिखा करूँगा। हाफिज़जी को मेरी दुआ पहुँचे और मुंशी अब्दुललतीफ़ को और उनके बच्चों को दुआ। वस्सलाम।

जुमा, १५ सितम्बर १८५४ ई०।

—असदुल्लाह्

४५

(३ अक्तूबर, १८५४ ई०)

भाई साहब,

जी चाहता है बातें करने को। हक़ताला अब्दुस्सलाम की माँ को शिफ़ा[5]

---

१. जीवन मेरे लिए भार बन गया है। कोई उपाय नहीं है। चाहे प्रसन्नता से चाहे विवशता से, इसे बिताना ही पड़ेगा। २. मंत्री। ३. बारी का दिन। ४. जिसे कुरान कंठस्थ हो। ५. स्वास्थ्य-लाभ।

दे और उनके बच्चों पर रहम करे। ये जो तप और खाँसी मुज़मिन[1] हो जाती है तो ये बीमारी नहीं है, रोग है। इस तरह के मरीज़ बरसों जीते हैं और अगर क़िस्मत मे होता है तो अच्छे भी हो जाते है। कुलसूम को माँ का दूध न पिलाओ। दाई रख लो। मरीज़ा[2] को भी इफ़ाक़त[3] रहेगी और लड़की भी राहत पाएगी।

मुझको देखो, ग़म न दारी बुज बखर[4]। कहाँ जैनुल आबदीन और उसकी बीबी मरे और दो बच्चे छोड जाये और उनमे से एक मै ले लूँ। मुख़्तसर[5] कहता हूँ, आज तेरहवाँ दिन है के हुसेनअली ने आँख नही खोली दिन-रात तप और ग़फ़लत और बेख़ुदी[6]। कल बारहवे दिन मुहसिल दिया था। चार दस्त आये। मदार दो-चार बार दवा और एक-दो आशे जौ[7] पर है। अजाम अच्छा नज़र नही आता। दादी उसकी बीमार, रोज दोपहर को लरज़ा चढता है। आख़िरे रोज़[8] फ़ुर्सत हो जाती है। ज़ुहर क़ज़ा[9] और अस्र[10] वक़्त पर पढ लेती है। तमाशा ये के तारीख दोनो के तप की एक है। भाई, बीबी की तो इतनी फ़िक्र नही लेकिन हुसेनअली की बीमारी ने मार डाला। मै उसको बहुत चाहता हूँ। खुदा उसको बचा ले और मै उसको दुनियाँ मे छोड़ जाऊँ। सूख कर काँटा हो गया है। मैने आगे तुमको नही लिखा। यहाँ बडी बीमारी फैल रही है और कोई बीमारी, ये तपे हैं रगारग, बेस्तर बारी की यानी अगर घर मे दस आदमी है तो छै बीमार होंगे और चार तनदुरुस्त और उन छै मे से तीन अच्छे हो जाएँगे तो वो चार बीमार होंगे। आजतक अजाम बख़ैर था। अब लोग मरने लगे। हवा में सम्मियत[11] पैदा हो गई। ये क़िस्से तो यो रहे--

---

१. जीर्ण। २. रोगिणी। ३. चैन। ४. यदि मनुष्य को कोई चिन्ता न हो तो बकरी खरीदो। ५. सक्षिप्त। ६. मूर्च्छा। ७. जौ का हरीरा। ८. सायंकाल। ९. अपराह्न की नमाज़। १०. दिन ढले की नमाज़। ११. जहरीलापन।

मुंशी नबी बख्श 'हकीर' के नाम

रात-दिन गर्दिश में हैं सात आस्माँ
हो रहेगा कुछ न कुछ घबराएँ क्या ?

ये डाक का सिरश्ता क्या बिगडा मैंने अपने नज़दीक अज़रूए एहतियात[1] बैरंग खत भेजना इख्तियार किया था। गो बमुतक़ाजिए वहम हो, खत जब डाक घर में जाता था रसीद मिलती थी। पोस्ट पेड की लाल मुहर, बैरग की स्याह मुहर, खातिर जमा हो जाती थी। डाक किताब को देख कर याद आ जाता था के फ़लाना खत किस दिन भेजा है और किस तरह भेजा है। अब डाक घर मे एक सन्दूक़, मुह खुला हुआ, न रसीद, न मुहर, न मुशाहिदा[2]। खुदा जाने वो खत रवाना होगा या न होगा। अगर रवाना भी हुआ तो वहाँ पहुँचने पर डाक के हरकारे को न इनाम का लालच न सरकार को महसूल की तमा[3]। न दिया हरकारे को या दिया। हरकारे ने न पहुँचाया। अगर खत न पहुँचा तो भेजने वाला किस दस्तावेज़ से दावा करेगा। मगर हाँ, चार आने देकर रजिस्ट्री करवाइए। हम दूसरे-तीसरे दिन जा—बजा[4] खत भेजने वाले रुपये आठ आने रजिस्ट्री को कहाँ से लाये ? अहयानन[5] हमने तीन माशे समझ कर आध आने का स्टाम्प लगा दिया। वो खत दो रत्ती बढ़ती निकला। मकतूबअलै[6] से दूना महसूल लिया गया। खाही न खाही काँटा-बाँट रखिए। काँटे का खार खार[7] अलग, तोलने का किस्सा अलग। खत भेजना न हुआ, एक झगडा हुआ, एक मुसीबत हुई। आज दसवीं मुहर्रम को ये खत लिखा है। कल इस्टाम्प के टुकडे मँगाऊँगा। सरनामे पर लगा कर रवाना करूँगा। अँधेरी कोठरी का तीर है। लगा लगा, न लगा न लगा।

खुदा के वास्ते इस खत का जवाब जल्द लिखना। अब्दुस्सलाम की माँ का मुफ़स्सल हाल लिखना। बदहवास हूँ। मुझको माफ़ रखना। हाफ़िज़ जी को दुआ। मुंशी अब्दुललतीफ़ को दुआ।

---

१. सावधानी की दृष्टि से। २. साक्षी। ३. लोभ। ४. यत्र-तत्र। ५. कभी-कभी। ६. जिसे पत्र लिखा गया। ७. परेशानी।

निगाश्ता दहुम[1] मुहर्रम, १२७१हि० मुताबिक़ सोअम[2] अक्तूबर १८५४ ई०, व मुर्सिला चारशम्बा, ११ मुहर्रम व ४ अक्तूबर।

—अज़-असदुल्लाह्

४६

(६ अक्तूबर, १८५४ ई०)

हाय हाय, वो नेक बख्त न बची। वाक़ई ये के तुम पर और उसकी सास पर क्या गुज़री होगी? लड़की तो जानती ही न होगी कि मुझ पर क्या गुज़री? लड़का शायद याद करेगा और पूछेगा के अम्माँ कहाँ है? ये उसका पूछना और तुमको रुलाएगा। बहरहाल चारा जुज़[3] सब्र नहीं है। ग़म करो, मातम रखो, रोओ-पीटो। आख़िर खूने जिगर खाकर चुप रहना पड़ेगा। हक़ताला अब्दुललतीफ़ को और तुमको और यतीमों की दादी और फूफियों को सलामत रखे और तुम्हारे दामन में उतूफ़त व आग़ोशे राफ़त[4] में उनको पाले।

हुसेनअली का हाल अगले खत में लिख चुका हूँ। आज सोलहवाँ दिन है तप को और नवाँ दिन है कि दाना नहीं खाया। सूख कर काँटा हो गया है। आज हुक़ना हो रहा है। मुझमें देखने की ताब नहीं। मैं दीवानखाने में बैठा लिख रहा हूँ। महल में मर्दाना है। बादशाही खास तराश हुक़ना कर रहा है। देखिए क्या हो? मुझको तो यास[5] है।

जुमा ६ अक्तूबर १८५४ ई०।

—असदुल्लाह्

---

१. दशम। २. तीसरी। ३. धैर्य के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है। ४. दया का आँचल। ५. निराशा।

४७

(१५ अक्तूबर, १८५४ ई०)

भाई साहब,

आपका ख़त आया और मुंशी अब्दुललतीफ की दुख्तर[1], बुलन्दअख्तर[2] का अपनी फूफियो के साथ अकबराबाद जाना मालूम हुआ। यक़ीन के अब्दुस्सलाम अपनी माँ को याद करे, हक़ ब जानिब तुम्हारे है। वाक़ई, के, बड़ा हादिसा[3] तुम पर गुज़रा है। खुदा तुमको सब्र भी दे और सब्र का अज्र[4] भी दे। इन्नालिलहे मअस्साबरीन[5]।

हुसेनअली अब अच्छा है, याने तप नहीं, पेशाब मे रेग[6] आती है। मेदे मे सलाबत[7] है। ज़ोफ़[8] की कुछ हद नहीं। खुदा करे बच जाये और बिल्कुल अच्छा हो जाये।

सआदत व इक़बाल निशाँ[9] मिर्जा यूसुफ़ अलीखाँ ताले उम्रहू[10] पहुँचते है। मेरी तरफ़ से भी मसासिमे ताज़ियत[11] बजा लाएँगे और हाल मेरी ग़मज़दगी और ख़स्तगी का कहेंगे।

१५ अक्तूबर १८५४ ई०।

—अज़-असदुल्लाह्

---

१. बेटी। २. सौभाग्यशाली। ३. दुर्घटना। ४. प्रतिफल। ५. ईश्वर सन्तोष करने वाले के साथ है। ६. रेत। ७. कठोरता। ८. दुर्बलता। ९. सौभाग्यशाली। १०. ईश्वर दीर्घायु करे। ११. शोक प्रकाशन की रस्म।

४८

(५ नवम्बर, १८५४ ई०)

आदाब बजा लाता हूँ और जाजिम[1] का सलाम करता हूँ। ये तकलीफ़ क्यों की ? इसकी जरूरत क्या थी ।

यूसुफअलीखाँ की जबानी तुम्हारे सामा[2] व शाम्मा[3] का हाल मालूम हुआ। भाई, वल्लाह् बिल्लाह् । मेरा मुद्दत से यही हाल है कि न कान मे आवाज़ आती है, न नाक मे बू । बाक़ी रहा कि[4] मैं यहाँ मौजूद हूँ और हुकमा[5] मेरे दोस्त हैं, मेरी तदबीर नही हो सकी । तुम जो वहाँ बैठे चाहते हो कि यहाँ से तुमको कोई दवा या कोई नुस्ख़ा ऐसा भेज दिया जाये कि फ़ौरन सेहत हासिल हो जाये, ये क्यों कर हो सके । फ़ुर्सत चाहिए, मशक़्क़त चाहिए। मुसहिल लिए जाएँ, माजूने खाई जाये, अर्क पिये जाये । आइन्दा फ़ायदा हो या न हो, हरचन्द हकीम अहसनुल्लाखाँ साहब ने अजराहे इनायत चाहा कि मुआलिजा[6] करें । मैंने जब्र उठाना गवारा न किया । खैर ये क़िस्से और हैं । बात यही है कि इन अमराज़ का इलाज मुन्हसिर कमरने तनक़िया[7] मे है और उसको हुजूरे तबीब[8] व फराग़े[9] खातिर शर्त है।

ज़ियाउद्दीनखाँ बहादुर को मैंने कहला भेजा है । जब वो अपनी नज्म व नस्र मेरे पास भिजवा देंगे तो मैं आपको भेज दूंगा । यूसुफअलीखाँ कहते थे कि अब्दुस्सलाम व कुलसूम आगरे मे आ गये, अच्छा हुआ । माँ तो ग़रीबों की है ही नही । अपने दादा-दादी के पास आराम से रहे ।

---

१. पृथ्वी तक झुककर । २. श्रवण-शक्ति । ३. घ्राण-शक्ति । ४. यद्यपि । ५. राज्याधिकारी । ६. चिकित्सा । ७. विरेचन की अधिकता । ८. चिकित्सक । ९. अवकाश ।

मियाँ नसीरुद्दीन भी शाइर हुए हैं। आपने तखल्लुस[1] उनको क्या दिया है? मुझको इत्तिला दीजिए।

बेगम का हाल तुम्हारी तहरीर से मालूम हुआ कि अक्सर बीमार हो जाती है। खुदा उसका हाफिज[2] रहे। पढ़ने में उस पर शिद्दत न किया करो। इस मेहनत को उस पर सहल कर दो। औरतों को इल्म इतना ही काफ़ी है कि हर्फ़ शनास[3] हों और कलाम मजीद[4] नाज़िरा[5] दुरुस्त पढ़ ले। खुदा उसको जीता रखे। सबादे हर्फ शनासी[6] हो गया है। क़ुरान पढ़ लेगी। शिद्दत न करो।

हुसेनअली अच्छा हो गया मगर सलाबते मेदा[7] और फ़म्मे मेदा[8] की हाँ वरम[9] बाक़ी है। कई दिन के बाद कल फिर तप चढ आई। आखिरे शब तप उतरी। आज अच्छा है। कल देखूंगा क्या हो। इसका हक़ीक़ी दादा याने ज़ैनुल आबदीनखाँ के वालिद और मेरे हमज़ुल्फ़[10] नवाब गुलाम हुसेनखाँ मर गये। बहुत अफ़सोस की बात है। ये शख्स बहुत साहबे मुरुवत और साहबे मेह्र व मुहब्बत था।

यकशम्बा, पज़्म[11] नवम्बर १८५४ ई०।

——असद

४६

(२३ नवम्बर, १८५४ ई०)

भाई साहब,

अस्सलामलेकुम। हकताला तुमको और तुम्हारे बच्चों को सलामत रखे।

---

१. काव्यनाम। २. रक्षक। ३. साक्षर। ४. कुरान। ५. देखते हुए। ६. अक्षर पहचानने की क्षमता। ७. मेदे की कठोरता। ८. आमाशय का मुख-कौड़ी। ९. शोथ। १०. साढ़ू, साली का पति। ११. पचम।

मशी अब्दुललतीफ़ का ज़ौफ़े दिल व दिमाग़ गोया ख़िल्की[1] है। इसकी फ़िक्र ज्यादा न करो। नौशादरू[2] व ख़मीरए गावज़ुबाँ, ख़मीरए अबरेशम, दवा उलमिश्क[3], इस तरह के मुरक्कबात[4] का इस्तेमाल चला जाये। न अलदवाम[5] बल्के गाह गाह[6]।

यहाँ का हाल ताज़ा ये है कि मियाँ जौक़ मर गये। हुज़ूर वाला[7] ने ज़ौके शेर व सुख़न[8] तर्क किया। सच तो ये है कि ये शऊर अपनी वज़ा का एक, और इस अस्र[9] मे ग़नीमत था। नज़्म व नस्र नवाब ज़ियाउद्दीन अहमदख़ाँ 'नय्यर' तख़ल्लुस पहुँचती है। तबा मानीयाब[10] व ज़बाने नुक़ता सज रखते है। ख़ूब लिखते है।

सब को मेरी दुआ पहुँचे और सब की ख़ैर व आफ़ियत मुझको लिखो। ख़ुसूमन बेगम की ख़ैर व आफ़ियत। वस्सलाम।

रोज पंजशंबा, २३ नवम्बर १८५४।

—अज़-असदुल्लाह

५०

(८ दिसम्बर, १८५४ ई०)

भाई साहब,

ख़ुदा के वास्ते माजरा क्या है, न तो अपनी और अपने बच्चों की ख़ैर व आफ़ियत लिखते हो न मेरी ज़ीस्त की ख़बर पूछते हो। नवाब ज़ियाउद्दीनख़ाँ

---

१. जन्मजात। २. नौसादर। ३. यूनानी औषधियाँ। ४. मिश्रण (ब. व.)। ५. सदा नहीं। ६. कभी-कभी। ७. बादशाह। ८ कविता का आनन्द। ९. युग। १०. अर्थपूर्ण।

की नज्म व नस्र के औराक़ हस्बुल तलब[1] तुम्हारे भेजे। उसकी रसीद भी नहीं। ये तो सूरत इन्क़िताए मुहब्बत[2] की-सी है। गुमान करता हूँ कि दौरे का सफ़र होगा। इस सूरत मे भी तो तुम मुझको खत भेजा करते थे। कसरते कारोबार[3] नई बात नही। क्या अदालते दीवानी और परमिट और कमिश्नरी ये तीनों मुहक्मे भी आप ही के सुपुर्द हो गये।

मुंशी हरगोपाल भी कौल मे नहीं, कि, जो उनकी तहरीर से तुम्हारा हाल मालूम हो। मुझको इल्मे गैब नहीं[4]। अश्राक़े ज़मीर[5] नही कि यहाँ बैठा हुआ तुम्हारा हाल दरियाफ़्त करूँ। एक ज़रा होश मे आओ और अपनी, मय अपने मुतवस्सिलो[6] के खैरियत लिख कर भेजो। सबका हाल नाम बनाम लिखो।

खुदा जाने अब्दुललतीफ़ कैसा है, बेगम कैसी है और लड़के-बाले कैसे हैं, तुम्हारा क्या हाल है? घर मे किस तरह है? मै सबको दुआ कहता हूँ और हुसेनअली तुमको बन्दगी कहता है।

८ दिसम्बर १८५४ ई०।

—असद

५१

(३१ दिसम्बर, १८५४ ई०)

भाई,

खुदा के वास्ते, रसूल[7] के वास्ते मुंशी अब्दुललतीफ़ की खैर व आफ़ियत लिखो। तफ़्ता भी वहाँ नहीं जो तुम्हारा हाल लिखते रहे और मै तुम्हारा

---

१. इच्छानुसार। २. प्रेम तोड़ना। ३. काम की अधिकता। ४ परोक्ष का ज्ञान। ५. अश्राक़—ऐसे सिद्ध लोग जो दूर की घटनाओं को जान लेते है और अपने शिष्यों को दूर से ही प्रेरित करते है। ज़मीर, अन्तःकरण। ६. आश्रित। ७. हज़रत मुहम्मद।

मुहताज न रहूँ रात भर मुझको बेचैनी रहती है और तुम्हारे ख़त के न आने का ख़याल और अब्दुललतीफ़ की बीमारी के तसव्वुर मे मलाल रहता है। या रब[1], आज आख़िरे रोज़ जो वक़्त डाक के हरकारो के आने का है, क़ासिद[2] आ जाये और तुम्हारा ख़त लाये और उसमे ख़ैर व आफ़ियत अब्दुललतीफ़ की ख़ुसूसन[3], औरो की उमूमन[4] मुदरिज हो।

किले को सवार होता हूँ। ये रुक्क़ा लिख कर कहार को दे चला हूँ। वो डाक मे डाल आएगा। ज़किया बेगम को दुआ पहुँचे।

इस ख़त का जवाब, क़सम खाता हू कि इस साल मे नही आने का याने १८५५ मे लिखोगे।

निगाश्ता यकशम्बा सी व यकुम[5] दिसम्बर १८५४ ई० वक़्त सुबह।

—अज-असदुल्लाह

५२

(८ मार्च, १८५५ ई०)

भाई साहब का इनायतनामा पहुंचा। मेरा ख़त न लिखना तग़ाफ़ुल[6] व तसाहुल[7] से न था। आप अपने दौरे का जाना लिख चुके थे। मै चाहता था कि जब आप अलीगढ़ आये और मुझको इत्तिला दे तो मै ख़त लिखूं। हाफ़िज़ा बेगम को दुआ पहुंचे। हक़तआला तुमको सलामत और तनदुरुस्त रखे और तोसो सिपारे हिफ़्ज़[8] करने की तौफ़ीक़[9] दे।

मुंशी अब्दुललतीफ़ का हाल मालूम हुआ। ख़ुदा पर नज़र रखो और

---

१. हे ईश्वर। २. पत्रवाहक। ३. विशेष रूप से। ४. सामान्यतया। ५. ३१। ६ उपेक्षा। ७. असावधानी। ८. कंठस्थ। ९. सामर्थ्य।

तक़वियत[1] की रिआयत[2] किये जाओ। लिख चुका हूँ और फिर लिखता हूँ कि जदवार[3] बहुत मुफ़ीद[4] होगी। अगर वहाँ अच्छी न मिले तो मुझको लिख भेजो, मैं यहाँ से भेज दूँ। 'महरे नीमरोज़' तुम्हारे पास है। अब और क्या करोगे? अगर ऐसी ज़रूरत है तो लिख भेजो। मैं दो-तीन मुजल्लद[5] और भेज दूँ। इन दिनों मे दो रुबाइयाँ उर्दू मे लिखी हैं। इनको बनज़रे इस्लाह[6] देखो—

कहते हैं कि वो मर्दुम आज़ार[7] नही
उश्शाक़[8] की पुर्सिश[9] से उसे आर[10] नही
जो हात, कि, जुल्म से उठाया होगा
क्योंकर मानूँ, कि, उसमें तलवार नही

हम गर चे हुए सलाम करने वाले
करते हैं दिरंग[11] काम करने वाले
कहते हैं कही खुदा से अल्लाह् अल्लाह्
वो आप हैं सुबहो शाम करने वाले

मुरसिला पजशबा १८ जमादिस्सानी (१२७१ हि०) ८ मार्च १८५५ ई०।

—अज़-असदुल्लाह्

५३

(१९ मई, १८५५ ई०)

पीर व मुर्शिद,

मुझ पर इताब[12] क्यों है? न मैं तुम तक आ सकता हूँ न तुम तशरीफ़ ला

---

१. सान्त्वना, बल। २. रक्षा। ३. निर्विषी। ४. लाभदायक। ५. सजिल्द। ६. आलोचना की दृष्टि से। ७. मनुष्य को सताने वाला। ८. प्रेमी। ९. पूछताछ। १०. लज्जा। ११. विलम्ब। १२. अप्रसन्न।

सकते हो। सिर्फ़ नामा[1] व पयाम[2], सो आप ही याद कीजिए कि कितने दिन से आपने अपनी और बच्चों की खैर व आफ़ियत नहीं लिखी।

शेख़ वज़ीरुद्दीन पहुँचे होंगे। मिर्ज़ा हसनबेग पहुँचे होंगे। बारे फ़रमाइए उनसे रमज़ानुल मुबारक[3] तशरीफ़ लाये है। कल दिन भर तो गर्मी रही और शाम से पानी तो बर्फ हो गया है और हवा का ये आलम है कि रात को मैंने रज़ाई ओढ़ी थी। इस हवा का एतबार नही। अभी मंजिल दूर है।

हाँ साहब, मियाँ तफ़्ता हम पर खफ़ा हो गये है। दो-दो हफ़्ते से उनका खत नही आया। खुदा जाने कहाँ है, क्या करते है। किस शग़ल मे है। आपको अगर उनका हाल मालूम हो तो मुझको भी इत्तिला दीजिए।

हमने घरों मे ये रस्म देखी है कि जहाँ लडका आठ-सात बरस का हुआ और रमज़ान आया तो उसको रोज़ा रखवाते है और नमाज़ पढ़वाते है। मुझको शब को ये खयाल आया कि कही ऐसा न हो कि बेगम को अब के साल आप रोज़ा रखवाये। अभी उसकी उम्र क्या है? नवे-दसवे बरस रोज़ा रखवाना। बहरहाल इस हाल से मुझे आगाही दो और अपना और अपने रोजा व शग़ले हर रोज़ा[4] का हाल लिखो।

मुंशी अब्दुललतीफ़ का हाल लिखो कि वो कैसे है। रोज़ा ज़रा समझ कर रखे। कही ऐसा न हो कि गर्मी की ताब न लाये और रोज़ा रख कर रंजूर[5] हो जाये।

मेरी तरफ़ से सब को दुआ पहुँचे और हुसेनअलीखाँ की तरफ़ से सबको बन्दगी और सलाम और शायद जैसे अब्दुस्सलाम और बेगम है, उनको दुआ पहुँचे।

निगाश्ता १९ मई १८५५ ई०, २ रमज़ान (१२७१ हि०)

—अब्द-असदुल्लाह्

---

१. पत्र। २. सन्देश। ३. रमजान का शुभ मास। ४. प्रतिदिन की कार्यव्यवस्तता। ५. दुःखी।

मुंशी नबी बख्श 'हकीर' के नाम

५४

(मई, १८५५ ई०)

या इलाही[1] किस पर शक करूँ ? माल व दौलत, जाह व शौकत[2] पर तो मैं किसी का भी हासिद[3] नही हुआ। शेख वजीरुद्दीन पर और मिर्ज़ा हसनअली बेग रिसालदार पर हसद[4] क्योंकर न करूँ कि मेरे भाई को देखते हुए और उनसे बाते करते हुए आये हैं। मक़सूद इस निगारिश[5] से ये है कि दोनों साहब जुदा-जुदा आये और आपकी खैर व आफियत उनसे मालूम हुई। शेख वजीरुद्दीन कुछ 'महरेनीमरोज' के मुक़दमे[6] मे कहते थे मगर मैं जो बहरा हूँ। तो कुछ समझा नही कि वो क्या कहते थे। शायद यही कहते होंगे कि जो अब फिर छापी जाये तो एक नुस्खा जनाब मुंशी साहब को और भेजना।

अब्दुस्सलाम को मैं अजराहे निसियाँ[7] छोटा समझा हुआ था। अब शेखजी के इज़हार से मालूम हुआ कि वो बाते करता है और हुसेनअली के बराबर है। उनके कहने से मुझको याद आया कि कम व बेश[8] चार बरस का हुआ होगा। यक़ीन है कि अब बिस्मिल्लाह् भी हो और वो पढ़ने बैठे। इसकी मुझको इत्तिला दीजिएगा कि बिस्मिल्लाह् उसकी कब होगी ?

बेगम को दुआ कह देना। यक़ीन है कि अब पाँचवाँ सिपारा शुरू किया होगा या शुरू करे। यहाँ के सब हालात बदस्तूर हैं। हक़ीम नूरुद्दीन साहब

---

१. हे ईश्वर। २. प्रतिष्ठा और ऐश्वर्य। ३. ईर्ष्या करने वाला। ४. डाह। ५. लेखन। ६. भूमिका। ७. भूल के कारण। ८. अधिक। ९. विद्यारम्भ।

और उनके भाई हकीम नसीरुद्दीन और हकीम मेहरअली वग़ैरा यहाँ आये थे। नवाब ज़ीनत महल बेगम के हक़ीक़ी मामूं अमीनुर्रहमानखाँ उनके मुरीद[1] हैं। इनके बेटे की शादी की तक़रीब[2] मे आये थे, उन्ही के हाँ उतरे थे। मैं एक दिन हकीम नूरुद्दीन साहब से मिलने गया। क़ज़ारा[3] वो तो थे मगर हकीम नसीरुद्दीन और मेहरअली इनमे से कोई न था। बादशाह से दो मुलाकाते हुई। एक तो ख्वाजा साहब की दरगाह मे और एक, जिस दिन हकीम साहब अकबराबाद जाते थे। हस्बुल तलब[4] हुजूर किले मे गये और बादशाह से मिलकर रुख्सत होकर अपने शहर को तशरीफ़ ले गये। हकीम साहब आबिद व ज़ाहिद[5] आदमी हैं। सुलहा[6] मे है, फ़ुक़रा[7] मे नही है। हल्क़ा[8] और तवज्जोह और मुराक़िबा[9] और मुकाशफ़ा[10] और अज़्कार[11] और अशग़ाल[12] और मसायले[13] तौहीद[14] व तसव्वुफ़ का बयान। ये बाते बिल्कुल नही है। सिर्फ औराद[15] पर मदार है। तालीम व तल्क़ीन[16] भी शायद औराद ही की हो। जिक्र शग़ल का ज़िक्र ही न हो। बहरहाल खुश औक़ात आदमी है और ग़नीमत है।

लो भई, अब आठ बजे गये। नौ बजा चाहते हैं। तुम कचहरी जाओ। मैं क़िले हो आऊँ। यार बाक़ी—सुहबत बाक़ी। अस्सलामलेकुम व अलेकुमस्सलाम[17]।

---

१. शिष्य। २. उपलक्ष्य। ३. संयोगवश। ४. इच्छानुसार। ५. उपासक और धार्मिक। ६. सदाचारी व्यक्ति (ब. व.)। ७. फकीर (ब.व.)। ८. क्षेत्र। ९. ध्यान। १०. रहस्योद्घाटन। ११. ईश्वर-चर्चा (ब. व.)। १२. व्यस्तता। १३. समस्याएँ। १४. ईश्वर की एकता। १५. जप-तप। १६. शिक्षा-दीक्षा। १७. अभिवादन-प्रत्यभिवादन।

मुंशी नबी बख्श 'हक़ीर' के नाम

५५

(२५ मई, १८५५ ई०)

भाई साहब,

कहिए, क्या गर्मी पड़ती है और क्यों कर गुज़रती है। ख़ूब हुआ जो बेगम को रोज़ा न रखवाया। ख़ुदा करे, बुख़ार का आना भी मौक़ूफ़ हो गया हो। मुझको इत्तिला दीजिएगा। आपने इस ख़त में लिखा कि अब्दुल रशीद की बिस्मिल्लाह्[1] शाबान के महीने में होगी। मैं नहीं जानता कि अब्दुल रशीद कौन। ज़ाहिरा अब्दुस्सलाम को अब्दुलरशीद सह्व[2] से लिख गये हो। इसका भी जवाब लिखिएगा।

मुंशी अब्दुललतीफ़ साहब एहतियात करें और रोज़ा न रखें, वर्ना जाने तबीयत में क्या फ़साद पैदा हो।

वाकई, मियाँ तफ़्ता दीवान की नक़ल कर रहे हैं और लाहौर भेजेंगे। मुझसे ख़फ़ा हैं। हुक्म था कि उस दीवान का दीबाचा[3] लिखो। मैंने कहा—साहब, तुम हर साल एक दीवान लिखोगे, मैं दीबाचा कहाँ तक लिखा करूँगा। इसके बाद उन्होंने ख़त नहीं भेजा। मैं भी उनको ख़त न लिखूँगा और देखूँ कब तक मुझको याद नहीं करते। दीबाचा लिखना, भाई, क्या आसान है? कलेजा खिरचना पड़ता है। नस्र की फ़िक्र नज़्म से कम नहीं। इस गर्मी में कहाँ लिखूँ? क्या लिखूँ? एक बार उनकी ख़ातिर कर दी और एक दीबाचा लिख दिया। सो उस बार भी उसका सिला[4] मुझको ये मिला था कि आप नाख़ुश हो गये थे और मुझको लिखा था कि तूने मेरी हज्वेमलीह[5] की है।

---

१. विद्यारम्भ। २. भूल। ३. भूमिका। ४. प्रतिफल। ५. ऐसी निन्दा जो प्रशंसा प्रतीत हो।

जब मैंने लिखा कि भाई तुम मेरे मुक़ाबिल नहीं, मेरे मुआरिज़[1] नहीं, मेरे यार हो, शागिर्द कहलाते हो। लानत उस यार पर, कि यार की हज्वेमलीह लिखे और हज़ार लानत उस उस्ताद पर कि अपने शागिर्द पर चश्मक[2] चले और उसकी हज्वेमलीह लिखे। तब कुछ शर्मिंदा होकर चुप हो रहे थे। तुम्हारी जान की क़सम, दीबाचा न लिखना इस राह से नहीं है, बल्कि मुझमें अब दम बाक़ी नहीं। ख़ुदा जाने मैं जीता क्यों कर हूँ। ईद, बकरीद, नौरोज के कसायद[3] गौर करो वो दो-दो, तीन-तीन बरस से बिल्कुल मौक़ूफ हैं। गर्ज इस तहरीर से ये है कि मेरा उज्र बजा और उनका गुस्सा बेजा है। आपको मालूम रहे। ज्यादा ज्यादा।

बेगम की ख़ैर व आफियत और अब्दुलरशीद और अब्दुस्सलाम का हाल ज़रूर लिखिए और मियाँ अब्दुललतीफ़ के रोजे का हाल भी लिखिए।

हुसेनअली अच्छा है। लमयकुन के मूरे तक पहुँच गया है।

९ रमज़ान (१२७१ हि०) २५ मई १८५५ ई०।

—अज़-असदुल्लाह

५६

(३ जून, १८५५ ई०)

लो साहब, और तमाशा सुनो। आप मुझको समझाते हैं कि तफ़्ता को आज़ुर्दा न करो। मैं तो उनके ख़त के आने से डरा था कि कहीं मुझसे आज़ुर्दा न हों। बारे, जब तुमको लिखा और तुमने बआईने मुनासिब उनको इत्तिला दी तो उन्होंने मुझको ख़त लिखा। चुनाँचे परसों मैंने उस ख़त का जवाब भेज

---

१. विरोधी। २. मनमुटाव। ३. कसीदे।

दिया। तुम्हारी इनायत से वो जो एक अँदेशा था, रफ़ा हो गया। ख़ातिर मेरी जमा हो गई। अब कौन-सा किस्सा बाक़ी रहा कि जिसके वास्ते आप उनकी सिफ़ारिश करते हैं। वल्लाह्, तफ़्ता को मैं अपने फ़र्ज़न्द[1] की जगह समझता हूँ और मुझको नाज़ है कि ख़ुदा ने मुझको ऐसा क़ाबिल फ़र्ज़न्द अता किया है। रहा दीबाचा, तुमको मेरी ख़बर ही नहीं, मैं अपनी जान से मरता हूँ।

गया हो जब अपना ही जीवड़ा निकल
कहाँ की रुबाई कहाँ की ग़ज़ल

यक़ीन है कि वो और आप मेरा उज्र क़ुबूल करें और मुझको माफ़ रखें। ख़ुदा ने मुझ पर से रोज़ा-नमाज़ माफ़ कर दिया है। क्या तुम और तफ़्ता एक दीबाचा माफ़ न करोगे।

अब्दुस्सलाम की की मकतब[2] नशीनी मुझको और आपको और उसके बाप को मुबारक हो। मकतबनशीनी के बाब में सह्व[3] से अब्दुलरशीद लिखना शगून नेक है याने ये रशीद[4] होगा।

मुंशी अब्दुलतीफ़ का हाल सुनकर जी ख़ुश हुआ। हकीम हो, डाक्टर हो, अपने काम से काम है। बायद मताए नेक अज़ हर दुकाँ के बाशद[5]।

भाई उस ग़रीब को बन्दे तअह्हुल[6] में फँसाते हो। बक़ा ए नाम[7] के वास्ते ख़ुदा जीता रखे अब्दुस्सलाम व कुलसूम काफ़ी हैं। मैं तो भाई इब्ने यमीन[8] का मोतक़िद[9] हूँ—

१. पुत्र। २. पाठशाला प्रवेश। ३. भूल। ४. शिक्षित। ५. जो चीज़ जहाँ अच्छी मिले, उस दूकान से ले लीजिए। ६. घर-गिरस्ती का बन्धन। ६ कुल का नाम चलाने के लिए। ८. मौलाना बिन अमीर हसन सहसवानी, सर्वप्रथम शम्सुलउलेमा की उपाधि के प्राप्त-कर्त्ता। अनेक पुस्तकों के रचयिता। ९. अनुयायी।

मर्द आँ के बदुनियाँ न कुनद मैले दोकार
बजहाँ हरके तलबगार सलामत बाशद
ज़न न ख़ाहद अगरश दुख्तरे क़ैसर बेदिहन्द
वाम न मितानद अगर वादा क़यामत बाशद[1]

कहीं ये न हो के उसका जी न चाहता हो और तुम जबरदस्ती उसको बला मे फँसाते हो। उसके हमराज़ों[2] से उसका माफ़ी उज़्ज़मीर[3] मालूम कर लो, अगर वो भी राज़ी तो ख़ैर वर्ना मेरे नज़दीक तो जबर है।

हुसेनअली अपने दादा और दादी को बन्दगी और बहन भाई को सलाम कहता है। बेगम को मेरी दुआ कहना। मुशी अब्दुललतीफ को पेशगी मुबारकबाद देना। ज़्यादा क्या लिखूं?

यक शम्बा १७ रमज़ान व ३ जून।

—अज़-असदुल्लाह्

५७

(२३ जून, १८५५ ई०)

अलहम्दुलिल्लाह् के हरारते सौमी[4] और हरारते यौमी[5] बाहम रफा हो गईं। याद करो वो २७ तारीख की रात जिसको शबे क़दर कहते है। अयाज़न बिल्लाह्, वो हवा ए गर्म और तारीकी[6], बारे, अब लू नहीं चलती। परवा

---

१. वही मनुष्य है जो ससार मे निम्नलिखित दो बातो की इच्छा नहीं करता—(१) यदि कैसर (रोम का बादशाह) की पुत्री भी दी जाये तब भी स्त्री की कामना न हो और प्रलय के दिन के वादे पर भी ऋण मिलता हो तो ऋण न लिया जाये। २. मित्र। ३. अन्तःकरण का भाव, हृदय की बात। ४. क्षुधा के कारण जो गर्मी अनुभव होती है (रमजान की भूख के कारण)। ५. दिन में पड़ने वाली गर्मी। ६. अँधेरी।

हवा अगरचे पानी को बिगाड़ती है, लेकिन सर्द तो है। दो-एक दिन कुछ बूंदियाँ भी पडीं। अब्र हमेशा मौजूद रहता है।

अब के ईद में मैंने क़स्द[1] क़सीदे का न किया बल्कि क़ता व रुबाई भी नहीं। उसी वक़्त दो-तीन शेर वही लिख कर पढ दिये और उनका मसविदा न रखा।

मुंशी अब्दुललतीफ मर ता सर[2] रमज़ान कैसे रहे और अब उनका क्या रंग है और उनके निकाहे ताज़ा[3] की क्या खबर है?

तुमको खबर देता हूँ कि जैनुल आबदीन की माँ, यानी दादी हुसेन-अलीखाँ की पंचशबा के दिन २८ रमज़ान को मर गई। जैनुल आबदीन का बड़ा बेटा बाकरअलीखाँ वो भी मेरे पास आ गया।। देखते हो भाई, चर्खे सितमगर[4] क्या शोबदाबाज़ी[5] कर रहा है। बोझ पर बोझ मुझ पर डाल रहा है। ज़ख्म पर ज़ख्म लगा रहा है। कुछ बन नही आती। आमद[6] वही, मसारिफ़[7] बढ गये। अगर मसलन बेमुरव्वती और खुदा नातरसी[8] करूँ तो कहिए। उन लड़कों को किससे कहूँ कि तू अपने लड़कों को सँभाल, मुझमे मक़दूर[9] नहीं। बहरहाल चुप हूँ और मुतहय्यर[10] हूँ। मेरी शर्म रखे।

बेगम को दुआ कहो और उनकी खैर व आफ़ियत मुझको लिखो। अब्दुस्सलाम व कुलसूम को दुआ। न तन्हा हुसेनअली बल्कि उसका बड़ा भाई बाक़रअलीखाँ दोनों आपको बन्दगी कहते है।

---

१. विचार, निश्चय। २. पूरी तरह, आरम्भ से अन्त तक। ३. ताजी शादी। ४. अत्याचारी आकाश (भाग्य)। ५. करतब। ६. आय। ७. व्यय। ८. ईश्वर का डर न हो। ९. सामर्थ्य। १०. चकित।

रोज़ जुमा, २३ जून १८५५ ई० व हफ़्तुम शव्वाल (१२७१ हि०)।

यहाँ ईद यकशंबा की हुई है।

—अज़-असदुल्लाह्

५८

(५ जुलाई, १८५५ ई०)

भाई जान,

मुंशी अब्दुललतीफ की शादी पहले उस पर फिर उसके वालिदैन[1] पर और उसकी बहनों पर और भाइयों पर मुबारक हो, फिर कहता हूँ कि खुदा करे ये अम्र[2] उसकी खुशी और रज़ामन्दी से वाकै हुआ हो, ज़किया बेगम की निस्बत[3] मुबारक हो।

हवा खूब हो गई है। मेह रोज़ बरसता है। यकुम जुलाई से आज तक झडी की सूरत है। यक़ीन है कि वहाँ भी यही मौसम हो गया होगा।

न किश्तो ज़रआ शनासेम वो न हदीक़ ओ बाग़
जे बहरे वादा तलबगारे बादो बाग नेम[4]

अब के आपका खत बहुत इंतिज़ार के बाद आया। कई दिन से चाहता था कि शिकायत लिखूं। मेंह फ़ुर्सत नही देता था कि आदमी डाकघर जा सके। बारे, परसों आपका खत आ गया। कल मेह बरसता रहा। आज कुछ

---

१. माता-पिता। २. विषय। ३. सगाई, सम्बन्ध। ४. न हम खेती से परिचित हैं और न बाग-बगीचे से। हम जो हवा-पानी की इच्छा करते हैं वह केवल सुरापान के लिए।

खुल गया है, याने बारिश नही है। क़िले भी गया और तुमको भी खत लिखा। वस्सलाम वल इक्राम।

निगाश्ता चाश्त रोज़[1] पजशंबा, पंजुम जुलाई १८५५ ई०।

५६

(२६ जुलाई, १८५५ ई०)

भाई साहब,

मेह का ये आलम है कि जिधर देखिए उधर दरिया है। आफ़ताब[2] का नज़र आना बर्क़[3] का चमकना है, याने गाहे दिखाई दे जाता है। शहर मे मकान बहुत गिरते है। इस वक़्त भी मेह बरस रहा है। खत लिखता तो हूँ मगर देखिए डाकघर कब जावे। कहार को कम्मल उढ़ाकर भेजूंगा।

आम अब के साल ऐसे तबाह है कि अगर बमसल[4] कोई शख़्स दरख्त पर चढे और टहनी से तोड़कर वहीं बैठकर खाये तो भी सडा हुआ और गला हुआ पाये। ये तो सब कुछ है, मगर तुमको तफ़्ता की भी कुछ खबर है। पितम्बरसिंघ, उसका लाडला बेटा मर गया। हाय, उस गरीब के दिल पर क्या गुज़री होगी।

चे कुनद बन्दा के गर्दन न नेहद फ़रमा रा
चे कुनद गोई के तनदर न देहद चौगाँ रा[5]

---

१. पूर्वाह्ण। २. सूर्य। ३. बिजली। ४. कहावत के अनुसार। ५. आदेश के सम्मुख नतमस्तक होने के अतिरिक्त मनुष्य क्या कर सकता है? चौगान की इच्छा मानने के अतिरिक्त गेंद के लिए उपाय क्या है?

तुम अब ख़त लिखने मे बहुत देर करते हो। आठवें दिन अगर ख़त लिखते रहो तो ऐसा क्या मुश्किल है।

यहाँ दोनो लडके अच्छी तरह है। अब वहाँ के लड़कों की ख़ैर व आफियत लिखिए।

पजशम्बा २६ जुलाई १८५५ ई०।

—असद

६०

(४ अगस्त, १८५५ ई०)

अयाज़न बिल्लाह,

ये सख्त माजरा है मुशी अब्दुललतीफ कहाँ और मेरठ कहाँ। एक साहबज़ादा नाज़ पर्वदा ये भी न जानता होगा कि शहर में अनाज क्या भाव है और गोश्त क्या सेर बिकता है। सुबह उठे और बाप के हाँ की सवारी पर चढ़े। कचहरी चले गये। आये तो अपनी बीबी-बच्चों में मिलकर रोटी खाई। वालिदैन[1] से मुफ़ारकत[2] और फिर खानादारी[3] की मशक्कत। सवारी रखनी, तीन आदमी से कम काम न निकलेगा। नौकरी ऐसी क्या है कि जिसमें ये मदारिज[4] तै कर-कर कुछ बच रहे। साहब ये सूरत तो बहुत बुरी है। बल्लाह, जितना मलाल तुमको हुआ है, उससे कम मुझको नहीं है। मैं भी उतना ही मलूल हूँ। वारे, अब इत्तिला दीजिए कि वो किस तारीख को रवाना होंगे। ज़ाहिरा यकुम अगस्त से इस दफ़्तर में मुलाज़िम हुए होंगे।

ज़किया बेगम की खैरियत लिखो। आँखों की ज़र्दी[5] और हरारत जाती रही या अभी कुछ बाक़ी है।

---

१. माता-पिता। २. पृथकता। ३. गृहस्थी। ४. पद-प्रतिष्ठा। ५. पीलापन।

बाक़रअली और हुसेनअली दोनों ख़ुश हैं। तप रफा हो गई। आप अब्दुल-लतीफ का और बेगम का हाल लिखिए।

४ माहे अगस्त १८५५ ई०।

६१

(१६ सितम्बर, १८५५ ई०)

हज़रत,

बहुत दिन से हाल तुम्हारा और बच्चों का और ख़ुसूस मुंशी अब्दुललतीफ़ का मालूम नहीं। आज सुबह को घबरा कर तुमको ये ख़त लिखता हूँ। ख़ुदा करे शाम को डाक का हरकारा तुम्हारा ख़त लाये और ख़ैर व आफ़ियत सब की मालूम हो जाये।

नसीरूद्दीन को दुआ पहुँचे।

हमने तुम्हारे अशार एक तज़्किरे में देखे और जाना के छिपे रुस्तम हो। अपने शेर हमसे इसलिए छिपाये होंगे कि ये मज़मून चुरा न ले।

बेगम को दुआ पहुँचे। अब्दुस्सलाम और कुलसूम को दुआ पहुँचे। जल्द सब की ख़ैर व आफियत लिखिए। ज्यादा क्या अर्ज़ करूँ?

यक शम्बा १६ सितम्बर १८५५ ई०।

—अज़ असद

६२

(२४ सितम्बर, १८५५ ई०)

पीर व मुर्शद,

बात को भी समझते हो या यों ही शिकवा करने को मौजूद हो जाते

ने क़सीदा लिखना मौक़ूफ़ किया। मौक़ूफ़ क्या किया, मुझसे लिखा ही नहीं जाता। क़ता या रुबाई ईदैन[1] को लिख कर नज़र कर देता था। अब के हकीम साहब ने बहुत शिद्दत की और कहा कि साहब ये तो नज़्रे ईद[2] न हुई। जैसे मुअल्लिम[3] लड़कों को ईदी के दो शेर लिख देते हैं। ये तो वैसी ईदी है। नाचार मैंने ये मस्नवी की रविश पर चालीस-बयालीस बैत[4] लिख कर नज़्र कर दी। अगर आपने दीवान के हाशिये पर ये शेर चढ़ाये हुए हों तो क़सम ले लो। ये है क्या कि मैं तुमको भेजता। अफ़सोस है कि तुमको मेरे हाल की खबर नहीं। अगर देखो तो जानो—

"जिस दिल पै नाज़ था मुझे वो दिल नहीं रहा"

कोई दम ऐसा नहीं है कि मुझको दमे वापसी का ख़याल न हो। साठ बरस का हो चुका, अब कहाँ तक जीऊँगा। ग़ज़ल, क़सीदा, क़ता, रुबाई फारसी-उर्दू में बारह हज़ार बैत कह चुका, अब कह चुका। अब कहाँ तक कहूँगा। ज़िन्दगी बुरी-भली जिस तरह बनी काटी, अब फ़िक्र ये है कि देखे मौत कैसी होती है और बाद मौत के क्या दरपेश आता है—

उम्र भर देखा किये मरने की राह
मर गये पर देखिए दिखलाये क्या

न भेजना इन अशार का सिर्फ़ अफ़्सुर्दगी[5] से था गोया ये शेर कहे ही नहीं। दीवान में रखता और तुमको न भेजता इसके माने क्या, जब दीवान ही मे न रखे तो तुमको क्या भेजूँ?

मुंशी अब्दुललतीफ़ का जो हाल मैं समझा हुआ था, वो ही तुमने लिखा। इसका वहाँ दिल न लगना और मुशाहरा[6] का मसारिफ़[7] ज़ात को काफ़ी न

---

१. दोनों ईदें। २. ईद की भेंट। ३. अध्यापक। ४. शेर (दो चरण)। ५. खिन्नता। ६. मासिक वृत्ति। ७. व्यय।

होना और तुम्हारा और उसकी वालिदा का बेचैन रहना ये सब ऐसे उमूर नहीं है कि बग़ैर तुम्हारे लिखे खयाल मे न हों। भाई रोज़गार पेशगी में ऐसा ही होता है। तरक्की ए मरातिब[1] का उम्मीदवार रहना चाहिए। काश, अब्दुललतीफ की नौकरी अदालत दीवानी मे होती तो ये महीने तातील के अपने घर मे रहता।

नसीरुद्दीन का हाल मालूम हुआ। मैंने हँसी मे लिखा था वर्ना मै जानता था कि शेर तुम्हारे है।

पलग के पाये ढूंढता हूँ। यक़ीन है कि मिल जाएँगे, मगर ये लिखो कि शादी किस महीने मे करार पाई है। इसकी ज़रूर इत्तिला दो। ज्यादा इससे क्या लिखूं? लड़कों को दुआ और लडको की तरफ से बन्दगी।

मुहर्रिरा दोशम्बा, २४ सितम्बर १८५५।

--अज अस्दुल्लाह्

६३

(३ अक्तूबर, १८५५ ई०)

भाई,

तुम्हारा गुस्सा मेरे सर आँखों पर। वल्लाह ये नही है जो तुम समझे हो। अलबत्ता ये खयाल तो मुझको आया कि देखो भाई को मेरे कलाम से उन्स[2] नहीं है वर्ना ऐसी चीज़ को हाथ से जाने न देते, न ये कि उसका देना बाअस[3] इसका हुआ हो कि और नुस्खा तुमको न भेजूं। छापेखाने वालों ने सौदागरों के हाथ बतरीके पेशगी सौ-सौ, दो-दो सौ मुजल्लद[4] बेच डाले थे। छापेखाने से जो मैंने मँगाया तो मुझको न मिला। अब मुतफर्रिक[5] किताबफ़रोशों से

---

१. पदवृद्धि। २. प्रेम। ३. कारण। ४. सजिल्द। ५. विभिन्न।

कह दिया है। कोई नुस्खा हाथ आया और मैंने भेजा। मेरा तो ये हाल है कि जो कुछ मैंने कहा, फिर जब तक तुम्हारे पास न भेज लूं मुझको चैन नहीं आता। तुमको सुखनफ़हम[1] जानता हूं। रात को एक गजल कई बरस के बाद लिखी है। अब सुबह दम तुमको लिखता हूँ। खुदा के वास्ते ग़ौर करना के ग़ज़ल इसको कहते हैं।

ईद की मस्नवी सिर्फ रुपये बचाने की थी, यानें अगर वो न होती तो मुझको चार रुपये नज़्र देने पड़ते। जब मसविदो में न लिखूं और दीवान में न लिखूं तो हज़रत को क्यो भेजूं?

पलग के पाये ढूंढ रहा हूँ, खातिर-आतिर इस तरफ से जमा रहे। लो गजल सुनो, मगर गौर से दिल लगा कर। इसकी नकल जहाँ चाहो वहाँ भेजो—

ऐ ज़ौके नवासर्जी बाज़म बखरोशावर
गोगा ए शबे खूनी बर बुगहे होशावर
गर खुद बिजिहद अज़ सर अज दादा फिरो बारम
दिल खूं कुनो आँ खू रा दर साना ब जोशावर
हाँ हमदमे फ़रजाना दानी रहे वीराना
शर्मे के नखाहद शुद अज़ बार खमोशावर
शोरा ब एई वादी तल्खस्त अगर रादी
अज़ शहर बसू ए मन सर चश्म ए नोशावर
दानम के ज़रेदारी हर जा गुजरे दारी
मैं गर न देहद सुल्ताँ अज़ बादा फ़रोशावर
गर मुग बकदूरीज़द बर कफ़ न हो राही शो
वर शह बसुबू बरुशद बरदारी बदूशावर

१. काव्य-मर्मज्ञ।

मुंशी नबी बख्श 'हकीर' के नाम

रेहाँ दमदज़ मीना रामश चकदज़ क़ुलकुल
आँ दर रह चश्म अफ़गनवी अज़ पये गोशावर
गाहेब सुबुकदस्ती ज़ाँ बादाज़ खीशम बुर
गाहे ब सियह मस्ती अज नग़मा बहोशावर
'ग़ालिब' के बखायश बाद हम पाए तो गर नायद
बारे गज़ले फ़र्दे ज़ाँ मोईना पोशावर[1]

६४

(४ जून, १८५६ ई०)

भाई साहब,

कई खत इस अर्से मे तुम को लिखे मगर जो लिखना था वो भूल गया।

---

१. हे कवित्व के स्नेह, तुम मुझे फिर उत्साह दो। रात्रि के बध के कोलाहल को मेरी चेतना के स्थान पर स्थापित करो। यदि वह मस्तिष्क से निकल आये तो मै आँखों से बहाऊँगा, मेरे हृदय को रक्तमय बना दो और उसे मेरे वक्षस्थल मे प्रवाहित करो। इस जंगल का पानी कटु है, यदि तुम उदार हो तो नगर से मेरे लिए मधुर स्रोत लाओ। मुझे ज्ञात है, तुम्हारे पास द्रव्य है, मुझे ज्ञात है तुम्हारे पास स्वर्ण है, तुम सभी स्थलों पर जाते हो, यदि बादशाह शराब न दे तो शराब बेचने वाले से लाओ। यदि कलाल का बेटा सुरा को कमडल मे डाल दे तो उसे हथेली पर लो और रास्ते पर चल दो। यदि बादशाह घड़े में भर दे तो उठा लो और कंधे पर रख कर लाओ। शीशे से गन्ध आ रही है, सुरा की कलकल-ध्वनि से गायन प्रकट हो रहा है। उसे लाकर दृष्टिगोचर कराओ और कलकल-ध्वनि को कर्णगोचर कराओ। कभी तो स्फूर्ति के साथ मुझे उस सुरा से बेसुध बना दो और कभी मस्ती का राग सुना कर होश मे लाओ। 'ग़ालिब' कहता है जो जीवित रहे

पलंग के पाये मुसल्लम[1] लेकिन तुमने नहीं लिखा कि पाये बड़े पलग के हों या छोटी-सी पलंगड़ी के हों। मिक़दारे मालियत तो मालूम मगर अन्दाज़ापस्ती व बलदी[2] का नहीं मालूम। इसका लिखना ज़रूर है। ज़रूर लिखो और जल्द लिखो।

भाई, कल ख़त मिर्ज़ा तफ़्ता का आया। उन्होंने कुछ क़ते इस्लाह के भेजे हैं। मिनजुम्ला दो क़ते तुम्हारी मदह[3] और इज़हारे मुहब्बत में है। एक मुज़फ़्फ़ो बहुत पसन्द आया, वो तुमको लिखता हूँ—

दिगर के गिरिया कुनद सर बमर्गे मा ज़ी साँ
दिगर के अज़ लबश ईं गूना हाये हू बे चकद
बुवद 'हक़ीर' ब फ़ने मुहब्बत आँ मकता
के ख़ूं शवद दिले मा वो ज़े चेश्मे ऊ बे चकद[4]

चौथे मिस्रे में क्या ख़याल नाज़ुक है। ख़ुदा इस अर्ज़ीज को जीता रखे और इसके हाल पर रहम करे।

जवाब तलब ऐशम्बा नहुम अक्तूबर १८५५।

—अज़ असद

६५

(३ जून, १८५६ ई०)

बन्दगी अर्ज़ करता हूँ। यहाँ आज बुध का दिन, तीसरी जून की, शहर के हिसाब से २९ रमज़ान की है और पानीपत-करनाल के आये हुए ख़ूतूत की

वह यदि तुम्हारे साथ नही आता तो उस गूदड़ी पहनने वाले से कभी एक ग़ज़ल कभी एक फ़र्द (एक चरण) मेरे पास लाओ। १. समूचे। २. नीचाई। ३. प्रशंसा। ४. मेरी मृत्यु पर इस तरह दूसरा कौन रो सकता है। दूसरे के होठों से 'हाय-हाय' की ध्वनि निकलती है। वही व्यक्ति प्रेम के पंथ मे अनुपम है जिसकी आँखों से हमारे हृदय से टपकने वाला रक्त बह चले।

रू से तीस है। बहरहाल कल ईद है। तुमको और तुम्हारे बच्चों को मुबारक हो। बेगम मगर दायर-सायर[1] है। कभी अकबराबाद, कभी मरसान। दायर-सायर का साल भर में एक दौरा होता था। ये ग़रीब शायद चार महीने कौल में आराम से न रहती होगी।

मुंशी अब्दुललतीफ़ की तनहाई ने ये तक़रीब[2] पैदा की कि लोग अकबराबाद चले गये। अरफ़तो रब्बी व फ़स्खुल अज़ायम[3]।

'महरे नीमरोज़' आपको मुबारक। मोल लीजिए और अहबाब को भेजिए। मैं ऐसी खुराफ़ात का मुश्ताक़ नही जो आप मुझसे पूछते हैं कि अगर तू कहे तो मैं तुझको भी भेज दूं। सत्यानाश जाये उस किताबफ़रोश का, कि, जो ये रिसाले कौल ले गया और आपने मुझको ताना दिया। भाई, ये तो मैं जानता हूँ कि ये तुमने मेरे छेड़ने को लिखा है वर्ना वहाँ ये नुस्खे न पहुँचे होंगे। अगर किसी दोस्त के वास्ते तुमको दरकार हो तो एक-आध नुस्खा मैं भेज दूं। खफ़ा न हों, मुझको लिख भेजो।

हज़रत तुम तफ़्ता का हाल क्या लिखते हो। अब तफ़्ता तफ़्ता नही, अज़ खुदरफ़्ता[4] है। खुदा उसको जीता रखे। ये शरूस भी गनीमत है। बड़ा सदमा उठाया है।

गर्मी की क्यों शिकायत करते हो? अब के साल न आगे की-सी गर्मी पड़ी न लू चली और अब पाँच-चार दिन से तो खासी सर्दी पड़ती है कि रात को रजाई और जईफ़ा[5] लिहाफ़ ओढ़ती है। हवा सर्द, पानी सर्द। ज़ाहिरा कहीं ओले पड़े हैं, वर्ना इस मौसम मे ये सर्दी कहाँ? मगर ये सर्दी मेहमान है। अभी जौज़ा[6] का आफ़ताब है। दिन बढ़ता जाता है। इस आरज़ी सर्दी

---

१. भ्रमणशील, दौरा करने वाला। २. समारोह। ३. मैंने असफलता से ईश्वर को पहचाना। ४. बेसुध। ५. बुढ़िया। ६. मिथुन (राशि)।

के रफ़ा होने के बाद गर्मी पड़ेगी। बहरहाल इन दिनों में यहाँ शिद्दत अमराज़[1] की नहीं। शहर में अम्न व अमान[2] है।

तुम्हारे दोनों बच्चे बाक़रअलीखाँ व हुसेनअलीखाँ अच्छे हैं। दिन भर में तीन-चार बार रोज़ा खोलते हैं और इफ़्तार के वक़्त[3] रोज़ेदारों के हल्क़ के दरबान बन जाते हैं।

बेगम वग़ैरा के अकबराबाद से आने की खबर लिखनी होगी।

—ग़ालिब

६६

(२७ जुलाई, १८५६ ई०)

भाई साहब,

शुक्र है खुदा का कि तुम्हारी खैर व आफ़ियत मालूम हुई। तुम भी खुदा का शुक्र बजा लाओ के मेरे हाँ भी इस वक़्त तक खैरियत है। दोनों लड़के खुश हैं। आम-आम करते फिरते हैं। कोई इनको नहीं देता। इनकी दादी को ये वहम है कि पेट भर रोटी उनको खाने नहीं देती।

ये तुमको याद रहे कि वलीअहद[4] के मरने से मुझ पर बड़ी मुसीबत आई। बस, अब मुझको इस सल्तनत से ताल्लुक बादशाह के दम तक है। खुदा जाने कौन वलीअहद होगा। मेरा क़द्रशनास[5] मर गया। अब मुझको कौन पहचानेगा। अपने आफ़रीदगार[6] पर तकिया किये बैठा हूँ। सरेदस्त ये नुक़सान कि वो ज़ैनुलआबदीनखाँ के दोनों बेटों को मेवा खाने को दस रुपये महीना देते थे। अब वो कौन देगा?

---

१. रोगों की अधिकता। २. शान्ति। ३. सायंकाल रोजा खोलते समय। ४. युवराज। ५. गुणों को जानने वाला। ६. कर्त्ता (ईश्वर)।

मुंशी नबी बख्श 'हकीर' के नाम

दो दिन से शिद्दते हवा ए बबाई[1] कम है। मेह भी बरसता है। हवा ठंडी चलती है। इन्शा अल्लाह् ताला बक़िया आशोब[2] भी रफ़ा हो जाएगा।

तुम अपने शहर का हाल लिखो और बच्चों की खैर व आफ़त भेजो।

जब तक ये हवा है, हर यक शम्बा को खत लिखा करो। मै भी ऐसा ही करूँगा। हर हफ़्ते मे एक बार तुमको लिखता रहूँगा। मुंशी अब्दुललतीफ़ को मेरी दुआ कहो और ये कहो कि क्यों साहब मेरठ से, कौल से कभी हमको खत न लिखा। बाक़ी और सब लड़कों को, लडकियों को दुआ कह देना, बेगम को खुसूसन।

यकशम्बा २७ जुलाई १८५६ ई०।

—ग़ालिब

६७

(२ अगस्त, १८५६ ई०)

भाई साहब,

खत के न पहुँचने की शिकायत के क्या माने ? शम्बे से जुमे तक को हफ़्ता गिनता हूँ। सो इस हफ़्ते मे खत भेज चुका। अब के हफ़्ते मे जुमे तक मुझको इख्तियार है। कल मंगल को आपका खत आ गया। बऐ नहीं[3] यहाँ भी वही हाल है जो वहाँ है। वबा[4] कम, कल से सूरत आफ़ताब की नज़र आने लगी, वो इस तरह—

दीदार मी नुमाई व परहेज़ मी कुनी[5]
नज़र आया और छिप गया।

---

१. महामारी की हवा। २. आफ़त। ३. प्रत्यक्षतया। ४. महामारी। ५. तुम दर्शन देते भी हो और परहेज़ भी करते हो।

तप की बड़ी शिद्दत है । दोनों लड़कों को तप आती है । बड़े को इतवार से, कि, आज बुध, चौथा दिन है । छोटे को पीर[1] से, कि, आज तीसरा दिन है । मुग़लानी मुतवफ़्फ़िया[2] की जगह जो मुग़लानी रखी गई थी, वो तपज़दा हो कर सरासीमा[3] अपने घर गई । मेरा एक ख़िदमतगार, ग़ुलाम हुसेन नाम, तप में बेख़ुद पडा है ।

मुंशी अब्दुललतीफ़ का यहाँ होना सुनकर जी ख़ुश हुआ । मेरी दुआ कहना । अब तो मेरठ में भी वो शिद्दत नहीं है ।

ज़किया बेगम को दुआ कहना और मेरी तरफ़ से और उसकी चची याने मेरी बीबी की तरफ़ से प्यार करना । मियाँ नसीरुद्दीन को दुआ पहुँचे । बाक़ी ख़ैर व आफ़ियत है ।

चारशम्बा, २ माहे अगस्त १८५६ ई० ।

—ग़ालिब

६८

(५ अगस्त, १८५६ ई०)

भाई साहब,

यकशम्बा का लिखा हुआ ख़त परसों दोशम्बे को यहाँ पहुँचा । अज़ीज़ों की सलामते हाल पर ख़ुदा का शुक्र बजा लाया । आज मंगल के दिन मैं आपको ख़त लिखता हूँ । हर हफ़्ते में एक ख़त लिखूँ और एक तुम लिखो । तुम्हारे वास्ते यकशम्बा की क़ैद है । मैं यकशम्बा का पाबन्द क्यों रहूँ ? मंगल-बुध को मैं भेजा करूँ, इतवार को तुम भेजा करो ।

यहाँ हवाए वबाई बदस्तूर है । लोग मरते हैं मगर वो शिद्दत नहीं ।

---

१. सोमवार । २. स्वर्गीया । ३. व्याकुल ।

यकशम्बा के दिन अब्र आया। दिन भर बूंदा-बाँदी रही। आधी रात से ज़ोर का मेह बरसा। पीर के दिन दोपहर तक बराबर मूसलधार पानी पड़ा। कल दोपहर से मेह बरसना मौक़ूफ़ है। अब्र मौजूद है। मैं और बीबी और दोनों लड़के ख़ैर व आफ़ियत से हैं। हक़ताला तुमको, तुम्हारी बीबी को और बच्चों को ख़ैर व आफ़ियत से रखे।

मेरठ का हाल मालूम हुआ। पर्वदगार अपने बन्दों का हाफ़िज़[1] है।

हाँ साहब, तुम तफ़्ता की खबर नही लिखते। आया वो वहाँ है या नहीं? अब के यकशम्बा को जो खत लिखो तो लड़के-बालों की ख़ैर व सलाह के बाद उनका भी ज़िक्रे ख़ैर लिखो। सब को दुआ-सलाम कहो।

सेशम्बा पजुम अगस्त।

६८

(८ दिसम्बर, १८५६ ई०)

भाई साहब को सलाम और हुस्ने इंतमाम शादी[2] की और माल ख़ैर मुआविदत[3] की मुबारकबाद। हँसी आती है मगर अकेला क्या हँसू? वाह सुभान अल्लाह्। क्या दुलहन और क्या उसकी.....? खुदा जीता रखे। हज़रत, आपका भाई बनकर मैं भी मिस्ल आपके अदीमुलफ़ुर्सत[4] बन गया।

बीस-बाइस दिन से हुज़ूरवाला रोज़ दरबार करते हैं। आठ-नौ बजे जाता हूँ, बारह बजे आता हूँ। या रोटी खाने में ज़ुह्र[5] की अज़ाँ होती है या हाथ धोने में। सब मुलाज़मीन का हाल यही है। और कोई रोटी खाकर जाता होगा। मुझसे बाद खाना खाने के चला नहीं जाता। ये तो जो

---

१. रक्षक। २. विवाह के शुभ समारोह। ३. सकुशल लौटना। ४. अवकाश रहित। ५. दोपहर की नमाज़।

कुछ था सो था, परसों से अज़ राहे इनायत हुक्म दिया है कि शाम को रेत में लबेदरिया[1] पतंगबाज़ी होती है, तू भी सलीमगढ़ पर आया कर। खुलासा ये के सुबह को जाता हूँ, दोपहर को आता हूँ। खाना खाकर पाँच-चार घड़ी दम लेकर जाता हूँ। चिराग़ जले आता हूँ। भाई, तुम्हारे सर की क़सम। रात को मज़दूरों की तरह थक कर पड़ रहता हूँ। आज चौथे दिन तुम्हारे ख़त का जवाब लिखने की फ़ुर्सत पाई है सो फ़ुर्सत क्या, खाना खाकर लेटा नहीं, तुमको खत लिखा।

मीर क़ासिमअलीखाँ लखनऊ से आये हैं। कहते थे कि कौल मे मुंशीजी के मकान पर गया था। उनके आदमी कहते थे कि वो कल आएँगे। मैंने उनसे कह दिया कि मुझको उनका खत आया है, वो कौल आ गये और बेगम की शादी से फ़ुर्सत पाई। यक़ीन है कि वो भी तुमको खत लिखेंगे।

मुंशी अब्दुललतीफ़ को दुआ कहना और उनकी मेरठ की रवानगी की मुझको इत्तिला देना। और जब बेगम आ जाये तो उसके आने की खबर लिखना।

रोज चार शम्बा, ९ दिसम्बर १८५६ ई० वक़्त नमाज़ ज़ुह्र।

—अज़-असदुल्लाह्

७०

(२२ सितम्बर, १८५८ ई०)

भाई साहब,

आपका इनायतनामा पहुँचा। हाल मालूम हुआ। मियाँ का उम्र क़ुबूल व मस्मूअ[2], हक़ताला उनको ज़िन्दा और तनदुरुस्त और खुश व खुर्रम[3]

१. नदी (यमुना) के किनारे। २. श्रुत, स्वीकृत। ३. प्रसन्न।

रखे और दौलत व इक़बाल[1] अता करे। बिलफ़ैल मिर्ज़ा हातिमअली साहब का ख़त आया। उन्होंने जो सूरत छै किताबों की आराइश[2] की जिस तफ़रीक़[3] से ठैराई है वो मुझको बहुत पसन्द आई है। कल मैंने इजाज़त इसी तरह की तज़ईन[4] की लिख भेजी है। हाल तस्हीह[5] का बतसरीह[6] आपको लिख चुका हूँ। इसी पर अमल रहे। मैंने मिर्ज़ा तफ़्ता को कि वो 'गयामुल्लुगात'[7] के बहुत मोतक़िद[8] हैं इस अम्र की इत्तिला कर दी है।

भाई जान, मैंने एक क़सीदा जनाब मलिक ए मुअज़्ज़िमा[9] इग्लिस्तान की मदह[10] मे लिखा है। साठ शेर हैं। छै सफ़े याने तीन वर्क़ पर छपकर 'दस्तम्बू' से पहले शीराज़े[11] मे शामिल कर दिये जाये तो किताब को कसीदे से इज़्ज़त और क़सीदे को किताब के सबब से शोहरत हो जाएगी। कल जनाब मिर्ज़ा साहब को लिख चुका हूँ। यक़ीन है कि वो भी आप से कहेंगे और आप और मिर्ज़ा साहब और मिर्ज़ा तफ़्ता और मुंशी शिवनारायन साहब इस ख़ाहिश को मंज़ूर और कायदे को मक़बूल करेंगे। और जब बइत्तिफ़ाक़[12] तुम चारों साहब पसन्द करोगे या बइज्लासे कौन्सिल इस कानून का इजरा[13] मज़ूर हो जाएगा और उम्मीदवार हूँ कि इजरा ए क़ानून से पहले मुझको मज़ूरी की इत्तिला हो जाये ताकि मसविदा इस क़सीदे का भेज दूँ। मुहतमिम मतबे[14] को अगर कुछ ताम्मुल[15] हो तो हो, वर्ना बात आसान है।

मुंशी अब्दुलतीफ़ को दुआ कहना और उनके उज्र के क़ुबूल होने की उनको इत्तिला देना।

---

१. ऐश्वर्य। २. सजावट। ३. अन्तर, भेद। ४. सजावट। ५. शुद्धि। ६. व्याख्या सहित। ७. फ़ारसी का एक शब्दकोश। ८. अनुयायी, भक्त। ९. साम्राज्ञी (विक्टोरिया)। १०. प्रशंसा। ११. जिल्द बाँधने से पहले पृष्ठों का सिया हुआ संचय। १२. संयोगवश। १३. प्रचलन। १४. प्रबन्धक, मुद्रणालय। १५. विरोध।

बेगम को दुआ पहुँचे और सब लड़के-बालों को। यहाँ बाक़र अली और हुसेनअली तुमको बन्दगी और अपने भाई-बहनों को अला क़दरे मरातिब बन्दगी-सलाम-दुआ कहते हैं।

हाँ हज़रत, अब एक अम्रे मुख़्तसर[1] के वास्ते जुदागाना ख़त मिर्ज़ा तफ़्ता को क्या लिखूं ? मेरी तरफ़ से दुआ कहकर उनको कहिएगा कि अख़बार गुज़िश्ता के औराक़[2] मय ख़त मुहतमिम मतबए 'आफ़ताब आलमताब' हकीम साहब को पहुंच गये। कल वो चार रुपये की हुडवी और उनके ख़त का जवाब रवाना करेंगे। आप चतरभुज सहाय से कह दीजिएगा और ताकीद कर दीजिएगा कि चार लम्बर साबिक़ का मुतख़ब[3] कातिब[4] से नकल करवा कर जल्द भेज दे।

भाई, मुझको इस मुसीबत मे क्या हँसी आती है कि ये हम-तुम और मिर्ज़ा तफ़्ता मे मुरासलत[5] गोया मुकालमत[6] हो गई है। रोज बाते करते हैं। अल्लाह् अल्लाह्, ये दिन भी याद रहेंगे। ख़त से ख़त लिखे गये हैं। मुझको अक्सर औकात[7] लिफाफे बनाने मे गुज़रते हैं। अगर ख़त न लिखूंगा तो लिफाफे बनाऊँगा। ग़नीमत है कि महसूल आधा आना है वर्ना बाते करने का मज़ा मालूम होता। चारशम्बा २२ सितम्बर १८५८ ई०। जो बाते जवाब तलब है उनका जवाब तलब है।

७१

(१८ जनवरी, १८५९ ई०)

भाई साहब,

मै तुमको इत्तिला देता हूँ कि आज मेरे पास लखनऊ के एक पार्सल

---

१. छोटा-सा काम। २. पृष्ठ (ब. व.)। ३. चुना हुआ। ४. लिखने वाला ५. पत्र-व्यवहार। ६. सवाद। ७. समय (ब. व.)।

की रसीद आ गई। दूसरा भी यक़ीनी पहुँच गया होगा। ख़ातिर जमा रखो। जनाब आर्नल्ड साहब बहादुर आज तशरीफ़ ले गये। सुनता हूँ कि कलकत्ते जाएँगे। मेम और बच्चों को विलायत भेजकर फिर आएँगे। मुझसे वो सुलूक कर गये हैं और मुझ पर वो एहसान कर गये हैं कि क़यामत तक उनका शुक्र गुज़ार रहूँगा। मिर्ज़ा हातिम अली साहब मेहर अगर आ जाएं तो उनको मेरा सलाम कहना। मिर्ज़ा तफ़्ता को अगर कभी ख़त लिखो तो मेरी दुआ कहना।

मरक़ूमा[1] दोशम्बा हफ़्त दहुम जनवरी १८५९ ई०।

—असद ग़ालिब

---

१. लिखित।

मुंशी अब्दुललतीफ़[1] के नाम

१

(१० मार्च, १८५१ ई०)

बरखुरदार[2] नूरचश्म[3] मुंशी अब्दुललतीफ़ सल्लमहूवल्लाहो[4] ताला। बाद दुआए दवामे दौलत[5] वतूले उम्र[6] मालूम करे कि भाई साहब के कहने से मालूम हुआ कि तुम्हारे हाँ बेटा पैदा हुआ। बहुत मुझको खुशी हुई। अल्लाह ताला तुमको मुबारक करे और तुमको तुम्हारे बाप के साय ए अतूफ़त[7] और उसको तुम्हारे ज़िल्ले राफ़र्त[8] मे सलामत रखे। उसकी औलाद तुमको दिखावे। मालूम है कि भाई साहब दौरे को गये हैं। उनके नाम का खत तुम्हारे खत के साथ बेलिफ़ाफ़ा भेजता हूँ, उसको पढ़ लेना और क़तए तारीख़[9] की नक़ल ले लेना और खत को अपनी अर्ज़ी मे मलफ़ूफ़[10] करके अपने वालिद माजिद[11] को भेज देना और जो नाम रखो उससे मुझको इत्तिला देना। मै चाहता हूँ कोई नाम ऐसा मिले कि जिसके आदाद[12] से साले विलादत[13] ज़ाहिर हो। वद्दुआ।

मुरसिला[14] दोशम्बा १० मार्च १८५१ ई०।

---

१. मुंशी अब्दुललतीफ़, मुंशी नबीबख्श 'हकीर' के पुत्र थे। २. सुपुत्र। ३. नेत्र की ज्योति। ४. ईश्वर उसकी रक्षा करे। ५. स्थायी सम्पत्ति। ६. दीर्घायु। ७. दया की छाया। ८. अनुकम्पा की छाया। ९. वह पद जिसके कुछ शब्दों से किसी घटना के संवत् का पता चले। १०. लिफाफे में बन्द। ११. पूज्य पिता। १२. संख्या। १३. जन्म-संवत्। १४. लिखित।

मुंशी अब्दुललतीफ़ के नाम

२

(८ दिसम्बर, १८५८ ई०)

साहब,

आगे तुम्हारा एक खत, फिर बारह किताबों और एक जन्तरी का पार्सल पहुँचा। बाद इसके कल एक खत और आया। रीड साहब के वहाँ आने का हाल मालूम हुआ। आज ६ दिसम्बर की है। ७ को बमूजिब तुम्हारे[1] लिखने के वो वहाँ से आनेवाले हैं और मुझको मालूम है कि मेरठ आएँगे। दो दिन के बाद बमुक़ाम मेरठ खत रवाना करूँगा। खातिर जमा रखो। वो साहबे मेहर जैसा लिखे मुझको इत्तिला देना। रही तुम्हारी मुहर, उसका कुछ खयाल न करो। वो जिस तरह तुमने लिखा है बन जाएगी। मगर भाई सन् ५८ ई० मे दिन कै बाक़ी रहे हैं। आज ६ दिसम्बर की है। २४, २५ दिन बाक़ी हैं। सन ५९ ई० जनवरी के महीने मे खुदा चाहे तो खुद जाएगी। तुन मेरे बजाए फर्ज़न्द[2] हो, मेरे भतीजे हो। जो तुम्हारा काम हो बेतकल्लुफ़ कहो। शर्म क्या और तकल्लुफ क्यों? ये मुहर का खुदना कौन-सा काम है?

मिर्ज़ा हातिम अली साहब मिले तो मेरा सलाम कहना और मिर्ज़ा तफ़्ता को खत लिखो तो मेरी सिफ़ारिश लिखना। वो मुझसे खफ़ा हो गये हैं और खत नही लिखते।

६ दिसम्बर १८५८ ई०।

—ग़ालिब

---

१. तुम्हारे अनुसार। २. पुत्र के समान।

नवाब अमीनुद्दीन अहमदख़ाँ के नाम

१

भाई साहब,

साठ बरस से हमारे-तुम्हारे बुज़ुर्गों मे क़राबत बहम पहुँची। निज व मेरा-तुम्हारा मामला ये कि पचास बरस से मैं तुमको चाहता हूँ, बे इसके कि चाहत तुम्हारी तरफ़ से भी हो। चालीस बरस से मुहब्बत का ज़ुहूर तरफ़ैन से हुआ। मैं तुम्हे चाहता रहा, तुम मुझे चाहते रहे। वो अम्रे आम[2] और अम्र खास क्या मुक्तज़ी[3] इसका नहीं कि मुझमे-तुममे हक़ीक़ी[4] भाइयों क सा इखलास[5] पैदा हो जाये। वो क़राबत[6] और ये मुवद्दत[7] क्या पैवंदे खून से कम है? तुम्हारा ये हाल सुनूं और बेताब न हो जाऊँ, और वहाँ आऊँ? मगर क्या करूँ, मुबालगा[8] न समझो, मैं एक क़ालिबे बेरूह[9] हूँ।

यके मुर्दा शरूसम बमर्दीखाँ[10] इज्म्हेलाल[11] रूह का रोज़ अफ़ज़ूं[12] है सुबह को तब्रीद[13], क़रीब दोपहर के रोटी, शाम को शराब। अगर इसमे जिस दिन एक चीज़ अपने वक़्त पर न मिली, मैं मर गया। वल्लाह्[14], नहं आ सकता, बिल्लाह्[15] नहीं आ सकता। दिल की जगह मेरे पहलू मे पत्थर भ

---

१. दोनों ओर। २. सामान्य विषय। ३. इच्छित। ४. वास्तविक, सगा ५. शील। ६. निकटता। ७. दोस्ती। ८. रक्त का सम्बन्ध। ९. अत्युक्ति १०. मृत। ११. मैं एक शव हूँ, ऐसा शव जो साहस से चलता-फिरता है १२. निर्बलता। १३. नित्य वृद्धिशील। १४. ठंढाई। १५-१६. ईश्वर क नाम लेकर कहता हूँ।

तो नही। दोस्त न सही, दुश्मन भी तो न हूँगा। मुहब्बत न सही, अदावत[1] भी तो न होगी। आज तुम दोनो भाई इस खानदान मे शर्फ़ुद्दौला और फ़ख्रुद्दौला की जगह हो। मैं लम यलिद वलम यूलद[2] हूँ। मेरी जौजा[3] तुम्हारी बहन, मेरे बच्चे तुम्हारे बच्चे है। खुद जो मेरी हक़ीक़ी भतीजी है, उसकी औलाद भी तुम्हारी ही औलाद है। न तुम्हारे वास्ते बल्के इन बेकसों के वास्ते तुम्हारा दुआगो हूँ और तुम्हारी सलामती चाहता हूँ। तमन्ना ये है और इंशाअल्लाह[4] ताला ऐसा ही होगा कि तुम जीते रहो और तुम दोनों के सामने मै मर जाऊँ ताकि इस काफ़िले को अगर रोटी न दोगे तो चने दोगे और अगर चने भी न दोगे और बात न पूछोगे तो मेरी बला से। मैं तो मुआफ़िक अपने तसव्वुर[5] के मरते वक़्त इन फ़लकज़ादो[6] के गम मे न उलझूंगा।

जनाब वालिद ए माजिदा[7] तुम्हारी यहाँ आना चाहती है और ज़ियाउद्दीन अहमदखाँ इसी वास्ते वहाँ पहुंचते है। सुनो, बाद तब्दीले आब व हवा[8] दो फ़ायदे और भी बहुत बडे हैं—कसरते अतिब्बा[9], सुहबते अहिब्बा,[10] तनहाई[11] से नामलूल[12] रहोगे, हर्फ़ व हिकायत[13] में मशगूल रहोगे। आओ, आओ, शिताब आओ भाई।

मिर्ज़ा अलाउद्दीन खाँ, तुमको क्या लिखूँ जो वहाँ तुम्हारे दिल पर गुज़रती होगी यहाँ मेरी नज़र मे है। खैर, दुआ ए मज़ीद[14] उम्र व दौलत।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१. शत्रुता। २. मैं निस्सन्तान हूँ, मेरा कोई मित्र नही। ३. पत्नी। ४. ईश्वर ने चाहा। ५. कल्पना के अनुसार। ६. विपत्तिग्रस्त। ७. पूज्य माता। ८. जलवायु का परिवर्तन। ९. वैद्यों की अधिकता। १०. मित्रों का साथ। ११. एकान्त। १२. प्रसन्न। १३. बातचीत। १४. और आशीर्वाद।

२

(२२ जून, १८६८ ई०)

अखे मुकर्रम[1] के खुद्दामे किराम[2] की खिदमत मे बाद इहदा ए सलामे मसनून मुल्तमिस[3] हूँ। तुम्हारा शहर मे रहना मूजिबे तक़वीयते दिल[4] था। गो न मिलते थे पर एक शहर मे तो रहते थे।

भाई, एक सैर देख रहा हूँ। कई आदमी तयूरे आशियाँ गुम कर्दा[5] की तरह हर तरफ़ उड़ते फिरते है। इनमे से दो-चार भूले-भटके कभी यहाँ भी आ जाते है। लो साहब, अब वादा कब वफ़ा करोगे। अलाई को कब भेजोगे? अभी तो शब[6] को चलने और दिन को आराम करने के दिन है। बारिश शुरू हो जाएगी तो आपकी इजाज़त भी काम न आएगी, चलनेवाला कहेगा मैं रहरवे[7] चालाक हूँ, तैराक नहीं। लोहारू से देहली तक कश्ती बग़ैर क्यों कर जाऊँ? दुखानी जहाज़[8] कहाँ से लाऊँ।

ऐ ज़े फ़ुर्सत बेख़बर दर हर चे बाशी ज़ूद बाश[9]

उस्ताद मीर जान साहब को सलाम।

यौमख़मीस[10], १७ मुहर्रम १२८१ हि०।

अलाई के दीदार का तालिब

—ग़ालिब

---

१. प्रतिष्ठित भाई। २. पूज्यजनों के सेवक। ३. अभिवादन के पश्चात प्रार्थी। ४. धैर्य का कारण। ५. जिन पक्षियो का घोंसला खो गया है ६. रात। ७. पथगामी। ८. स्टीमर। ९. तुम आलस्य के कारण निश्चिन्त हो, जो कुछ करना हो, जल्दी करो। १०. गुरुवार।

नबाब अमीनुद्दीन अहमद खाँ के नाम

३

(२६ मई, १८६५ ई०)

बिरादर साहब जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान,[1] सलामत, तुम्हारी तफ़रीहे तबा[2] के वास्ते एक ग़ज़ल नई लिख कर भेजी है। खुदा करे पसंद आये और मुतरिब[3] को सिखाई जाये।

आज शहर के अखबार[4] लिखता हूं। सवानेहे लैल व निहार[5] लिखता हूँ। कल पंजशम्बा २५ मई को अव्वले रोज़[6] बड़े ज़ोर की आँधी आई। फिर खूब मेंह बरसा। वो जाड़ा पड़ा कि शहर कुरहे ज़महरीर[7] हो गया। बड़े दरीबा का दरवाज़ा ढाया गया। क़ाबिल अत्तार के कूचे का बक़िया मिटाया गया। कश्मीरी कटरे की मस्जिद ज़मीन का पैवन्द हो गई। सड़क की वसत[8] दो-चन्द हो गई। अल्लाह्, अल्लाह् गुम्बद मस्जिदों के ढाये जाते हैं और हुनूद[9] की डेवढ़ियों की झंडियों के पर्चम[10] लहराते हैं। एक शेर ज़ोरावर और पीलतन[11] बंदर पैदा हुआ है। मकानात जा बजा[12] ढाता फिरता है। फ़ैज़ल्लाखाँ बंगश की हवेली पर जो गुलदस्ते हैं, जिनको अवाम[13] गुमज़ी कहते हैं, उनमे से हलाहला कर एक-एक की बुनियाद ढा दी, ईंट से ईंट बजा दी। वाह रे बन्दर, ये ज्यादती और फिर शहर के अदर। रेगिस्तान के मुल्क से एक सरदारज़ाद ए कसीरुल अयाल[14] असीरुलहाल[15] अरबी-फ़ारसी-अंग्रेज़ी तीन ज़बानों का आलिम दिल्ली मे वारिद हुआ है। बल्लीमारां के मुहल्ले में ठहरा

---

१. सब के लिए कृपा करने वाला। २. मनोरंजन। ३. गायक। ४. समाचार ५. रात और दिन की घटनाएँ। ६. प्रातः। ७. उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव, जहां अत्यधिक ठंड पड़ती है। ८. चौड़ाई। ९. हिन्दुओं। १०. ध्वजा। ११. मोटा-ताजा। १२. यत्र-तत्र। १३. सामान्य लोग। १४. अधिक बाल बच्चों वाला। १५. विपत्तिग्रस्त।

है। बहस्बे ज़रूरत हुक्कामे शहर[1] से मिल लेता है। बाक़ी घर का दरवाज़ा बंद किये बैठा रहता है। गाह गाह, न हर शाम व पगाह[2] ग़ालिब अली शाह दरवेश के तकिये पर आ जाता है। अहले शहर हैरान हैं कि खाता कहाँ से है। गर कोई कहता है कि ये बाप से फिर गया है, मैं जानता हूँ कि बेसबब बाप की नज़र से गिर गया है। देखिए, अंजामे कार[3] क्या हो? ग़ालिब अली शाह का क़ौल ये है कि कुल का भला हो।

जुमा, २६ मई १८६५ ई०।

४

(२६ जुलाई, १८६५ ई०)

बिरादर साहिब जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान सलामत।

बाद सलाम मसनून[4] व दुआ ए बक़ाए दौलत रोज़ अफ़्ज़ूँ अर्ज़ किया जाता है कि अतूफ़तनामे[5] के रू से फ़ारसी दो ग़ज़लों की रसीद मालूम हुई। तीसरी ग़ज़ल 'गौहर न तवाँ गुफ़्त, अख़्तर न तवाँ गुफ़्त' जो तुम्हारे हस्बुल तलब[6] भेजी गई है, क्या नहीं पहुँची? बेशुबा पहुँची होगी। तुम भूल गये होंगे। वकील हाजिरबाश दरबारे असदुल्लाही याने अलाई मौलाई ने अपने मुवक्किल की खुशनूदी[7] के वास्ते फ़क़ीर की गर्दन पर सवार होकर एक उर्दू की ग़ज़ल लिखवाई। अगर पसन्द आए तो मुतरिब को सिखाई जाये। झझोटी[8] के ऊँचे सुरों में राह रखवाई जाये। अगर जीता रहा तो जाड़ों में आकर मैं भी सुन लूँगा। वस्सलाम माल इक्राम[9]।

चहार शम्बा, २ रबीउल अव्वल १२८२ हि०, मुताबिक २६ जुलाई १८६५ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१. शहर के अधिकारी। २. भोर, तड़का। ३. परिणाम। ४. श्रुत। ५. कृपा-पत्र। ६. माँगने के अनुसार। ७. प्रसन्नता। ८. एक रागनी। ९. ईश्वर रक्षा करे और कृपा रखे।

नवाब अमीनुद्दीन अहमदखाँ के नाम

ग़ज़ल

मैं हूँ मुश्ताक़े जफ़ा[1] मुझ पै जफा[2] और सही
तुम हो बेदाद से खुश, इससे सिवा और सही
गैर की मर्ग[3] का गम किस लिए ऐ गीरते[4] माह
है हवस पेशा बहुत वो न हुआ और सही
तुम हो बुत फिर तुम्हे पिन्दारे खुदाई[5] क्यों है ?
तुम खुदावन्द ही कहलाओ खुदा और सही
हुस्न मे हूर से बढ़ कर नही होने के कभी
आपका शेव[6] ए अन्दाज़ो अदा और सही
तेरे कूचे[7] का है माइल[8] दिल मुज्तर[9] मेरा
काबा इक और सही किब्लानुमा[10] और सही
कोई दुनिया मे मगर बाग़ नही है वाइज़[11],
खुल्द[12] भी बाग है, खैर, आबो हवा और सही
क्यो न फिरदौस[13] मे दोजख़[14] को मिला ले या रब
सैर के वास्ते थोड़ी-सी फज़ा[15] और सही
मुझको वो दो कि जिसे खा के न पानी माँगूं
ज़हर कुछ और सही आबे बक़ा[16] और सही
मुझसे 'ग़ालिब' ये अलाई ने गज़ल लिखवाई
एक बेदादगरे रजे फिज़ा[17] और सही

---

१. अत्याचार का इच्छुक । २. अत्याचार। ३. मृत्यु । ४. प्रतिस्पर्द्धा । ५. गर्व । ६. ढग । ७. गली । ८. आसक्त । ९. व्याकुल । १०. दिशादर्शक । ११. धर्मोपदेशक । १२. स्वर्ग । १३. स्वर्ग । १४. नरक । १५. खुला मैदान । १६. सुरा । १७. दुःख बढ़ाने वाला ।

५

(१५ नवम्बर, १८६६ ई०)

भाई साहब,

आज तक सोचता रहा के बेगम साहबा क़िब्ला के इतिकाल के बाब में क्या लिखूं ? ताज़ियत[1] के वास्ते तीन बाते है—इज़हारे ग़म, तल्क़ीने सब्र[2] दुआए मग़फ़रत[3]। सो भाई, इज़हारे ग़म तकल्लुफ़े महज़ है। जो गम तुमको हुआ है, मुमकिन नही कि दूसरे को हुआ हो। तस्क़ीने सब्र बेदर्दी है। ये सानह ए अज़ीम[4] ऐसा है जिसने गमे रेहलत[5] नवाबे मग़फ़ूर[6] को ताज़ा किया। पस, ऐसे मौक़े पर सब्र की तल्क़ीन[7] क्या की जाये। रही दुआ ए मग़फ़रत, मै क्या और मेरी दुआ क्या ? मगर चूंकि वो मेरी मुरब्बिया[8] व मुहसिना[9] थी, दिल से दुआ निकलती है। माहाज़ा[10] तुम्हारा यहां आना सुना जाता था, इस वास्ते खत न लिखा। अब जो मालूम हुआ कि दुश्मनो की तबीयत नासाज़ है और इस सबब से आना न हुआ, ये चद सतरे लिखी गई। हक़ताला तुमको सलामत और तन्दुरुस्त और खुश रखे।

१५ नवम्बर १८६६ ई०।

तुम्हारी खुशी का तालिब
—ग़ालिब

६

(२२ जून, १८६७ ई०)

जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान सलामत—बाद सलामे मसनून व

---

१. सवेदना, शोक प्रकाशन। २. धैर्य रखने का उपदेश। ३. मृतक की आत्मा को शान्ति प्रदान करने की प्रार्थना ४. महान दुर्घटना। ५. मृत्यु का शोक। ६. स्वर्गीय। ७. उपदेश। ८. पालन करने वाली। ९. उपकार करने वाली। १०. साथ ही।

दुआ ए बक़ाए दौलते रोज़ अफ़्ज़ूं अर्ज़ किया जाता है कि उस्ताद मीर जान और उनकी ज़बानी तुम्हारी ख़ैर व आफ़ियत मालूम हुई। ख़ुदा तुमको ज़िन्दा व तनदुरुस्त व शाद व शादाँ[1] रख।

यहाँ का हाल क्या लिखूं? बक़ौल सादी अलेहिर्रहमा[2]—"न मुन्द आब जुज़ चश्मे दुर्रे यतीम"[3] शबव रोज़[4] आग बरसती है या खाक। न दिन को सूरज नज़र आता है, न रात को तारे। ज़मीन से उठते है शोले, आसमान से गिरते है शरारे[5]। चाहा था कि कुछ गर्मी का हाल लिखूं। अक़्ल ने कहा—देख नादान, क़लमे अँग्रेज़ी दियासलाई की तरह जल उठेगी और काग़ज़ को जला देगी। भाई, हवा की गर्मी तो बड़ी बला है, गाह गाह जो हवा बन्द हो जाती है, वो और भी जाँगुज़ा[6] है।

ख़ैर, अब फ़सल से क़ते नज़र एक कोदके[7] गरीबुल वतन[8] के एख्तलात[9] की गर्मी का ज़िक्र करता हूँ कि वो जाँसोज़[10] नही बल्कि दिल अफ़ोज़[11] है। परसों फर्रुख़ मिर्ज़ा आया। उसका बाप भी उसके साथ था। मैंने उससे पूछा कि क्यों साहब, मै तुम्हारा कौन हूँ और तुम मेरे कौन हो? हाथ जोड़ कर कहने लगा, हजरत आप मेरे दादा है और मै आपका पोता हू। फिर मैंने पूछा कि तुम्हारी तनखा आई? कहा—जनाबे आली आका जान[12] की तनखा आ गई है, मेरी नही आई। मैंने कहा, "तू लोहारू जाये तो तनखा पाये।" कहा—"हज़रत, मै तो आका जान से रोज कहता हूँ कि लोहारू चलो। अपनी हुकूमत छोड़कर दिल्ली की रैयत मे क्यों मिल गये।"

---

१. प्रसन्न। २. उन पर ईश्वर की दया हो। ३. दुर्रे यतीम (स्वाति की बूँद से बनने वाले अखण्ड मोती) के अतिरिक्त आँखो मे कुछ नही है—अर्थात् आँखों मे आँसू ही आँसू है। ४. रात-दिन। ५. स्फुल्लिग। ६. प्राणलेवा। ७. बालक। ८. परदेशी। ९. प्रेम। १०. दिल दुखानेवाला। ११. मन प्रसन्न करने वाला। १२. पिता (तुर्की मे भाई)।

सुभान अल्लाह्, बालिस्त भर का लड़का और ये फ़हमे दुरुस्त[1] और तब ए सलीम[2]। मैं इस ख़ूबी ए ख़ू[3] और फ़र्रुख़ि ए सीरत[4] पर उसको फ़र्रुख़सियर कहता हूँ। मुसाहिब बेबदल है। तुम उसको बुला क्यों नहीं भेजते ? मगर भाई, ग़ुलाम हुसेनख़ाँ मरहूम के मत्तबे[5] हो कि जैनुल आबदीन व हैदरहसन और उनकी औलाद को कभी मुँह न लगाया। अलाउद्दीनख़ाँ जैसा होशमंद व हमादाँ[6] बेटा; फ़र्रुख़सियर जैसा दानिशवर, बज़्लासंज[7] और शीरीं सुख़न[8] पोता, ये दो अतिय ए उज़्मा[9] व मोहिबते कुबरा[10] हैं तुम्हारे वास्ते मिनजानिबिल्लाह्[11]।

अगर दरयाफ़्तो बर दानिश्त बोस
वगर ग़ाफ़िल शुदी अफ़्सोस अफ़सोस[12]

आज २२ जून की है। आफ़ताब सरतान[13] मे आ गया। नुक़्त ए इन्क़लाबे सैफ़ी[14] मे दिन घटने लगा। चाहिए कि तुम्हारा ग़ैज़ो ग़ज़ब[15] हर रोज़ कम होता जाये।

नज़ात का तालिब
—ग़ालिब

---

१. उपयुक्त बुद्धि। २. अच्छा स्वभाव। ३. स्वभाव की अच्छाई। ४. अच्छा स्वभाव। ५. अनुयायी। ६. प्रकाण्ड विद्वान्। ७. विनोदी। ८. मधुरभाषी। ९. बड़ा दान। १०. महान् देन। ११. ईश्वर की ओर से। १२. यदि तुमने परिचय पा लिया तो अपनी बुद्धि की सराहना करो। यदि असावधान हो तो दुःख है, दुःख है। १३. कर्क (राशि)। १४. २२ जून। १५. अत्यधिक क्रोध।

नवाब ज़ियाउद्दीन अहमदखाँ के नाम

१

जनाब किब्ला[1] व काबा[2],

आपको दीवान के देने मे ताम्मुल[3] क्यों है ? रोज़ आपके मुतालै[4] में नही रहता । वग़ैर उसके देखे आपको खाना हज़म न होता हो, ये भी नहीं। फिर आप क्यों नही देते ? एक जिल्द हज़ार जिल्द बन जाये, मेरा कलाम शोहरत पाये, मेरा दिल ख़ुश हो, तुम्हारी तारीफ़ का क़सीदा अहले आलम[5] देखे, तुम्हारे भाई की तारीफ की नस्र सब की नज़र से गुज़रे, इतने फ़वायद[6] क्या थोडे है ? रहा किताब के तलफ़[7] होने का अँदेशा ये खफ़कान[8] है । किताब क्यों तलफ होगी ? अहयानन[9] अगर ऐसा हुआ और दिल्ली-लखनऊ की अर्ज़ेराह[10] मे डाक लुट गई तो मै फ़ौरन बसबीले डाक रामपूर जाऊँगा और नवाब फ़ख़्रुद्दीनखाँ मरहूम के हाथ का लिखा हुआ दीवान तुमको ला दूंगा । अगर ये कहते हो कि अब वहाँ से लेकर भेज दो वो न कहेंगे कि वहीं से क्यों नहीं भेजते ? हाँ ये लिखूं कि नवाब ज़ियाउद्दीनखाँ साहब नहीं देते, तो क्या वो ये नही कह सकते कि जब वो तुम्हारे भाई और तुम्हारे क़रीब होकर नहीं देते तो मै इतनी दूर से क्यों दूं ? अगर तुम ये कहते हो कि तफ़ज्ज़ुल से लेकर भेज दो, वो अगर न दे तो मै क्या करूँ ? अगर दें तो मेरे किस काम का ? पहले तो नातमाम[11], फिर नाक़िस[12] । बाज़ बाक़ क़सायद[13] इसमें

---

१. आदरणीय व्यक्तियों के लिए सम्बोधन । २. पूज्य । ३. सोच-विचार। ४. अध्ययन । ५. जन-साधारण । ६. लाभ (ब. व.) । ७. नष्ट । ८. पागलपन । ९. संयोगवश । १०. मार्ग की दूरी । ११. अपूर्ण । १२. त्रुटिपूर्ण। १३. कसीदे ।

से और के नाम कर दिये गये हैं और उसमें इसी ममदूह[1] साबिक़ के नाम पर हैं। शहाबुद्दीनखाँ का दीवान जो यूसुफ़ मिर्ज़ा ले गया है, उसमें ये दोनो क़बाहतें[2] मौजूद। तीसरी ये कि सरासर ग़लत, हर शेर ग़लत, हर मिस्रा गलत। ये काम तुम्हारी मदद के बगैर अंजाम न पाएगा और तुम्हारा कुछ नुकसान नहीं। हाँ, एहतिमाले नुकसान[3] वो भी अज़ रु ए वसवसा[4] व वहम। इस सूरत में मैं तलाफ़ी[5] का कफ़ील[6], जैसा कि ऊपर लिख आया हूँ। बहरहाल राज़ी हो जाओ और मुझको लिखो तो मैं तालिब[7] को इत्तिला दूँ और तलब उसकी जब दोबारा हो तो किताब भेज दूँ।

रहम व करम का तालिब
—ग़ालिब

१. प्रशंस्य। २. त्रुटियाँ। ३. हानि की आशका। ४. दुविधा के कारण। ५. नाश। ६. जमानत देने वाला। ७. इच्छुक।

मिर्ज़ा क़ुर्बान अलीबेगख़ाँ 'सालिक' के नाम

१

मेरी जान किन औहाम[1] में गिरफ़्तार है ? जहाँ बाप को पीट चुका, अब चचा को भी रो। तुझको ख़ुदा जीता रखे और तेरे ख़यालात व एहतिमालात[2] को सूरते वक़ोई दे। यहा ख़ुदा से भी तवक़्क़ो बाक़ी नहीं, मख़लूक़[3] का क्या ज़िक्र ? कुछ बन नही आती, अपना आप तमाशाई बन गया हूँ। रंज व जिल्लत से ख़ुश होता हूँ, याने मैंने अपने को अपना गैर तसव्वुर किया है। जो दुःख मुझे पहुँचता है, कहता हूँ—लो गालिब के एक और जूती लगी। बहुत इतराता था कि मैं बड़ा शाइर और फ़ारसीदाँ हूँ। आज दूर-दूर तक मेरा जवाब नहीं। ले, अब तो क़र्ज़दारों को जवाब दे। सच तो यों है, ग़ालिब क्या मरा, बडा मुल्हिद[4] मरा, बड़ा काफ़िर मरा, हमने अज़राहे ताज़ीम जैसा बादशाहों को बाद उनके 'जन्नत आरामगाह' व 'अर्शनशी' खिताब देते है, चूंकि ये अपने को शाहे क़लमखे सुख़न जानता था, 'सकर मकर' और 'हाविया ज़ाबिया' ख़िताब तजवीज़ कर रखा है, आइए 'नज्मुद्दौला बहादुर' एक कर्ज़दार का गरीबाँ में हाथ, एक क़र्ज़दार भोग सुना रहा है। मैं उनसे पूछ रहा हूँ—अजी हज़रत नवाब साहब, नवाब साहब कैसे ? ओग़लान साहब[5] आप सलजूक़ी[6] और अफ़रासयाबी[7] हैं। ये क्या बेहुरमती हो रही है ? कुछ तो उकसो, कुछ तो बोलो।

---

१. भ्रम (व. व.)। २. आशंकाएँ। ३. प्राणी। ४. धर्मभ्रष्ट। ५. जनाब (तुर्की।)। ६. तुर्क सरदार सलजूक़ जो अपने घर से निकाल दिया गया था, उसके वंश का व्यक्ति। ७. तूरान का शासक, जिसने ईरान पर अधिकार किया था किन्तु थोड़े समय में ही क़त्ल कर दिया गया।

बोले क्या बेहया बेग़ैरत ! कोठी से शराब, गंधी से गुलाब, बज़ाज़ से कपड़ा, मेवाफ़रोश से आम, सर्राफ़ से दाम क़र्ज़ लिये जाता था। ये भी सोचा होता कहाँ से दूंगा। बलिल रहमान अल्ताफ़ुन ख़फ़ी[1], ख़ैर व आफ़ियत तुम्हारी मालूम हुई। दम ग़नीमत है, जान है तो जहान है। कहते हैं कि ख़ुदा से ना उमीदी कुफ़्र है। मैं तो अपने बाब में ख़ुदा से नाउमीद हो कर काफ़िरे मुतलक़ हो गया हूँ। मुआफ़िक़े अक़ीद ए अहले इस्लाम[2] जब काफ़िर हो गया तो मग़फ़रत की भी तवक़्क़ो न रही। चल भई, न दुनिया, न दीन। मगर तुम हत्तल व वसा[3] मुसलमान बने रहो और ख़ुदा से नाउमीद न हो। इन्ना माल उस्ले युस्रा[4] को अपना नस्बुल ऐन[5] रखो।

दर तरीक़त हरचे पेशे सालिक आयद ख़ैरे ऊस्त[6]

घर मे तुम्हारे सब तरह ख़ैर व आफ़ियत है। मुहम्मद मिर्ज़ा पंजशम्बा और जुमे को दास्तान के वक़्त आ जाता है। रिज़्वाँ हर रोज़ शब को आता है। यूसुफ़अलीख़ाँ अज़ीज़े सलाम और बाकर और हुसेनअली बन्दगी कहते हैं। कल्लू दारोग़ा कोर्निश अर्ज़ करता है, औरों को ये पाया हासिल नहीं कि वो कोर्निश भी बजा लायें। ख़त भेजते रहा करो। बदुआ।

—अपनी मर्ग का तालिब[7]

---

१. ईश्वर की कृपा परोक्ष रहती है। २. मुसलमानों के विश्वास के अनुसार। ३. यथाशक्ति। ४. प्रत्येक कष्ट के साथ सुख और शान्ति संलग्न है। ५. ध्येय। ६. जो सद्गृहस्थ तरीक़त (आत्मशुद्धि) के मार्ग पर चलता है, उस पर जो विपत्ति पड़ती है, वह मंगलदायक होती है। ७. अपनी मृत्यु का इच्छुक।

मिर्ज़ा शम्शादअलीबेगख़ाँ 'रिज़्वाँ' के नाम

१

(४ नवम्बर, १८६५ ई०)

फ़र्ज़न्दे दिलबन्द शम्शादअलीबेगख़ाँ को, अगर ख़फ़ा न हों तो दुआ, अगर आज़ुर्दा[1] हों तो बन्दगी। गाज़ियाबाद से जाकर तब ए अक़दस[2] नासाज़ हो गई। अज़ आमदने काबा पशेमाँ शुदा बाशी[3]।

क़ुर्बानअलीबेगख़ाँ को दुआ कहना और उनका हाल लिखना।

आज शम्बा[4], ४ नवम्बर की है। परसों नवाब साहिब दौरे को गये। फ़रमा गये हैं कि दो हफ़्ते में आऊँगा। आकर चार रोज़ यहाँ रहेंगे, फिर नुमाइशगाहे बरेली की सैर को जाएँगे। वहाँ से फिर कर जब आएँगें तो साहिब कमिश्नर बरेली का इंतिज़ार फ़रमाएँगे। वो पंजुम[5] दिसम्बर तक आ जाएँगे। तीन दिन तक जश्न[6] रहेगा, उसके दो चार रोज़ बाद ग़ालिब रुख़सत होगा। ख़ुदा करे तुम तक ज़िन्दा पहुँच जाये।

पीरजी बहुत याद आते हैं। उनको दुआ कहना। और ये काग़ज़ पहले तुम पढ़ना, फिर सालिक को पढ़ाना। फिर मियाँ ख़ाजा अमान और हकीम रज़ाख़ाँ को दिखाना, फिर मिर्ज़ा तफ़ज्जुल हुसेनख़ाँ के पास ले जाना। इस क़सीदे के साथ की नस्ल नवाब ज़ियाउद्दीनख़ाँ या मिर्ज़ा साक़िब से माँग

---

१. दुःखी। २. शुभ प्रकृति। ३. काबे से लौटने पर तुम लज्जित हुए होगे। ४. शनिवार। ५. पाँच। ६. उत्सव।

लेना और उसकी नक़ल कर लेना और 'क़ात ए बुरहान' का हाल लिखना। मैंने तीस रुपये की हुंडवी, सौ रुपये की बाक़ी, हकीम जी को भेज दी है। हज़रत ने रसीद भी नहीं लिखी। उनसे रसीद लिखवा भेजो और सब जिल्दों के शीराज़े बंध जाएँ और मोटा कागज़ दोनों तरफ़ लग जाए। खबरदार कोई नुस्खा बेजिल्द न रहे। तीन सौ मुजल्लद[1] के तैयार होने की खबर और बक़िया हिसाब मेरे पास भेज देना या रुपया फ़ौरन भेज दूंगा या आकर दूंगा।

गवर्नर का हाल लिखो। कौन-कौन हाज़िर हुआ? किस किस की मुलाक़ात हुई? फर्रुखसियर के दादा साहब आये या नहीं? अगर आये हैं तो रूदाद[2] मुफस्सल[3] लिखो। हाँ भाई साहब टोंकवाले सय्यद सिराज अहमद का भी हाल ज़रूर लिखना। अली नक़ीखाँ वज़ीर शाहे अवध की हक़ीक़त भी ज़रूर लिखना और मुझको इन मकासिद[4] के जवाब का मुतज़र समझना। आज दोशबा, ४ नवम्बर की है। आठ दिन मे खत की आमदो शुद यक़ीनी है। नौ दिन राह देखूंगा, दसवें दिन अगर तुम्हारा खत न आया तो मैं राफ़ज़ी[5] बन जाऊँगा। मतालिब मुन्दर्जा[6] के जवाब का तालिब--

४ नवम्बर १८६५ ई०।

--गालिब

२

(अगस्त, १८६६ ई०)

मिर्ज़ा, रस्मे तहरीरे खुतूत[7] बसबबे ज़ोफ़[8] तर्क होती जाती है। तहरीर

---

१. सजिल्द। २. विवरण। ३. विस्तृत। ४. उद्देश्य (ब. व.)। ५. राफिज़ा—शिया मुसलमानों का एक सम्प्रदाय, राफ़ज़ी—राफ़िज़ा सम्प्रदाय का व्यक्ति। गालिब सुन्नी थे। शिया बनने की धमकी देते हैं। ६. उल्लिखित। ७. पत्रों का लेखन। ८. निर्बलता।

मिर्ज़ा शम्शादअलीबेगख़ाँ 'रिज़वी' के नाम

का तारिक[1] नहीं हूँ बल्कि मतरूक[2] हूँ। अब मुझे वैसा न समझो, जैसा छोड़ गये हो। रामपूर के सफ़र में ताब व ताक़त, हुस्ने फ़िक्र[3] लुत्फ़े तबीयत[4] ये सब असबाब लुट गये। अगर तुम्हारे ख़त का जवाब न लिखूँ तो महले तरह्हुम[5] है, न मुक़ामे शिकायत। सुनो, मेरे ख़त न पहुंचने से तुमको तशवीश क्यों हो? जब तक जिन्दा हूँ, गमज़दा व अफ़्सुर्दा, नातवाँ[6] व नीमजाँ[7] हूँ। जब मर जाऊँगा तो मेरे मरने की ख़बर सुन लोगे। पस, जब तक मेरे मरने की ख़बर न सुनो, जानो कि ग़ालिब जीता है। ख़स्ता व रंजूर व दर्दमन्द[8]। ये सतरें लिखकर इस वक़्त तुम्हारे भाई के पास भेजता हूँ। मगर उनको हमेशा सफ़र दरपेशतन[9] है। बफ़र्जे महाल[10] अगर घर में हैं तो इनायतुल्ला उनको, वर्ना मुहम्मद मिर्ज़ा को दे आएगा।

रबीउस्सानी जुमे का दिन सुबह का वक़्त है।

---

१. त्यागी। २. परित्यक्त। ३. चिन्तन-शक्ति। ४. सुस्वभाव। ५. कृपा का स्थान। ६. निर्बल। ७. अर्धमृत। ८. दुःखी। ९. प्रदेशों की यात्रा। १०. कठिनाई से।

मिर्ज़ा बाकरअलीख़ाँ 'कामिल' के नाम

१

(१६ नवम्बर, १८६७)

इकबाल निशान[1] बाकरअलीखाँ को गालिबे नीमजाँ की दुआ पहुँचे। बहुत दिन हुए कि तुम्हारा खत आया। मगर तुमने अपने मकान का पता तो लिखा ही न था। फ़क़त अलवर का नाम लिखकर छोड दिया। मैं क्यों कर खत भेजता ? बारे, अब शहाबुद्दीनखाँ की ज़बानी पता मालूम हुआ, सो अब मैं तुमको खत लिखता हूँ। जुनिया बेगम[2] अच्छी तरह है। मेरे पास आती रहती है और तुम्हारे घर मे सब तरह खैर व आफ़ियत है। अक्तूबर के महीने की तुम्हारी तनखा तुम्हारे घर भेज दी। मिर्ज़ा हुसेनअलीखाँ बन्दगी अर्ज़ करता है।

तहरीर १६ नवम्बर १८६७।

—असदुल्लाह्

२

(७ दिसम्बर, १८६८)

इक़बाल निशान मिर्ज़ा बाक़रअलीखाँ को ग़ालिबे नीमजाँ की दुआ पहुँचे। तुम्हारा खत आया। तुम्हारे रोज़गार की दुरुस्ती आगे सुन चुका था,

---

१. सौभाग्यशाली। २. बाकरअलीखाँ की बेटी।

अब तुम्हारे लिखने से देख भी ली। दिल मेरा ख़ुश हुआ और तुम ख़ातिर जमा रखो, जैसा कि महाराज[1] ने तुम से कहा है, तुम्हारी तरक़्क़ी इंशा अल्लाह जल्द होगी। मुझसे जो तुम गिला[2] करते हो ख़त के न भेजने का, भाई अब मेरी उंगलियाँ निकम्मी हो गई हैं और बसारत[3] में भी ज़ोफ़ आ गया है। दो सतरें नहीं लिख सकता। अतराफ़ व जवानिब[4] के ख़ुतूत आये हुए धरे रहते हैं। जब कोई दोस्त आ जाता है, मैं उससे जवाब लिखवा देता हूँ। परसों का तुम्हारा ख़त आया हुआ धरा था। अब इस वक़्त मिर्ज़ा युसूफ़अलीख़ाँ आ गये हैं, मैंने उनसे ये ख़त लिखवा दिया। तुम्हारी दादी अच्छी तरह है। भाई अच्छी तरह है। तुम्हारे घर मे सब ख़ैर व आफ़ियत है। तुम्हारी लडकी अच्छी तरह है। कभी रोज़ कभी दूसरे-तीसरे मेरे पास आ जाती है।

३

(७ दिसम्बर, १८६८ ई०)

नूरे चश्म व राहते जाँ मिर्ज़ा बाक़रअलीख़ाँ को फकीर ग़ालिब की दुआ पहुँचे। तुम्हारा ख़त जो मेरे ख़त के ज़वाब मे था वो मुझको पहुँचा। इसमें कोई बात जवाब तलब न थी। इस ख़त मे एक नए अम्र की इत्तिला देता हूँ। वो अम्र ये है कि मैंने अगले महीने मे 'सब्दर्च' की एक जिल्द मे अर्ज़ी, इक़बाल निशान मीर तफज्जुल हुसेनख़ाँ के मारिफ़त अलवर को भिजवाई थी, सो अब के हफ़्ते मे हुज़ूरे पुरनूर महाराव राजा बहादुर का ख़त उन्हीं की मारिफ़त मुझको आया। हुज़ूर ने अज़राहे बन्दा पर्वरी व क़द्रे अफ़ज़ाईअलक़ाब[5] बहुत बड़ा मुझे लिखा और ख़त मे फ़िक्रे[6] बहुत इनायत और इल्तिफ़ात[7]

---

१. अलवर-नरेश शिवदानसिंह। २. शिकायत। ३. दृष्टि। ४. आसपास। ५. नेत्र की चमक तथा हृदय की शान्ति। ६. उपाधियाँ। ७. वाक्य। ८. प्रेम।

के भरे हुए दर्ज किये। तुम तो वहीं हो, तुमको इसकी इत्तिला हो गई थी या नही ? और अगर हो गई थी तो तुमने मुझको क्यों नहीं लिखा ? अब मैं तुमसे ये पूछता हूँ कि कभी दरबार में कुछ मेरा भी ज़िक्र आता है या नही ? और अगर आता है है तो किस तरह आता है ? हुज़ूर सुन कर क्या फ़रमाते हैं ?

७ दिसम्बर, १८६८ ई०।

—ग़ालिब

मीर सरफ़राज़ हुसेन के नाम

१

नूरे चश्म राहते जान मीर सरफ़राज़ जीते रहो। तुम्हारे दस्तख़ती ख़त ने मेरे साथ वो किया जो बू ए पैरहन ने याक़ूब[1] के साथ किया। मियाँ, ये हम-तुम बूढे हैं या जवान हैं, तवाना[2] या नातवाँ हैं, बड़े बेशक़ामत हैं। याने बहरहाल ग़नीमत हैं। कोई जला-भुना कहता है—

यादगारे ज़माना है हम लोग
याद रखना फ़साना[3] है हम लोग

वही बालाख़ाना है और वही मैं हूँ, सीढियो पर नज़र है कि वो मीर मेहदी आये, वो यूसुफ मिर्ज़ा आये.....वो मीरन आये, वो यूसुफअलीख़ाँ आये। मरे हुवों का नाम नहीं लेता। बिछड़े हुवों मे से कुछ गिने हैं। अल्लाह्, अल्लाह, अल्लाह्—हज़ारो का मैं मातमदार हूँ, मैं मरूँगा तो मुझको कौन रोएगा? सुनो ग़ालिब, रोना-पीटना क्या, कुछ इस्तिलात[4] की बाते करो। कहो मीर सरफ़राज़ हुसेन से कि ये ख़त मीर मेहदी को पढ़वाओ और मीरन साहब को

---

१. भाइयो ने यूसुफ़ को कुएँ मे लटका दिया और उसके कपड़े ले कर अपने पिता याकूब के पास आये। भाइयो ने बताया यूसुफ़ मर गया, ये उसके कपड़े हैं। उन कपड़ो मे अपने पुत्र यूसुफ़ की गन्ध पाकर याकूब विह्वल होकर रोने लगे। २. हृष्ट-पुष्ट। ३. कहानी। ४. मित्रता, प्यार।

बुलवाओ। कल शाम को या परसों शाम को मीर अशरफ़अली साहब मेरे पास आये थे। कहते थे कि कल या परसों पानीपत को जाऊँगा। मैंने उनकी ज़बानी कुछ पयाम मीरन साहब को भेजा है, अगर भूल न जाएँगे, पहुँचाएँगे। खुलासा इसका ये है कि साहिबे इल्म नहीं है, न हो; ग़ुलाम अशरफ नहीं है, न हो, अगर मंज़ूर कीजिये तो मैं सूफी हूँ। 'हमाऊस्त'[1] का दम भरता हूँ। बमूजिबे मिस्रा—

दिल बदस्तावर के हज्जे अकबरस्त[2]

तुमसे कब इन्कार करता हूँ, अगर मिर्ज़ा गौहर की जगह मानो तो ख़ुश, अगर ग़ुलाम अशरफ मानो तो राजी। रात को अपने घर मे बाते बनाओ, दिन को मुझमे जी बहलाओ। क़िस्सा मुख़्तसर, आओ जल्दी आओ। अलवर का जो हाल लिखते हो वो सच है। राजपूत ऐसा ही कुछ करते हैं, मगर महाराजा मुसलमानों का दम भरते हैं। कुछ दिन जाते है कि य लोग फिर वहाँ आते है, क्या मजमा बरहम हुआ है! मुझको कैसा ग़म हुआ है। तुम इस जर्गे[3] मे जुदा हो, तुमको क्या अदेशा है? मीर क़ुबान अलीसाहब जैसा लिखें, वैसा करो। मीर मेहदीसाहब सारा खत पढ़कर कहेंगे। मुझको दुआ भी लिखी। भाई मेरी दुआ पहुंचे। मीर नसीरुद्दीन एक दिन मेरे हाँ आये थे। अब मैं नही जानता, यहाँ है या वहाँ। हों तो दुआ कहना। मीरन साहब के नाम तो इतना कुछ पयाम है। दुआ-सलाम की हाजत क्या? देखो हम अपना नाम नही लिखते, भला देखें तो सही तुम जान जाते हो कि ये खत किसका है?

---

१. सर्वं खल्विद ब्रह्म। २. लोगों के हृदय को वश मे करना सबसे बड़ा आनन्द है। ३. श्रेणी, समूह। ४. अपने युग का निर्माता।

२

(२७ मार्च, १८६६ ई०)

मेरी जान के चैन मुज्तहदुल अस्र[1] मीर सरफ़राज़ हुसेन, तुमको और तुम्हारे भाई को और तुम्हारे दोस्त को दुआ और फिर ये बयान कि गदर के पहले हर दरबार में खिलत पाता था। बाद ग़दर दरबार और खिलत और मुलाक़ात सेक्रेटरों की ये सब मौक़ूफ़, अब जो लेफ़्टंट गवर्नर पजाब आये तो उन्होंने ख़ुद मुझे बुला भेजा और खिलत दिया और फ़रमाया कि ये हम अपनी तरफ़ से अज़राहे मुहब्बत देते हैं और ये नवीद[2] अलावा कि गवर्नर जनरल बहादुर के हाँ का भी दरबार और खिलत खुल गया। अम्बाले जाओगे तो पाओगे। मैं अम्बाले न जा सका। बिलफ़ैल नायब गवर्नर के खिलत पर क़नाअत[3] की। इस खिलत के बशर्ते हयात[4] और वक़्त पर मौक़ूफ़ रखा।

हिमल्टन साहब अलवर मे आ गये। राजा साहब दरबार रोज करते हैं। अहले अग़राज़[5] के अरायज़[6] जो हुज़ूर मे गुज़रते है, वो हुज़ूर पचों के पास भेज देते है। खरीता याने हुक्म इस्तियार पाने का अभी नहीं आया। यक़ीन है कि लार्ड साहब बाद इख्तितामे सफ़र[7] जब शिमला पहुँचेगे, तो खरीता जारी होगा। आज जुमा, सातवी शव्वाल की और सत्ताईसवीं मार्च की है। चार घड़ी दिन चढ़ा है। मैं ये खत लिख कर भेजता हूँ। तुम भी पढ़ो और मीर मेहदी को भी पढ़ाओ, अब शायद थोड़े दिनों तक मैं खत न लिख सकूँ। तफ़्सील इसकी ये कि रज्जब के महीने में सीधे हाथ पर एक फुन्सी हुई, फुन्सी-फोड़ा हो गई, फोड़ा फूट कर ज़ख्म बना, ज़ख्म बिगड़ कर ग़ार हो गया। अब बक़दर एक कफ़ेदस्त[8] वो गोश्त मुर्दार हो गया। अम्बाले न जाने की भी यही

---

१. अपने युग का निर्माता २. निमत्रण, शुभ-समाचार। ३. सन्तोष। ४. यदि जीवित रहा। ५. अभ्यर्थी लोग। ६. प्रार्थना-पत्र। ७. यात्रा की समाप्ति। ८. हथेली।

वजह हुई। दो हफ़्ते से अंग्रेज़ी इलाज होता है। काला डाक्टर रोज़ आता है। आज उसने इरादा इस मुर्दार गोश्त के काटने का किया है अब वो आता होगा। जल्द-जल्द ये लिख कर रवाना करता हूँ, ताकि फिर हाथ के पुर्ज़े उड़ा दूँ।

७ शव्वाल १२७९ हि० मुताबिक़ २७ मार्च १८६६ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

मीर अफ़ज़लअली उर्फ़ मीरन के नाम

१

(६ नवम्बर, १८५८ ई०)

सआदत व इक़बाल निशान मीर अफ़ज़लअली साहब अलमारूफ़[1] बमीरन साहब ! ख़ुदा तुमको सलामत रखे और फिर तुम्हारी सूरत मुझको दिखावे। तुम्हारा ख़त पहुँचा। आँखों से लगाया, आँखों मे नूर आया। दिल पर रखा, मज़ा पाया। कल तक इस नाम को सुनकर शरमाते थे और आप ही आप घुले जाते थे। अब बन-बन कर बाते बनाते हो और हमको कड़ियाँ सुनाते हो। काश, कि तुम यहाँ आ जाओ। तब इस तहरीर का मज़ा पाओ। मीर मेहदी साहब वो तहरीर तुम्हारी, बनिस्बत मेरे, देख कर बहुत ख़फ़ा हुए। चुनाँचे अब जो तुम्हारी उनकी मुलाक़ात होगी तो तुमको मालूम होगा।

भाई, तुम्हारे साले बहुत ग़ुरूर के पुतले है। दो-एक बार मैंने उनको बुलाया। उन्होंने करम न फ़रमाया। तुम सच कहते हो, ये लोग और ही आब व गिल[2] के है। तुम्हारी और उनकी कभी न बनेगी और गहरी न छनेगी। वही बैठे रहो, देखो ख़ुदा क्या करता है। इंशा अल्लाह् ताला ये रंज व अज़ाब[3] का ज़माना जल्द गुज़रता है।

मीर सरफ़राज़ हुसेन साहब को मेरी दुआ कहना और कहना भाई वो ज़माना आया है कि सैकड़ों अज़ीज़ राही ए मुल्के अदम[4] हुए, सैकड़ों ऐसे मफ़क़ूदुल ख़बर[5] हो गये कि उनके मर्ग व जीस्त[6] की ख़बर नहीं। दो-चार

---

१. परिचित। २. पानी और मिटटी। ३. यातना। ४. यमलोक के यात्री। ५. लुप्त। ६. मृत्यु और जीवन।

जो बाक़ी रहे हैं, खुदा जाने कहाँ बसते हैं कि हम उनके देखने को तरसते हैं। मीर नसीरुद्दीन को पहले बन्दगी फिर दुआ।

दो शम्बा ९ नवम्बर १८५८ ई० बैनुज्ज़ुह्र वलअस्र[1]।

नजान का तालिब
—ग़ालिब

२

(६ जुलाई, १८५९ ई०)

बरख़ुर्दार[2], कामगार, मीर अफ़ज़लअली उर्फ़ मीरन साहब तालल्लाहुल उम्रहू[3]। बाद दुआ के वाजे राए सआदत इन्तिभाए[4] हो। आपका खत पहुँचा। अगरचे मैंने सिर्फ़ पढ़ा, मीर मेहदी के जलाने को लिखता हूँ कि मैंने आँखों से लगाया। हाँ साहब, तुमने जो लिखा है कि क़िब्ला व काबा कहने से वो साहब बहुत खुश होते हैं, क्यों न खुश हों? खुशी की बात है। तुम्हारे सर की क़सम, मैं गोया देख रहा हूँ और मेरी नज़र में फिर रहा है, वो मीर सरफ़राज़हुसेन का शरमा कर आँखे नीची करना और मुस्कराना। खुदा कभी मुझको भी वो सूरत दिखाये। मीर नसीरुद्दीन यहाँ आ गये हैं। तुम मुज्तहदुल अस्र हकीम मीर अशरफ़अली को मेरी दुआ कहना और मीर मेहदी पूछें तो कहना कि तुम को कुछ नहीं लिखा। कल मैंने खबर मँगवाई थी, सो लड़की को अभी तप आये जाती है। यक़ीन है कि तुमने वहाँ पहुँचकर मौलवी मज़हरअली को खत लिखा होगा। हाँ, तुम को ज़रूर है, उनसे नामा व पयाम[5] की रस्म रखनी। वद्आ। चहार शम्बा, शेशुम[6] जुलाई १८५९ ई०।

—ग़ालिब

---

१. मध्याह्न और अपराह्न की नामाज के मध्य। २. सौभाग्यशाली। ३. ईश्वर उनकी आयु बढ़ाये। ४. वृद्धि। ५. पत्र-व्यवहार। ६. छठी।

३

(२ जुलाई, १८६४ ई०)

मेरी जान,

तुम्हारा रुक़्क़ा पहुँचा, और न खुला कि मीर सरफ़राज़हुसेन जैपुर क्यों जाते हैं ? बहरहाल मीर मेहदी को दुआ कहना और मीर सरफ़राज़हुसेन से ये पूछना कि तुम जैपूर चले, मैंने तुमको खुदा को सौंपा, तुम मुझे किसको सौंप चले।

जवाब का तालिब

—ग़ालिब

ख़ाजा गुलामगौसख़ाँ 'बेखबर' के नाम

१

(६ दिसम्बर, १८५७ ई०)

पीर व मुर्शिद,

ये ख़त है या करामत ? साफ़[1] सफ़ा ए ज़मीर[2] व कश्फ़े हुजुब[3] की अलामत[4] है। मुद्आ ज़रूरी उत्तहरीर[5] और अँदेश ए निशाने मस्कन[6] दामनगीर। अगर ये ख़त कल न आ जाता तो आज ख़त क्यों कर लिखा जाता ? सुभानअल्लाह् ! जिस दिन यहाँ मुझको वो मतलबे ख़तीर[7] पेश आया है, उसी दिन आपने वहाँ लिखने को क़लम उठाया है। आपको आरिफ़े कामिल[8] क्यों कर न लिखूँ और क्या कहूँ, वली न कहू ? मुद्आ बयान करता हूँ, मगर ये गुमान करता हूँ कि ये ख़त पहुँचने न पाएगा कि राज़े[9] सरबस्ता[10] आप पर खुल जाएगा। याने एक शबा, २८ नवम्बर को दो ख़त और दो पार्सल, एक मे 'दस्तम्बू' का एक मुजल्ला और एक मे तीन मश्रान[11] बसबीले डाकखाना कर चुका हूँ। ख़तों का चौथे-पाँचवे दिन, पार्सलों का छठे-सातवे दिन पहुँचना ख़याल करता हूँ। पार्सलों के उन्वान[12] पर ख़तों की मइय्यत[13] रक़म की है और ख़तों के सरनामे पर पार्सलों के इर्साल[14] की इत्तिला दी है। तीन किताब वाले पार्सल और एक ख़त पर जनाब सेक्रेतर

---

१. शुद्ध। २. अन्तःकरण। ३. पर्दे का खुलना। ४. लक्षण। ५. लिखने की आवश्यकता। ६. घर। ७. श्रेष्ठ उद्देश्य। ८. सर्वज्ञ। ९. रहस्य। १०. गुप्त। ११. साथ ही। १२. शीर्षक। १३. साथ। १४. प्रेषण।

बहादुर का नामे नामी है, और एक किताब वाले पार्सल और एक ख़त पर जनाब चीफ़ सेक्रेतर साहब दोअ्रम[1] का इस्मे सामी[2] है। आज पाँचवाँ दिन है। ख़त दोनों अगर पहुँच गये हों तो क्या अजब है, बल्कि सच तो यों है कि अगर न पहुँचे हों तो बड़ा ग़ज़ब है। अगले अरायज़ के न पहुँचने में कुछ शक नहीं। जवाबे अ्रम्र आख़िरी दफ़्तर मे इसका पता आज तक नहीं। अब कारपरदाज़ाने डाक[3] डाकू न बन जायें और मेरे इन दोंनों ख़तों और पार्सलों को बएहतियात पहुँचायें। सर्फ़[4] इनायत की गुंजाइश तो आप जब पाये कि वो ख़त और पार्सल पहुँच जाएँ। अभी तो आप से मुझको उनके पहुँचने न पहुँचने का सवाल है। किस वास्ते कि जब तक आप मुझको इत्तिला न देंगे, उनके न पहुँचने की भी ख़बर मुझ तक पहुँचनी मुहाल है। बहरहाल ये नियाज़नामा[5] जिस दिन पहुँचे उसके दूसरे दिन जवाब लिखिए। जैसा मैंने जल्द लिखा ऐसा ही आप भी शिताब लिखिये। आपके इनायतनामे में कोई अ्रम्र ऐसा न था कि जिसका जवाब लिखा जाये या इस बाब में कुछ और अर्ज किया जाये। लोहारू की रवानगी का ख़त आएगा, लोहरू को भेज दिया जाएगा. जनाब मुंशी नवाबख़ाँ साहब और जनाब मुंशी इज़हार हुसेन साहब में और आप में अगर रब्ते बेतकल्लुफ़ हो तो उन दो साहिबों की ख़िदमत में मेरा सलामे नियाज पहुँचने में न तवक़्क़ुफ़[6] हो।

तुम सलामत रहो क़यामत तक। २ दिसम्बर १८५७ ई०।

२

क़िबला,

इस नाम ए मुख़्तसर[7] ने ो किया जो बार ए अ्रम्र[8] किस्त ए ख़ुश्क[9] से

१. द्वितीय। २. श्रेष्ठ नाम। ३. डाक के कार्यकर्ता। ४. व्यय। ५. कृपा-पत्र। ६. विलम्ब। ७. संक्षिप्त पत्र। ८. बादल का टुकड़ा। ९. सूखी खेती।

करे, याने ख़त और पार्सल का पहुँच जाना ऐसा नहीं कि उसकी ख़बर पाकर बख़्त[1] की रसाई का सिपास गुज़ार[2] न हूँ। ये तो हज़रत को लिख चुका हूँ कि दूसरा पार्सल और ख़त एक साथ भेजा गया है और हरगूना तवक़्क़ो का ख़याल इसी पार्सल पर है, किस वास्ते कि उस ख़त मे हाकिमे आज़म के नाम की अर्ज़ी मलफ़ूफ़[3] है। जानता हूँ कि महकमा एक, डाक एक, दोनों लिफ़ाफ़े एक दिन पहुँचे होंगे। मगर दिल नहीं मानता और कहता है कि न मानूंगा, जब तक कि हज़रत इस सिरिश्ते से मालूम करके न लिखेंगे। अब आप जानिये और ये दिल सौदाज़दा[4]। मैं इसकी सिफ़ारिश करने वाला और इसके मुद्दआ का गुज़ारिश करने वाला कौन ? हाँ, इतनी बात है कि आप लिख सकते हैं, बल्कि ये भी आप मुझ पर हाली कर सकते हैं कि नज़्र[5] विलायत की, विलायत को रवाना हुई या नहीं ? मेरी जिगरकावी[6] की क़द्रदानी हुई या नहीं ? पेशगाह से मुआफ़िक़ दस्तूर के ख़त का उम्मीदवार हूँ या नहीं ? अपने हुस्नेतबा[7] का शुक्रगुज़ार हूँ या नहीं ? इस ख़त का जवाब जितना जल्द इनायत कीजिएगा, मुझको जिला लीजिएगा। लोहारू का ख़त एक मौतमद[8] के हाथ भेज दिया गया।

३

(दिसम्बर १८५८ ई०)

क़िब्ल ए हाजात[9]

अतूफ़त[10] के आने से आपका भी शुक्रगुज़ार हुआ और अपने बख़्त और क़िस्मत को भी आफ़रीं कही और डाक के कारपरदाजों का एहसान माना। बारे, दोनों पार्सल और दोनों लिफ़ाफ़े पहुँच गये।

---

१. भाग्य। २. अभिनन्दनकर्त्ता। ३. लिफाफे में बन्द। ४. पागल। ५. भेंट। ६. कठिन परिश्रम। ७. सु-स्वभाव। ८. सचिव। ९. आशा के केन्द्र। १०. अनुग्रह-पत्र।

ख़ाजा ग़ुलामग़ौसख़ाँ 'बेख़बर' के नाम

ता निहाले दोस्ती कै वर दिहद
हालिया रफ़्तेम बतुख़्मे काश्तेम[1]

ये किताब जो मुरसिलइलै[2] के मुतालै[3] मे है, फिर बनिस्बत उस दूसरी किताब के क़िस्मत की अच्छी है, याने ख़ुद मुलाहिज़ा फ़रमा रहे हैं और अगर कही कुछ पूछना होगा तो यक़ीन है कि आपसे पूछेंगे। दूसरी किताब देखिये मुझको क्या दिखाए ? जिनको उसके देखने का हुक्म हुआ है वो अहले इल्म व फ़ज़्ल[4] मे से है, लेकिन ये तर्ज़े तहरीर[5], मै नहीं कहता कि ये नादिर[6] है, मगर बेगाना व ना आशना[7] है, ख़ुदा करे वो जो उसके सर पर मामूर[8] है, इन औराक़[9] को बमशवरत[10] आपके देखा करे और कहीं-कही आप से पूछ लिया करे। क्यों कर लिखूँ, नही लिख सकता। तुम सब कुछ जानते हो। जहाँ गुजाइश पाओगे, जैसा मुनासिब जानोगे, जो कुछ कर सकोगे, वो करोगे। लोहारू का ख़त बकमाले एहतियात रवाना हो गया। ख़ातिरे अक़दस जमा रहे। जवाब तलब, ज़्यादा हद्दे अदब।

४

(३ जनवरी, १८५९ ई०)

जनाब आली,

आज दोशंबा, ३ जनवरी १८५९ ई० की है। पहर दिन चढ़ा होगा कि अब्र घिर रहा है, तर्रशोह[11] हो रहा है, हवा सर्द चल रही है, पीने को कुछ मयस्सर नहीं। नाचार रोटी खाई है--

---

१. देखना है यह मित्रता का पौधा कब फल देगा, हम गये और हमने बीज बो दिये। २. पत्र-प्राप्तकर्त्ता। ३. अध्ययन। ४. कृपा। ५. लिखने का ढंग। ६. अलभ्य। ७. अपरिचित। ८. नियुक्त। ९. पृष्ठ (ब. व.)। १०. परामर्शानुसार। ११. फुहार।

उफ़ुक़ हा पुर अज़ अब्रे बहमन मिहि
सिफ़ा लीना ए जामे मनज़ मय तिहि[1]

गमज़दा व दर्दमन्द बैठा था के डाक का हरकारा तुम्हारा खत लाया। सरनामे को देख कर इस राह से के दस्तखते खास का लिखा हुआ है, बहुत बहुत खुश हुआ। खत को पढ़कर इस रू से कि हुसूले मुद्आ के ज़िक्र पर हावी न था, अब अफ़्सुर्दगी हासिल हुई—

मा खाना रमीदगाने जुल्मेम
पैंगामे खुश अज़ दयारे मा नीस्त[2]

इस अफ़्सुर्दगी[3] मे जी चाहा कि हज़रत से बाते करूँ। बा आँ कि[4] खत जवाब तलब न था, जवाब लिखने लगा।

पहले तो ये सुनिये कि आपके दोस्त को आपका खत पहुँच गया, मगर वो दो बार मुझको लिख चुका है कि मैं जवाब इसका निशाने मरक़ूम ए लिफ़ाफ़े[5] के मुताबिक़ डाक में भेज चुका हूँ, जवाबुल जवाब[6] का मुन्तज़र हूँ।

आप जानते हैं कि कमाले यास[7] मुक़तज़ी ए इस्तिग्ना[8] है, पस अब इससे ज़्यादा यास क्या होगी कि बउमीदे मर्ग[9] जीता हूँ। इस राह से कुछ मुस्तग़नी[10] होता चला हूँ कि दो-ढाई बरस की ज़िन्दगी और है, हर तरह गुज़र जाएगी।

---

१. बहमन (मास) के क्षितिज पर बादल छाये हैं किन्तु मेरा मिट्टी का मधु-प्याला सुरा से रिक्त है। २. हम अत्याचारों से आक्रान्त हैं। हमारे नगर से प्रसन्नता का कोई समाचार नहीं मिल सकता। ३. खिन्नता। ४. यद्यपि। ५. लिफ़ाफे पर लिखित पते के अनुसार। ६. प्रत्युत्तर। ७. निराशा। ८. जिसकी निस्पृहता का तकाजा है। ९. मृत्यु की आशा। १०. निरीह।

ानता हूँ कि तुमको हँसी आएगी कि ये क्या बकता है। मरने का ज़माना ौन बता सकता है ? चाहे इल्हाम[1] समझिए चाहे ओहाम[2] समझिए बीस बरस ले ये क़ता लिख रखा है—

मन के बाशम के जाविदाँ बाशम
चूँ नज़ीरी नमुन्दो तालिब मुर्द
वर बगोयन्द दर कुदामी साल
मुर्द 'ग़ालिब' बेगो के 'ग़ालिब मुर्द'[3]

अब बारह सौ पछत्तर है और 'ग़ालिब मुर्द' बारह सौ सतहत्तर है। इस अर्से में जो कुछ मसर्रत पहुँचनी हो, पहुँच ले, वर्ना फिर हम कहाँ।

५

(३० जनवरी, १८५८ ई०)

क़िब्ला,

कभी आप को ये भी ख़याल आता है कि कोई हमारा दोस्त जो ग़ालिब—कहलाता है, वो क्या खाता-पीता है, और क्यों कर जीता है ? पेन्शन क़दीम इक्कीस महीने से बन्द और मैं सादा दिल फ़ुतूहे जदीद[4] का आरज़ूमन्द पेन्शन का इहात ए पंजाब के हुक्काम पर मदार है, सो उनका ये शेवा और शिआर[5] है कि न रुपया देते हैं, न जवाब, न मेहरबानी करते हैं न इताब[6]। ख़ैर इससे क़तै

१. देववाणी। २ कल्पना। ३. मेरी क्या हस्ती है जो मैं सदैव इस संसार में रहूँ। नज़ीरी नहीं रहा और तालिब भी मर गया। यदि कोई पूछे कि गालिब किस वर्ष मरा तो कह दो 'ग़ालिब मुर्द' (सन् १२७७ हि०) 'ग़ालिब मर गया'। ४. नई अतिरिक्त आय। ५. ढंग और चलन ६. अप्रसन्नता।

नज़र की, अब सुनिए उधर की, १८५६ ई० से बमूजिबे तहरीरे वज़ीर[1] अतीय ए शाही[2] का उम्मीदवार हूँ। तकाज़ा करते हुए शर्माऊँ। अगर गुनहगार हूँ, गुनहगार ठहरता, गोली या फाँसी से मरता। इस बात पर कि मे बेगुनाह हूँ, मुकर्रयद[3] और मक़तूल[4] न होने से आप अपना गवाह हूँ। पशगाहे गवर्नमेण्ट कलकत्ता मे जब कोई काग़ज़ भिजवाया है, बक़लम चीफ़ सेक्रेतर बहादुर उसका जवाब पाया है। अब की बार दो किताबे भेजी, एक पेशकशे गवर्नमेण्ट और एक नज़्मे शाही है। न उसके क़ुबूल की इत्तिला, न उसके इर्साल[5] से आगाही है। जनाब विलियम म्यूर साहब बहादुर ने भी इनायत न फ़रमाई। तहरीर मुझको न आई। ये सब एक तरफ़, अब खबरे हैं मुख्तलिफ़। कहते उनको भी कोई हैं कि चीफ़ सेक्रेतर बहादुर लेफ़्टेट गवर्नर हुए। ये कोई नही कहता कि उनकी जगह कौन से साहब आलीशान चीफ़ सेक्रेतर हुए? मशहूर है कि जनाब विलियम म्यूर साहब बहादुर सदर बोर्ड मे तशरीफ़ ले गये। ये कोई नही बताता कि लेफ्टट गवर्नरी के सेक्रेतर का काम किसको दे गये? आप का हाल कोइ नही कहता कि अब कहाँ है? हाँ अज़ रू ए क़यास[6] जानता हूँ कि आप उसी मन्सब और उसी दफ़्तर मे शाद व शादमाँ[7] हैं। जो अब लेफ़्टटी के सेक्रेतर हुए होंगे, उनसे इलाका रहता होगा। म्यूर साहब बहादुर से काहे को मिलना होता होगा। लेफ़्टट गवर्नरी और सदर बोर्ड ये दोनों महकमे इलाहाबाद आ गये या आएँगे। बहरहाल आप अब क्यों आगरे को जाएँगे।

नवाब गवर्नर जनरल बहादुर की खानगी की खबर मे इख्तिलाफ़ है। कोई कहता है कि २० जनवरी को गये, कोई कहता है फ़रवरी मे कूच फ़रमायेगे। मैं तो उधर से भी हाथ धो बैठा, हर तरह अपनी क़िस्मत को रो बैठा।

---

१. मन्त्री के लिखने के अनुसार। २. शाही अनुदान। ३. कारावद्ध। ४. जिसे कत्ल किया गया। ५. भेजना। ६- अनुमान के अनुसार। ७. प्रसन्न और प्रफुल्ल।

मगर ये चाहता हूँ, हक़ीक़ते वाक़ई पर कमाहक़्क़हू[1] इत्तिला हासिल हो, ताकि तसल्ली ए ख़ातिर और तस्कीने दिल[2] हो। अगर इन मतालिब का जवाब, न मुजमल[3] बल्के मुफ़स्सल[4] न बदेर बल्कि जल्द मरहमत कीजिएगा तो गोया मुझको मोल ले लीजिएगा। ज़्यादा इससे क्या लिखूँ ?

६

(३१ जनवरी, १८६०)

क़िब्ल ए हाजात,

क़ते मे जो हज़रत ने इल्हाम[5] दर्ज किया है, वो तो एक लतीफ़ा बसबीले दुआ है, मगर हाँ ये कश्फ़[6] यक़ीनी है और मख़दूम[7] की रोशन दिली और दूरबीनी[8] है कि जो सबालात मैंने ३० जनवरी को किये उनके जवाब तुमने २७ जनवरी को लिखकर भेज दिये। क्यों न कहूँ रोशन ज़मीर[9] हो। अगरचे जवान हो मगर मेरे पीर हो, ख़ुलासा तक़रीर के ३० जनवरी को आख़िरे रोज़[10] मैंने डाक मे ख़त भिजवाया और ३१ को डाक का हरकारा पहर दिन चढे तुम्हारा ख़त लाया। सवालात मे एक सवाल का जवाब बाक़ी रहा, याने जनाब एडमिन्स्टन साहब बहादुर की जगह चीफ़ सेक्रेतर गवर्नमेंट कलकत्ता कौन हुआ ? ये दिल मे पेच व ताब बाक़ी रहा।

किताब के बाब मे जो कुछ लिखा है, वाक़ई ये दुरुस्त और बजा[11] है। जो कुछ वाक़ा हुआ उसको मुफ़ीदे मतलब फ़र्ज़ करूँ, लेकिन अगर इजाज़त

---

१. यथोचित। २. हृदय की सान्त्वना। ३. स्पष्ट। ४. विस्तृत। ५. देववाणी। ६. उद्घाटन। ७. सेव्य। ८. दूर दृष्टि। ९. शुद्ध अन्तःकरण वाले। १०. अपराह्न। ११. उचित।

पाऊँ तो उसी बाब मे ये अर्ज़ करूँ कि पेशगाहे गवर्नमेंट में बतवस्सुत[1] चीफ़ सेक्रेतर बहादुर साबिक़ और लेपटंट गवर्नर बहादुर हाल दो मुजल्लद पेश किए हैं। एक नज़्र गवर्नमेंट और दूसरी के वास्ते ये सवाल कि मेरी इज़्ज़त बढ़ाई जाये और ये मुजल्लद हुज़ूरे शहंशाही मे भिजवाई जाये। अच्छा, नज़्रे गवर्नमेंट मे तो मौलवी इज़्हार हुसेन साहब का वो इज़्हार है, नज़्रे सुलतानी के इर्साल व अदमे इर्साल[3] मे क्या दारोमदार है? दो नुस्के जो उन दोनों साहबों के पेशकश मुक़र्रर हुए उनमे से एक सदर बोर्ड के हाकिम और लेफ़्टट गवर्नर हुए। रद व क़बूल, नफ़री व आफ़रीं[4] कुछ भी नही। क़यासन[5] जो चाहूँ सो करूँ, यक़ीन कुछ भी नहीं।

१७ दिसम्बर १८५६ ई० का लिखा हुआ हुक्म वज़ीरे आज़म का विलायत की डाक मे मुझको आया है कि क़सीदे के सिले[6] और जायज़े के वास्ते कि जो बतवस्सुत लार्ड एलनबरा, सायल[7] भिजवाया है, खिताब और खिलत और पिन्शन की तजवीज़ ज़रूर है, जो हुक्म सादर होगा, सायल को बतवस्सुत गवर्नमेंट उसकी इत्तिला देनी ज़रूरी है। ये हुक्म मौरिखा १७ दिसम्बर १८५६ ई० आखिर जनवरी १८५७ ई० मे मैंने पाया। फ़रवरी, मार्च, अप्रैल खुशी और तवक़्क़ो मे गुज़रे। मई १८५७ ई० में फ़लक ने ये फ़ितना उठाया। अब इस किताब और दूसरे क़सीदे के जाब जा नज़्र करने का ये सबब है कि सायल महकम ए विलायत को याददही करता है और गवर्नमेंट से तहसीन[8] तलब है। जब यहाँ से नवीदे तहसीन[9] नहीं तो विलायत को नज़्र के इर्साल का भी यक़ीन नही। तहसीन और आफरीं[10] से क़तै नज़्र के विलायत जाने का यक़ीन क्यों कर हासिल हो, जहाँ ये तफ़क़्क़ी[11] और बेइल्तिफ़ाती[12] और ये दुश्वारी और ये मुश्किल हो। जी मे आता है कि नवाब गवर्नर जनरल

---

१. द्वारा। २. प्रेषण। ३. न भेजना। ४. नकार और प्रशंसा। ५. अनुमानतः। ६. प्रतिफल। ७. प्रार्थी। ८. प्रशंसा। ९. प्रशंसा का संदेश। १०. धन्यवाद। ११. अन्तर। १२. अकृपा।

बहादुर और हाकिमे सदर बोर्ड को एक अरीज़ा[1] जुदा-जुदा लिखूं। फिर ये सोचता हूँ कि अँग्रेज़ी लिखवाऊँ, फ़ारसी लिखूं और दोनों सूरतों में क्या लिखूं ? कल का भेजा हुआ ख़त और ये आज का ख़त यक़ीन है कि दोनों माअन[2] एक वक़्त में पहुँचे। वो तो जवाब तलब नहीं, इसका जवाब लिखिए और बहुत शिताब[3] लिखिये।

७

(मार्च, १८६० ई०)

हुज़ूर ख़ुदा का शुक्र, फिर आपका शुक्र बजा लाता हूँ कि आपने ख़त लिखा और मेरा हाल पूछा। ये पुर्सिश[4] हुक्म नश्तर का रखती है। अब रगे क़लम की ख़ूनाबा फ़िशानी[5] देखो। गवर्नर आज़म ने मेरठ में दरबार का हुक्म दिया। साहब कमिश्नर बहादुर देहली ने सात जागीरदारों में से जो तीन बक़ीयतुस्सैफ़[6] थे, उनको हुक्म दिया और दरबारे आम में से सिवाय मेरे कोई न था, या चन्द महाजन। मुझको कोई हुक्म न पहुँचा। जब मैंने इस्तिदुआ की तो जवाब मिला कि अब नहीं हो सकता। जब ये सरज़मीन मुख़्तम ख़यामे[7] गवर्नरी हुई, मैं अपनी आदते क़दीम के मुताबिक ख़ीमागाह[8] में पहुँचा। मौलवी इज़हारहुसेन ख़ाँ साहब बहादुर से मिला। चीफ़ सेक्रेतर बहादुर को इत्तिला की। जवाब आया कि फ़ुर्सत नहीं। मैं समझा कि इस वक़्त फ़ुर्सत नहीं, दूसरे दिन फिर गया। मेरी इत्तिला के बाद हुक्म हुआ कि अन्दर आये

---

१. प्रार्थना पत्र। २. एक साथ। ३. शीघ्र। ४. पूछ-ताछ। ५. रक्त रूपी जल की वर्षा। ६. तलवार के घाट न उतारे गये। ७. गवर्नर के मण्डप से अभिमण्डित। ८. मण्डप।

ग़दर[1] मे तुम बाग़ियों से इख़लास[2] रखते थे। अब गवर्नमेंट से क्यों मिलना चाहते हो ? उस दिन चला आया, दूसरे दिन मैंने अँग्रेज़ी ख़त उनके नाम लिखकर उनको भेजा। मज़मून ये कि बाग़ियों से मेरा इख़लास मज़न्नए[3] महज़ है, उमीदवार हूँ कि इसकी तहक़ीक़ात हो, ताकि मेरी सफ़ाई और बेगुनाही साबित हो। यहाँ कि मुक़ामात पर जवाब न हुआ, अब माहे गुज़िश्ता याने फ़रवरी मे पंजाब के मुल्क से जवाब आया कि लार्ड साहब बहादुर फ़रमाते हैं कि हम तहक़ीक़ात न करेंगे। पस, ये मुक़दमा तै हुआ। दरबार व ख़िलत मौक़ूफ़, पिन्शन मसदूद[4] वजह नामालूम। ला मौजूद इल्लिल्लाह मौस्सिर फ़िल बुजूद इल्लिाल्लाह[5]।

१८५५ ई० में नवाब यूसुफ़अली ख़ाँ बहादुर वाली रामपुर के[6] मेरे आशनाए क़दीम है, इस साल (१८५५ ई०) मेरे शागिर्द हुए। नाज़िम उनको तख़ल्लुस दिया गया। बीस-पच्चीस ग़ज़ले उर्दू की भेजते, मै इस्लाह[7] देकर भेज देता। गाह-गाह कुछ रुपया उधर से आता रहता। किले की तनख़ा जारी, अंग्रेजी पिन्शन खुला हुआ, उनके अताया[8] फ़ुतूह[9] गिने जाते थे। जब वो दोनों तनख़ाहे जाती रहीं तो ज़िन्दगी का मदार उनके अतीये पर रहा। बाद फ़तहे देहली वो हमेशा मेरे मकदम[10] के ख़ाहाँ[11] रहते थे। मै उज्र करता था। जब जनवरी १८६० ई० मे गवर्नमेंट से वो जवाब पाया कि ऊपर लिख आया हूँ तो मैं आख़िर जनवरी में रामपूर गया। छै-सात हफ़्ते वहाँ रह कर दिल्ली आया। यहाँ आप का ख़त मुहर्रिर ए ८ मार्च पाया। जवाब भेजा जाता है।

---

१. १८५७ के विद्रोह के समय। २. सम्पर्क। ३. भ्रान्ति। ४. स्थगित। ५. ईश्वर के अतिरिक्त कुछ नहीं है, प्रत्येक प्रभावशाली वस्तु में ईश्वर का अस्तित्व है। ६. रामपुर के शासक। ७. संशोधन। ८. पुरस्कार। ९. अतिरिक्त आय। १०. आगमन। ११. इच्छुक।

ख़ाजा ग़ुलाम ग़ौसख़ाँ 'बेख़बर' के नाम

८

(मार्च, १८६३ ई०)

दर नौमीदी बसे उमीदस्त
पायाने शबे सिया सुपीदस्त[1]

क़िब्ला,

आज आपकी ख़ुशी और ख़ुशनूदी के वास्ते अपनी रूदाद[2] लिखता हूँ।

तूतिया[3]--१८६० ई० मे लार्ड साहब बहादुर ने मेरठ मे दरबार किया। साहब कमिश्नर बहादुर देहली को साथ ले गये। मैंने कहा मै भी चलूँ, फरमाया कि 'नहीं'। जब लश्कर मेरठ से दिल्ली मे आया, मुआफ़िक़ अपने दस्तूर के, रोज़े बुरूदे लश्कर मुख़य्यम[4] मै गया। मीर मुशी साहब से मिला। उनके ख़ीमे मे से अपने नाम का टिकट साहब सेक्रेतरी बहादुर के पास भेजा। जवाब आया कि तुम गदर के दिनों मे बादशाहे बागी की ख़ुशामद किया करते थे, अब गवर्नमेंट को तुमसे मिलना मज़ूर नहीं। मै गदा ए मुबर्रम[5] इस हुक्म पर ममनू[6] न हुआ। जब लार्ड साहब बहादुर कलकत्ता पहुँचे, मैंने कसीदा हस्बे मामूले क़दीम[7] भेज दिया। मय इस हुक्म के वापिस आया कि अब ये चीज़े हमारे पास न भेजा करो। मै मायूस होकर बैठ रहा और हुक्कामे शहर से मिलना तर्क किया।

वाक़ियात[8]--अवाख़िरे माहे गुज़िश्ता[9] यानि फ़रवरी १८६३ ई० मे नवाब

---

१. निराशा मे भी आशा छिपी है। प्रत्येक रात के अंधकार की परिणति प्रकाश में होती है। २. विवरण। ३. भूमिका। ४. जिस दिन लश्कर ने तम्बू ताने। ५. दृढ़ होकर माँगने वाला। ६. निषिद्ध। ७. प्रथा के अनुसार। ८ घटना। ९. गत मास के अन्त मे।

लेफ़्टंट गवर्नर पंजाब दिल्ली आये। अहाली ए शहर[1], साहब डिप्टी कमिश्नर बहादुर, साहब कमिश्नर बहादुर के पास दौड़े और अपने नाम लिखवाये। मैं तो बेगाना महज़[2] और मतरूदे हुक्काम[3] था। जगह से न हिला, किसी से न मिला। दरबार हुआ, हरेक कामगार हुआ। शम्बा, ८ फ़रवरी को आज़ादाना मुशी मनफूल सिंघ साहब के खीमे मे चला गया। अपने नाम का टिकट साहब सेक्रेतरी बहादुर के पास भेजा। बुलाया गया। मेहरबाँ पाकर नवाब साहब की मुलाजमत की इस्तिदुआ[4] की। वो भी हाशिल हुई। दो हाकिम जलीलुलक़द्र[5] की वो इनायते देखी जो मेरे तसव्वुर मे भी न थी।

जुम्ल ए मौतरिज़ा[6]—मीर मुशी लेफ़्टंट गवर्नर से साबिक़ा तार्रुफ़[7] न था, वो बतरीके हुस्ने तलब मेरे ख़ाहाँ[8] हुए तो मैं गया। जब हुक्काम बमुजर्रद इस्तेदुआ मुझसे बेतकल्लुफ़ मिले तो मैं क़यास कर सकता हूँ कि मीर मुशी की हुस्ने तलब बईमा ए हुक्काम[9] होगी। वलिइर्रहमान अल्ताफ़ुन ख़फ़ीया[10]।

बकिया रूदाद ये है कि दोशम्बा दोअम मार्च को सवादे शहर[11] मुख़य्यमे खयाम गवर्नरी हुआ। आखिर रोज़ मैं अपने शफ़ीक़े क़दीम[12] जनाब मौलवी इज़हार हुसेनखाँ बहादुर के पास गया। अस्नाए गुफ़्तगू[13] मे फ़रमाया कि तुम्हारा दरबार व खिलत बदस्तूर बहाल व बरक़रार है। मुतहय्यराना[14] मैंने

---

१. नगर के अधिकारी। २. पराया। ३. अधिकारियों से परित्यक्त। ४. प्रार्थना। ५. प्रतिष्ठित। ६. विरोधी वाक्य। ७. पूर्व परिचय। ८. चाहनेवाला। ९. अधिकारियों के संकेत के अनुसार। १०. ईश्वर की दया अदृष्ट है। ११. नगर के निकट। १२. पुराने मित्र, पुराने उपकारी। १३. बातचीत के समय। १४. चकित भाव से।

पूछा के हज़रत क्यों कर ? हज़रत ने कहा कि हाकिमे हाल ने विलायत से आकर तुम्हारे इलाक़े के सब क़ाग़ज़, अँग्रेज़ी व फ़ारसी देखे और बइजलासे कौन्सिल हुक्म लिखवाया कि असदुल्लाख़ाँ का दरबार और नम्बर और ख़िलत बदस्तूर बहाल व बरक़रार रहे। मैंने पूछा कि हज़रत ये अम्र किस अस्ल' पर मुतफ़र्रे[2] हुआ ? फ़रमाया के हमको कुछ मालूम नहीं। बस इतना जानते हैं कि ये हुक्म दफ़्तर मे लिखवाकर १४ या १५ दिन बाद उधर को रवाना हुए हैं। मैंने कहा--सुभान अल्लाह्--

कारसाज़े मा बफ़िक्रे कारे मा
फ़िक्रे मा दरकारे मा आज़ारे मा[3]

सेशम्बा ३ मार्च को बारह बजे नवाब लेफ़्टट गवनर बहादुर ने मुझको बुलाया, ख़िलत अता किया और फ़रमाया कि लार्ड साहब बहादुर के 'ह का दरबार और ख़िलत भी बहाल है, अम्बाला जाओगे तो दरबार और ख़िलत पाओगे। अर्ज़ किया गया--हुज़ूर के क़दम देखे, ख़िलत पाया, लार्ड साहब का हुक्म सुन लिया, निहाल हो गया। अब अम्बाले कहाँ जाऊँ ? जीता रहा तो और दरबार में कामयाब हो रहूँगा।

कारे दुनिया कसे तमाम न कर्द
हर चे गीरेद मुख़्तसर गीरेद[4]

---

१. आधार, जड़। २. मूल मे से निकलने वाली शाखा। ३. हमारे सहायक (ईश्वर) हमारे कामों में लगा रहता है। हमे अपने कामों की चिन्ता करना व्यर्थ है। ४. ऐसा कोई मनुष्य उत्पन्न नहीं हुआ जिसने सब काम पूरे किये हों। जो कुछ लेना है थोड़ा-सा लो।

८

(३ जनवरी, १८५८ ई०)

जनाबे आली,

एक शेर उस्ताद का मुद्दत से तहबीले हाफ़िज़ा[1] चला आता है—

ज़ालिम तू मेरी सादा दिली पर तो रहम कर
रूठा था तुझसे आप ही और आप बन गया

मैंने अज़ राहे तसर्रुफ़ शेर की सूरत बदल डाली—

इन दिल फ़रेबियों से न क्यों उस पै प्यार आय
रूठा जो बेगुनाह तो बे उज्र मन गया

तुम इख़्वानुस्सफ़ा[2] में से हो। तुम्हारी आज़ुर्दगी औरों की मेहरबानी से ख़ुशतर है।

हाँ, हज़रत, कहिये मुमताज़अलीख़ाँ की सई[3] भी मशकूर[4] होगी? वो मज्मूअ ए उर्दू छपा या छुपा ही रहेगा? अहबाब उसके तालिब हैं, बल्के बाज़ ने तलब को बसरे हदे तकाज़ा पहुँचा दिया है।

मेरा हाल सुनिये। लार्ड कैनिंग साहब ने बादे फ़तहे देहली मेरा क़सीदा मुझको वापिस भेज दिया। साहब सेक्रेतर ने मुझसे कह दिया कि तुम अय्यामे ग़दर[5] में बादशाहे बाग़ी के मुसाहिब रहे, अब गवर्नमेंट को तुम से

---

१. स्मरण शक्ति के अधिकार में। २. बसरा नगर में ९८२ हि० में स्थापित विद्वानों की एक संस्था। इस संस्था के सदस्यों ने विविध विषयों पर ५२ पुस्तकें लिखीं। इस संस्था के सदस्य इख़्वानुस्सफ़ा की कहलाये। लाक्षणिक अर्थ पवित्र भाई है। ३. प्रयत्न। ४. कृतज्ञ। ५. गदर के समय।

राह व रस्मे आमेज़िश[1] मज़ूर नही। नाचार चुप हो रहा। बेहया हूँ, लार्ड एलगिन साहब बहादुर के वक्त मे फिर मुआफ़िक़े मामूल क़सीदा शिमले के मुक़ामात पर भेज दिया। ख़िलाफ़े तसव्वुर वहस्बे दस्तूरे क़दीम चीफ़ सेक्रेतर बहादुर का ख़त आ गया, वही अफ़शानी काग़ज़, वही अल्क़ाब[2], वही तहसीने कलाम, वही इज़हारे ख़ुशनूदी। अब जो ये अमीरे कबीर[3] वाइसराय क़लमरवे हिन्द[4] हुए, मै ख़िदमते देरीना बजा लाया। १३ फरवरी १८६४ ई० हाल को क़सीदा मयअर्ज़दाश्त इर्साल किया। आज तक, कि, ७ मार्च की है, जवाब नहीं पाया। बावजूद सवाबिक़े मारिफ़त रस्मे क़दीम का अमल मे न आना ख़ातिर आशोब[5] क्यो न हो ?

बेदिल नयम हनोज़ बेबीनम चे मी शवद[6]।

१०

(१८६४ ई०)

किब्ला,

मेरा एक शेर है—

ख़ुद पेशे ख़ुद कफ़ीले गिरफ़्तारीए मनस्त
हरदम ब पुरसिशे दिले मायूस मी रसद[7]

ये मामला मेरा और आपका है। ख़ारिज[8] से मसमूअ[9] हुआ कि मैंने जो

---

१. मिलना। २. उपाधियाँ। ३. बड़ा अमीर। ४. हिन्दुस्तान देश के। ५. बेचैनी का कारण। ६. मै अभी उदास नहीं हुआ, आगे जो होगा देखूंगा। ७. मेरी गिरफ़्तारी स्वयं मेरा भरण-पोषण करती है, वही मेरे निराश हृदय की पूछ-ताछ करती है। ८. त्यक्त। ९. अंगीकृत।

अग़लात 'बुरहाने क़ातै'[1] के निकाल कर एक नुस्खा मौसूम[2] ब 'कातै बुरहान' लिखा है और एक मुजल्लद उसका आपको भी भेज दिया है, आप उसकी तरदीद[3] मे कोई रिसाला[4] लिख रहे है । अगर चे बावर नहीं आया, लेकिन अजब आया । एक मौलवी नजफ़अली है, बावजूदे फ़ज़ीलते[5] इल्मे अरबी, फ़ारसी मे उनका नज़ीर नहीं । वो जो एक शख्स मजहूलुलहाल[6] ने अहले देहली में से मेरे कलाम की तरदीद मे किताब तसनीफ की है मुसम्मी[7] ब 'मुहर्रिके कातै बुरहान' । उन्होंने उसकी तौहीन और मस्विदे की तफ़्ज़ीह[8] मे दो जुज्व का एक नुस्खा मुख्तसर लिखा है और एक तालिबे इल्म मुसम्मी व अब्दुलकरीम ने सआदतअली मौल्लिफ[9] "मुहर्रिके कातै" से सवालात किये हैं और एक महज़र उसने बफ़हवा ए उल्मा ए शहर[10] मुरत्तिब[11] किया है। एक मेरे दोस्त ने बसर्फे ज़र[12] उसको छपवाया है । एक नुस्खा उसका आज इसी ख़त के साथ बमबीले पार्सल इर्साल किया है।

इस शहर मे एक मेला होता है, फूलवालों का मेला कहलाता है । भादो के महीने मे हुआ करता है । उमरा ए शहर से लेकर अहले हिर्फा[13] तक कुतुब जाते है, दो-तीन हफ़्ते तक वही रहते है । मुसलमान व हुनूद[14] दोनो फिर्क़े की शहर मे दुकाने बन्द पड़ी रहती है । भाई ज़ियाउद्दीनखां और ज़हाबुद्दीनखां और मेरे दोनों लड़के सब क़ुतुब गये हुए है । अब दीवानखाने मे एक मै हूँ और एक दारोग़ा और एक बीमार खिदमतगार । भाई-साहब वहाँ से आएँगे तो मुक़र्रर[15] आप को ख़त लिखेंगे । बडे पहाड़ से उतरे, छोटे पहाड़ पर चढ गये । अदम तहरीर[16] की वजह ये है ।

---

१. बुरहाने क़ातै नामक कोश की अशुद्धियाँ । २. नामक । ३. खण्डन । ४. पुस्तिका । ५. बुज़ुर्गी । ६. उदास । ७. नामक । ८. निन्दा । ९. सम्पादक । १०. नगर के विद्वानों के ढग से । ११. संकलित । १२. द्रव्य-व्यय । १३. कारीगर । १४. हिन्दू (ब. व.) । १५. निश्चित रूप से । १६. न लिखना ।

ख्वाजा ग़ुलाम ग़ौस ख़ाँ 'बेखबर' के नाम

११

(१८६४ ई०)

मैं सादा दिल आज़ुर्दगी ए यार से ख़ुश हूँ
याने सबके शौक़ मुकर्रर न हुआ था

पीर व मुर्शिद,

ख़फा नही हुआ करते। यो सुना मुझे बावर न आया, यहाँ तक तो मैं मौरिदे इताब[1] नही हो सकता। झगड़ा इस्तेजाब[2] पर है, महले इस्तेजाब वो है कि आपका दोस्त कहता है कि मीर मुशी नवाब लेफ़्टट गवर्नर बहादुर मेरे शागिर्द हैं और वो "क़ातै बुरहान" का जवाब लिख रहे हैं। औलिया का ये हाल है वाए बरहाले हम अश्क़िया[3] के। ये हिकायत है, शिकायत नहीं। मैं दुनियादारी के लिबास मे फ़क़ीरी कर रहा हूँ, लेकिन फ़क़ीरे आज़ाद हूँ, न शय्याद[4] न कय्याद[5]। सत्तर बरस की उम्र है, बेमुबालग़ा कहता हूँ। सत्तर हज़ार आदमी नज़र से गुज़रे होंगे। ज़ुम्र ए खास[6] मे से, अवाम[7] का शुमार नहीं। दो मुख़लिस सादिक़ुल विला[8] देखे—एक मौलवी सिराजुद्दीन रहमतुल्ला अलै[9]; दूसरा मुशी गुलाम ग़ौस सल्लमुल्लाह ताला[10] लेकिन वो मरहूम हुस्ने सूरत नही रखता था और ख़ुलूसे इख़्लास[11] उसका खास मेरे साथ था। अल्लाह्, अल्लाह्, दूसरा दोस्त ख़ैरख़ाहे ख़ल्क़[12], हुस्न व जमाल[13] चश्मे

---

१. क्रोध का पात्र। २. आश्चर्य। ३. हम अभागों पर धिक्कार है। ४. कलन्दर, फ़क़ीरों का एक सम्प्रदाय। ५. ढोंगी। ६. विशेष समूह। ७. साधारणजन। ८. सच्चे निश्छल मित्र। ९. उन पर ईश्वर की कृपा हो। १०. ईश्वर रक्षा करे। ११. सच्चा स्नेह। १२. संसार का शुभेच्छु। १३. सौन्दर्य।

बददूर[1] कमाले महरो वफ़ा सिद्को सफ़ा[2] नूरुन् अली नूर[3]। मैं आदमी नहीं आदमशनास[4] हूँ—

निगहम नक़ब हमी ज़द बनिहाँ खान ए दिल
मुज्दा बाद अहले रिया रा के ज़े मैदाँ रफ़्तम्[5]

इनायत, मेहर व मुहब्बत जिसके मलेके[6] का तुमको मालिक समझता हूँ वो बनिस्बत अपने इस क़द्र यक़ीन करता हूँ कि पहले दो आदमियों को अपना मातबदार समझा हुआ था। एक को तो मैं रो लिया, अब अल्लाह् आमीन का एक दोस्त रह गया। दुआएँ माँगता हूँ कि, खुदाया, उसका दाग न मुझे दिखाइयो। उसके सामने मरूँ। मियाँ, मैं तुम्हारा आशिके सादिक[7] हूँ। भाई अभी कुतुब से नहीं आये। 'दाफे हिजयान' के दो मुजल्लद और भेज दूँगा।

१२

(१८६४ ई०)

पीर व मुर्शिद,

कोई साहब डिप्टी कलक्टर हैं कलकत्ता मे, मौलवी अब्दुलग़फ़ूरखाँ उनका नाम, और 'नस्साख़' उनका तखल्लुस है। मेरी उनकी मुलाक़ात नहीं। उन्होंने अपना दीवान छापे का मौसूम ब 'दफ़्तरे बेमिसाल' मुझको भेजा।

---

१. तुम्हे नज़र न लगे। २. सच्चाई। ३. अच्छाई पर अच्छाई सोने पर सुहागा। ४. मनुष्य को पहचानने वाला। ५. अन्तःकरण के आन्तरिक भाग से मेरी दृष्टि ने यह ध्वनि की कि छली और कपटी लोगों को शुभ समाचार मिल जाये—मैं मैदान से चला गया हूँ। ६. कौशल, रुचि। ७. सच्चा प्रेमी।

उसकी रसीद मे ये ख़त मैंने उनको लिखा। चूँकि ये ख़त मज्मूअ ए नस्रे उर्दू[1] के लायक़ है, आपके पास इर्साल करता हूँ और हाँ हज़रत, वो मज्मूआ छपेगा बिलफ़तह[2] या छुपेगा बिलज़म्म[3]? छप चुका हो तो हक़्के तस्नीफ़[4] की जितनी जिल्दे मुंशी मुम्ताज़अलीख़ाँ साहब की हिम्मत इक़्तज़ा[5] करे फ़क़ीर को भेजिये। वस्सलाम।

१३

(७ जुलाई, १८६५ ई०)

क़िब्ला,

आपका ख़त पहला आया और मैं उसका जवाब लिखना भूल गया। कल दूसरा ख़त आया मगर शाम को उसी वक़्त पढ़ लिया। आदमी के हवाले किया। उसने आज सुबह दम मुझको दिया। मैं जवाब लिख रहा हूँ। बाद इख़्तितामे तहरीर[6] मुअनवन[7] करके डाक मे भिजवा दूँगा।

वाली ए रामपूर को ख़ुदा सलामत रखे। अप्रैल, मई, इन दोनों महीनों का रुपया मुआफ़िक़ दस्तूरे क़दीम आया। जून माहे आइन्दा का रुपया ख़ुदा चाहे तो आ जाये। जुमा, ७ जुलाई है, मामूल ये है कि दसवी–बारहवीं को रईस का ख़त मयहुंडी आया करता है। मैंने क़सीद ए तहनियते जुलूस भेजा, उसका जवाब आ गया। अब मैं नज़्म व नस्र[8] का मस्विदा नही रखता।– दिल इस फन से नफ़ूर[9] है। दो-एक दोस्तों के पास उसकी नक़ल है, उनको इस

---

१. उर्दू गद्य का सकलन। २ अकार युक्त (छ)=(छपेगा)। ३. उकारयुक्त (छ)=छुपेगा। ४. लेखन का पारिश्रामिक। ५. सामर्थ्य के अनुसार। ६. लिखने की समाप्ति पर। ७. शीर्षक। ८. पद्य और गद्य। ९. घृणा करने वाला।

वक़्त कहला भेजा है, अगर आज आ गया कल, और अगर कल आया, परसों भेज दूँगा । भाई अमीनुद्दीनखाँ के इसरार[1] से खुसरो की गज़ल पर एक गजल लिखी है । अलाउद्दीनखाँ ने उसकी नक़ल उनको भेज दी है । मैं दीवान पर नहीं चढाता, मस्विदा भेजता हूँ । तक़्दीम[2] व ताख्वीर[3] हिंदसों[4] के मुताबिक मलहूज रहे । गर्मी की शिद्दत से हवास बजा[5] नही, माहाजा अमराज़े जिस्मानी[6] व आलामे रूहानी[7]।

१४

(१० जून, १८६६ ई०)

बन्दए गुनहगार शर्मसार[8] अर्ज़ करता है कि परसों गाज़ियाबाद का उठा हुआ ग्यारह बजे अपने घर पर मिम्ले बला ए नागहानी[9] नाजिल हुआ हूँ--

बायद के कुनम हज़ार नफरी बरख़ीश
अम्मा बजबाने जाद ए राहे वतन[10]

ख़ाजा साहब की रेहलत[11] का अन्दोह[12] बक़दरे क़ुर्ब[13] व क़राबत[14] आपको और व अन्दाज़े मेहर व मुहब्बत मुझको। वो मगफर[15] मेरा क़द्रदान और मुझ पर मेहरबान था। हक़ताला उसको आला इल्लिईन[16] मे बसबोले दवाम[17] क़याम

---

१. अनुरोध । २. बढ़ाना । ३. ढील, कमी । ३. अंकों । ५. ठीक, स्थान पर । ६. शारीरिक रोग । ७. आत्मिक वेदनाएँ । ८. सदोष और लज्जित सेवक । ९. ईश्वरीय कोप के समान । १०. मुझे अपने ऊपर असख्य बार धिक्कार करना चाहिए किन्तु यह धिक्कृति देशवासियों के मुँह से निकले । ११. मृत्यु । १२. शोक । १३. निकटता के अनुसार । १४. सम्बन्ध । १५. स्वर्गीय । १६. स्वर्ग में स्थान दे । १७. स्थायी रूप से ।

दे। रामपूर हो मे था कि 'अवध अखबार' मे हज़रत की गज़ल नज़र फ़िरोज़[1] हुई। क्या कहना है! ज़बदा[2] इसको कहते है, जिद्दतेतर्ज़[3] इसका नाम है। जो ढंग ताज़ा निवायाने ईरान[4] के ख़याल मे न गुज़रा था, वो तुम बरूए कार लाये। खुदा तुमको सलामत रखे और मेरे और दखनी साहिबे "बुरहान कातै" के झगडे मे बखिलाफ और फारसीदानो के तौफीक़े इन्साफ़[5] अता करे। लो अब इसका जवाब जल्द भेजो ता[6] ये तरीक़ा मुसलसिल हो जाये।

१५

मौलाना, बन्दगी।

आज सुबह के वक़्त शौके दीदार मे बेइस्तियार, न रेल, न डाक, तौसने हिम्मत[7] पर सवार चल दिया हूं। जानता हूँ के तुम तक पहुँच जाऊँगा, मगर ये नही जानता कि कहाँ पहुँचूंगा। इतना बेखुद हूं कि जब तक तुम जवाब न दोगे, मै न जानूंगा कि कहाँ पहुँचा और कब पहुँचा।

आप का पहला खत रामपूर से दिल्ली आया, मै राह मे था। फ़िर दिल्ली से खत रामपूर पहुँचा, मै वहाँ भी न था। खत दिल्ली रवाना हुआ। अब कई दिन हुए कि मैने डाक से पाया। इस हाल मे कि मै बीमार था, माहाज़ा जाड़े की शिद्दत, महावट का महीना, धूप का पता नही, पर्दे छूटे हुए, नशेमन[8] तारीक[9], आज नय्यरे आज़म[10] की सूरत नज़र आई। धूप मे बैठा हूँ, खत लिख रहा हूँ। हैरान हूँ कि क्या लिखूं? इस खत के मज़ामीन अन्दोहफ़िज़ा[11] ने दिल को मुज्महिल[12] कर दिया। जानता था कि ख़ाज़ासाहब मग़फ़ूर तुम्हारे मामूं

१. चमकदार, आकषक। २. आविष्कारें। ३. शैली का आविष्कार। ४. ईरान निवासी। ५. न्याय की सामर्थ्य। ६. जिससे। ७. साहस का अश्व। ८. घर। ९. अन्धकारपूर्ण। १०. सूर्य। ११. दुःखद विषय। १२. क्लान्त।

है, मगर उनके और तुम्हारे मुआमलात मेहर व विला[1] जैसे कि तुम्हारे तहरीर से अब मालूम हुए, मेरे दिल नशी न थे। ऐसे मुहीब का फ़िराक़ और फिर बक़ैदे दवाम[2] क्यो कर जाँगुज़ा[3] न हो। हक़ताला उनको बख़्शे और तुमको सब्र दे।

हज़रत मैं भी अब चिराग़े सहरी[4] हूँ। रज्जब १२८२ हि० हाल के आठवी तारीख से इकहत्तरवाँ साल शुरू हो गया। ताक़त सल्ब[5], हवास मफ़क़ूद[6], अमराज़ मस्तूली[7] बक़ौले निज़ामी—

यके मुर्दा शरसम् बमर्दी र वां

आज मैं और भी बातें करता मगर मेरा ख़ास तराश[8] आ गया। महीने भर से हजामत नही बनवाई। ख़त लपेट कर डाक मे भेजता हूँ और ख़त बनवाता हूँ।

१६

(१८६६ ई०)

क़िब्ला,

पीरी व सद ऐब[9] सातवी दहाके के महीने गिन रहा हूँ। क़ौलज[10] आ दौरी था, अब दायम हो गया। महीने भर मे पांच-सात बार फ़िजूले मुज़्तमिआ दफ़ा हो जाते है और यही मंशा ए हयात[11] है। ग़िज़ा कम होते-होते अग

---

१. प्रेम और मित्रता के सम्बन्ध। २. वियोग। ३. आजीवन कारावास ४. प्राणलेवा। ५. प्रातःकाल का दीपक। ६. दूरीकृत। ७. लुप्त ८. शक्तिशाली। ९. नाई। १०. बुढ़ापा और सौ दोष। ११. पसली के नीचे उठने वाला दर्द। १२. संचित। १३ जीवन की इच्छा।

मादूम[1] न कहो तो बमंजिले मफ़्क़ूद[2] कहो। फिर गर्मी ने मार डाला। एक हरारते ग़रीबा[3] ज़िगर में पाता हूँ। अगर चे जुरआ जुरआ[4] पीता हूँ, मगर सुबह से सोते वक़्त तक नहीं जानता कि कितना पानी पी जाता हूँ।

मेरे एक रिश्ते के भतीजे ने 'बोस्ताने ख़याल' का उर्दू में तर्जुमा किया है मैंने उसका दीबाचा[5] लिखा है। एक दोवर्क़ा उसका बसूरते पार्सल बल्कि बहरयते ख़त[6] भेजता हूँ। आपका मक़सूद दीबाचा है, सो नक़ल कर लीजिए। मेरा मुद्दआ इस दोवर्क़े के इर्साल से ये है कि अगर आप के पसन्द आवे या और अश्ख़ास ख़रीद करना चाहें तो छै रुपये क़ीमत और महसूल बजिम्मा ख़रीदार है।

१७

क़िल्ला,

मैं नहीं जानता कि इन रोज़ों में बकौले हिन्दी अख़्तर शनासों[7] के कौन-सी खोटी गिरह आई हुई है कि हर तरफ़ से रज व ज़हमत[8] का हुजूम है। मौलवी साहब से मेरी एक मुलाक़ात हुई, जब वो दिल्ली आये थे और मीर ख़ैराती के घर उतरे हुए थे। शुरफ़ा[9] में तारुफ़[10] बिना ए मुहब्बत[11] ब मवद्दत[12] है, चे जाए आँ कि मुआनिक़ा[13] और मुकालिया[14] और मुशाअरा[15] वाक़े हुआ हो। रोज़े मुलाक़ात से उस दिन तक के हज़रत दकन को रवाना हों, कोई अम्र ऐसा कि बाअमे नाख़ुशी[16] का हो, दरमियान नहीं आया और मेरे इस क़ौल की, इस राह से कि मौलवी साहब आपके हमनशी व हमदम थे और मुझमें-आप में पैवन्दे

---

१. नष्ट। २. लुप्त। ३. बाहर की गर्मी। ४. घूंट-घूंट। ५. भूमिका। ६. पत्र के रूप में। ७. ज्योतिषियों। ८. कष्ट। ९. कुलीन लोग। १० परिचय ११ स्नेह का कारण। १२. मित्रता। १३. आलिंगन। १४. वर्तालाप। १५. कवि-सम्मेलन। १६. अप्रसन्नता का कारण।

बिलाए रूहानी[1] मुतहक़्क़िक़[2] है, आप भी गवाह हो सकते हैं। अगर खुदा न खास्ता[3] मुझ मे उनमे रज पैदा होता तो आप बहुत जल्द इस्लाह बैनुज़्ज़ातैन[4] की तरफ मतवज्जेह होते। अब सुनिये हाल मुंशी हबीबुल्ला का, मैंने उनको देखा हो तो आँखें फूटे। तीन-चार बरस हुए कि नागाह एक खत हैदराबाद से आया, उसमे दो गज़ले। खत का मज़मून ये कि मै मुख्तारुल मुल्क के दफ़्तर मे नौकर हूँ। आपका तलम्मुज़[5] इख्तियार करता हूँ। इन दोनों ग़ज़लों को इस्लाह दीजिये। इस अम्र के वो बादी[6] नही, बरेली और लखनऊ और कलकत्ता और बम्बई और सूरत से अक्सर हज़रत नज्म व नस्र फ़ारसी और हिन्दी भेजते रहते है। मै खिदमत बजा लाता हूँ और वो साहब मेरे हक्क व इस्लाह[7] को मानते है। कलाम का हुस्न व क़ुब्ह[8] मेरी नज़र मे रहता है और हरेक का पाया और दस्तगाह[9], फ़ने शेर[10] मे, मालूम हो जाता है। आदात[11] व इन्दियात[12] अदमे मुलाक़ात ज़ाहिरी[13] के सबब मै क्या जानू। आमदम बरसरे मुद्दआ[14] मुंशी हबीबुल्ला 'ज़का' के अशार आते रहे और मै इस्लाह देकर भेजता रहा। बाद वारिद होने मौलवी साहब के एक गज़ल उनकी आई और उन्होने ये लिखा कि मौलवी गुलाम इमाम शहीद अकबराबादी की ग़ज़ल पर ये गज़ल लिखकर भेजता हूँ। मैंने हस्बेमामूल ग़ज़ल को इस्लाह देकर भेजा और ये लिखा कि मौलाना शहीद अकबराबाद के नही, लखनऊ और इलाहाबाद के है। इस कलमे[15] से ज़्यादा कोई बात मैंने नही लिखी। इसमे से तौहीन के माने मुस्तबत[16] हों तो मै उनका मुस्तहन[17] सही। अब मै

---

१. हार्दिक मित्रता। २. निश्चित, प्रमाणित। ३. ईश्वर न चाहे। ४. दोनों के बीच परिमार्जन। ५. शिष्यत्व। ६. आरम्भकर्त्ता। ७. संशोधन। ८. सौन्दर्य और दोष। ९. सामर्थ्य। १०. कवित्व। ११. स्वभाव। १२. भावना। १३. प्रत्यक्ष भेट के अभाव मे। १४. विषय पर आता हूँ। १५. शुद्ध, बात। १६. परिणमित, निकला हुआ। १७. अपमान करने वाला।

नही जानता कि मुंशी साहब ने मौलवी साहब से क्या कहा और मौलवी ने आप को क्या लिखा।

१८

(१८६६ ई०)

हज़रत पीर व मुर्शिद,

इससे आगे आपको ख़त लिख चुका हूँ कि मुंशी मुम्ताज़अलीख़ाँ साहब से मेरी मुलाक़ात है और वो मेरे दोस्त हैं। ये भी लिख चुका हूँ कि मैं साहबे फ़र्राश हूँ, उठना-बैठना नामुमकिन है, ख़ुतूत लेटे-लेटे लिखता हूँ। इस हाल मे दीबाचा क्या लिखूं ? ये भी लिख चुका हूँ कि तफ़्ता को मैंने ख़त नही लिखा। अशार उनके आये, इस्लाह दे दी, मशाए इस्लाह जा बजा हाशिये पर लिख दिया। कल जो इनायतनामा आया उसमें भी दीबाचा का इशारा और तफ़्ता के ख़ुतूत का हुक्म मुन्दरिज[1] पाया। नाचार तहरीरे साबिक़ का इआदा[2] करके हुक्म बजा लाया।

नाज़रीने[3] 'क़ातै बुरहान' पर रोशन होगा कि 'नामुराद' और 'बेमुराद' का ज़िक्र मबनी[4] इस पर है कि अब्दुलवासे 'हाँसवी' बेमुराद को सही और नामुराद को ग़लत लिखता है। मै लिखता हूँ कि तरकीबें दोनों सही लेकिन 'बेमुराद' गनी[5] को कहते है और नामुराद मुहताज को, अब आपके नज़दीक अगर इन दोनों का महले इस्तेमाल[6] एक ही हो तो मेरा मुद्आए अस्ली याने 'नामुराद' की तरकीब का अलैरग्म[7] अब्दुलवासे के सही होना फ़ौत नहीं। शेर मिर्ज़ा साएब—

---

१. अंकित। २. दोहराना। ३. पाठक। ४. निर्भर। ५. सम्पन्न। ६. प्रयोग-स्थल। ७. विपरीत।

नामुरादी ज़िन्दगी बरख़ीश आसाँ कर्दनस्त
तर्के जमियत दिले ख़ुदरा बसामाँ कर्दनस्त[1]

यहाँ 'नामुरादी' 'बेमुरादी' के माने क्यों कर देगी ? अग़नियाः[2] ख़ाह अहले तवक्कुल[3], ख़ाह अहले तमव्वुल[4], मुतवल्लीन पर कभी काम आसान नहीं होता, बल्कि मुख़लिसों से ज़्यादा उन पर मुश्किले हैं। रहे अहले तवक्कुल उनकी सिफ़ते और हैं। वो अहलुल्लाह् है, मुक़र्रबाने बारगाहे किब्रिया[5] हैं। दुनिया पर पुश्ते पा[6] मारे हुए है। काम उन पर कब मुश्किल था कि उन्होंने उसको आसान कर दिया ? 'नामुराद' सीग़ए मुफ़रद[7] है मसाकीन का, असनाफ़े मसाकीन[8] का, असनाफ़े मसाकीन की शरह[9] ज़रूर नहीं। सख़्तीकशी, बेनवाई, तिहीदस्ती, गदाई ये औसाफ़[10] हैं मसाकीन के। इन सिफ़ात मे से एक सिफ़त जिसमे पाई जाये वो मिसकीं वो नामुराद। अलबत्ता मसाकीन पर, न एक काम बल्कि सब काम आसान है। न पासे नामूस[11] व इज़्ज़त, न हुब्बजह[12] व...मुकनत[13]। न किसी के मुद्दई, न किसी के मुद्दआअलैं। दिन-रात में दो बार रोटी मिली बहुत ख़ुश, एक बार मिली बहरहाल ख़ुश। ख़ुदा के वास्ते मौलाना साहब के शेर मे से नामुराद बमानी कसे के हीच मुराद न दाश्ता बाशद[14] क्यों कर साबित होता है ? मसाकीन की ज़िन्दगी जैसा कि मैं ऊपर लिख आया हूँ आसान गुज़रती है या अग़्निया की ? रहा मौलवी मानवी अलैउर्रहम का ये शेर—

---

१. निराशा जीवन को सरल बनाती है। समाज से दूर रहने पर हमारा हृदय सुख की सामग्री जमा कर लेता है। २. सम्पन्न लोग (ब. व.)। ३. ईश्वर-विश्वासी लोग। ४. धनी लोग। ५. ईश्वर के निकट निवास करने वाले। ६. लात। ७. असंयुक्त। ८. भेद की विशेषताएँ। ९. व्याख्या। १०. विशेषताएँ। ११. लज्जा। १२. प्रेमी। १३. सामर्थ्य। १४. जिसका कोई उद्देश्य न हो।

ख़ाजा ग़ुलाम गौशख़ाँ 'बेख़बर' के नाम

आक़िलाँ अज़ बेमुरादीहाए ख़ीश
बाख़बर गश्तन्द अज़ मौलाए ख़ीश[1]

मैंने मसनवी के एक नुस्ख़े में आकिलाँ की जगह आशिक़ाँ देखा है। बहर सूरत माने ये हैं कि उश्शाक़[2] या उक़ला[3] बाद रियाज़ते शाक़्क़ा[4] मासिवाए अल्लाह से एराज़[5] करके बेमुराद और बेमुद्दआ हो गये। ये पाय ए तस्लीम व रज़ा है, अलबत्ता इसे रुतबे के आदमी को ख़ुदा से लगाव पैदा होगा।

बाख़बर गश्तन्द अज़ मौलाए ख़ीश

यहाँ भी 'बेमुरादी' से 'नामुरादी' के माने नहीं लिये जाते मगर हाँ--

बेमुरादी मोमिनाँ अज़ नेको बद[6]

दूसरा मिस्रा--

दर बकुल्ली बेमुरादत दाश्तीं[7]

इन दोनों मिस्रों में 'नामुराद' और 'बेमुराद' के माने में ख़ल्त[8] वाक़े हो गया है। ख़ैर 'बेमुराद' और 'नामुराद' एक सही। हरचन्द दूसरे मिस्रा ए मौलवी में बेमुराद के माने बेहाजत के दुरुस्त होते हैं। मगर—

मन के रिन्दम शेव ए मन नीस्त बहस[9]

ज़्यादा तकरार क्यों करूँ? माहाज़ा मिस्रा ए अव्वल की कुछ तौज़ीह[10]

---

१. बुद्धिमान् व्यक्ति अपनी असफलताओं के कारण ईश्वर से परिचित हो गये। २. प्रेमी (ब व.)। ३. बुद्धिमान् (ब. व.)। ४. कठिनाई। ५. विमुखता। ६. ईश्वर भक्त (मुसलमान) पाप-पुण्य से पूरी तरह तटस्थ हो गये। ७. उसने पूर्णतया निष्काम बना दिया। ८. सम्मिलन। ९. जब कि मैं रिन्द (मद्यप, मस्त) हूँ, मेरा काम विवाद करना नहीं। १०. स्पष्टीकरण, व्याख्या।

भी नहीं कर सकता। 'नामुराद' की तरकीब की सेहत अलैरग़्म अब्दुल वासे साबित हो गई। फ़सबतुल मुद्दआ[1] कमाल ये के मानिन्द 'नाचार' व 'बेचारा' और 'नाइन्साफ़' और 'बेइन्साफ़' के नामुराद व 'बेमुराद' का भी मूरिदे इस्तेमाल[2] मुश्तरिक[3] रहा। वस्सलाम।

१६

(१८६६ ई०)

बन्दा पर्वर,

अगर एक बन्द ए क़दीम उम्र भर फ़र्मां पिज़ीर[4] रहा हो, बुढ़ापे मे एक हुक्म बजा न लाये तो मुजरिम नही हो जाता। मजमूअए नस्रे उर्दू[5] का इतिबा[6] अगर मेरे लिखे हुए दीबाचे पर मौक़ूफ़ है तो उस मजमूए का छप जाना, बिल फ़तह[7] मै नही चाहता बल्कि छुप जाना बिल जर्म[8] चाहता हूँ। सादी अलैइर्रहमा फ़रमाते है—

रस्मस्त के मालिकाने तहरीर
आज़ाद कुनन्द बन्द ए पीर[9]

आप भी इसी गिरोह याने मालिकाने तहरीर मे से है; फिर इस शेर पर अमल क्यों नही करते? हज़रत वो शेर बंगाली ज़बान का लो। १८२९ ई० में ज़ियाफ़ते तब ए अहबाब[10] के वास्ते कलकता से अर्मुग़ाँ[11] लाया हूँ। सही यों है—

---

१. हमारी बात सिद्ध हो गई। २. प्रयोगस्थल। ३. संयुक्त। ४. आज्ञापालक। ५. उर्दू गद्य का सकलन। ६. मुद्रण। ७. अकारयुक्त (छपना)। ८. उकारयुक्त (छपना)। ९. पुराने समय से यह परम्परा है कि स्वामी बूढ़े दास को स्वतन्त्र कर देता है। १०. स्वजन लोगों की रुचि का प्रीतिभोज। ११. उपहार।

ख़ाजा ग़ुलाम गौशख़ाँ 'बेख़बर' के नाम

तुम कहे थे रात मे आएँगे सो आए नहीं
क़िब्ला बन्दा रात भर उस ग़म से कुछ खाये नहीं

वस्सलाम बउलूफ़िल एहतराम[1]। १२।[2]

२०

(१८६६ ई०)

क़िब्ला,

कल ख़त आया। आज जवाब लिखता हूँ। पहले आपका एक फ़िक्रा लिख कर इतना हँसूँ कि पेट मे बल पड़ जाएँ और आँख से आँसू निकल आएँ। फ़िक्रा—बुढ़ापे मे क्या जानिये कहाँ की हरारत मिज़ाज मे आ गई है" फ़क़्त। क्यों साहब, तुमने बूढ़ो मे अपना नाम लिखवाया तो मुझको लाज़िम है मै अपने को अमवात[3] मे गिनूँ। तुम्हारी उम्र मेरे नज़दीक पचास से मुतजाविज़[4] न होगी। अगर तजावुज़[5] किया होगा तो दो-तीन बरस से वो तजावुज़ ज्यादा न होगा। भाई ज़ियाउद्दीनख़ाँ और तुम हमउम्र हो। वो कुछ कम पचास, तुम कुछ ऊपर पचास। अभी दोनों साहबों को एक सौ बीस बरस मे से सत्तर बरस या कुछ कम सत्तर बरस बाक़ी है।

'बिना ब आब रसीदन' लाज़मी[6] और "बिना ब आब रसादन' मुताद्दी[7] ब इज्माए जम्हूर इज़दाद[8] मे से है, हम बमानी इस्तेहकाम[9] व हम बमानी इन्हिदाम[10]। दर सू ते इस्तेहकाम नीव का गहरा खोदना मलहूज़ है और दर

---

१. बहुत सम्मान के साथ अभिवादन। २. समाप्ति का चिह्न (१२)। ३. मृत (ब० व०) ४. अधिक। ५. आधिक्य। ६. अकर्मक (क्रिया)। ७. सकर्मक (क्रिया)। ८. सर्वमान्य। ९. दृढ़ता। १०. ध्वस।

सूरते इन्हिदाम लुत्म ए अमवाजे सैलाब[1] मद्दे नज़र है। आपके लिखे हुए दोनों शेर मुफ़ीदे माने ख़राबी है। सायब--

बिनाए उम्रे मसीहो खिज्र ब आब रसीद[2]

याने वीरान हो गई, ढै गई, हालाँ कि वो यक़ीनन जावदानी[3] थी।

हनोज़ तिश्न ए ख़ूनस्त तेग़े मिज़्गानिश[4]

बाग़ाँ के तेग़े मिज़ा ने दो ज़िन्द ए जावीद[5] को मारा मगर अब तक तिश्न ए ख़ून[6] है। तिश्ना बमाने मुस्ताक़ और ख़ून बमाने क़त्ल और बिना ए उम्र बआब रसीदन इस्तिआर ए इहलाक[7]।

हज़ार मैकदा रा मुहतसिब ब आब रसान्द
बिना ए मौम ए शय्यद हम चुनाँ बरपास्त[8]

बिना ए मैकदा ग़लत, हज़ार मैकदा सही है। कलीम के दीवान में मौजूद है। बमाने इस्तेहकाम नेमतख़ाँ आली कहता है--

नीस्त मुहकम गर रसद बुनियादे दुनिया ता बआब
चूँ हबाब ईं खानए बे बुनियाद मी साज़ेम मा[9]

---

१. बाढ़ की लहरों का प्रहार। २. ईसामसीह और खिज्र (एक चिरजीवी देवदूत) के जीवन का आधार पानी में बह गया है। ३. स्थायी। ४. उसकी पलकों की तलवार अभी ख़ून की प्यासी है। ५. अमर। ६. रक्त की प्यास। ७. ध्वंस का रूपक। ८. मुहतसिब (पाप-पुण्य लेखक, चित्रगुप्त) ने हजारों मधुशालाओं को पानी में डुबा दिया, किन्तु धोखेबाजी के मन्दिर की नींव ज्यों की त्यों बनी हुई है। ९. यदि संसार की नींव पानी तक चली जाये तब भी स्थिर नहीं रहती। हम पानी के बुदबुदे की भाँति निराधार घर की रचना करते हैं।

सायब कहता है--

चेगोना शमए तजल्ली ज़ रश्क न गुदाज़द
रुख़े तो खान ए आईना रा ब आब रसान्द[1]

बनून मौकूफ़। १२[2]।

ग़ालिब कहता है कि असातिज़ा[3] के कलाम के मुशाहदे[4] में अगर तवग्गुल[5] रहे, तो हजारहा बात नई मालूम होती है। मैंने सात शेर अमीर खुसरो की ग़ज़ल पर लिखकर एक मुतरिब[6] को दिये, वो मजलिसों में गाने लगा। अकबराबाद-लखनऊ तक मशहूर हुए। वो गज़ल जिसका मतला ये है--

अज़ जिस्म बजाँ नकाब ताकै
ई गंज दरी ख़राब ताकै[7]

एक साहब आगरे मे और एक साहब लखनऊ में मोतरिज़[8] हुए कि "गज दरख़राबा बायद न दर ख़राब" हरचन्द कहा के 'ख़राबा' मजीद अलै[9] अस्ल लुग़त[10] ख़राब अरबी उस अस्ल बमाने वीरान व वीराना है, जिसकी हिन्दी ऊजड़। मोतरिज़ मुसिर[11] रहा। सायब के दीवान मे से ये मतला निकला।

बफ़िक्रे दिल न फ़ितादी ब हीच बाब दरेग़
बगज राह न बुर्दी दरी ख़राब दरेग़[12]

---

१. प्रकाशदाता दीपक (मोमबत्ती) ईर्ष्या के कारण क्यों नही पिघलेगा ? तुम्हारे चेहरे के आगे दर्पण पानी हो गया। २. सीमा का चिह्न, इति। ३. गुरु, आचार्य (ब० व०) ४. निरीक्षण। ५. तन्मय। ६. गायब। ७ आत्मा पर शरीर का पर्दा कब तक रहेगा ?यह कोश इस उजाड़ बियाबान-मे कब तक रहेगा ? ८. आक्षेपकर्त्ता। ९. पुनः। १०. वास्तविक शब्द। ११. हठी। १२. तुमने किसी क्षण में भी अपने हृदय को चिन्ता नहीं की। उजाड़ बियाबान में गड़े हुए कोश से तुमने कोई लाभ नहीं उठाया, दुःख है।

२१

(१८६६ ई०)

किब्ला,

आज तीसरा दिन है कि मैं 'बिनाबेब आब रसीदन' व 'बाब रसान्दन' की हक़ीक़त ब इस्तिनादे अशआरे असातिज़ा[1] लिखकर बसबीले डाक भेज चुका हूँ। आज इस वक्त भाई ज़ियाउद्दीनखाँ साहब आए और इस अम्रे ख़ास मे कलाम के बादी[2] हुए। मेरी तक़रीर सुन कर कहने लगे कि 'आब दर बिना रसीदन' व 'आब दर बिना रसान्दन' के बाब मे मुतरद्दिद[3] है के आया ये तरकीब जायज़ है या नहीं? अब मैं मुतनब्बेह[4] हुआ के वाक़ई जो मैंने लिखा वो सवाल दीगर, जवाब दीगर था। सत्तर बरस का पीरे ख़रफ़[5] हवास मारिज[6] तलफ़[7]। अगरचे सवाल को ग़लत समझा लेकिन जवाब गलत नही लिखा। रसीदन बिना बआब हम बमाने इस्तेहकाम बिना व हम बमाने इन्हिदामे बिना, दुरुस्त। फ़क़त।

अब 'आब दर बिना रसीदन' वो 'रसान्दन' की कैफ़ियत सुनिये, फ़कीर ने असातिज़ा के कलाम मे कहीं ये तरकीब नही देखी, पस मैं इसकी सेहत[8] और ग़ल्ती में कलाम नही कर सकता। जानिबे गलती मेरे नजदीक राजे[9] है। आप जब तक कलाम अहले ज़बान में न देख लें, उसको जायज़ न जानिएगा मगर कलामे सादी ब निज़ामी व हज़ी और उनके अमसाल[10] व नज़ायर[11] का

---

१. आचार्यों की कविता के प्रमाण के बिना। २. आरम्भकर्त्ता। ३. चिन्तित। ४. सावधान। ५. बुद्धिहीन बूढ़ा। ६. अभिज्ञान। ७. नष्ट। ८. शुद्धि। ९. विपरीत। १०. दृष्टान्त। ११. उदाहरण।

मोतमद अलै[1] है, न आरज़ू और बाक़िफ़ और क़तील वग़ैरहिम का। मेरा एक मत्ला है—

अज़ जिस्मे बजाँ नकाब ताकै
ई गंज दरीं ख़राब ताकै

एक गिरोह मुआरिज़[2] हुआ के गंज को ख़राबा कहो, न ख़राब, मैं मुतहय्यिर[3] के या रब किससे कहूँ 'ख़राबा' मज़ीद अलै[4] 'ख़राब' है, मिस्ल वीरान व वीराना व मौज व मौजा इल्हाक़ हाए हव्वज़[5] से लुग़त दूसरा नही पैदा हुआ। बारे, सायब के दीवान में एक मत्ला नज़र आया—

बफिक्रे दिल न फितादी ब हीच बाबे दरेग़
बगजे राह न वुर्दी दरीं ख़राब दरेग

ये मत्ला लिखकर मोतरिज़[6] साहबों को भेज दिया कि ग़ालिब को दर्दे सर न दीजिये, जो पूछना हो वो सायब से पूछ लीजिये। आरिफ़ अली शाह ख़ुरासानी ने इस मत्ले पर—

अज़ जिस्मे बजाँ नक़ाब ताकै
ई गज दरी ख़राब ताकै

तीन ऐतराज़ किये थे—पहला नक़ाब के साथ आरिज़[7] व रुख़ का जिक्र भी ज़रूर था, वो नही है। दूसरा गंज तो वीराने ही मे होता है, फिर उस पर तास्सुफ़ क्या, जो कहते हैं 'ताकै' तीसरा 'वीराना' को 'ख़राबा' कहते हैं न 'ख़राब' और इन ऐतराज़ों के बाद उन्होंने दख़ल किया था—

---

१. विश्वस्त। २. विरोधी। ३. चकित। ४. जिस पर कुछ बढ़ाया हो। ५. हकार (४) के क्षेपक से। ६. आक्षेपकर्त्ता। ७. कपोल।

अज़ जिस्मे बजाँ हिजाब ताकै
गिले बर रुख़ आफ़ताब ताकै[1]

२२

(१८६६ ई०)

क़िब्ला,

देखिये, हम आरिफ़[2] हैं, वुरूदेनामे[3] से पहले जवाबेनामा लिखते हैं, दिन भूल गया हूँ। ग़ालिब है कि आज तीसरा दिन हो। सुबह को मैंने, 'आब दर बिना म्मीदन' की बहस मे खुलासा तहक़ीक़ लिखकर इर्साल किया। उसी दिन शाम को आपका खत आया, बकिया जवाब अब लिखता हूं।

'नकाब' उस शेर मे बमाने हायल[4] है, हील की वजह व रुख की खुसूसियत नही। दो चीज़ों के बीच मे जो शै[5] आ जाये बल्कि इससे बढ़कर ये बात है कि जो चीज़ एक चीज़ की मान ए नज़ारा है, वो नक़ाब है। उस शै नामरई[6] का रुख बमुनासिब नकाबे मुक़द्दर है और ये तकदीर जायज़ और बलीग़[7] है। हिजाब[8] का यहां ऊपरी यानी बेमहल और ना मुलायम होना बशर्ते अक़्ले सलीम[9] व तब ए लतीफ़[10] ज़ाहिर है। गिल खाक ब आब आयेल्ता[11] को कहते हैं वो रुखे आफताब तक कहाँ पहुँचे। हाँ, गर्द व गुबार मे आफताब छुप जाता है, उसका इस्तेमाल अज़ रू ए मजाज़[12] जायज़ है।

'गज दर वीराना ताकै' ये बहुत लतीफ़ बात है, याने अफ़सोस किया

---

१. कब तक आत्मा पर परिधान रहेगा और सूर्य पर कब तक कीचड़ लगी रहेगी। २. सर्वज्ञ। ३. पत्रप्राप्ति। ४. बाधक। ५. पदार्थ। ६. अदृष्ट। ८. परिष्कृत। ८. पर्दा। ९. बुद्धि। १०. सुस्वभाव। ११. कीचड़। १२. प्रकृति के अनुसार।

जाता है उस गज के बेकार होने का। गज से ग़रज़ यही तो नही कि जगल मे मदफ़ून[1] रहे। वो तो ये चाहता है कि मदफ़न से निकले और सर्फ़[2] हो। लोग उसके वुजूद[3] से तमत्तो[4] पाये।

यहाँ एक और दक़ीक़ा[5] है कि इस शेर में गज मुशब्बाबिही[6] और रूहे इन्सानी मुशब्बा[7] है और ये सब जानते है कि रूह का ताल्लुक़ जिस्म से जावदानी[8] नही, पस क्या क़बाहत[9] है अगर एक गमज़दा व सितमजदा कतै ताल्लुक रूह का मुन्तज़िर और मुश्ताक़[10] हो। मसलन एक मयादी महबूब[11] हसरतमन्दाना कहे कि इलाही वो दिन कब आएगा कि मै कैद से नजात पाऊं, कब तक सडक काटूं, कब तक रज उठाऊं? फ़ाखिर मकीन एक शायर था। शुजाउद्दौला व आसफ़ुद्दौला के अहद[12] मे, उसने सादी व निजामी व हज़ी के अशआर को इस्लाहे दी है। जब एक हिन्दुस्तानी बेइल्म, तुनकमाया[13] असातज ए नामी ए अजम[14] के कलाम को इस्लाह दे, अगर एक आलिमे खुरासानी ने एक हिन्दी के मत्ले मे तसर्रुफ़[15] किया तो क्या कबाहत लाज़िम आई? खुदा का शुक्र कि मुझको सत्तर बरस की उम्र मे पचास बरस की मश्क के बाद उस्ताद मयस्सर आया।

२३

जनाबे आली,

कल मेरे शफ़ीक़े मुकर्दम[16] मुशी नवाब जान क़ुल्ब ए एहजान[17] मे तशरीफ लाए, आपका सलाम कहा। मालूम हुआ कि ख़ाजा सद्रुद्दीन साहब

---

१. गड़ा हुआ। २. व्यय। ३. अस्तित्व। ४. लाभ। ५. स्थिति। ६. उपमान। ७. उपमेय। ८. शाश्वत। ९. दोष। १०. इच्छुक। ११. कारावद्ध। १२. युग। १३. अप्रतिष्ठित। १४. ईरान के प्रसिद्ध आचार्य। १५. प्रयोग। १६. प्रतिष्ठित मित्र। १७. शोकपूर्ण घर।

लश्कर के साथ गये हैं और आप यहीं हैं। इस फ़स्ल में कि अभी से रात-दिन आग बरसती है, अच्छा हुआ कि ज़हमते सफ़र[1] न खींची। अजी हज़रत ये मुंशी मुम्ताज़ अलीख़ाँ क्या कर रहे हैं? रुक्के जमा किये और न छपवाये। फ़िलहाल पंजाब अख़बार में उनकी बड़ी ख़ाहिश है। जानता हूँ कि वो आप को कहाँ मिलेंगे जो आप उनसे कहें, मगर ये तो हज़रत के इख़्तियार में है कि जितने मेरे ख़ुतूत आपको पहुँचे हैं, वो सब या उन सबकी नक़ल बतरीक़े पार्सल आप मुझको भेज दें। जी यूँ चाहता है कि ख़त का जवाब वही पार्सल हो।

तुम सलामत रहो क़यामत तक।

२४

पीर व मुर्शिद

'सहल मुम्तने' में कसरए लाम तौसीफ़ी है। सहल मौसूफ़[2] और मुम्तना[3] सिफ़त। अगरचे बहस्बे ज़रूरत वज़्न कसरए लाम मुशब्बे[4] हो सकता है, लेकिन मुख़िल्ले फ़साहत[5] है और लामे मौक़ूफ़[6] तो ख़ुद सरासर क़बाहत है। 'सहले मुम्तना' उस नज़्म व नस्र को कहते हैं कि देखने में आसान नज़र आए और उसका जवाब न हो सके। बिल जुम्ला सहले मुम्तना कमाल हुस्ने कलाम है और बलागत[7] की निहायत है। मुम्तना दरहक़ीक़त मुम्तना उल नज़ीर है। शेख़ सादी के बेशतर फ़िक़्रे इस सिफ़त पर मुश्तमिल हैं और रशीद व तवात वग़ैरा शोरा ए सल्फ़[8] नज़्म में इस शेवे की रिआयत मंज़ूर रखते हैं। ख़ुद सिताई[9] होती है। मुख़नफ़हम[10] अगर ग़ौर करेगा तो फ़क़ीर की नज़्म व नस्र में सहले मुम्तना अक्सर पाएगा।

---

१. यात्रा का दुःख। २. विशेष्य। ३. विशेषण। ४. शीघ्र बोलने के लिए। ५. परिमार्जित भाषा के विरुद्ध। ६. निषेधार्थक 'लकार'। ७. साहित्य की आलंकारिक शैली। ८. प्राचीन कवि। ९. आत्मश्लाघा। १०. काव्य-मर्मज्ञ।

ख़ाजा गुलाम ग़ौशख़ाँ 'बेख़बर'के नाम

है सहल मुम्तिना ये कलामे अदक़[1] मेरा
बरसों पढ़े तो याद न होवे सबक़ मेरा

ये मिस्रा हैरत आवर है। कलामे अदक सहले मुम्तिना के मुनाफी[2] है। फिर याद न होना और हाफिज़े पर न चढ जाना हरगिज़ सहले मुम्तिना की सिफ़त नही हो सकती। 'कलामे अदक़' जिसका हिफ्ज दुश्वार हो, शायद कोई किस्म अक़्साये कलाम[3] मे से हो। हाँ, कलामे अदक कलामे मुग़्लक़[4] को कहते है। मो कलामे मुग़्लक और कलामे सहले मुम्तिना ज़िद यक व दीगर[5] है। मुग़्लक़ और अदक सहले मुम्तिना और सहले मुम्तिना मुग़्लक और अदक क्यों कर हो सकेगा। और हाफ़िज़े मे महफूज़ रहना कलामे मुग़्लक व अदक़ की सिफत क्यों कर पडेगी? हाँ, मुग़्लक असीरुल फहम[6] होगा, पढ़ा न जाएगा, माने समझ मे न आएँगे। सहले मुम्तिना की सिफत वो थी जो फ़क़ीर ऊपर लिख आया। इस शेर से उसे कुछ इलाक़ा नही। खत्म।

'आब दर बीना रसीदन' बमाने 'खराब बुनियाद' कयासी[7] है। असातिज़ा के कलाम मे मैने नही देखा। अगर आया हो तो दुरुस्त है। हाँ, 'बाब रसानीदन बिना के बज़ाहिर आब दर बिना रसीदन' का मुताद्दी मिनहो है, बुलगार[8] के कलाम मे आया है, लेकिन अस्दाद[9] मे से है, बमाने वीरानी बिना मस्तामल[10] और हम बमाने इरतेहकाम बिना। अगर इसका लाज़िम ढूँढिये तो रसीदन बिना ब आब है न रसीदन आब दर बिना जैसाकि नेमतख़ाँ आली कहता है—

---

१. क्लिष्ट। २. विरुद्ध। ३. वाक्यभेद, काव्यभेद। ४. क्लिष्ट काव्य। ५. परस्पर। ६. क्लिष्ट। ७. काल्पनिक। ८. जिन लेखकों की रचना मे प्रसाद गुण होता है। ९. रुकावटें। १०. प्रयुक्त।

नीस्त मुहकम गर रसद बुनियादे दुनिया ता ब आब
चूँ हबाब ईं ख़ाना बे बुनियाद मी साज़ेम मा[1]

इससे मालूम होता है कि रसीदन बिना ता ब आब मूजिबे इस्तेहकाम है और शाबदबावजूद दलीले इस्तेहकाम बिना को ना उस्तवार चाहता है। सायब कहता है--

चेगूना शमए तजल्ली ज़ रश्क न गुदाज़द
रुख़े तो ख़ान ए आईना रा ब आब रसान्द[2]

हाजी मुहम्मदजान कुदसी--

बगोशे अतायश रसान्द ई ख़िताब
के बुनियाद काँग रसानद ब आब[3]

ये दोनों शेर मुफ़ीदे मानी ए वीरानी है। क़िस्सा मुख्तसर[4] 'बाब रसीदन बिना खराबीए ख़ाना व बाब रसान्दन' मुताद्दी आँ व रसीदन आब दर बिना नाममूम[5]। मैं अभी बीमार हूँ और बीमार के वास्ते अजाम को ग़ुस्ले सेहत[6] है या ग़ुस्ले मैयत[7]। वस्सलाम।

---

१. यदि संसार की नीव पानी तक चली जाये तब भी स्थिर नही रहती। हम पानी के बुदबुदे की भाँति निराधार घर की रचना करते है। २. प्रकाशदाता, दीपक (मोमबत्ती) ईर्ष्या के कारण क्यों नही पिघलेगा? तुम्हारे चेहरे के आगे दर्पण पानी हो गया। ३. उसकी दया के कान से यह सम्बोधन ज्ञात हुआ कि कई नींवों को पानी मे पहुँचा दिया गया। ४. संक्षिप्त। ५. अप्रयुक्त। ६. स्वास्थ्य प्राप्ति के अवसर पर स्नान। ७. मृत्यु के बाद का स्नान।

ख़ाज़ा गुलाम ग़ौशख़ाँ 'बेख़बर' के नाम

२५

(२३ जुलाई—)

क़िब्ला,

आप बेशक वली साहबे करामत[1] है। कम व बेश एक हफ़्ता गुज़रा होगा कि एक अम्रे ज़दोद[2] मुक़्तज़ी[3] इसका हुआ कि आपको इसकी इत्तिला दूँ। ख़ानए काहली[4] ख़राब, आज लिखूँ, कल लिखूँ, अब कौन लिखे। कल सुबह लिखूंगा, सुबह हुई—गालिब इस वक़्त न लिख, सेपहर[5] को लिखियो। आज दोशम्बा २३ जुलाई के बारह पर दो बजे हरकारे ने आपका ख़त दिया। पलग पर पड़े-पड़े ख़त पढ़ा और इसी तरह जवाब लिखा। अगरचे डाक का वक़्त न रहा था मगर भिजवा दिया। कल रवाना हो रहेगा। आपको मालूम रहे कि मुंशी हबीबुल्ला जका और नवाब मुस्तफाख़ाँ हसरती को कभी उर्दू ख़त नही लिखा[6]। जका को गजले इस्लाही[7] के हर शेर के तहत मे मशा ए इस्लाह से आगाही दी जाती है, नवाब साहब को यो लिखा जाता है—

कहार आया, खत लाया, आम पहुँचे। कुछ बाँटे, कुछ खाये। बच्चों को दुआ, बच्चों की बन्दगी। मौलवी अल्ताफ़हुसेन साहब को सलाम[8]।

ये तहरीर इस हफ़्ते मे गई है, गर्ज के आमयाना[9] लिखना इस्तियार किया है। अब ये इबारत जो तुमको लिख रहा हूँ, ये लायक़े शुमूले मजमूअए नस्ले

---

१. चमत्कारी पुरुष। २. नया काम। ३. जिसका तकाजा किया गया। ४. आलस्य का घर खराब हो। ५. तीसरे पहर। ६. यह बात ठीक नही, उर्दू में पत्र लिखा है (सम्पादक)। ७. संशोध्य गजल। ८. उर्दू के प्रसिद्ध कवि अल्ताफ़हुसेन हाली। ९. जन-सामान्य की भाषा।

उर्दू[1] कहाँ है ? यक़ीन जानता हूँ कि ऐसी नस्रों को आप खुद न दर्ज करेंगे। किताब के बाब मे सरमद की रुबाई का शेरे अखिर लिख देना काफ़ी है--

आलम हमा मिराते जमाले अज़लीस्त
मी बायद दीदो दम न मी बायद ज़द[2]

'बोस्ताने ख याल' का तर्जुमा मौसूम ब 'हदायक़ुल अन्ज़ार' मारिज़े तबा[3] मे है। अगर आप या आपका कोई दोस्त खरीदार हो तो जितनी मुजल्लद फ़रमाइए उस क़दर भेज दूं। छै रुपये मय महसूले डाक क़ीमत है। उसी मतबे[4] मे, जिसमें 'हदायक़ुल अन्ज़ार' इन्तिबा[5] हुआ है, अखबार भी छापा जाता है। अब के हफ़्ते का दोवर्क़ा भिजवा दिया जाएगा। वशर्ते पसन्द आप तौकी ए खरीदारी[6] लिख भेजिएगा।

जनाब कीमस साहब बहादुर अफ़सरे मदारिस ग़र्ब व शिमाल[7] का, बावजूद अदम तारुफ़[8], खत मुझको आया। कुछ उर्दू ज़बान के ज़ुहूर का हाल पूछा था। उसका जवाब लिख भेजा। नज़्म व नस्र उर्दू तलब की थी। मजमूअ ए नज़्म भेज दिया। नस्र के बाब मे तुम्हारा नाम नही लिखा, मगर ये लिखा कि मतबए इलाहाबाद मे वो मजमूआ छापा जाता है। बाद इतिबा[9] व हुसूले इत्तिला[10] वहाँ से मँगा कर भेज दूंगा। ज्यादा हद्दे अदब, नामा जवाब तलब।

---

१. उर्दू गद्य के सकलन योग्य। २. सम्पूर्ण ससार उसके सौन्दर्य का दर्पण है। उसे देखें और मूक बने रहे। ३. मुद्रणालय। ४. मुद्रणालय। ५. मुद्रित। ६. खरीदारी का आदेश। ७. पश्चिमोत्तर प्रदेश। ८. परिचय न रहते हुए भी। ९. मुद्रण। १०. सूचना प्राप्ति।

हकीम ज़हीरुद्दीन अहमदख़ाँ के नाम

१

(१८६५ ई०)

इकबाल निशान हकीम जहीरुद्दीन अहमदख़ाँ को फ़क़ीर ग़ालिबअली शाह की दुआ पहुँचे। कहो मियाँ, तुम्हारा मिज़ाज कैसा है और तुम्हारे भाई मिर्ज़ा तफ़ज्ज़ुलहुसेनखाँ कैसे है? अगर मिलो तो मेरी दुआ कहना और मिज़ाज की ख़बर पूछना, और अपने वालिद माजिद को मेरी दुआ कहना और कहना कि तुम्हारा खत मेरे खत के जवाब मे था, इस सूरत मे और कोई बात जवाब तलब न थी।

सुनो मियाँ जहीरुद्दीन, तुम अपनी दादी के पास अभी चले जाओ और उनसे मेरी और दोनों लडको की खैर व आफ़ियत कहो और पूछो कि शहाबुद्दीनखाँ ने अक्तूबर के महीने की तनख़ाह के पचास रुपये पहुँचा दिये या नही? केदारनाथ डेवढी पर आकर ज़ाफ़रबेग, वफ़ादार वगैरा की तनख़ाह बाँट गया या नही? अच्छा मेरा बेटा, ये दोनो बाते अपनी दादी से पूछ कर जल्द मुझको लिखो, देर न कीजियो।

पजशम्बा २,.....१८६५।

खत के जवाब का तालिब
—ग़ालिब

२

जनाब फ़ैज़माब[1] चाचा साहब, क़िब्ला व काबा दो जहाँ के हुज़ूर मे मै

---

१. कल्याणकारी।

कोर्निश[1] व तस्लीम पहुँचाता हूँ और हज़ार ज़बान से इस तोप के मरहमत फ़रमाने का शुक्र[2] बजा लाता हूँ। सुभान अल्लाह, क्या तोप, जिसकी आवाज से राद[3] का दम बन्द और रंजक[4] के रश्क से बिजली को रंज। गोला उसका खुदा का क़हर, धुँआ उसका दरिया ए इश्क़ की लहर। अस्तगफ़ुरुल्लाह[5] क्या बाते करता हूँ, झूट मे दफ़्तर भरता हूँ, कैसी रंजक, कैसा धुँआ, कैसा गिर्दाब[6] ये वो तोप है कि बगैर इन अवारिज़[7] के सिर्फ़ उसकी आवाज़ मे रुस्तुम का ज़हरा[8] पानी हो जाए। अब बारूद हो तो रजक उड़े, आग धकाये तो धुँआ हो, गोला-छर्रा कुछ इसमे भरें तो ज़ाहिर मे कही निशान हो, सिर्फ उसकी आवाज़ पर मदार है, नई तरकीब और नया कारोबार है। एक आवाज और उसमे ये ऐजाज़[9] कि दोस्त को फ़तह की शलक[10] की सदा[11] सुनाए, दुश्मन सुने तो हैबत से उसका कलेजा फट जाए। आवाज का सदमा अगरचे सदा ए सूर[12] मे दूना है, मगर हमे यही कहते बन आता है कि सूर का नमूना है। क्या खुदा की क़ुदरत है, देखो तो कैसी नुदरत[13] है। तोप का गोला तोप ही मे रह जाए और जो क़िला रूबरू आए वो ढै जाए। दाना आदमी इसे ज़ंजीरी गोला कहता है कि तोप मे से निकल कर फिर वही उलझा रहता है। अच्छे मेरे चचा जान, ये तोप किसने बनाई, और तुम्हारे हाथ कहाँ से आई? जो देखता है, वो हैरान होता है, अब शहर मे जा बजा इसी का बयान होता है। हकताला शानहू तुमको हमारे सर पर सलामत रखे और हमेशा ब दौलत व इक़बाल व हश्मत व करामत रखे।

---

१. अभिवादन। २. कृपा। ३. मेघ गर्जना। ४. तोप की बारूद का प्याला। ५. ईश्वर से शरण चाहता हूँ। ६. तोप का ऐसा गोला जिसमे गोलियाँ और छर्रे भरे रहते हैं। ७. बीमारियाँ। ८. पित्ता। ९. चमत्कार। १०. अभिनन्दन में दागी गई तोप की बाढ़। ११. ध्वनि। १२. तुरही की आवाज़। १३. अनोखापन।

नवाब हुसेन मिर्ज़ा के नाम

१

(१८ जून, १८५८ ई०)

जनाब नवाब साहब,

शिकवा करना सहल है, सब्ज़ स्याही कही से मुफ़्त की हाथ मे आ गई, हज़रत ने शिकवा लिखा, यूसुफ मिर्ज़ा साहब ने नज़्म व नस्र के लिखने का हुक्म चढाया। भाई, तुम्हारे खत का जवाब आगे लिख कर भेज चुका हूँ। अपनी तरफ़ से सुलतान आलम[1] को अभी अर्ज़ी न लिखूंगा और जब लिखूंगा तो खुदा मेरे खुदावन्द[2] को सलामत रखे। ब वास्ते[3] उनके भेजूंगा। तुमको चाहिए कि अपनी तरफ़ से फ़ारसी मुतारिफ़[4]-मुरव्विज़[5] मे लिख भेजो, यही तुमको लिख चुका हूँ और अब यही जवाब है यूसुफ़ मिर्ज़ा को।

परसों मिर्ज़ा आग़ा जान साहब आए थे। वो कहते थे कि भाड़ासिघ और काशीनाथ आए है। मैने कहा कि वो न मेरे काम के, न तुम्हारे काम के। काम करे क्या, गुजाइश ही नही। और जो कुछ होता जाता है वो इस क़िस्म का है कि जिस तरह सुबह हुई, शाम हुई, अब्र आया, मेह बरसा याने सई[6] को, तदबीर को, खाहिश को दखल नहीं। आबादी का आवाज़ा[7] फिर फ़िरो[8] है। लाहौरी दरवाज़े के इलाक़े मे कुछ कम सौ घर आबाद हुए है। कई हज़ार घर की बस्ती है। इन्शा अल्लाह ताला दो-चार बरस मे वो इलाक़ा

---

१. अवध के अन्तिम नवाब वाजिदअली शाह। २. स्वामी। ३. द्वारा। ४. परिचित। ५. प्रचलित। ६. प्रयत्न। ७. प्रसिद्धि। ८. मन्द, धीमी।

आबाद हो जाएगा और जब वो इलाक़ा आबाद हो जाएगा तो दूसरा इलाक़ा शुरू होगा। घबराओ नहीं जल्दी क्या है ? आज सरदारसिंघ वालिद जगत-सिंघ मेरे पास आये थे, तुम्हारे मकान का पता लिखवा ले गये है। शायद तुमको खत लिखें। मीर इनायत हुसेन गढपंख बनकर उड़ गये। कई आदमियों से कहा। उन्होने कहा, अब वो वहाँ नज़र नहीं आते। मेरे पास हर हफ़्ते के आने वाले, अब महीने भर से नहीं आये। मीर मुर्तज़ाहुसेन का खत उनके नाम का मेरे पास धरा है। जब वो आएँगे उनको दे दूंगा। जगतसिंघ का लखनऊ मे रवाना होने का क़स्द सरदारसिघ ने कह दिया। अब के तुम्हारे खत मे मुज़फ़्फ़र मिर्ज़ा की तरफ़ से कुछ नही, इससे मुस्तंबत[1] हुआ कि वो और जगतसिघ, जैसा कि तुमने लिखा था, लखनऊ से कौल व मुरादाबाद को गये। मीर इमदाद का ज़िक्र मैंने मिर्ज़ा आग़ा जान साहब से कर दिया है कि अच्छा है अगर वो हुसेन मिर्ज़ा साहब और हुसेनी साहब की तरफ़ से मुख्तारे कार हो जाएं। कल जुमा था। यक़ीन है कि साहब कमिश्नर से मिले होंगे, अर्ज़ी दी होगी, उसका हाल मुझको लिखो।

ये हो लिया, अब मेरा दुःख सुनो। भागा नही, पकड़ा नही गया। दफ़्तरे किले से कोई मेरा कागज़ नहीं निकला। किसी तरह की बेखयाली व नमकहरामी का धब्बा मुझको नही लगा। यहाँ एक अखबार जो गौरीशंकर या गौरीदयाल या कोई और ग़दर के दिनों मे भेजता था उसमे एक खबर अखबार नवीस ने ये भी लिखी कि फ़लानी तारीख असदुल्लाहखाँ ग़ालिब ने ये सिक्का कह कर गुज़राना—

ब ज़र ज़द सिक्क ए किश्वर सितानी
सिराजुद्दीन बहादुरशाह सानी[2]

---

१. ज्ञात। २. उसके सिंहासनारूढ़ होने पर सोने का सिक्का बनाया गया, जिस पर सिराजुद्दीन बहादुर शाह (द्वितीय) लिखा हुआ था।

नवाब हुसेन मिर्ज़ा के नाम

मुझसे इन्दल मुलाक़ात[1] साहब कमिश्नर ने पूछा कि ये क्या लिखता है। मैंने कहा कि ग़लत लिखता है। पादशाह शाइर, पादशाह के बेटे शाइर, पादशाह के नौकर शाइर, खुदा जाने किसने कहा। अख़बार नवीस ने मेरा नाम लिख दिया। अगर मैंने, कि, गुज़राना तो दफ़्तर से वो कागज़ मेरे हाथ का लिखा हुआ गुज़रता, और आपको चाहिए, हकीम अहसनुल्लाखाँ से पूछिये। उस वक़्त तो चुपका हो रहा। अब जो उसकी बदली हुई तो जाने से दो हफ़्ते पहले एक फ़ारसी रूबकारी[2] लिखी कि ये जो असदुल्लखाँ फ़ारसी के इल्म मे यकता मशहूर है, इससे काम नही निकलता। ये शरूस बादशाह का नौकर था और उसका सिक्का लिखा। हमारे नज़दीक पिन्सन के पाने का मुस्तहक नही है। गरज़ इस मक़सूद से ये है कि मैं यहाँ मौजूद हूँ और अमले से राह व रस्म है। ये तो कोई बताता नहीं कि तारीख़े रूबकारी क्या है और ये सदर को भेजी गई है या नही? अब हैरान हूँ कि क्या करूँ? कमिश्नर जदीद[3] से मिलूंगा। इसी से, अगर देगा तो, नक़ल लंगा। जवाब अज़राहे एहतियात इस कमिश्नर के अहद मे भी भेज चुका हूं। मगर ग़ौर·····और एक जानिब से मुक़द्दमा किया। भाई मैं तो अली-अली कर रहा हूँ जीऊँ तो और मरूँ तो। कही जवाब साफ़ मिल चुके तो इस शहर से चला जाऊँ। ये दो रुपये रोज़ भी उस गासिब[4] मलऊन[5] की गोर[6] मे जाएँ जिसने मुझे दस हज़ार रुपये साल मे से ये कुछ दिया है। अलैइल लानत वल अजाब[7]।

यूसुफ़ मिर्ज़ा को दुआ पहुँचे। भाई यहाँ मीर अहमदहुसेन वालिदे मीर रोशनअलीखाँ ने मुझसे कहा कि हज़रत, जब बहादुरशाह तख़्त पर बैठे हैं तो

---

१. भेंट के समय। २. सरकारी पत्र, अदालती कागज़। ३. नवीन। ४. दूसरे का अधिकार छीनने वाला। ५. धिक्कृत। ६. कबर। ७. उस पर ईश्वर का धिक्कार और क्रोध हो।

मैं मुर्शिदाबाद में था। वहाँ मैंने ये सिक्का सुना था, उनके कहने से मुझे याद आया कि मौलवी मुहम्मद बाक़र ने खबरे वफात[1] अकबरशाह व जुलूस बहादुरशाह जहाँ छापी थी वहाँ इस सिक्के का गुज़रना 'ज़ौक़' की तरफ़ से छापा था। और जुलूसे बहादुरशाह अक्तूबर के महीने १८३७ ई० या १८३८ ई० में हुआ है। बाज़ साहब अखबार जमा रखते है। अगर वहाँ इसका पता पाओगे और वो परच ए अखबार अस्ल व जिन्सही मुझको भिजवाओगे तो बड़ा काम करोगे। मैंने अकबराबाद, फ़र्रुखाबाद, मारहरा, मेरठ अपने अहबाब को लिखा है। अब तुम को भी लिखा है। कालपी को लिखना बाक़ी है। वो भी कल-परसों लिखूँगा। अक्तूबर, नवम्बर, दिसम्बर १८३७, १८३८ ई० तीन महीनों के बारह पर्चे ए अखबार देखे जाएँ।

मुहर्रिरा[2] शम्बा १८ जून १८५९ ई०।

२

(२८ जुलाई, १८५९ ई०)

या हुसेन इब्ने हैदर[3] रूही फिदाक[4],

यहाँ तक लिख चुका हूँ कि मुहम्मदक़ुलीखाँ के नाम का खत कल्लू से बन्नू बेगम साहबा ने ले लिया। मुहम्मदक़ुलीखाँ अली जी गये हुए थे। कल रज़ाशाह की ज़बानी मालूम हुआ कि साहब ने वो खत मीर रुस्तुमअली को दिया और वो इस खत को लेकर दरगाह गये। आफ़रीं, सद आफ़री मीर रुस्तुम को दोस्त के काम के वास्ते इतनी दूर प्यादा जाना। आज दोपहर को मीर साहब मेरे पास आये और वही खत खुला हुआ लाये और कहा कि नौंदराय को हर्फ़ बहर्फ़ खत पढ़ा लाया हूँ। मैंने कहा कि काशीनाथ को क्यों न दिखाया ?

---

१. मृत्यु का समाचार। २. लिखित। ३. हैदर (हजरत अली) के पुत्र। ४. मेरी आत्मा आप पर न्यौछावर।

उन्होंने कहा कि तुम देखकर-पढ़कर अपने आदमी के हाथ काशी के पास भेज देना । मैंने सोचा कि काशीनाथ देखेगा और उल्टा फेर देगा । न आदमी से कुछ कहेगा, न मेरे पास आएगा । मैंने मीर साहिब से कहा आप ही काशीनाथ को दिखाकर और उससे बातचीत करके मुझको ला दीजिएगा। वो इस खत को बमूजिब मेरे कहने के ले गये । कल-परसों वो आएँगे, तब फ़िक्र की जाएगी । मगर भाई, पेच ये पड़ा है कि मुहम्मद क़ुलीखाँ रज़ाशाह के साथ पाटौदी जाते हैं । मुहर्रम वहाँ करेंगे । लाडो बेगम वालिदए[1] अकबर अलीखाँ ने उनको बुलाया है तो अब ये मुक़दमा उनकी मुआवदत[2] के बाद होगा । काग़ज़ मेरे पास धरे रहेंगे । साहब, मुहम्मद क़ुलीखाँ ने ग़लत लेखा है; न हसन अलीखाँ मुकय्यद[3] न हामिद अलीखाँ न हकीम अहसानुल्लाखाँ । हुक्म आखिर उन तीनों साहिबों के वास्ते नहीं हुआ। हकीम अहसनुल्लाखाँ के मकानात पर उनको क़ब्जा मिल गया। ज़नाने मकान में जो अक़बे हम्माम[4] है, एक अँग्रेज़ उतरा हुआ है । पैंतीस रुपये महीना उनको किराया देता है और वो दोनों आदमी अभी यों ही उलझे हुए हैं । अहसानुल्लाखाँ अपने मकान में जा रहे । दीवानखाने को महलसरा[5] बनाया । बुद, जहाँ अस्तबल था वहाँ बैठते हैं। देबीराम सालगराम को उनके मकानात मिल गये । ऐसा भी सुना है उनके दफ़ीने[6] बच गये । अब वो हामिद अलीखाँ को क़ुत्बुद्दीन सौदागर की हवेली से उठा कर अपने मकान में ले गये हैं । सरदार मिर्ज़ा का हाल मुझे इससे ज्यादा नहीं मालूम कि रज़ाशाह कभी-कभी उनकी बन्दगी मुझको कह देते हैं। आज या कल रज़ाशाह आ गये तो मैं शेगानावार निकाह व मुता[7] का हाल उनसे पूछ लूंगा ।

पंजशम्बा २६ ज़िलहज्जा (१२७६ हि०) २८ जुलाई (१८५९ ई०) ।

---

१. माँ । २. वापसी । ३. बन्दी । ४. स्नान-घर । ५. अन्तःपुर । ६. गड़ा हुआ खजाना । ७. अस्थायी विवाह ।

३

(२८ अक्तूबर, १८५८ ई०)

भाई,

तुम्हारे ख़तों का और यूसुफ़ मिर्ज़ा के ख़तो का जवाब भेज चुका हूँ। मुहम्मद कुलीखाँ साहब हमातन[1] मसरूफ़[2] है। दिवाली की तातील हो चुकी है। नौंदराय की बीबी मर गई है, वो ग़मज़दा हो रहा है, खैर काम करेगा। काशीनाथ बेपरवाह आदमी है। तुम एक ख़ते ताकीदी उसको भी लिख भेजो। अक्सर वो कहा करता है कि हुसेन मिर्ज़ा साहब जब लिखते है, मिर्ज़ा नौशा साहब ही को लिखते हैं। ये अम्र उस पर जाहिर न हो कि मैंने तुम्हे यो लिखा है। मतलब अपना उसको लिखो।

मैं क्या करूँ? अगर कहूँ कि मेरी जान भी तुम्हारे काम आये तो मैं हाज़िर हूँ, ये कहना तकल्लुफ़े महज़ है। कौन जान देता है और कौन किसी से जान माँगता है? मगर जो फ़िक्र मुझको तुम्हारी है और जो मेरी दस्तरस[3] है उसको मेरा ख़ुदा और मेरा ख़ुदावन्द[4] जानता है। दस्तरस को तुम भी जानते हो। इन्शा अल्लाह् ताला[5], अवायल माहे आइन्दा[6] याने नवम्बर मे नय्यर वाला मुकदमा दुरुस्त हो जाये।

इन सुतूर[7] की तहरीर से मुराद ये है कि अभी चुन्नीलाल तुम्हारा क़र्ज़ख़ाह आया था। तुम्हारा हाल पूछता था। कुछ झूठ-सच कह कर उसको इस राह पर लाया हूँ कि सौ-दो सौ रुपये तुमको भेज दे। बनियों की तरह तक़रीर उसको समझाई है कि लाला जिस दरख्त का फल खाना मंजूर होता है तो उसको पानी देते हैं। हुसेन मिर्ज़ा तुम्हारे खेत हैं। पानी दो तो

---

१. पूर्णतया। २. व्यस्त। ३. पहुँच। ४. स्वामी। ५. ईश्वर ने चाहा तो। ६. आगामी मास के प्रारम्भ में। ७. पंक्तियाँ।

अनाज पैदा हो। भाई, कुछ तो नरम हुआ है। तुम्हारे मकान का पता लिखवा-कर ले गया है और कह गया है कि मैं अपने बेटे रामजीदास से सलाह करके जो बात ठहरेगी, आपसे आकर कहूँगा। अगर वो रुपया भेज दे तो क्या कहना है और अगर वो खत लिखे और तुम उसका जवाब लिखो, तो ये ज़रूर लिखना कि असदुल्लाह ने जो तुमसे कहा है वो सच है और वो अम्र ज़ुहूर आने वाला है। बस, ज़्यादा क्या लिखूँ ?

यहाँ तक लिख चुका था कि सरदार मिर्ज़ा साहब तशरीफ़ लाये। मैंने खत उनको नहीं दिखाया। मगर इन्दल इस्तिफ़सार[1] कहा गया कि खत हुसेन मिर्ज़ा साहब को लिखता हूँ। उन्होंने कहा मेरा सलाम लिखना कि यहाँ सब खैर व आफ़ियत से है और सब को दुआ-सलाम कहते हैं। यूसुफ़ मिर्ज़ा को बाद दुआ के मालूम हो कि इस वक़्त सरदार मिर्ज़ा से दरियाफ़्त हो गया कि अब्बास मिर्ज़ा के नाम का तुम्हारा रुक़्क़ा उनको पहुँच गया।

शम्बा २९ अक्तूबर १८५९ ई०।

४

(६ नवम्बर, १८५८ ई०)

जनाबे आली,

कल आपका खत लिखा हुआ सेशम्बा[2] यकुम नवम्बर का पहुँचा। लुत्फ़ ये कि कल वही सेशम्बा का दिन, ८ नवम्बर की थी। आज बुध का दिन, ९ नवम्बर की सुबह के वक़्त मैं तुमको खत लिखने बैठा था कि बरखुर्दार[3] यूसुफ़ मिर्ज़ा का खत लिखा हुआ, ३ नवम्बर का पहुँचा। अब मैं दोनों खतों का जवाब बाहम लिखता हूँ। दोनों साहब बाहम पढ़ लें। १२।

१. पूछ-ताछ के समय। २. मंगलवार। ३. सुपुत्र।

मिर्ज़ा आग़ा जानी साहब अच्छी तरह हैं। उनको तप आ गई थी, अब तप मुफ़ारक़त कर दी गई है[1] मगर ज़ोफ़[2] बाक़ी है। आज चौथा दिन है कि मेरे पास आये थे। काशीनाथ सरासर पहलूतिही[3] करता है। नौंदराय यक सर हज़ार सौदा, मुहम्मद क़ुलीख़ाँ अक्सर अलीजी रहते हैं। कभी यहाँ आ जाते हैं, तब नौंदराय को ताक़ीद करते हैं। आजकल यहाँ पंजाब इहाते के बहुत हाकिम फ़राहम हैं। पौनटोटी के बाब मे कौन्सिल हुई, परसों ७ नवम्बर को जारी हो गई। सालगराम ख़ज़ाची, छन्नामल, महेशदास इन तीन शख़्सों को ये काम बतौरे अमानी[4] सुपुर्द हुआ है। गल्ले और उपले के सिवा कोई जिन्स ऐसी नहीं कि जिस पर महसूल न हो। आबादी का हुक्म आम है, ख़ल्क़ का इज़्दिहाम[5] है। आगे हुक्म था कि मालिकान रहे, किरायेदार न रहें, परसो से हुक्म हो गया कि किरायेदार भी रहे। कहीं ये न समझना कि तुम या मैं या कोई और अपने मकान मे किरायेदार को आबाद करे। वो लोग जो घर का निशान नही रखते और हमेशा से किराये के मकान मे रहते थे, वो भी आ रहे हैं, मगर किराया सरकार को दे। तुम इन्साफ़ करो कि हमशीर[6] की दरख़ास्त क्यो कर गुज़रे, जब वो ख़ुद आये और दरख़ास्त दे और मंज़ूर हो और मकान मिले तो उस तमाम शहरिस्ताने वीरान मे एक हवेली मिलेगी और उनको यहाँ रहना होगा। क्यों कर इस वीराने मे तन्हा रहेगी? सहम कर दम निकल जाएगा। माना कि जब्र इख़्तियार कर कर रहीं, खाएँगी कहाँ से? बहरहाल ये सब ख़यालात ख़ाम[7] और ज़ुम्ले नातमाम[8] हैं। हाँ, नक़्ल लेनी और मुराफ़ा[9] न करना और नक़्ले हुक्म लेनी और फिर मुराफ़ा करना और फिर उस हुक्म की नक़्ल लेनी, ये उमूर[10] ऐसे नहीं कि जल्द फ़ैसल हो जाएँ। हुक्काम बेपरवाह, मुख़्तार अदीमुल फ़ुर्सत[11] मैं पा

---

१. दूर चली गई है। २. निर्बलता। ३. उपेक्षा। ४. प्रयोग के रूप मे। ५. भीड़। ६. बहन। ७. अपरिपक्व। ८. अपूर्ण। ९. अपील। १०. विषय (ब.व.)। ११. जिनके पास समय न हो।

शिकस्ता[1], मुहम्मद क़ुलीखाँ कभी यहाँ, कभी वहाँ। वक़्त पर मौक़ूफ़ है। घबराओ नहीं। हकीम अहसनुल्लाखाँ के मकानाते शहर इनको मिल गये और ये हुक्म है कि शहर से बाहर न जाओ। दरवाज़े से बाहर न निकलो, अपने घर में बैठे रहो। नवाब हामिद अलीखाँ के मकानात सब ज़ब्त हो गये। वो क़ाजी के हौज मे किराये के मकानात मे मय मम्तूआ[2] के रहते हैं। बाहर जाने का हुक्म उनको भी नही। मिर्ज़ा इलाहीबख्श की हुक्म कराँची बन्दर जाने का है, उन्होने ज़मीन पकड़ी है। सुलतानजी मे रहते है। उज्र कर रहे है। देखिये, ये जब्र उठ जाये या ये खुद उठ जाएँ।

५

(१८६६ ई०)

नवाब साहब,

आज तीसरा रोज़ है कि हाल तुमको लिख चुका हूँ, मुहम्मद क़ुलीखाँ आये। हममे उनमे बाहम गुफ़्तगू हुई। नवाब गवर्नर की आमद मे कचहरियाँ बन्द, हुक्काम मेरठ को चले जाते है। १९ या २० दिसम्बर को मेरठ मुख्य्यमे खयाम[3] होगा। दरबार वही होगा। रहा दिल्ली का आना, मुश्तबेफ़ी[4] है। कोई कहता है न आएँगे, कोई कहता है जरीदा[5] बसबीले डाक आएँगे, कोई कहता है मय लश्कर आएँगे, १३ दिन यहाँ रहेगे। आज १५ दिसम्बर की है, जो कुछ वाक़े होगा वो तुमको लिखूंगा। नक़्ल हुक्म की दरखास्त और उस मुक़दमे की फ़िक्र बाद इस हंगामे की अमल मे आएगी। खातिर-आतिर जमा रहे।

---

१. अपंग, जिसके पाँव बेकार हों। २. पत्नी के साथ। ३. तम्बू तनेगा। ४. सन्दिग्ध। ५. यात्रा में एकाकी।

तुम्हारा दोस्त भी हस्बुल हुक्म[1] कमिश्नर हाँसी-हिसार कल-परसों मेरठ को जाएगा और उधर से अमीनुद्दीनखाँ भी वहाँ आएगा। मेरा दरबार और खिलत दरिया बुर्द हो गया। न पिन्सन की तवक्को न दरबार और खिलत की मूरत, न सज़ा न इनाम, न रस्म मामूली ए क़दीम।

यूसुफ मिर्ज़ा को दुआ पहुँचे। परसों कल्लू जूता ले आया। कल दोनों तरफ से खुला हुआ लेकर गया, डाक के कारपर्दाज़ों[2] ने उल्टा फेर दिया और कहा कि पोलन्दा बना लाओ। पोलन्दा बनाकर ले गया, कहा-बारह पर दो बजे लें लिया जाएगा। बैठा रहा। रात के नौ बजे उसके सामने रवाना हुआ। रसीद लेकर अपने घर आया। खुदा करे तुमको पहुँच जाये और पसन्द आये। क़सीदे के बाब में मैं मायूसे मुल्लक[3] हूँ, मगर जो कुछ वाकै हो, बतरीक़े खबर लिख भेजना। मस्नवी 'बादे मुखालिफ़' की रसीद तुम्हारी तहरीर से मालूम हो गई। फ़ीलखाना, फलक पैरा, लाल डिग्गी के मुहाज़ी[4] के मकानात सब गिराये गये। बुलाकी बेगम का कूचा इल्तिवा[5] में है। अहले फ़ौज ढाना चाहते हैं, अहले क़लम बचाते हैं। पायानेकार[6] देखिये क्या हों?

जुमा १६ दिसम्बर १८५९ ई०।

६

(३१ दिसम्बर, १८५९ ई०)

नवाब साहब,

परसों सुबह का तुम्हारा खत पहुँचा। पहर दिन चढ़े लार्ड साहब का लश्कर आया। काबुली दरवाज़े की फ़सील के करीब, भोलूशाह की क़ब्र के सामने, खीमए खासा[7] बरपा हुआ और बाक़ी लश्कर तीस हज़ारी बाग़ तक उतरा

---

१. आदेशानुसार, कर्मचारी, व्यवस्थापक। २. पूर्णतया निराश। ३. हाथी बाँधने की जगह। ४. सामने। ५. स्थगन। ६. अन्ततः। ७. मुख्य मण्डप।

है। पंचशम्ब[1], २९ दिसम्बर १८५९ ई०। आप ग़ालिब की मुसीबतों की दास्तान सुनिये। परसों तुम्हारा खत पढ़कर लश्कर को गया। मीर मुंशी से मिला। उनके खीमे में बैठकर साहब सेक्रेतर बहादुर को इत्तिला करवाई। चपरासी के साथ कल्लू भी गया। जवाब आया कि हमारा सलाम दो और कहो कि फ़ुर्सत नही है। खैर, मै अपने घर आया। कल फिर गया। खबर करवाई। हुक्म हुआ कि गदर के ज़माने में तुम बाग़ियों की खुशामद करते रहते थे, अब हमसे मिलना क्यों माँगते हो ? आलम-नज़र[2] मे तीरा व तार[3] हो गया। ये जवाब पयामे नौमीदी ए जावीद[4] है। न दरबार, न खिलत, न पिन्शन। इन्नालिल्लाह व इन्नाइलिहे राजऊन। बक़िया खबरे लश्कर ये है कि राजा भरतपूर बरात लेकर पटियाले गया था और इस सबब से आगरे मे लार्ड साहब से नहीं मिला था। एक हफ़्ते से मुआवदत[5] करके यहाँ आया हुआ था। आज उसकी मुलाज़िमत है।

शम्बा ३१ दिसम्बर १८५९ ई० ग्यारह बजे होगे। मै खत लिख रहा हूँ, तोपे चल रही है। शायद राजा साहब की मुलाक़ात इसी वक़्त हुई। कल यकशम्बा है। परसों दोशम्बे को या सेशम्बे को लार्ड साहब का कूच है। कहते है कि पेशावर तक जाएँगे।

कल सुबह को मुहम्मद क़ुलीखाँ आये, एक अर्ज़ी अँग्रेज़ी उनके हाथ मे। कहने लगे ये अर्ज़ी तालिबअली फ़ीलबान ने मुझको फेर दी है और कहा है कि इसके गुज़रानने का मौका नहीं। मै उस वक़्त सवार हुआ चाहता था। तुम्हारी यास[6] सुन कर गया, अपना दाग़े हसरत जैसा ऊपर लिख आया हूँ, लेकर आया।

इब्राहीमअलीखाँ अलवर में मुस्तस्क़ी[7] होकर मर गये, खुदा उनको बख्शे

---

१. गुरुवार। २. ससार की दृष्टि में। ३. पूर्णतया निराश। ४. स्थायी निराशा का सन्देश। ५. लौटना। ६. निराशा। ७. जलोदर का रोगी।

और मुझको भी ये दिन नसीब करे। कमिश्नर साहब का नायब यहाँ कोई नहीं और न किसी अँग्रेज़ीख़ाँ से इसकी तस्दीक़ हो सकती है। इतना मस्मू[1] हुआ है कि एक महकमा लाहौर में मुआवज़ए नुक़साने रिआया[2] के वास्ते तजवीज़ हुआ है और ये हुक्म है कि जो रैयत का माल कालों[3] ने लूटा है, अलबत्ता उसका मुआविज़ा बहिसाबे दह यक[4] सरकार से होगा, याने हज़ार रुपये के माँगनेवाले को सौ रुपये मिलेंगे और जो गोरों के वक़्त की ग़ारतगिरी है वो हदर[5] और बेहल[6] है। उसका मुआविज़ा न होगा। शायद ये वही कमिश्नर हों। मकानात को हामिद अलीख़ाँ का कह कर क्यो लिखते हो, वो तो मुद्दत से ज़ब्त होकर सरकार का माल हो गया, बाग़ की सूरत बदल गई। महलसरा[7] और कोठी मे गोरे रहते थे। अब फाटक और सर ता सर दूकाने गिरा दी गई। संग व ख़िश्त[8] का नीलाम करके रुपया दाखिले ख़ज़ाना हुआ। मगर ये न समझो कि हामिद अलीख़ाँ के मकान का मलबा बिका है, सरकार ने अपना मम्लूका व मक़बूज़ा[9] एक मकान ढा दिया। जब बादशाहे अवध की अमलाक[10] का वो हाल हो तो रैयत की अमलाक को कौन पूछता है? तुम अब तक समझे नही हो कि हुक्काम क्या समझते है और न कभी समझोगे। कैसा नौ दराय, कैसी नक़्ले हुक्म? कैसा मूराफ़ा? जो अहकाम कि दिल्ली मे सादर हुए है, वो अहकाम क़ज़ा[11] व क़दर[12] हैं, उनका मुराफ़ा कही नहीं। अब यों समझ लो कि न हम कभी कहीं के रईस थे, न जाह[13] व हशम[14] रखते थे। न अमलाक थे, न पिन्शन रखते थे। रामपूर ज़िन्दगी मे मेरा मस्कन[15] और बादे

---

१. श्रुत। २. जनता की क्षतिपूर्ति। ३. भारतीय विद्रोही सैनिक। ४. दस पर एक। ५. किसी के वध को उचित सिद्ध करना। ६. क्षम्य। ७. अन्तःपुर। ८. पत्थर और ईंट। ९. अधिकृत। १०. सम्पत्ति। ११. ईश्वरीय आदेश। १२. ईश्वरादेश, भाग्य। १३. पद-प्रतिष्ठा। १४. सैनिक, नौकर-चाकर। १५. घर।

मर्ग[1] मेरा मदफ़न[2] हो लिया। जब तुम लिखते हो कि अल्लाह तुम वहाँ जाओ तो मुझको हँसी आती है। मैं यक़ीन करता हूँ कि हिलाले माहे रज्जबुल मुरज्जब[3] रामपूर में देखूँ। जो तदबीर बसीक़े के बाब मे तुमने की है, वो बहुत मुनासिब है। बशर्ते पेश होने के और विलायत पहुँचने के सज्जाद मिर्ज़ा और अकबर मिर्ज़ा अपनी पीराना सरीह[4] मे इस पर क़ाबिज़ हो रहेंगे, इन्शा अल्लाहुल अलीउल अज़ीम[5]।

यूसुफ़ मिर्ज़ाखाँ को दुआ पहुँचे। हाल क़सीदा व मुखम्मस[6] का मालूम हुआ। क़िब्ला व काबा वो कर रहे हैं जो अब्बा औलाद से और आक़ा[7] गुलाम से सुलूक करता है। उनको मंजूर है कि दुआ का अतीया[8] जुदा पाऊँ और सना[9] का सिला[10] जुदा पाऊँ--

कारसाजे मा बफिक्रे कारे मा[11]

लेकिन मेरी जान, इन्साफ तो कर इन सिलों[12] मे ज़िन्दगी तो बसर नहीं होती। ये फ़िक्र भी बेहूदा है। ज़िन्दगी मेरी कब तक ? सात महीने ये और बारह महीने साल आइन्दा के। इसी महीने मे अपने आका के पास जा पहुँचता हूँ, वहाँ न रोटी की फिक्र, न पानी की प्यास, न जाड़े की शिद्दत, न गर्मी की हिद्दत, न हाकिम का खौफ़, न मुखबिर का खतरा, न मकान का किराया देना पड़े, न कपड़ा ख़रीदना पडे। न गोश्त-घी मँगाऊँ, न रोटी पकाऊँ, आलमे नूर और सरासर सुरूर[13]।

---

१. मृत्यु के पश्चात्। २. दफ़न का स्थान। ३. रज्जब मास के शुक्ल पक्ष का नवचन्द्र। ४. बुढ़ापे में। ५. महत्तम ईश्वर चाहे तो। ६. पाँच-चरण की कविता। ७. स्वामी। ८. दान। ९. प्रशंसा। १०. प्रतिफल। ११. जिसने हमे बनाया, वही हमारी चिन्ता करता है। १२. प्रतिफल। १३. हर्ष, नशा।

या रब ई आरज़ू ए मन चे ख़ुशस्त
तू बदीं आरज़ू मरा बेरसाँ[1]

रोज़ शम्बा, ३१ दिसम्बर १८५९ ई०।

बन्दए अली इब्न अबी
तालिब, आरज़ूमन्दे मर्ग[2]
—ग़ालिब

---

१. हे ईश्वर, मेरी यह लालसा कितनी शुभ है। तुम मेरी यह लालसा पूरी करो। २. अबूतालिब के पुत्र हज़रत अली का मैं बन्दा हूँ, मृत्यु का इच्छुक हूँ।

नवाब सज्जाद मिर्ज़ा के नाम

१

(मार्च, १८६५ ई०)

खूबी ए दीन व दुनिया तुमको अर्ज़ानी[1] तुम्हारे खत के देखने से आँखें रोशन हो गई, दिल को चैन आ गया। चश्मे बद्दूर[2] खत अच्छा, इबारत अच्छी। उर्दू मे मतलब नवीस अच्छे हो, हक़ताला तुमको उम्र व दौलत अता करे। अपने वालिद माजिद[3] को सलाम कहना। अपने भाई मुज़फ़्फर मिर्ज़ा को दुआ कहना ज्यादा ज्यादा।

मार्च १८६५ ई०, रोजशम्बा।

नजात का तालिब
—ग़ालिब (१२)

२

जुह्एए आले रसूल[4] सज्जाद मिर्ज़ा खाँ को फ़क़ीर गालिब अली शाह की दुआ। दिलनवाज़ नामा[5] पहुँचा—

हैराँ अतवारे खुदम दर मुद ए कारे खुदम
हर लहज़ेदारम नीमते चूं क़ुर्र ए रम्माल हा[6]

---

१. सहज, सुलभ। २. तुम्हे नज़र न लगे। ३. पवित्र पिता। ४. हज़रत मुहम्मद के वश के शिरोमणि। ५. चित्ताहर्षक पत्र। ६. मै अपने रंग-ढग पर चकित हूँ, अपने काम से दुखी हूँ। (मेरे लिए) प्रत्येक क्षण लालसा लाता है, जैसे ज्योतिषी पासे से इच्छा करता है।

तुम्हारे यार बाक़र मिर्ज़ा तहसीलदारी-तहसीलदारी पुकारते थे। यहाँ मालूम हुआ कि तमाम कलमरौ[1] मे छै तहसीलदारियाँ और छै थानेदारियाँ हैं। सातवाँ इलाक़ा कहाँ से पैदा किया जाये? रही मुसाहबत, उसको पहले तसन्नुन[2] और फिर उलूमे रस्मिया[3] से आगही, फ़िर ज़बान आवरी[4] फिर क़िस्मत की आवरी[5] शर्त है। बाक़रअलीखाँ को तीन शर्तें दरकार, पहली शर्त मौज़ूद। तुमको पहली शर्त अज़लन व अबदन[6] मफ़क़ूद[7], बादे जश्न-वक़्ते रुख़सत इन दोनों लड़कों के बाब मे नाज़िरजी और मुज़फ़्फ़र मिर्ज़ा और तुम्हारे बाब मे, मुहम्मद मिर्ज़ा इब्ने सैफ़ुद्दौला और मियाँ ज़कीउद्दीन और मियाँ अब्दुस्सलाम के बाब मे कलाम करूँगा।

—ता बिनग्रेद खास्त ए किर्दगार चीस्त[8]

---

१. राज्य। २. सुन्नी बनना। ३. प्रचलित कानून का ज्ञान। ४. भाषा का ज्ञान। ५. भाग्यशाली होना। ६. अनादितः और अनन्ततः। ७. लुप्त। ८. ईश्वर क्या करता है, इसकी प्रतीक्षा करनी चाहिए।

नवाब मीर गुलाम बाबाख़ाँ के नाम

१

(६ सितम्बर, १८६३ ई०)

सुभानुल्लाह्, ताला शानहू मा आज़मा बुरहानहू[1]। जनाब मुस्तताब[2] नवाब मीर गुलाम बाबाख़ाँ बहादुर से बतवस्सुत मियाँ दादखाँ साहब शनासाई[3] बहम पहुँची, लेकिन वाह, अक्वल साग़र व दुर्दी[4] क्या जिगरे ख़ूंकुन इत्तिफ़ाक़ है। पहला इनायतनामा जो हज़रत का मुझको आया, उसमे ख़बरे मर्ग[5]। अब मैं जो उसका जवाब लिखूं, और ये मेरा पहला ख़त होगा, ला मुहाला मज़ामीन अन्दोह अंगेज[6] होंगे। न नामए शौक़, न मुहब्बत नामा, सिर्फ़ ताज़ियतनामा[7] सरीरे कलम[8] मातमियो के शेवन[9] का ख़रोश है जो लफ़्ज़ निकला वो स्याहपोश है, है है है नवाब मीर जाफ़रअलीखाँ जैसा अमीर रौशनगुहर[10] नामावर[11], रूशनास[12] आयने हिन्द व इग्लैंड[13] वस्ते जवानी[14] याने ४६ बरस की उम्र मे यो मर जाये—

नख़्ले चमने सरवरी उफ़्ताद ज़े पा हाए[15]

---

१. ईश्वर पवित्र है, अनुपम प्रताप रखता है, उसके लिए कोई तर्क नहीं है। २. शुभ। ३. परिचय। ४. पहले प्याले में ही तलछट। ५. मृत्यु का समाचार। ६. दुःखपूर्ण। ७. मृत्यु की सवेदना का पत्र। ८. लिखते समय लेखनी के चलने की ध्वनि। ९. शोक। १०. कुलीन। ११. प्रसिद्ध। १२. परिचित। १३. भारत और इगलैण्ड के नेत्र। १४. जवानी के बीच। १५. उद्यान का सबसे अच्छा पेड गिर गया, हाय!

सच तो यों है कि ये दहरे आशोबेग़म[1] है, मजमूए अहले हिन्द[2] मातमदार व सोगवार हों तो भी कम है। अगरचे मैं क्या और मेरी दुआ क्या मगर इसके सिवा कि मग़फ़िरत[3] की दुआ करूँ, क्या करूँ? क़तए साले रेहलते नवाब ग़ुफ़रांमआब[4]। जब दिल खार खार ग़म से पुरख़ूं हुआ, यों मौज़ूं हुआ—

गर दीद निहाँ मेहरे जहाँताब दरेग़
शुद तीरा जहाँ ब चश्मे अहबाब दरेग़
ई वाक़िया राज़े रफ़ए ज़ारी 'ग़ालिब'
तारीख रक़म कर्द के **नवाब दरेग़**[5]

ग़ज़ारी (याने) ज़ा, हव्वज़ के अदद बढ़ाये जाये तो १२८० हि० पैदा होते है। लिहाज़ा अल मतलूब शरीके बज़्मे मातम मुशी मियाँ दादख़ाँ साहब को सलाम।

यकशम्बा बीस्तव यकुम रबीउल अव्वल १२८० हि० मुताबिक़ शशुम सितम्बर १८६३ ई०।

२

(३ सितम्बर, १८६४ ई०)

ब जनाब नवाब साहब जमीलुल मुनाक़िब[6], अमीमुल एहसान[7], सल्ल

---

१. शोक का युग। २. भारत के सब निवासी। ३. मोक्ष। ४. मोक्षप्राप्त स्वर्गीय नवाब की मृत्यु के वर्ष का पद। ५. ससार को प्रकाशित करने वाला सूर्य छिप गया, दुःख है। मित्रों की आँखों की दुनिया में अंधेरा, छा गया। शोक स्वरूप 'ग़ालिब' ने इस घटना की तिथि लिखी कि 'नवाब दरेग़' (हाय नवाब)। ६. कीर्तिगान करने वालों के सुन्दर। ७. परोपकारी।

मुल्लाह ताला[1], बाद सलाम मसनूनुल इस्लाम[2] दुआए दौलत व इक़बाल के हमेशा विर्द[3] ज़बान है, घड़ी के अतीया का शुक्र हर घडी और हर साअत बजा लाता हूँ। पहले तो आप दोस्त और फिर अमीर और फिर सैयद:। नजर इन तीन उमूर पर इस अर्मुगाँ[4] को मैंने बहुत अज़ीज़ समझा. और अपने सर और आँखों पर रखा। खुदा ए आलम आरा[5] आपको सलामत रखे और हर घडी आपका मुमिद[6] व मददगार रहे। जाहिरा, बवक़्ते खानगी कुंजी का रखना सह्व[7] गया। खैर, यहाँ बन जाएगी। वस्सलाम बउल्फिल एहतराम[8]।

खुशनूदी ए अहबाब का तालिब
--ग़ालिब

३

(३१ मई, १८७५ ई०)

जनाब नवाब साहब,

आपके अखलाक़ का शाकिर[9] और आपकी याद आवरी का ममनून[10] और आपके दवामे दौलत[11] का दुआगो हूँ। अगर बूढ़ा और अपाहिज न होता, तो रेल की सवारी मे मुक़र्रिर आप तक पहुंचता और आपके दीदार से मसर्रत अन्दोज़ होता। आप मेरे शफ़ीक़[12] और मेरे मुहसिन[13] है। खुदा आपको हमेशा सलामत ब करामत रखे। खत के देर-देर लिखने

---

१. ईश्वर रक्षा करे। २. अभिवादन-श्रुत होने के पश्चात्। ३. पाठ-जप। ४. भेट। ५. ससार को सुसज्जित करने वाला ईश्वर। ६. रक्षक। ७. भूल, भ्रान्ति। ८. अत्यधिक आदर के साथ अभिवादन। ९. कृतज्ञ। १०. आभारी। ११. धन की स्थिरता। १२. प्रियकारी। १३. प्रियकारी।

का सबब ज़ोफ़ व नकाहत[1] है। अगर मेरी औक़ाते शबानारोज़ी[2] और मेरे हालात आप देखें तो ताज्जुब करेंगे कि ये शख़्श जीता क्यों कर है। सुबह से शाम तक पलंग पर पड़े रहना और फिर दमबदम पेशाब को उठना। इन मजमू ए मसायब[3] में से एक अदना मुसीबत ये है कि १२८२ हिजरी शुरू हुई, १२१२ हि० की विलादत[4] है। अब के रज्जब के महीने से सत्तरहवाँ साल शुरू होगा। सत्तरा-बहत्तरा बहरा, बूढ़ा, अपाहिज आदमी हूँ। जो इनायत तुम मेरे हाल पर फ़रमाते हो, सिर्फ़ तुम्हारी ख़ूबी है। मैं किसी लायक़ नहीं।

चहार शम्बा ३१ मई १८७५ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

४

(१७ सितम्बर, १८६५ ई०)

नवाब साहब जमीलुल मनाक़िब अमीमुल एहसान उम्मीदगाहे दरवेशाँ[5] ज़ादा अफ़ज़ालकुम[6]—

आपका बन्द ए मिन्नत पिज़ीर[7] ग़ालिब ख़ूनी सफ़ीर[8] यों नवासज[9] होता है कि इनायतनामा इज्ज़े[10] बुरूद[11] लाया और मुज्द ए क़ुबूल[12] से मेरा रुत्बा बढ़ाया। जो कुछ मेरे हक़ मे इर्शाद हुआ, अगर इर्शाद हुआ, अगर इसको क़द्रदानी कहूँ तो लाज़िम आता है कि अपने को एक तरह के कलाम का मालिक

---

१. त्रुटि, दोष। २. रात-दिन का समय। ३. मुसीबतों का समूह। ४. जन्म। ५. संन्यासियों के आशास्थल। ६. आप की प्रतिष्ठा बढ़ाये। ७. कृतज्ञ। ८. घातक सन्देशवाहक, रक्तरंजित दूत। ९. गायक। १०. प्रतिष्ठा ११. आगमन। १२. स्वीकृति का शुभ समाचार।

जानता हूँ। अलबत्ता आपने अज़राहे हक़पसन्दी सुख़न की क़द्रदानी और मेरी क़द्र अफ़ज़ाई की है। जो अग़लाते फ़ारसी[1] दानाने हिन्द[2] के ज़हन में रासिख़[3] हो गये थे, उनको दफ़ा किया है तो क्या बुराई की है। बात यें है कि ओछी पूंजीवाले गुमनाम अपनी शुहरत के लिए मुझसे लड़ते हैं। वाह-वाह अपने नामवर बनाने को नाहक अहमक बिगड़ते हैं।

अतीय ए हज़रत बतवस्सुत जनाब सैफ़ुलहक़ पहुँचा और मैंने उसको बेतकल्लुफ़ अतीय ए मुर्तज़वी[4] समझा। अल्ली मुर्त्तज़ा अलहि तह्हयतो वस्सना[5] आपका दादा और मेरा आक़ा[6]। ख़ुदा का एहसान है कि मै एहसानमन्द भी हुआ तो अपने ख़ुदाबन्द[7] के पोते का। आज से कापी लिखी जाने लगी और तस्हीह्[8] को मेरे पास आने लगी। छापे के वास्ते बरसात का मौसम अच्छा है, बस, अब उसके छप जाने मे देर क्या है।

सुबह यकशम्बा १७ सितम्बर १८६५ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

५

(२२ मार्च, १८६६ ई०)

नवाब साहब जमीलुल मुनाक़िब अमीमुल एहसान सलामत। फ़क़ीर अमदुल्लाह् अर्ज़ करता है कि आपके ख़त के आने ने मेरी आबरू बढ़ाई।

---

१. फारसी की अशुद्धियाँ। २. भारत के चतुर लोग। ३. दृढ़। ४. हजरतअली का दान। ५. उन पर ईश्वर का आशीर्वाद हो। ६. मालिक। ७. स्वामी। ८. संशोधन।

हक़ताला तुम्हें सलामत रखे। ३६ 'दुरफ़िशे कावयानी' की रसीद पहुँची। हस्बुल इर्शाद[1] अब और न भेजूँगा। क़िब्ला गर्ज़ शुहरत है। इस कलमरौ[2] में मैंने जिल्दें तक़्सीम की हैं। उस मुल्क में आप बाँट दें। इतनी मेरी अर्ज क़ुबूल हो कि बड़ौदा, गुजरात में सैयद अहमद हसन साहब मौदूदी और मीर इब्राहीमअलीख़ाँ साहब को एक-एक जिल्द भिजवा दीजिएगा, और छै जिल्दें मौलाना सैफ़ुलहक़ को अता कीजिएगा कि वो अपने दोस्तों को भिजवा दें।

ख़ाजा बदरुद्दीनख़ाँ मेरे भतीजे ने 'बोस्ताने ख़याल' को उर्दू में लिखा है। उसका एक इश्तिहार और यहाँ एक अख़बार नया जारी होने वाला है उसके दो इश्तिहार इस ख़त के साथ भेजता हूँ। आप या आपके अहबाब में से कोई साहब किताब के या अख़बार के ख़रीदार हों तो इश्तिहार के मज़मून के मुताबिक़ अमल में लायें। वस्सलाम माउल इकराम[3], मियाँ सैफ़ुल हक़ को सलाम।

६

(८ अगस्त, १८६६ ई०)

नवाब साहिब जमीलुल मुनाक़िब अमीमुल एहसान नवाब मीर गुलाम बाबा साहब बहादुरज़ादा[4] मज्दहु[5]—

अर्ज़ किया जाता है कि आपका इनायतनामा और मौलाना सैफ़ुलहक़ का मेहरबानीनामा, दोनों लिफ़ाफ़े एक दिन पहुँचे। सैफ़ुलहक़ के ख़त से मालूम

१. आदेश के अनुसार। २. देश। ३. ईश्वर रक्षा करे और दया करे। ४. वीरपुत्र। ५. शुभ समाचार।

हुआ कि रज्जब के महीने में शादियाँ करार पाई हैं। मुबारक हो और मुबारक हो। नज्जार ए बज़्मे जमशीदी[1] से महरूम[2] रहूँगा, मगर मेरा हिस्सा मुझको पहुँच रहेगा। खातिर जमा है।

क्यों हज़रत साहिबज़ादे का इस्मे तारीखी[3] पसन्द आ गया या नहीं? नाम तारीखी और फिर सैयद भी और खान भी। सैयद महाबतअलीखाँ अजब है, अगर पसन्द न आये और बहुत अजब है इस अम्र की न आपके खत में तौजीह[4] न मियाँ दादखाँ के खत मे खबर। ये मैं नहीं कहता कि खाही न खाही यही नाम रखिये। पसन्द आने या न आने की तो फ़कीर को इत्तिला हो जाये।

जवाब का तालिब

—ग़ालिब

७

(१४ नवम्बर, १८६६ ई०)

सतूदा[5] बहरे ज़बान[6] व नामवर बहरे दयार[7]। नवाब साहिब शफ़ीक़[8] करम गुस्तर[9] मुर्त्तज़वी तबार[10] नवाब मीर गुलाम बाबाख़ाँ बहादुर को मसर्रत[11] बादे मसर्रत व जश्न बादे जश्न मुबारक व हुमायूँ[12] हुआ। रुक्क ए गुलगूँ[13] ने बहार की सैर दिखलाई। ब सवारी ए रेल रवाना होने की लहर दिल में

---

१. जमशीद की सभा के समान बैठक का दृश्य। २. वंचित। ३ जिस नाम से जन्म-सवत् का पता चले। ४. स्पष्टीकरण। ५. प्रशस्य। ६. भाषा के लिए। ७. देश के लिए प्रसिद्ध। ८. कृपालु, मित्र। ९. दयालु। १०. हज़रत अली के वंशज। ११. हर्ष। १२. सौभाग्यशाली। १३. गुलाबी।

आई । पाँव से अपाहिज, कानो से बहरा, ज़ोफ़े बसारत[1], ज़ोफ़े दिमाग़, ज़ोफ़े मेदा, इन सब ज़ोफ़ों पर ज़ोफ़े तालें[2] । क्यों कर क़स्दे सफ़र करूँ ? तीन-चार शबाना[3] रोज़े क़फ़स[4] मे किस तरह बसर करूं ? घटे भर मे दो बार पेशाब की हाजत होती है। एक हफ़्ते-दो हफ़्ते के बाद नागाह क़ौलज[5] के दौरे की शिद्दत होती है। ताक़त जिस्म मे, हालत जान मे नही, आना मेरा सूरत तक किसी सूरत हय्यज़े इम्कान[6] मे नही । खत लिखते-लिखते खयाल मे आया कि सैयद साहिब की विलादत[7] की तारीख लिखी। सैदानी साहिबा की बिस्मिल्लाह[8] की तारीख भी लिखा चाहिए। मादा 'खुजिस्ता बहार' ज़हन मे आया। सात अदद कम पाये। खुजिस्ता 'बहार' पर अदद के आदाद[9] बढाये। शुमार मे १२८३ नज़र आये। दूसरे वर्क़ पर वो क़ता मरकूम[10] है । बूढ़ों की फ़िक्र की ताक़त मालूम है, सिर्फ़ जोशे मुहब्बत से चार मिस्रे मौजूं हुए हैं ।

गर क़बूल उफ्तद ज़े हे इज्जो शरफ़[11]

१४ नवम्बर १८६६ ई० ।

राकिम[12]

—असदुल्लाह खाँ 'ग़ालिब'

मैफ़ुलहक़ साहिब को सलाम। एक मेरे दोस्त मुसव्वर[13] खाकसार[14] का खाका उतार कर दरबार का नक्शा उतारने को अकबराबाद गये है। वो आ जायें तो शग्ले तस्वीर[15] तमाम होकर आप के पास पहुँच जाये। खत अज़राहे एहतियात बैरंग भेजा जाता है।

---

१. दृष्टिमान्द्य । २. भाग्य की मन्दता या निर्बलता । ३. रात्रि । ४. जेल (लाक्ष, रेल की यात्रा) । ५. पँसली के नीचे उठने वाला दर्द । ६. सम्भावना का स्थल । ७. जन्म । ८. विद्यारम्भ । ९. संख्या । १०. लिखित । ११ यदि स्वीकार हो जाये तो बड़ी प्रतिष्ठा हो । १२. लेखक । १३. चित्रकार । १४. सेवक । १५. चित्रकारी ।

नबाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ के नाम

ख़ुजिस्ता जश्मे दबिस्ताँ नशीनी ए बेगम
बफ़ैज़े हिम्मते तो आबो यु ने इक़बालश
चो अज़पए अदब आमोज़ीस्त खुश बाशद
अगर ख़ुजिस्ता बहारे अदब बुबद सालश[1]

८

(मार्च, १८६७ ई०)

नवाब साहिब जमीलुल मनाकिब अमीमुल एहसान, आलीशान, बाला दूदमान[2] जादे मज्दकुम[3]—

सलाम मसनून अस्सलाम व दुआ ए दवामे दौलत व इक़बाल के बाद अर्ज किया जाता है कि इन अयामे मैमनत फ़र्जाम[4] मे जो अज़रूए अखबार बम्बई आपकी अफ़ज़ाइश[5] इज्ज़ो जाह[6] के हालात मालूम हुए, मुतवातिर शुक्रे इलाही[7] बजा लाया और इस तरक्क़ी को अपनी दुआ का नतीजा जानकर और ज्यादा खुश हुआ। खुसूसन अदालतुल आलिया[8] में फ़तह पाना और हक़े हक़ीक़ी का जुहूर मे आना, क्या कहूँ किस क़दर मसर्रत व शादमानी[9] का मूजिब[10] और किस तरह की निशात[11] व इबिसात[12] का सबब हुआ है। हकताला ये फतह मुबारक[13] व हुमायूँ[14] करे। क़ता—

---

१. बेगम को पाठशाला मे सम्मिलित कराने का जो शुभ अवसर मनाया जा रहा है, तुम्हारे साहस के शुभत्व से उसके सौभाग्य और प्रभाव मे वृद्धि हो। वह वर्ष जिसमे उसकी शिक्षा का प्रारम्भ हुआ है, उसका नाम 'खिजिस्ता बहारे-अदब' रखा जाये। २. श्रेष्ठ वश। ३. सुपुत्र। ४. परिणाम का मांगलिक अवसर। ५. वृद्धि। ६. प्रतिष्ठा और मर्यादा। ७. ईश्वर का धन्यवाद। ८. मुख्य न्यायालय। ९. हर्ष। १०. कारण। ११. आनन्द। १२. सुख। १३. शुभ। १४. माँगलिक।

फतहे सैयद गुलाम बाबाखाँ
खुद निशाने दवामे इक़बालस्त
हम अज़ीं रू बुवद के गालिब गुफ्त
के '**जफ़रनाम ए अबद**' सालस्त[1]

बहारे बागे जाहो जलाल जवदाँ बाद[2]।

—असदुल्लाह् गालिब

८

(३ अप्रैल, १८६७ ई०)

नवाब साहब जमीलुल मनाकिब अमीमुल एहसान इनायत फ़र्माए मुख्लिसाँ[3] ज़ादे मज्दहु। शुक्रे याद आवरी व रवाँ पर्वरी बजा लाता हूँ। पहले इससे आपका मवद्दतनामा[4] पहुँचा है, वो मेरे खत के जवाब मे था। उसका जवाब नहीं लिखा गया। परसों मियाँ सैफ़ुल हक़ का खत पहुँचा। खत क्या था, खाने दावत[5] था। मैंने खाने भी खाये, मेवे भी खाये, नाच भी देखा, गाना भी सुना। खुदा तुमको सलामत रखे कि इस नालायक़ दरवेश गोशानशी[6] पर इतनी इनायत करते हो। साहब, रियासत व अमारत[7] मे ऐसे झगड़े बहुत रहते हैं। बसबबे फ़र्त्ते मुहब्बत[8] अखबार में तुम्हारी अफ़्ज़ाइशे इज़्ज़

---

१. सैदय गुलाम बाबाखाँ की जीत उनके शाश्वत सौभाग्य का चिह्न है। इसी लिए ग़ालिब ने कहा कि यह वर्ष 'ज़फ़र नाम ए अबद' के नाम से स्मरण किया जाये। २. आपकी प्रतिष्ठा और महत्ता के बाग की बहार स्थायी रहे। ३. आत्मीय जनों पर कृपा करने वाले। ४. मित्रता का पत्र। ५. सहभोज का थाल। ६. एकान्तसेवी सन्यासी। ७. दबदबा। ८. प्रेम का आधिक्य।

व जाह[1] देखकर ख़ुश हुआ और तुमको तहनियत[2] दी। 'ज़फ़र नाम ए अबद' बहुत मुबारक लफ़्ज़ है। इंशा अल्लाहुल अलीउल अज़ीम[3] हमेशा मुज़फ़्फ़र[4] व मन्सूर[5] रहोगे।

कारत बजहाँ जुम्ला चुनाँ बाद के ख़ाही[6]

सेशम्बा, ३ अप्रैल १८६७ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

१०

(६ अप्रैल, १८६८ ई०)

जनाब सैयद साहब क़िब्ला,

बाद बन्दगी अर्ज़ करता हूँ कि इनायतनामा आपका पहुँचा। आप जो फरमाते हैं कि तू अपनी ख़ैरियत कभी-कभी लिखाकर, आगे इतनी ताक़त बाक़ी थी कि लेटे-लेटे कुछ लिखता था, अब वो ताक़त भी ज़ायल[7] हो गई। हाथ मे राशा[8] पैदा हो गया, बीनाई[9] जईफ़[10] हो गई। मुतसद्दी नौकर रखने का मक़दूर[11] नही। अज़ीज़ों और दोस्तों मे से कोई साहिब वक़्त पर आ गये तो मैं मतलब कहता गया, वो लिखते गये। ये हुस्ने इत्तिफ़ाक़[12] है कि कल आपका ख़त आया, आज ही एक दोस्त मेरा आ गया कि ये सतरे लिखवा दी और ये आप कभी न फ़रमाये कि मुंशी मियाँ दादख़ाँ से मुझे क़तै मुहब्बत[13] हो गया है। मुंशी साहब की मुहब्बत और उनके तवस्सुत से आपकी मुहब्बत दिल व

---

१. प्रतिष्ठा की वृद्धि। २. बधाई। ३. महान् ईश्वर ने चाहा तो। ४. विजयी। ५. विजेता। ६. संसार में तुम्हारे काम ईश्वर तुम्हारी इच्छानुसार पूरा करे। ७. नष्ट। ८. कम्पन। ९. दृष्टि। १०. निर्बल। ११. सामर्थ्य। १२. संयोग। १३. स्नेह-भंग।

वाँ में इस क़दर समा गई है, जैसा अहले इस्लाम[1] में मलेका[2] ईमान का। पस ऐसी मुहब्बत का मौक़ूफ़ होना कभी मुमकिन नहीं। अमराज़े जिस्मानी[3] का बयान और इख़लासे हमदिगर[4] की शरह[5] के बाद हुजूमे ग़महाए निहानी[6] का ज़िक्र क्या करूँ ? जैसा अब्रे स्याह छा जाता है, या टिड्डीदल आता है। पस अल्लाह ही अल्लाह है। सैफ़ुलहक़ मुंशी मियाँ दादख़ाँ को सलाम कहिएगा और ये ख़त पढ़ा दीजिएगा।

रोज़ चहारशम्बा, ६ अप्रैल १८६८ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

---

१. मुसलमानों में। २. स्थान। ३. शारीरिक रोग। ४. पारस्परिक स्नेह। ५. व्याख्या। ६. गुप्त दुःख-समुदाय।

नवाब इब्राहीमअलीख़ाँ के नाम

१

(२१ जुलाई, १८६६ ई०)

पीर व मुर्शिद जनाब सैयद इब्राहीमअलीख़ाँ को बन्दगी। ग़ज़ल पहुँचती है। ख़त अज़ रू ए एहतिहयात बैरंग भेजा है। क़िब्ला, आपके भाई मीर आलम अलीख़ाँ साहब मुझ पर क्यों ख़फ़ा हैं के अपनी ग़ज़ल नहीं भेजते ? मे अज़ उनके ख़ातिरे निशान हो जाये कि ग़ालिब आपके दादा का ग़ुलाम और ख़िदमत बजा लाने को आमादा है।

नहुम रबीउस्सानी १२८३ हि०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२

(२० अक्तूबर, १८६६ ई०)

वली नेमत को ग़ालिब की बन्दगी,

बसबब ज़ोफ़ पीरी[1] के ख़िदमत गुजारी मे दिरंग[2] वाक़े हो जाये तो माफ़ रहूँ, क़ासिर[3] कभी न रहूँगा। इशाअल्लाह उल अज़ीम। दो ग़ज़लों मे से एक ग़ज़ल बादे इस्लाह पहुँचती है, दूसरी ग़ज़ल हफ़्त ए आइन्दा मे पहुँच

---

१. बुढ़ापे की निर्बलता। २. विलम्ब। ३. त्रुटि करने वाला।

जाएगी। ज़ोफ़े आज़ा[1] और दवामे मर्ज़[2] से अलावा इस्तिलाले हवास[3] क क्या हाल लिखूं। दो तीन दिन हुए कि क़िब्ला व काबा मीरआलम अलीख का ख़त आया। वो लिखते हैं कि 'आज़ुर्दा' तख़ल्लुस की दो ग़ज़ले इस्लाह पहुँचीं। देखिये इस सह्व[4] को कि किसकी गजले किसको पहुँची मज़ा इसमें है कि अब ये भी याद नही आता कि आज़ुर्दा का नाम क्या है और वो कौन है और कहाँ का है ? शायद इस बन्द ए ख़ुदा को हज़रत की ग़ज़ले भेजी होगी। ख़ुदा करे वो बुज़ुर्गवार मीर साहब की गजले मीर साहब की तरह मेरे पास भेज दे, तो मीर साहब की ख़िदमत में भेज दूं। अगर ऐसा न हुआ तो उन गज़लों को, जो अब आई है, देखूंगा। ये इकहत्तर बरस की उम्र की ख़ूबी है। आप मीर साहब क़िब्ला को ख़त पढवा दीजिएगा।

लुत्फ व करम का तालिब

--ग़ालिब

३

(५ दिसम्बर, १८६६ ई०)

सैयद साहिब क़िब्ला नवाब मीर इब्राहीमअलीख़ां बहादुर को ग़ालिब अली शाह का सलाम। वो ग़ज़ल जिसका मत्ला ये है 'बस शौक़ क़त्ल से है' गुम हो गई फ़िर लिखकर भेजिये और क़ुसूर माफ़ कीजिये। ये ग़ज़ल जो इस ग़ज़ल के बाद भेजी है, फ़िलहाल बाद इस्लाह के पहुँचती है। मीर साहब क़िब्ला सैयद आलमअलीख़ां बहादुर की दो ग़ज़ले पहुंचीं। मगर वो ये लिखते हैं कि मैं रज्जब के महीने में वतन को जाऊँगा। और वहाँ से तेरे पास आऊँगा। आज बहिसाबे जन्तरी २७ और अज़रूए रुइयत[5] २६ रज्जब

---

१. अंगों की निर्बलता। २. जीर्ण रोग। ३. बुद्धि-विभ्रम। ४. भूल। ५. चन्द्र-दर्शन की दृष्टि से।

की है। ग़ज़ले उनकी मौजूद मगर भेज नहीं सकता। आप मेरी बेगुनाही के गवाह रहे। क़िब्ला, ज़ोफ़ ने मुज़महिल[1] कर दिया है, हवास बजा नहीं। इस महीने याने रज्जब की आठवीं तारीख से तेहत्तरवाँ बरस शुरू हो गया है। गिज़ा ब ऐतबार आरद[2] व बिरंज[3] मफ़क़ूद[4]। सुबह को पान-सात बदाम का शीरा, बारह बजे आबे गोश्त[5], शाम को चार कबाब तले हुए, बस आगे खुदा का नाम।

हाँ हज़रत, जनाब हकीम अहमद हसन साहब की तहरीर से कुछ हाल नासाज़ी का इख्वाँ व अहबाब[6] से हाल मालूम हुआ और वो इल्म बाअसे तवज्जोए ज़मीर[7] है। मुतवक्के[8] हूँ कि इस फ़िसाद के रफ़ा होने से और अपनी तमानियते[9] खातिर से फ़क़ीर को आगही बख्शिये और इस खत का जवाब मय रसीदे ग़ज़ल जल्द इर्साल फ़रमाइएगा।

पंजुम दिसम्बर १८६६ ई०, रज्जब की तारीख ऊपर लिख आया हूँ।

—असद बेदस्तगाह

४

(१७ अगस्त, १८६८ ई०)

बख़िदमत क़िब्ला सैयद अहमद हसन साहिब मौदूदी तस्लीम बजनाब मीर इब्राहीमअलीखाँ बहादुर कोर्निश मक़बूल बाद[10] तस्वीरे मिह्रे तन्वीर[11] मुझे पहुँची और मैंने रसीद लिख भेजी। अजब है कि आपको उसके पहुँचने में तरद्दुद है। इम्साल[12] फ़क़ीर ने जो अपनी ख़ाकसारी का ख़ाका याने तस्वीर

---

१. निर्बल। २. आटा। ३. चावल। ४. लुप्त। ५. शोरवा। ६. भाई-बन्धु। ७. अन्तःकरण की प्रेरणा का कारण। ८. आशान्वित। ९. सन्तोष। १०. स्वीकृति के पश्चात्। ११. सूर्य के समान प्रकाशमान्। १२. इस वर्ष।

मुंशी मियाँ दादख़ाँ की मारिफ़त नज़्र की है, यक़ीन है वो भी पहुँची होगी। दोनों ग़ज़लें बाद इस्लाह के भेजता हूँ। अपनी ग़ज़ल आप रहने दे और सैयद साहब की ग़ज़ल उनके हवाले कर दें।

जुमा, १७ अगस्त १८६८ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

५

जनाब तक़द्दुस इन्तिसाब[1] सैयद साहब किब्ला वाला मुनाक़ब[2] अलीशान सैयद इब्राहीमअलीख़ाँ बहादुर मद्दज़िल्लहुलआली[3]। बाद बन्दगी मालूम[4] है, हज़रत सैयद अहमदहसनख़ाँ साहब मद्दज़िल्लहुलआली की तहरीर से मालूम हुआ कि आपके घर मौलूदे मसऊद[5] पैदा हुआ। एक इबारते रंगीन मुरत्तब करके 'अकमल अल अख़बार' में मैंने छपवा दी है और एक रुबाई और क़ता अपना और एक क़ता सैयद साहब ममदूह[6] का जो उन्होंने यहाँ भेजा था वो भी छपवा दिया और तीन क़ते तारीख़ी बिहारीलाल मुन्तज़िम[7] और मीर फ़ख़रुद्दीन मुहतमिम[8] मतबे[9] ने जो यहाँ तारीख़ें लिखी थीं वो छपवा दीं, चुनाँचे अपनी लिखी हुई रुबाई और क़ता अर्ज़ करता हूँ—

रुबाई—

हक़ दाद ब सैयद जे पए इनामश
फ़र्रुख़ पिसरे के वाजिबस्त इकामश

---

१. पवित्र। २. प्रशंसित ३. ईश्वर तेरी छाया का विस्तार करे, तुम्हारी छाया बनी रहे। ४. प्रार्थना। ५. सौभाग्यशाली शिशु। ६. प्रशस्य। ७. प्रबन्धक। ८. व्यवस्थापक। ९. मुद्रणालय।

नवाब इब्राहीमअलीखाँ के नाम

तारीखे विलादतश बुवद बेकमोबेश
इर्शाद हुसेनखाँ के बाशद नामश[1]
ग़ालिब हाले सिनीन हिजरी
मालूम कुन अज़ खुजिस्ता फ़रजन्द
चूँ यक सदो बिस्तो चार मानद
ईनस्त शुमारे उम्रे दिलबन्द[2]

ये तो ज़ाहिर है कि १२८५ हि० है। जब 'खुजिस्ता फ़र्ज़न्द' के आदाद मे से १२८५ ले लिये तो एक सौ चौबीस बचते हैं। उनको मैंने दुआए उम्रे मौलूद[3] करार दिया। हक़ताला इस मौलूद[4] को तुम्हारे सामने उम्रे तबी[5] को पहुँचाये।

खत की रसीद का तालिब
—ग़ालिब

---

१. ईश्वर ने पुरस्कार स्वरूप एक शुभ पुत्र दिया, जिसकी महत्ता को स्वीकार करना उचित है। उसकी उत्पत्ति की तिथि है 'इर्शाद हुसेन'। इस नाम मे किसी प्रकार की घट-बढ़ की आवश्यकता नही। २. 'खुजिस्ता फ़रज़न्द' से उस लड़के का जन्मवर्ष (हिजरी) मालूम होता है। जब १२४ बचता है तो उस पुत्र की उम्र की गिनती इससे होती है। ३. शिशु की आयु। ४. शिशु। ५. दीर्घ-जीवन।

हकीम सैयद अहमदहसन मौदूदी के नाम

१

(१८ जून, १८६१ ई०)

हज़रत क़िब्ला,

पहले इल्तिमास[1] ये है कि आप सही उल नसब[2] सैयदे तमाम उम्मले[3] मरहूम[4] मुहम्मद अलहेस्सलाम के क़िब्ला व काबा[5], जब आप मुझको क़िब्ला व काबा लिखें तो फिर मैं आपको क्या लिखूं ? खुदा के वास्ते गौर कीजिये कि 'क़िब्लए किब्ला' और 'काबए काबा' ये क्या तरकीब है ? चूंकि आपने मुझे उस्ताद गर्दाना है, इस इल्तिमास को भी अज़ क़िस्मे इस्लाह[6] तसव्वुर कीजिये। जिन्हार[7] क़िब्लए क़िब्ला कभी न लिखिये, ये सूए अदब[8] है, बनिस्बत क़िब्ला। अयाज़न बिल्लाह[9]।

आपका उनूफ़तनामा पहुंचा। मेरे पहले खत का बदेर[10] पहुँचना और उसकी देर रसी[11] का सबब मुझको मालूम हुआ। अब इसका खयाल रखूंगा। ये अब आपको मालूम रहे कि आपके किसी खत का जवाब मेरे ज़िम्मे बाक़ी नहीं है। दो या तीन खत का जवाब नहीं पहुँचा। इसको ये समझिये कि वो खत राह में तलफ़[12] हुए और मेरे पास नहीं पहुँचे।

---

१. प्रार्थना। २. शुद्धवंश। ३. सम्प्रदाय। ४. स्वर्गीय। ५. पूज्य। ६. संशोधन का प्रकार। ७. कदापि। ८. साहित्यिक त्रुटि। ९. ईश्वर से शरण चाहता हूँ। १०. विलम्ब से। ११. देर से पहुँचना। १२. नष्ट।

हकीम सैयद अहमदहसन मौदूदी के नाम

बहारे गुलिस्ताँ अहमद हसन[1]

ये मजा[2] क्या बुरा है।

दिले हैदर व जान अहमद हसन[3]

ये इससे भी बेहतर है। इन दोनों में से एक 'सजा' मुहर पर खुदवा लीजिये। गजल बाद इस्लाह के पहुँचती है।

१९ ज़िलहज्जा १२७७ हि०, १८ जून १८६१ ई०।

—गालिब

२

(१९ जनवरी, १८६२ ई०)

हज़रत पीर व मुर्शिद,

ग़ज़ल बाद इस्लाह के पहुँचती है। गजल सह्व[4] से लिख गया हूं। दोनो ग़ज़लें पहुँचती हैं। जनाब मौलबी अन्सारअली साहब से मुझको तारुफ़[5] इस्मी है। उनको मेरा सलाम कहिये और कहिये कि हज़रत जनाब मौलवी सद्रुद्दीन साहब बहुत दिन हवालात मे रहे, कोर्ट मे मुक़दमा पेश हुआ, रूबकारियाँ[6] हुईं। आखिर साहिबाने कोर्ट ने जान बख्शी का हुक्म दिया। नौकरी मौक़ूफ़, जायदाद ज़ब्त। नाचार खस्ता व तबाह लाहौर गये। फ़नान्शल कमिश्नर और लफ़्टंट गवर्नर ने अज़राहे तरह्हुम[7] निस्फ़[8] जायदाद वागुज़ाश्त[9] की। अब निस्फ़ जायदाद पर क़ाबिज़ हैं। अपनी हवेली मे रहते हैं। किराये पर माश[10]

---

१. उद्यान की बसन्त—अहमद हसन। २. ऐसा गद्य जिसके वाक्यों में अन्त्यानुप्रास हो। ३. हजरतअली के प्राण और हृदय—अहमद हसन। ४. भूल, त्रुटि। ५. नाममात्र का परिचय। ६. सरकारी कार्रवाई। ७. दया के लिये। ८. आधा। ९. छुटकारा। १०. वृत्ति।

का मदार है। अगरचे ये इमदाद उनके गुज़ारे को काफ़ी है, किस वास्ते कि एक आप और एक बीबी, तीस-चालीस रुपये महीने की आमद। लेकिन चूंकि इमामबख़्श की औलाद उनकी इत्रत[1] है और वो दस-बारह आदमी हैं, लिहाज़ा फ़राग़बाल[2] से नहीं गुज़रती। ज़ोफ़े पीरी ने बहुत घेर लिया है। अश्रहे सामिना[3] के अवाख़िर[4] में है। ख़ुदा सलामत रखे ग़नीमत है।

यकशम्बा १९ जनवरी १८६२ ई०।

—ग़ालिब

३

(१ सितम्बर, १८६३ ई०)

सैयद साहब क़िब्ला,

इनायतनामा मय क़सीदा पहुँचा। पसोपेश एक राफ़तनामा[5] पीर व मुर्शिद सैयद इब्राहीमअलीख़ाँ साहब बहादुर और एक अतूफ़तनामा क़िब्ला व काबा सैयद आलमअलीख़ाँ बहादुर का पहुँचा। मैं अली का ग़ुलाम और औलादेअली का ख़ानाज़ाद[6] लेकिन बूढ़ा और नातवाँ और मसलूबुल हवास[7] और बेसर व सामान[8] ख़िदमत बजा लाने में उज्र करूँ तो गुनहगार। दिरंग व तवक़्क़ुफ़[9] का मुज़ायक़ा नहीं। लायकुल्लफ़ुल्लाहो नफ़्सन इल्लाह वसाहा।[10]

ख़ुदावन्द नेमत क्या तुम दिल्ली को आबाद और क़िले को मामूर[11] और सल्तनत को बदस्तूर समझे हुए हो, जो हज़रत शेख़ का कलाम और साहिबज़ादा

---

१. स्वजन, सन्तान। २. सन्तोष। ३. अश्रह—महीने का दसवाँ दिन, सामिना—आठवाँ दिन, अश्रह—मुहर्रम की दसवीं तिथि। ४. अन्त। ५. कृपा-पत्र। ६. गृहोत्पन्न। ७. जिसकी ज्ञानेन्द्रिय काम न करती हों। ८. असहाय। ९. विलम्ब। १०. ईश्वर सामर्थ्य के अनुसार किसी काम के करने का आदेश देता है। कष्ट सामर्थ्य के अनुसार देता है। ११. अस्तित्ववान्।

शाह क़ुत्बुद्दीन इब्ने[1] मौलाना फ़ख्रुद्दीन अलै उर्रहला का हाल पूछते हो? ईं दफ़्तर रा गाव खुर्द व गाव रा क़साब बुर्द क़साब दर राहे मुर्द।[2]

बादशाह के दम तक ये बातें थीं। खुद मियाँ काले साहब मग़फ़ूर[3] का घर इस तरह तबाह हुआ कि जैसे झाड़ू फेर दी। काग़ज़ का पुर्ज़ा, सोने का तार, पश्मीने का बाल बाक़ी न रहा। शेख कलीमुल्ला जहाँनाबादी रहमतुल्ला अलै का मक़बरा उजड़ गया। एक अच्छे गाँव की आबादी थी। उनकी औलाद के लोग तमाम इस मौज़े[4] में सुकूनत[5] पिज़ीर थे। अब एक जंगल है और मैदान में क़ब्र, इसके सिवा कुद नहीं। वहाँ के रहने वाले अगर गोली से बचे होंगे तो खुदा ही जानता होगा कि कहाँ हैं। उनके पास शेख का कलाम भी था, कुछ तबर्रुकात[6] भी थे। अब जब वो लोग ही नहीं तो किससे पूछूँ? क्या करूँ? कहीं से मुद्आ हासिल न हो सकेगा।

सैयद साहब क़िब्ला क्यों तकलीफ़ करते हैं? अगर यही मर्ज़ी है तो इत्तिहाफ़ व एहदा[7] तकल्लुफ़े महज़[8] है। फ़क़ीरे बे सवाल हूँ, अगर कुछ भेज देंगे रद्द न करूँगा। कम व बेश[9] पर नज़र न करें, जितने का चाहें नोट खत में लपेटकर भेज दें। वस्सलाम।

रोज़े शम्बा यकुम सितम्बर १८६२ ई०।

—अज़ अब्दुल्लाह्

४

(२४ जुलाई, १८६५ ई०)

पीर व मुर्शिद,

तीन बरस अवारिज़े एहतिराक़े खून[10] में ऐसा मुब्तला रहा हूँ कि अपने

१. पुत्र। २. इस दफ़्तर (=खेत) को गाय खा गई। गाय को कसाई ले गया और कसाई रास्ते में मर गया। ३. स्वर्गीय। ४. गाँव। ५. निवास। ६. पूर्वजों से सम्बन्धित पवित्र शुभ वस्तुएँ। ७. भेंट। ८. मात्र शिष्टाचार। ९. अधिक। १०. रक्त की ऊष्णता से उत्पन्न होने वाली बीमारियाँ।

जिस्म व जान की भी खबर नहीं रही। आपके खुतूत आये होंगे। कोई उनवान ना कुशूदा[1] पड़ा रहा होगा। अलबत्ता हाजी मुस्तफ़ाखाँ का आना मुझको याद है। यक़ीन करता हूँ कि उन्होंने अज रूए मुशाहिदा[2] मेरी खस्तगीतन[3] का हाल हज़रत को लिखा होगा। अब मैं अपनी ज़बान से ये क्योंकर कहूँ कि अच्छा हूँ, मगर बीमार और अवारिज़[4] में गिरफ़्तार नहीं हूँ। बूढ़ा, बहरा, अपाहिज बदहवास, नातवाँ, फ़लकज़दा[5] आदमी हूँ। अहद[6] करता हूँ कि जब आपका खत आएगा उसका जवाब लिखूँगा। जब ग़ज़ल आएगी उसको देखकर फिर भेजूँगा। मगर हजरत के मस्कन[7] का पता भूल गया। ये खत तो मुस्तफ़ाखाँ सौदागर को भेजे देता हूँ, वो आप को भिजवा देगें। आइन्दा जो इनायतनामा डाक में आये उसमें मस्कन व मुक़ाम व शहर का नाम लिखा जाये।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

५

(१७ जनवरी, १८६६ ई०)

हज़रत पीर व मुर्शिद,

इन दिनों में अगर फ़क़ीर के अरायज़[8] न पहुँचे हों या इर्शाद के जवाब अदा न हुए हों तो मूजिबे मलाले[9] खातिरे अक्दस[10] न हो—

---

१. अविकसित। २. निरीक्षण के अनुसार। ३. दरिद्रता। ४. रोग (ब.व.)। ५. अभागा। ६. प्रतिज्ञा। ७. घर। ८. आवेदन-पत्र। ९. दुःख का कारण। १०. पवित्र, बुजुर्ग।

हकीम सैयद अहमदहसन मौदूदी के नाम

इत्तिफ़ाक़े सफ़र उफ़्ताद ब पीरीं 'ग़ालिब'
उंचे अज पाए नयामद ज असामी आयद[1]

रामपूर की सरकार का फ़क़ीर तक़िएदार रोज़ीनाख़ार[2] हूँ। रईसे हाल[3] ने मसनद नशीनी का जश्न किया। दुआगो ए दौलत को दरे दौलत पर जाना वाजिब हुआ। हफ़्तुम् अक्तूबर को दिल्ली से रामपूर को रवाना हुआ। बाद क़तं मनाज़िले सित्ता[4] वहाँ पहुँचा। बाद इस्तितामे बज़्म[5] आज़मे वतन[6] हुआ। हश्तुम्[7] जनवरी को दिल्ली पहुँचा। अर्ज़े राह[8] मे बीमार हुआ। पाँच दिन मुरादाबाद मे साहिबे फ़र्राश[9] रहा। अब, जैसा फ़र्सूदारवाँ[10] व नातवाँ था वैसा हूँ। जवाब ख़ुतूते मुज्तमा[11] लिख सकता हूँ ?

नवाब मीर ज़ाफ़रख़ाँ मब्रूर[12] मग़फ़ूर का खानदान सुभानअल्लाह्—

ई सिलसिला अज़ तिलाए नाबस्त
ई खाना तमाम आफ़ताबबस्त[13]

नवाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ मेरे दोस्त और मुहसिन[14] हैं। राह व रस्म, नामा व पयाम[15] मुद्दत से बाहमदिगर जारी है। आप का हुक्म बेतकल्लुफ़ मानूंगा। जनाब मीर इब्राहीमअलीख़ाँ साहिब और हज़रत मीर आलेमअलीख़ाँ

---

१. हे ग़ालिब वृद्धावस्था मे यात्रा का संयोग हुआ। जो पाँव से नहीं हो सका, वह लाठी से होता है। २. वृत्तिभोजी। ३. वर्त्तमान शासक। ४. पड़ाव पार करके। ५. समारोह समाप्त होने पर। ६. स्वदेश पहुँचना। ७. आठवीं। ८. रास्ते में। ९. शय्याशायी। १०. जीर्ण। ११. एकत्रित पत्रों का उत्तर। १२. पापमुक्त, जिस पर ईश्वर की दया हो। १३. यह (वंश) परम्परा शुद्ध सोने से निर्मित है। यह पूरा परिवार सूर्य है। १४. उपकारी। १५. पत्र-व्यवहार।

साहिब की ख़िदमतगुज़ारी को अपना फ़ख्र व शर्फ़[1] जानूंगा। इस वक़्त बक्स खोला है। ख़ुतूते अतराफ़ व जवानिब[2] देख रहा हूँ। पहले हज़रत के ख़त का जवाब बतौरे इख़्तिसार[3] लिखा है। अब जब इसका जवाब आएगा तब फ़क़ीर हुक्म बजा लाएगा।

चारशम्बा १७ जनवरी १८६६ ई०।

—असदुल्लाह्

६

(८ अप्रैल, १८६६ ई०)

पीर व मुर्शिद,

आपको मेरे हाल की भी ख़बर है? ज़ोफ़ निहायत[4] को पहुँच गया। राशा[5] पैदा हो गया। बीनाई[6] में बड़ा फ़ितूर पड़ा। हवास मुख्तल[7] हो गये। जहाँ तक हो सका अहबाब की ख़िदमत बजा लाया। औराक़े अशार[8] लेटे-लेटे देखता था और इस्लाह देता था। अब न आँख से अच्छी तरह सूझे न हात से अच्छी तरह लिखा जाये। कहते हैं कि शाह शर्फ़ बू अली क़लन्दर को बसबबे किबरे सिन[9] के ख़ुदातआला ने फ़र्ज़ और पयम्बर[10] ने सुन्नत[11] माफ कर दी थी। मैं मुतवक्क़े[12] हूँ कि मेरे दोस्त ख़िदमते इस्लाहे अशार[13] मुझ पर माफ़ करें। ख़ुतूते शौक़िया का जवाब जिस सूरत से हो सकेगा लिख दिया करूँगा। ज़्यादा हद्दे अदब।

राकिम

—असदुल्लाह् ख़ाँ 'ग़ालिब'

---

१. गौरव। २. आसपास। ३. संक्षेप में। ४. सीमा। ५. कम्पन। ६. दृष्टि। ७. नष्ट-भ्रष्ट। ८. कविता के पृष्ठ। ९. बुढ़ापे के कारण। १०. हज़रत मुहम्मद। ११. धार्मिक कृत्य। १२. आशान्वित। १३. कविता के संशोधन की सेवा।

७

(२ जून, १८६६ ई०)

पीर व मुर्शिद,

यकुम मुहर्रम का खत कल १८ मुहर्रम को पहुँचा, आज १९ को जवाब लिखता हूं। आप पर और मीर इब्राहीमअलीखाँ पर मेरी जान निसार है। मज़ा मा मज़ा[1]। अब एक-एक गज़ल आप तीनों साहिब भेज दिया कीजिये। इसी तरह मैं फ़र्दन-फ़र्दन[2] बादे इस्लाह भेज दिया करूँगा। मगर मेरे क़िब्ला व काबा वास्ते खुदा के शजरहे मजूमा[3] इर्साल न फ़रमाइएगा। उसकी इस्लाह मेरी हदे वसा[4] ए बाहर है। मेरा शेवा नहीं है, खत बैरंग भेजना। ये खत अम्दन[5] बैरग भेजता हूँ। कहते हैं कि पेड[6] के तलफ होने का एहतिमाल[7] है और बैरग का नही।

शम्बा दोअम १८६६ ई०।

८

(२५ सितम्बर, १८६६)

क़िब्ला,

डाक के हरकारे ने कल दो खत एक बार पहुँचाये, एक आपका खत मय ग़ज़ल और एक नवाब मीर इब्राहीमअलीखाँ का खत मय ग़ज़ल, आज तीन बातें

---

१. बीत गया सो बीत गया, हुआ सो हुआ। २. पृथक्-पृथक् व्यक्तिगत। ३. कविताबद्ध वंश-वृक्ष। ४. सीमा से बाहर। ५. जान-बूझकर। ६. जिसका पैसा दे दिया गया (अंग्रे०)। ७. सन्देह।

ज़रूरी लिखनी थी। इस वास्ते ये ख़त आज रवाना करता हूँ। एक बात ये कि ग़ज़ल का काग़ज़ वापिस भेजता हूँ, न इसको फाड़ सकूँ, न पानी में धो सकूँ, शहीदी की ग़ज़ल इन क़ाफ़ियों[1] मे ब तग़य्युरे रदीफ़[2] ऐसी है के अब इन क़ाफ़ियों का बाँधना हरगिज़ न चाहिए। आप और ग़ज़ल लिखिये। इसको हरगिज़ दीवान[3] मे न रखिये।

ये भी इस ज़िम्न मे लिखना मुनासिब है कि मीर इब्राहीमअलीख़ाँ साहब ने अपनी इस्लाही ग़ज़ल की रसीद कल ख़त में लिख भेजी। आज अपने ख़त मे किस राह से लिखते हैं कि वो ग़ज़ल इस्लाही माँगते है? इसी फ़स्ल में ये भी इत्तिला देता हूँ कि आपकी ये ग़ज़ल 'सुलाकर सोये' और 'न्हिला कर सोये, और तारीख हाए बिना ए मस्जिद देख कर और इस्लाह देकर आज आप सैयद साहब का हाल मुफ़स्सल लिखिये। ऐसा कै लाख का मुल्क बड़ौदा की सरकार से हमारे मुहसिन[4] को मिला है कि उनसे दो लाख रुपये नज़राना माँगा जाता है। आगे इस राज में हुस्सामुद्दीन हुसेनख़ाँ बडे मौज़िज़[5] और मुकर्रम[6] मुतवस्सिल[7] थे और सेर हासिल[8] जागीरे रखते थे, सैयद इब्राहीमअलीख़ाँ साहिब इसी खानदान में से हैं? और हाँ, ये भी लिखिये कि मीर आलमअलीख़ाँ को उनसे और आपको इन दोनों साहिबो से क्या क़राबत[9] है? तीसरी बात ये है कि जब नोट भेजिये तो अहले कलकत्ता की तरह आधा-आधा दो बार करके न भेजिएगा। मेरे नाम का लिफ़ाफ़ा जिस शहर से चले, उसी शहर के डाकघर में रह जाये तो रह जाये, वर्ना दिल्ली के डाकखाना में पहुँच कर क्या इमकान है के तलफ़ हो।

—असदुल्लाह्

१. अन्त्यानुप्रास। २. रदीफ़ (अन्त्यानुप्रास के पश्चात् आने वाला शब्द ग़ज़ल में) के परिवर्तन के साथ। ३. ग़ज़ल-संग्रह। ४. उपकारी। ५. प्रतिष्ठित। ६. पूज्य। ७. आश्रित। ८. पर्याप्त आय वाली। ९. सम्बन्ध।

६

(१८ अक्तूबर, १८६६ ई०)

हज़रत,

ये आप के जद्दे अमजद[1] का गुलाम तो मर लिया। कसरते अहकाम[2] तवातुरे[3] वुरूदे अशार[4], फिर ये हंजार[5] कि सौ रुपये के नोट की रसीद सौ बार माँगते हो। मीर इब्राहीमअलीखाँ साहिब की ग़ज़ल, जिसका एक शेर ये है—

अली अली जो कहा ता सहर[6] तो यों समझे
के जुल्फ़क़ार[7] से कटती है अब हमारी रात

बादे इस्लाह भेज चुका हूँ और आप उसका तक़ाज़ा किये जाते हैं। ग़ज़लें आपकी बरसती हैं, कहाँ तक देखूं। आपकी ग़ज़लों के साथ और ग़ज़लें भी गुम हो जाती हैं। बहत्तर बरस का आदमी, फिर रंजूरे दायमी[8], गिज़ा यककलम मफ़क़ूद[9]। आठ पहर में एक बार आबे गोश्त पी लेता हूँ, न रोटी न बोटी, न पुलाव न खुश्का। आँख की बीनाई में फ़र्क़, हाथ की गीराई[10] में फ़र्क़, राशा मस्तूली[11], हाफ़िज़ा मादूम[12]। जहाँ जो काग़ज रहा वहीं रहा।

मीर आलम अलीखाँ साहब की दो ग़ज़लें आई हुई कहीं रख के भूल गया हूँ, खुलासा ये के नोट अतीयए[13] सैयद साहिब का आपके खत मे पहुँचा। रुपया वसूल हुआ, मअान खर्च हुआ। उनकी एक ग़ज़ल 'सारी रात' 'हमारी रात' जिसका एक शेर ऊपर लिख आया हूँ बादे इस्लाह भेज चुका हूँ और कोई

---

१. दादा-परदादा। २. आदेशों की अधिकता। ३. निरन्तर। ४. कविता का आना। ५. ढंग। ६. प्रातःकाल तक। ७. हजरत अली की तलवार। ८. स्थायी रूप से दुःखी। ९. त्यक्त, लुप्त। १०. पकड़। ११. कम्पन प्रबल। १२. स्मरण शक्ति अशेष। १३. दातव्य रुपया।

ग़ज़ल उनकी अब मेरे पास नहीं और जनाब मीर आलम अलीख़ाँ की दो ग़ज़लें याद हैं कि आई हैं, अगर मिल जाएँगी तो बादे इस्लाह भेजूंगा। आपकी ग़ज़लें शुमार से बाहर हैं। बक्स में देखूंगा, किताबों में ढूंढूंगा। मुद्दआ ये के आप और दोनों सैयद साहिब इसका इल्तिज़ाम[1] करें कि एक ग़ज़ल अपने खत में भेजें। जब वो ग़ज़ल और उस खत का जवाब पहुँच जाये तब दूसरी गज़ल खत में मलफ़ूफ़ होकर भेजी जाये, और खत हर साहिब का जुदा हो। आप ये मेरा खत ग़ौर से पढ़ लें और दोनों सैयद साहबों को पढ़वा दें। अज़रू ए एहतियात बैरंग भेजता हूँ।

—असद एकरंग

१०

(३ जुलाई, १८६७ ई०)

सैयद साहब व क़िब्ला हकीम सैयद अहमद हसन साहब को ग़ालिबे नीमजान[2] का सलाम पहुँचे। वो जो आपने सुना है कि अब ग़ालिब को मर्ज़ से इफ़ाक़त[3] है, सो महज़ ग़लत है। आगे नातवाँ था, अब नीमजाँ हूँ। खत नहीं लिख सकता। एक लड़के से ये चन्द सतरें लिखवा दी हैं। जो मैं कहता गया हूँ वो ग़रीब लिखता गया है। आप सैयद हैं और बुज़ुर्ग हैं, मेरे हक़ में दुआ करें कि अब तिहत्तर बरस से आगे न बढ़ूं और अगर कुछ ज़िन्दगी और है तो हक़ ताला थोड़ी सी सेहत और ताक़त इनायत करे ताकि दोस्तों की ख़िदमत बजा लाता रहूँ।

—ग़ालिब

---

१. किसी कार्य को अपने ऊपर अनिवार्य कर लेना। २. अर्ध-मृत। ३. स्वास्थ्य।

हकीम सैयद अहमदहसन मौदूदी के नाम

११

(१७ जुलाई, १८६८ ई०)

जनाब सैयद साहिब व क़िब्ला सैयद अहमदहसन साहिब को ग़ालिब नीमजाँ की बन्दगी क़ुबूल हो और ये अर्ज़ भी क़ुबूल हो कि जनाब मुअल्ला अल्क़ाब[1] नवाब इब्राहीमअलीखाँ बहादुर की खिदमत मे मेरी बन्दगी अर्ज करें। बारे, बसूरते तस्वीर दोनों साहबों की खिदमत मे मेरा सलाम पहुंचना मालूम हुआ। अगरचे इस सूरत मे चलना-फिरना खिदमत बजा लाना नहीं हो सकती, मगर खैर हजरत के पेशे नज़र[2] हाज़िर रहूँगा, इनायत की नज़र रहे मेरे हाल पर। ये जो आपने लिखा है कि नवाब साहिब क़िब्ला के हाँ इस महीने मे लड़का पैदा होने वाला है, मुझको तारीखे तवल्लुद[3] का खयाल रहेगा। जब आपकी तहरीर से नवीदे तवल्लुद[4] मालूम कर लूंगा, तब क़ता या रुबाई जो कुछ हो गई होगी, वो भेज दूंगा और ये जो आपने अपनी और नवाब साहिब की ग़ज़लों की इस्लाह के वास्ते लिखा है, मुझे इस हुक्म की तामील बदिल मंजूर है। जिस महीने तक मै ज़िन्दा हूँ, उस महीने तक खिदमत बजा लाऊँगा।

---

१. श्रेष्ठ व्यक्ति। २. सामने। ३. जन्म-तिथि। ४. जन्म का शुभ समाचार।

तफ़ज्जुल हुसेनख़ाँ के नाम

ाँ साहब,

ये चचा-भतीजा होना और शागिर्दी व उस्तादी सब पर पानी फिर गया ? ार कोई हज़ार-पान सौ की चीज़ होती और मैं तुम से माँगता तो ख़ुदा जाने न क्या ग़ज़ब ढाते। मेरा कलाम, ख़रीद आठ-दस रुपये की सो वो भी मैं नहीं हता के मुझको दे डालो। तुमको मुबारक रहे। मुझको मुस्तार[1] दो। मैं ाको देख लूँ, फिर तुमको वापिस भेज दूँ। इस तरह की तलब पर न देना, ील इसकी है कि मुझको झूटा जानते हो। मेरा ऐतबार नही या ये कि मुझको ज़ार[2] देना और सताना बदिल मतलूब[3] है। वो किताब अभी मेरे आदमी दे दो। बिल्लाह्, वल्लाह, उसमे से जो मेरे पास नहीं है, नक़ल करके ाको भेज दूँगा, अगर तुमको वापिस न दूँ तो मुझ पर लानत और तुम ी क़सम को न मानों और किताब हामिले रुक़्क़े[4] को न दो तो तुमको फ़रीं।

—ग़ालिब

---

१. उधार। २. कष्ट। ३. अभीष्ट। ४. पत्र वाहक।

मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' के नाम

१

(११ जून, १८६० ई०)

बरख़ुर्दारे कामगार[1], सआदत निशान[2] मुंशी मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' ताल उम्रहू[3], दरवेशे गोशानशीं ग़ालिबे हज़ीं[4] दुआए दरवेशाना से कामयाब व बहरामन्द[5] हों। लखनऊ की वीरानी पर दिल जलता है, मगर तुमको याद रहे कि वहाँ बाद इस फ़िसाद के एक कौन[6] होगा याने राहें बसी हो जाएँगी, बाज़ार अच्छे निकल आएँगे। जो देखेगा वो दाद देगा और दिल्ली के फ़साद के बाद 'कौन'[7] नहो है। यहाँ फसाद दर फ़साद चला जाएगा। शहर की सूरत सिवाय उस बाज़ार के जो क़िले के लाहौरी दरवाज़े से शहर के लाहौरी दरवाजे तक है, सरासर बिगड़ गई और बिगड़ती जाती है।

दीवान का छापा कैसा? वो शख़्स ना आशना[8] मौसूम[9] ब अज़ीमुद्दीन जिसने मुझसे दीवान मँगा भेजा, आदमी नहीं, भूत है। पलीद है, ग़ोल[10] है, क़िस्सा मुख़्तसर सख़्त नामाकूल है। मुझको उसके तौर पर इन्तिबा ए दीवान[11] ना मतबू[12] है। अब मैं उससे दीवान माँग रहा हूँ और वो नहीं देता। ख़ुदा करे हाथ आ जाये। तुम भी दुआ माँगो। ज़्यादा क्या लिखूं?

दोशम्बा ११ जून १८६० ई०।

—ग़ालिब

---

१. सफल सुपुत्र। २. प्रतापी। ३. ईश्वर दीर्घ जीवी करे। ४. दुःखी। ५. समृद्ध। ६. सृष्टि-निर्माण। ७. चाँदनी चौक और बाबड़ी। ८ अपरिचित। ९. नामक। १०. शैतान। ११. ग़ज़ल संग्रह का प्रकाशन। १२. अवांछित।

२

(३० जून, १८६० ई०)

बरख़ुर्दार,

तुम्हारा ख़त पहुँचा। लखनऊ का क्या कहना! वो हिन्दुस्तान का बग़दाद था। अल्लाह् अल्लाह्। वो सरकार अमीरगर थी। जो बेसरोपा[1] वहाँ पहुँचा, अमीर बन गया। उस बाग़ की ये फ़स्ले ख़िज़ाँ[2]!!!

मैं बहुत ख़ुशी से तुमको इत्तिला देता हूँ कि उर्दू का दीवान ग़ासिबे ना इन्साफ़[3] से हाथ आ गया और मैंने नूरे चश्म[4] मुंशी शिवनारायन को भेज दिया। यक़ीने कुल्ली[5] है के वो छापेंगे। जहाँ तुम होगे, एक नुस्ख़ा तुमको पहुँच जाएगा। तरीक ए सआदतमन्दी[6] ये है कि हमको अपनी ख़ैर व आफ़ियत[7] का तालिब[8] जानकर जहाँ जाओ, वहाँ से ख़त लिखते रहो और अपने मस्कन[9] का पता हम पर ज़ाहिर करते रहो। हम तुम से राज़ी है और चूँकि तुम्हारी ख़िदमत अच्छी तरह नहीं की शर्मिन्दा भी है। मरक़ूमा[10] शम्बा, रोज़े ईद मुताबिक़ ३० जून १८६० ई०।

राकिम

—असदुल्लाह् ख़ाँ

३

(३१ जुलाई, १८६० ई०)

भाई,

तुम्हारी जान की और अपने ईमान की क़सम के फ़न्ने तारीख़ गोई[11] व

---

१. दरिद्र। २. पतझड़। ३. अन्याय पूर्वक अनधिकार चेष्टा करने वाला। ४. नेत्रज्योति-पुत्र। ५. पूर्ण विश्वास। ६. आज्ञाकारिता। ७. कुशल समाचार। ८. इच्छुक। ९. निवास-स्थान। १०. लिखित। ११. कविता में तिथि वर्णन की कला।

मुअम्मा[1] से बेगार ए महज़[2] हूँ। उर्दू जबान मे कोई तारीख मेरी न सुनी होगी। फारसी दीवान मे दो-चार तारीखे है। उनका हाल ये है कि माद्दा[3] औरो का है और अशार मेरे है। तुम समझे कि मै क्या कहता हूँ? हिसाब से मेरा जी घबराता है और मुझको जोड़ लगाना नही आता है। जब कोई माद्दा बनाऊँगा, हिसाब दुरुस्त न पाऊँगा। दो-एक दोस्त ऐसे थे कि अगर हाजत[4] होती तो माद्दे तारीख वो मुझे ढूँढ ला देते, मौजूँ मै करता। और अगर आपने माद्दे की फ़िक्र की है और यही हिसाबे जुमल[5] मजूर रखा है तो ऐसे तामिया[6] और तास्रिजे[7] आ गये है के वो तारीख ईसो के क़ाबिल हो गई है। कलकत्ता मे काज़ी उल कुज्जात[8] सिराजुद्दीन अलीखाँ मरहूम की कब्र पर मस्जिद बनी है। उनके भतीजे मौलवी विलायत हुसेनखाँ ने इम्मिदुआए तारीख[9] की। मैंने लिखी। चुनाँचे वो फ़ारसी दीवान मे मौजूद है—

मुफ़्ती ए अक़्ल अज़पए तारीख ई बिना
ईमा ब सू ए मन ज़े रहे एहतिराम कर्द
गुफ़्तम ब वै बदीह 'खुशाखान ए खुदा'
शुद खश्मगी दमे के नज़र दर कलाम कर्द
खाशा क रुफ़्तो पाए अदब दर शिकजारेख्त
ईहाम रा वस्त्रिजा माने तमाम कर्द[10]

---

१. प्रतियोगिता। २. पूर्णतया अपरिचित। ३. ३. मूलतत्व, तिथि बताने वाली कविता का वह अश जिससे संवत् का ज्ञान हो। ४. आवश्यकता। ५. अक्षरों के आधार पर सख्या के वर्णन करने की विधि। ६. तिथि के अंक की कमी को किसी अक्षर अथवा शब्द से बढ़ाना। ७. घटाना। ८. बड़ा काजी ९. तिथि युक्त कविता लिखने की प्रार्थना की। १०. इस भवन की नीव रखने की तिथि के लिए मेरी बुद्धि ने परामर्श दिया और बुजुर्गी के तौर पर

वास्ते ख़ुदा के ग़ौर करो 'ख़ुशाख़ानए ख़ुदा' माद्दा, फिर इसमें से 'ख़ाशाक' अदद दूर करो, नौ सौ इक्कीस का तख़्मिरजा, फिर भी दो और ज़्यादा रहे। 'पा ए अदब' (याने 'ब') कटा, भला ये कोई तारीख़ है ? मगर हाँ हिसाब के क़ायदे से बाहर कुछ मानीए सिग़ाली[1] के तौर पर मेरा ईजाद है और वो लुत्फ़ रखता है । एक शऊस १२४८ हि० में मरा । इसकी तारीख़ मैंने लिखी–

जै साले वाक़ए मिर्ज़ा मसीता बेग
मिल्लते रास्त शुमारे अइम्म ए अमजाद
सहीफ़ा हाए समावी मुवइय्यन अज़ अशरात
हदीक़ा हाए बहिश्ती मुशक़्क़स अज़ आहाद[2]

ऐमा बारह याने 'बारह सौ' फिर कुतबे समावी 'चार' दहाके के चार याने चालीस, बहिश्त आठ, चालीस और आठ अडतालीस । बारह सौ अडतालीस ।

दूसरी तारीख़ बारह सौ सत्तर की––

अज़ बूरूजे सिपहर जूई मिअत
अशरात अज़ कवाकिबे सय्यार[3]
बुर्ज[4] बारह, सात दहा के सत्तर ।

संकेत किया । मैं स्पष्ट रूप से कहता हूँ––'ख़ुशख़ान ए ख़ुदा' । जब मैंने अपनी कविता पर दृष्टि डाली तो मुझे अप्रसन्नता हुई । मैंने कचरा साफ़ कर दिया और साहित्य के पाँव को सिकजे में जकड़ दिया । 'ईहाम' के घटाने से अर्थ पूरा होता है । १. शाब्दिक अर्थ, वैचारिक अर्थ । २. मसीता बेग के मरने का वर्ष, मसीता बेग सच्चे रास्ते पर चले, उनकी गिनती बड़े इमामों में होती थी । आकाश से आये हुए पवित्र ग्रन्थ इससे प्रकट होती हैं । स्वर्ग की क्यारियाँ उनके लिए निश्चित हो चुकी है । ३. राशि । ४. ग्रह ।

ये जो लिखते हो के सैयद ग़ुलाम बाबा किसी बहर मे नही आता, क्यों नही आता ?

जब के सैयद ग़ुलाम बाबा ने
मसनदे ऐश पर जगह पाई
ऐसी रौनक़ हुई बरात की रात
के कवाकिब हुए तमाशाई

दूसरी बहर सुनो--

हज़ार शुक्र के सैयद ग़ुलाम बाबा ने
फ़राज़े मसनदे ऐशो[1] तरब[2] जगह पाई
ज़मीं पै ऐसा तमाशा हुआ बरात की रात
के आस्मां पै कवाकिब[3] बने तमाशाई

इस बहर मे समाता हुआ कोई मादा बहम पहुँचाओ, तारीख कह लो। वो दोस्त जो मादा ढूंढ देते थे, वो जन्नत को सिधारे। जैसा के ऊपर लिख आया हूँ, माज़ूर और मजबूर हूँ।

मेरठ्ठा ११ मुहर्रम, ३१ जुलाई साले हाल।

--ग़ालिब

४

(३१ दिसम्बर, १८६० ई०)

सआदत व इक़बाल निशान मुर्शी मियाँ दादखाँ से मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ कि उनके ख़ुतूत का जवाब नही लिखा। ग़ज़लों के मसविदे गुम हो गये। इस शर्मिन्दगी से पासुखनिगार[4] न हुआ। अब ये सतरे जो लिखता हूँ, उस खत के जवाब मे है जो बनारस से आया है।

---

१. आनन्द का उच्च सिहासन। २. आह्लाद। ३. तारे। ४. उत्तर लेखक।

भाई, बनारस खूब शहर है और मेरे पसन्द है। एक मस्नवी मैंने उसकी तारीफ़ मे लिखी है और 'चिराग़े दैर' उसका नाम रखा है। वो फ़ारसी दीवान मे मौजूद है। उसको देखना। अशरफ़-हुसेनखाँ साहब मेरे दोस्त है। फ़ितना व फ़िसाद के ज़माने से बहुत पहले उनका खत और कुछ उनका कलाम मेरे पास आया है। तुम उनको मेरा सलाम कहना और मै तुमसे ये तवक्को रखता हूँ कि जिस तरह तुमने लखनऊ से बनारस तक के सफ़र की सरगुज़श्त[1] लिखी है, उसी तरह आइन्दा भी लिखते रहोगे। मै सैर व सियाहत[2] को बहुत दोस्त रखता हूँ।

अगर बदिल नह खलद हरचे दर नज़र गुज़रद
ज है रवानी ए उम्रे के दर सफ़र गुजरद[3]

खैर, अगार सैर व सियाहत मयस्सर नही, न सही। ज़िक्रुल ऐश निस्फ़ुल ऐश[4] पर क़िनायत[5] की। मियाँ दादखाँ 'सय्याह' की सरगुज़श्त सैर व सफ़र ही सही।

गज़ल तुम्हारी रहने देता हूँ। उसके देखने की अभी फ़ुर्सत नही है। जैसा तुमने वादा किया है, जब और गज़ले भेजोगे, उनके साथ उसको भी देखूंगा. बल्कि एहतियात मुक़्तज़ी[6] इसकी है कि इन गज़लो के साथ उसको भी लिख भेजना।

नातवानी[7] ज़ोर पर है, बुढ़ापे ने निकम्मा कर दिया है। ज़ोफ़, सुस्ती,

---

१. वृत्तान्त। २. भ्रमण-यात्रा। ३. जो कुछ दिखाई देता है, वह हृदय में स्थान न बनाये। जीवन का जो भाग यात्रा मे गुजरता है, वही सार्थक है। ४. आनन्द की चर्चा आधे आनन्द के बराबर है। ५. सन्तोष। ६. सावधानी का तकाजा ७. कमजोरी।

काहली, गिराँजानी[1], गिरानी[2]। रिकाब में पाँव है, बाग पर हाथ है। बड़ा सफ़र दूर व दराज़ पेश है। ज़ादेराह[3] मौजूद नहीं। ख़ाली हाथ जाता हूँ। अगर नापुर्सीदा[4] बख़्श दिया तो ख़ैर, अगर बाज़पुर्स[5] हुई तो सक़र[6] मक़र[7] है और हाविय ए ज़ाविया[8] है। दोज़ख़ जावीद[9] है और हम हैं। हाय, किसी का क्या अच्छा शेर है—

अब तो घबरा के ये कहते हैं कि मर जाएँगे
मर के भी चैन न पाया तो किधर जाएँगे

अल्लाह् अल्लाह् अल्लाह् !!!

सुबह दोशम्बा, ३१ दिसम्बर १८६० ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

५

(१२ फरवरी, १८६१ ई०)

मुंशी साहब,

तुम्हारे ख़त पहुँचने की तुमको इत्तिला देता हूँ और मतालिबे मुस्तफ़िसरा[10] का जवाब लिखता हूँ और अपने दोस्ते रूहानी[11] मिर्ज़ा रज्जबअली बेग 'सुरूर' को सलाम कहता हूँ, कह दीजिएगा। बल्के ये रुक़्क़ा दिखा दीजिएगा।

---

१. आलस्य। २. मँहगाई। ३. पाथेय। ४. अजिज्ञासित। ५. पूछताछ। ६. नरक (प्रथम खण्ड), अधलोक का कोना। ७. पड़ाव। ८. नरक के सातवें तल का कोना। ९. शाश्वत नरक। १०. जो विषय पूछे गये हैं। ११. आत्मीय मित्र।

आज लोग 'आनबान' बोलते हैं, मगर फ़क़ीर के नज़दीक 'आनतान' सही है और यही फ़सीह[1], है।

'पर' बमाने 'लेकिन' लफ़्ज मशहूर है और 'पै' इसका मुखफ़्फ़फ़[2] है, इसमे शायद किसी को कलाम न हो। कोई और लिखे या न लिखे, मेरे उर्दू के दीवान मे सौ-दो सौ जगह ये लफ्ज़ आया होगा। १२।

मुझको बंगाले से आये ३२–३३ बरस हो गये। बहुत अहबाब[3] मर गये। बहुत मुतफर्रिक[4] हो गये। अब ऐसा वहाँ कोई नही जिससे इसलिे रसायल[5] की रस्म व राह हो।

साहब, वो शेर जिसको तुमने पूछा ये है––

वाइज़[6] न तुम पिओ न किसी को पिला सको
क्या बात है तुम्हारी शराबे तहूर[7] की

दो शेर इस गज़ल के और याद आ गये है, वो दूसरे सफे पर लिखता हूँ—

क्या फ़र्ज़ है कि सबको मिले एक-सा जवाब
आओ न हम भी सैर करे कोहे तूर[8] की
गो वाँ नही पै वाँ के निकाले हुए तो है
काबे मे उन बुतों को भी निस्बत है दूर की

देखो ये 'पर' का मुखफ़्फ़फ़ 'पै' है, बमाने लेकिन।

---

१. सरल और परिमार्जित। २. संक्षिप्त। ३. परिचित। ४. इधर-उधर। ५. पत्र-व्यवहार। ६. धर्मोपदेशक। ७. स्वर्ग प्राप्त सुरा। ८. तूर नामक पर्वत, इस पर्वत पर हजरत मूसाने ईश्वर का प्रकाश देखा था।

बनारस का क्या कहना है। ऐसा शहर कहाँ पैदा होता है। इंतिहाए जवानी[1] में मेरा वहाँ जाना हुआ। अगर इस मौसम में जवान होता तो वहीं रह जाता और इधर को न आता—

इबादत खान ए नाक़ूसियानस्त
हमा ना काब ए हिन्दूस्तानस्त[2]

जिस बहर[3] मे कोई इस्म[4] या कोई लफ़्ज़ न आ सके, उसकी तदबीर 'फ़िरदौसी' व 'ख़ाकानी' से भी न होगी, मै क्या करूँगा, नाम तुम्हारा आ सकता है, लेकिन अलिफ़ दबता रहता है। ख़ुदा के वास्ते इसकी तदबीर सुरूर साहिब से भी ज़रूर पूछना।

सेशम्बा १२ फ़रवरी १८६१ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

६

मुशी साहब, सआदत व इक़बाल निशान, शैफ़ुलहक़[5] मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' को दुआ। साहब, वहम और चीज़ है और एहतियात और चीज़ है। कारपर्दाज़ाने डाक[6] मेरे ख़ुतूत के टिकट कभी न दबाएँगे और मेरे ख़ुतूत कभी न तलफ़ होंगे। आध आने की जगह दोस्त का एक आना क्यों खोऊँ ?

'गुलशन'[7] बाज़ के नज़दीक मुअन्नस[8] है और बाज़ के नज़दीक मुज़क्कर[9] है। 'क़लम', 'दही', खिलत' इनका भी यही हाल है। कोई मुअन्नस, कोई

१. भर जवानी। २. हिन्दुओं का मन्दिर ही हिन्दुस्तान का काबा है। ३. छन्द। ४. संज्ञा। ५. ईश्वर की तलवार। ६. डाक के प्रबन्धक। ७. पुष्पवाटिका। ८. स्त्रीलिंग। ९. पुल्लिग।

मुज़क्कर बोलता है। मेरे नज़दीक 'दही' और 'खिलत' मुज़क्कर हैं और 'क़लम' मुश्तरक[1] चाहो मुज़क्कर कहो, चाहो मुअन्नस। 'गुलशन' अलबत्ता मुज़क्कर मुनासिब मालूम होता है।

भाई, जहाँ अलिफ़ दबता है, मेरे कलेजे में एक तीर लगता है। 'रखता है गुलशन भी' ये अलिफ़ दबता हुआ देख कर मैंने रखती है, बना दिया। मगर 'गुलशन' मुज़क्कर मुनासिब है। 'फुल्की' या 'फुल्का' तन्हा बेमानी[2] ए महज़ है। 'हल्की फुल्की' या 'हल्का फुल्का' यों आये तो दुरुस्त, वर्ना लगो[3]। और ये जो 'फुल्का' पतली चपाती को कहते हैं, ये दूसरा लगत[4] है। 'फुल्के' कभी कोई न बोलेगा। 'पानी-वानी', 'हुक्का-वुक्का' यों कहेंगे। निरा 'वानी' और निरा 'वुक्का' न कहेंगे। 'हल्का-फुल्का'—'हल्की-फुल्की' कहेंगे मुबक[5] चीज़ को। निरा 'फुल्का' या निरी 'फुल्की' न कहेंगे। तज्कीर[6] व तानीस[7] के बाब में मिर्ज़ा रज्जब अली बेग से मुशविरा लिया करो और दबते हुए हुरूफ भी उनसे पूछ लिया करो।

७

(२७ फ़रवरी, १८६१ ई०)

भाई,

हमने तुमको ये नहीं कहा कि तुम मिर्ज़ा रज्जबअली बेग के शागिर्द हो जाओ और अपना कलाम उनको दिखाओ। हमने ये कहा है कि तज्कीर व तानीस को उनसे पूछ लिया करो। दक्खन—बगाले के रहने वालों को इस अम्रेखास में दिल्ली-लखनऊ के रहने वालों का ततब्बो[8] ज़रूर है।

---

१. सम्मिलित, उभयलिंगी। २. निरर्थक। ३. शब्द। ४. हल्की। ५. पुल्लिंग। ६. स्त्रीलिंग। ७. अनुसरण।

मियाँ दादखाँ 'सरयाह' के नाम

एक क़ायदा तुमको मालूम रहे 'ऐन' का हुर्फ़ फ़ारसी में नहीं आता। जिस लुग़त[1] में ऐन हो उसको समझना के अरबी है। बाद मालूम होने इस कायदे के ये समझो कि 'गरबाल' (गैन नुक़्तेदारे मकसूर और राए खुरेशत और बाए मौहेदा और अलिफ़ व लाम) ये लुग़त फ़ारसी है। हिन्दी इसकी छलनी और मुरादिफ़[2] इसकी परवेज़न (याने फ़ारसा में छलनी को गरबाल और परवेज़न कहते हैं) और छलनी ऐसी चीज़ नहीं है कि जिसको कोई न जाने। रहा अरबाल ऐने मोटफ़स[3] और या ए तहतानी[4] से फसीह[5] क्या बल्कि ग़लते महज[6] व महज ग़लत है। हाँ, अगर अरबी में छलनी को उरयाल कहते हों तो फ़ारसी गरबाल और अरबी उरयाल। मगर मैं ऐसा गुमान करता हूँ कि गरबाल का अरबी में कुछ और इस्म[7] होगा, उरयाल न कहते होंगे।

अब तुम सुनो फने लुग़त[8] एक अम्र है कि उसको तसहीफ कहते हैं याने लफ़्ज़ की सरत एक हो और लफ्जों में फर्क़, जैसा के सादी बोस्ताँ में कहता है—

मरा बोसा गुफ़्ता बे तसहीफ़ देह
के दरवेश रा तोशा अज बोसा बेह[9]

'तोशा' व 'बोसा' व 'नोशा' ये तीन लफ़्ज मुसह्हफ़[10] हमदिगर[11] हैं।

---

१. शब्द। २. पर्यायवाची। ३. साफस में (सफ़ास अक्षरों का एक-क्रम गिनती के लिए)। आने वाला 'ऐन' (अ)। ४. दो नोक वाला 'ये'। ५. सरल और परिमार्जित। ६. केवल अशुद्ध। ७. संज्ञा। ८. शब्द-विज्ञान। ९. मुझसे बोसा=चुम्बन ने कहा कि तसहीफ़ से दे। दरवेश के लिए तोशे (=भोजन) से भी बोसा अच्छा होता है। १० लिखित, एकत्रित (=मिलते जुलते)। ११. परस्पर।

हालाँ कि माने में वो फ़र्क़ कि जैसा ज़मीन आस्मान में। तोशा तर्जुमा ज़ाद[1] का, वोसा तर्जुमा क़ुब्लह्[2] का, नौशा इस्म दूला का। साहबाने फ़रहंग[3] मे 'बुरहाने क़ाता' वाला ए तसहीफ़ में बहुत मुब्तिला है। गजर और कजर, खरपुज़ह और खरबुज़ह कहता है कि 'सदा' ब सीने साटफस लफ़्ज़े फ़ारसी है, बमाने आवाज और सदा ब सादे तारीब[4] है। जो लुग़ात 'ते' मे लिखते हैं, उन्ही लुग़ात को तोय मे लिखता है। हालाँकि जिस तरह 'ऐन' फारसी में नहीं है, 'तोय' भी नहीं है। मसलन 'तश्त' लुग़ते फ़ारसी उल अस्ल[5] है। इम्ला इसकी 'तोय' मे ग़लत है। 'बुरहाने क़ाते' वाला इसको 'ते' से भी लाया है और 'तोय' मे भी। मुहक्किकोन[6] जानते हैं कि 'सदा' बमाने आवाज़ लुगते अरबी उल अस्ल है, नमुअर्रब[7] और 'सदा' सीन से हरगिज फारसी में आवाज को नही कहते। हाँ, उर्दू के मुहावरे मे माने 'हमेशा' के मुस्तमिल है, क़िस्सा कोताह[8] गरबाल बमाने छलनी के, लफ़्ज फारसी उल अस्ल सही और फ़सीह है और उरयाल अगर किसी और फ़रहगे अरबी मे मिस्ल क़ामूस[9] और 'मुराह' वग़ैरा के बमाने छलनी के निकले तो उसको मानो वर्ना ये 'बुरहाने क़ाते' वाले के खुराफ़ात मे से है।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

८

(४ अक्तूबर, १८६१ ई०)

साहब,

कल आपका खत आया, मेरा ध्यान लगा हुआ था कि आया मियाँ

---

१. खाद्य सामग्री। २. चुम्बन। ३. शब्दकोश बनाने वाला ४. अरबी। ५. शुद्ध फ़ारसी का शब्द ६. गवेषणा करने वाले। ७. जिस शब्द का अरबीकरण किया गया। ८. कथा-संक्षिप्त।

सय्याह कहाँ है और मुझको क्यों भूल गये। पहला ख़त तुम्हारा, जिसका हवाला इस ख़त में देते हो, मैंने नहीं पाया, वर्ना क्या इमकान[1] था के जवाब न लिखता। जनाब मुंशी मीर अमीरअली साहब से मुझसे मुलाक़ात नहीं, लेकिन उनके महामिद[2] व मकारिम[3] सुनता हूँ। जनाब मौलवी इज़हार हुसेन साहब से अलबत्ता इसी शहर में दो मुलाक़ाते हुई है, लेकिन मैंने उनको फ़कीर दोस्त और दरवेश नवाज न पाया। अग़्निया[4] के वास्ते अच्छे हैं। हाय, इस मौलवी महम्मद हसन और मौलवी अब्दुल करीम! इस अहद मे अगर इन बुज़ुर्गों मे से एक होता तो मैं क्यों अपनी किस्मत को रोता। वक्त गुज़र जाता है, बात रह जाती है।

हाँ खाँ साहब, आप जो कलकत्ते पहुँचे हो और सब साहबो से मिले हो तो मौलवी फ़ज़्ले हक का हाल अच्छी तरह दरियाफ़्त करके मुझको लिखो कि उसने रिहाई क्यो न पाई और वहाँ जज़ीरे[5] मे उसका क्या हाल है? गुज़ारा किस तरह होता है?

जुमा, ४ माहे अक्तूबर १८६१ ई०।

८

(२० नवम्बर, १८६१ ई०)

साहब,

आज तुम्हारे कई खतो का जवाब लिखता हूँ। मौलवी करामत अली साहब मेरे शफ़ीक़[6] हैं। जिस ज़माने मे वो दिल्ली आये थे, मेरी उनसे

---

१. संभावना। २. गुण-समूह। ३. कृपाएँ। ४. समृद्ध लोग। ५. द्वीप (अंडोमान कालापानी)। ६. मित्र।

मुलाकाते हुई थी। वो मेरे दोस्त हैं, शागिर्द नहीं और हरगिज़ क़सीदा उन्होंने मेरी मदह[1] मे नही लिखा। आगा अब्दुलरज़्ज़ाक शीराज़ी ने गोंया मेरी खस्तगी[2] और तुहमत जदगी[3] का इतिकाम[4] लिया। बहरहाल मैं तुम्हारा एहसानमन्द हूँ। अगर तुम वहाँ न होते तो मेरी और मीर मुशी की सफाई न होती। इन दिनों ज़ोफे दिमाग व दौराने सर[5] मे ऐसा मुब्तिला हूँ कि वालीए रामपूर का भी बहुत-सा कलाम यों ही धरा है। देखने की भी नौबत नही आई। तुम्हारी भेजी हुई गजले सब महफ़ूज धरी हुई हैं। खातिरे जमा रखो। जब नवाब की गज़ले देखूंगा तो ये भी देखी जाएँगी।

जब हाल ये हो कि इस्लाह न दे सकूं तो जिक्रे तारीख क्या करूं? अगर मेरा हाल दुरुस्त होता तो नवाब मौलवी अब्दुलगफूरखाँ साहब नस्सोख के दीवान की तारीख ज़रूर लिखता और इस खिदमत गुज़ारी को अपनी सआदत समझता। आप जनाब मौलवी साहिब से मेरा सलाम कहे और ये मेरा रुक्का उनको दिखा दे।

चहारशम्बा २० नवम्बर १८६१ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

१०

(१० फ़रवरी, १८६२ ई०)

जनाब मुंशी साहब,

आपका खत, मुहरी लेफ्टट गवर्नर आगरा, कि वो मेरा भेजा हुआ था,

---

१. प्रशंसा। २. दरिद्रता ३. अपयश। ४. बदला। ६. मस्तक-पीड़ा।

पहुँचा। इसके भेजने की कुछ ज़रूरत न थी। जब गवर्नमेंट आला ने मुझको ख़त लिखना मौक़ूफ़ किया तो लेफ़्टट गवर्नरो के अगले जमाने के ख़ुतूत से मेरा क्या दिल ख़ुश होगा। ऐसे-ऐसे पचास-साठ ख़त मेरे पास मौजूद हैं। मुझको तो छै आने के पैसों का अफ़्सोस है, जो तुमने बावते महसूल दिये।

मरक़ूम[1] १० फ़रवरी १८६२ ई०।

राक़िम

—असदुल्लाह

११

(मई, १८६३ ई०)

आइये, बैठिये मौलाना सय्याह अस्सलामलेकम[2]। मिज़ाज मुबारक। सूरत का पहुँचना बहरसूरत मुबारक हो। भाई मेरा दिल बहुत ख़ुश हुआ कि तुम अपने वतन पहुँचे, लेकिन तुमको चैन कहाँ? ख़ुदा जाने कै हफ़्ते या कै महीने ठहरोगे और फिर सियाहत[3] को निकलोगे। जी में कहोगे—आओ अब दकन को सैर करें। हैदराबाद—औरंगाबाद दोनो शहर अच्छे हैं। उनको देखें।

मिर्ज़ा मुईनुद्दीन हुसेन खाँ और मिर्ज़ा मुहम्मद हुसेनखाँ ये दोनों बेटे हैं नवाब क़ुदरतुल्लाहबेगखाँ के और क़ुदरतुल्लाह बेगखाँ इन्ने अम[4] थे नवाब खुदा बख़्शखाँ के और मुईनुद्दीनखाँ की बहन मनसूब[5] है भाई ज़ियाउद्दीनखाँ से।

यहाँ कोई अम्र नया वही वाक़े हुआ। वही हालात व अतवार[6] हैं, जो देख गये हो। मस्जिदे जामे के बाब मे कुछ पुर्सिशें[7] लाहौर से आई थी।

---

१. लिखित। २. अभिवादन। ३. यात्रा। ४ चाचा या ताऊ का बेटा ५. मँगेतर, जिसकी सगाई हुई है। ६. रंग ढंग। ७. पूछ ताछ।

यहाँ से उनके जवाब गये हैं। यक़ीन है कि वागुज़ार[1] का हुक्म आये और मुसलमानों को मिल जाये। हनोज़ बदस्तूर पहरा बैठा हुआ है। और कोई जाने नहीं पाता। वस्सलाम इक्राम।

सुबह शम्बा, २ ज़ीकादा व मई मान।

—ग़ालिब

१२

(अगस्त, १८६३ ई०)

मुंशी साहिब सआदत व इक़बाल निशान,

शिकवा[2] तुम्हारा तुम्हारा मेरे सर आँखों पर मगर कोई ख़त तुम्हारा जवाब तलब न था। अशार की इस्लाह से मैंने हाथ उठाया। क्या करूँ? एक बरस से अवारिजे फ़िसादे ख़ून[3] मे मुब्तला हूँ। बदन फोड़ो की कसरत से सर्वे चराग़ाँ[4] हो गया है। ताक़त ने जवाब दिया। दिन-रात लेटा रहता हूँ। खाना खाते वक़्त पलग पर से उतर बैठता हूँ। खाना खाकर हाथ धोकर फिर पड रहता हूँ। हाजती पलग के पास लगी रहती है। उतर कर पेशाब किया जाता है बैतुलखला[5] जाना एक मुसीबत है। तश्ते चौकी[6] सही मगर कई क़दम जाना, फिर आना क्या ऐसा आसान है। एक कम सत्तर बरस की उम्र हुई, अब नजात चाहता हूँ। बहुत जिया कहाँ तक जीऊँगा। (अब तुम दूसरे सफ़े को पढ़ो) जनाब नवाब सैयद ग़ुलाम बाबाखाँ साहब की ख़िदमत मे सलाम कहना और विलादते फ़र्ज़न्द[7] की मुबारकबाद देना और ये क़तरा तारीख नज्र करना—

मीर बाबा याफ़्त फ़र्ज़न्दे के माहे चार दह
बर फ़राज़े लोहे गर्दूं गिर्द ए तिमवाले ऊस्त

---

१. छुटकारा (जायदाद आदि का)। २. उलहना। ३. रक्तविकार के रोग। ४. सरो के पेड़ में दीपक लगना ५. शौचालय। ६. कमोड़। ७. पुत्र जन्म।

मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' के नाम

फ़रुख़ी बीनी व याबी बहर अज नाज़ीं तरब
अज़ सरे नाज़ीं तरब **फ़र्ज़न्दे फ़र्रुख़** फ़ाल ऊस्त[1]

१२ हि० । नाज़ से नून के पचास और तरब की तोय के नौ 'फ़र्ज़न्दे फ़र्रुख़ फ़ाल पर बढाने होंगे । पजशम्बा १६, अगस्त १८६३ ई० ।

—गालिब

१३

(१७ सितम्बर, १८६३ ई०)

साहब,

ये सर पीटने की जगह है कि तुम्हारा कोई ख़त डाक मे जाए नही होता और मेरा कोई तुमको नही पहुँचता । सुनो, छोटे साहब का ख़त आया । इसमे क़ता का शुक्रिया और अजज़ाए किताब[2] के भेजने की ताकीद थी । मैंने उसके जवाब मे लिखा कि उस किताब का छापा यहाँ ही शुरू हो गया, इशा अल्लाह ताला बादे इतिबा[3] एक मुजल्लद[4] आपके वास्ते और एक मुशी मिया दादख़ां के वास्ते बसबीले डाक पार्सल भेजूंगा । अब तुम नवाब साहब से मेरा सलाम कहो और ये अपने नाम का ख़त उनको पढ़ा दो और एक पता तुमको देता हूँ । नवाब साहब का ख़त तलबे किताब के बाब[5] में आया था, उसमें मुदरिज[6] था कि अब मै सूरत को जाता हूँ, तुम अजजाए किताब का पार्सल उस पते से

---

१. मीर बाबा को ऐसा पुत्र मिला जो पूर्णिमा के चाँद के समान है। ऊपर आकाश मे (उस चाँद का) कुण्डल पड रहा है । उसके हर्ष और आह्लाद से तुम सफलता और प्रतिष्ठा पाते हो। बालक के हर्ष और आह्लाद से पूर्व 'फ़र्ज़न्दे फर्रुख़' तिथि मिलती है । २. पुस्तक के अंश । ३. मुद्रण के पश्चात् । ४. पुस्तक । ५. विषय । ६. उल्लिखित ।

सूरत भेजना। भाई मैंने इसी पते से खत गाह-गाह तलफ़ भी हो जाता है, नजर इस बात पर, ये खत तुमको बैरंग भेजता हूँ, ताकि ज़ाया न होने का एहतिमाल क़वी[1] रहे। फ़क़त।

मुवर्रह दोशम्बा १४ रबीउस्सानी मुताबिक १७ सितम्बर साले हाल।

१४

(३दिसम्बर, १८६४ ई०)

मुंशी साहब,

ये क्या इत्तिफ़ाक़ है कि मेरी बात कोई नहीं समझता--

कस ज़बाने मरा न मी फ़हमद
व अज़ीज़ाँ चे इल्तिमास कुनम[2]

याद करो अस्ल मुक़दमा ये था कि मैं 'क़ातेअ बुरहान' को दोबारा छपवाना चाहता हूँ, नवाब साहिब मदद दें। याने दो सौ जिल्दें खरीद लें। हज़रत साहब ने एक घड़ी इनायत फ़रमाई। भला ये मेरे किस काम की? चार दिन सोचा किया कि फेर दूँ। फिर सोचा कि बुरा मानेंगे। आखिर को घड़ी रखली और ये खयाल किया कि किताब के इतिबा के बाद सौ-डेढ़ सौ जिल्दें भेज दूँगा। इसी खत के साथ नवाब साहब के नाम का खत घड़ी की रसीद का तुमको पहुँचता है और ये भी तुमको मालूम रहे कि घड़ी की कुंजी नहीं आई। ज़ाहिर सह्व[3] से वहीं रह गई होगी।

---

१. दृढ़ सन्देह। २. मेरी भाषा को कोई नहीं समझता। मित्रों से मैं क्या प्रार्थना करता। ३. भूल।

मियाँ दादखाँ 'सय्याह' के नाम

हाँ साहब, ३० जिल्दे 'लतायफ़े ग़ैबी' की दो पार्सलो मे आगे भेजी है, जिसकी क़ीमत दस रुपये मुझको[1] पहुँचे। फिलहाल एक जिल्द और अपनी तरफ से भेजी है। रसीद जल्द लिखो।

—ग़ालिब

१५

(३ जनवरी, १८६५)

सआदत व इक़बाल निशान सैफ़ुलहक मुशी मियाँ दादखाँ 'सय्याह' को फ़कीर ग़ालिब की दुआ पहुँचे। खत मे आपने बहुत से मतालिब लिखे, मगर तीस किताबों के दो पार्सलों की रसीद नही लिखी। ये एक पार्सल जो बाद दो पार्सलो के भेजा गया है, उसमे वही 'ताइफ़े ग़ैबी' है जिसको मैने अपने मुतालए[2] मे रख कर सही किया है। इसके भेजने से ये मुद्दआ कि तुम उनतीस रिसालों को उसके मुताबिक़ सही कर लो और अगर छोटे साहब ने रख लिया है तो उनसे मुस्तार[3] लेकर अपनी सब किताबे सही कर लो और वो नुस्खा उनकी नज़र कर दो। साहब, मैने अपने सर्फ़ेज़र[4] से 'लतायफ़े ग़ैबी' की जिल्दे नही छपवाई, मालिके मतबे[5] ने अपनी बिक्री को छापी। बीस मैने मोल लीं, तीस तुमको दिलवा दी। बीस भाई ज़ियाउद्दीन ने ली। दस मुस्तफ़ाखाँ साहब ने लीं। बाक़ी का हाल मुझे मालूम नही।

देखो, सैफ़ुल हक़ शेख सादी का क़ौल क्या सच्चा है—

अगर दुनिया न बाशद दर्दमन्दम
वगर बाशद ब महरश पाए बन्दम

---

१. स्वाध्याय। २. उधार। ३. द्रव्य-व्यय। ४. मुद्रणालय।

बलाए जीं जहाँ आशोब तर नीस्त
के रंजे खातिरस्त अरहस्तो वर नीस्त[1]

जहाँ दौलत नहीं वहाँ मुसीबत है, जहाँ दौलत है वहाँ खुसूमत[2] है। मैं तो मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ का दोस्त हूँ, उनकी फ़तह की दुआ माँगता हूँ। आप इतनी मेहरबानी करे कि ये हालात जो वाक़ै हुआ करे वो मुझको लिखा करें।

ग़रबीला की हिन्दी नखरा है, फ़ारसी मे ग़रबीला बोलते है। पजुम शाबान १२८१ हि० मुताबिक ३ जनवरी १८६५ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

१६

(१३ अप्रैल, १८६५ ई०)

मुंशी साहब सआदत व इक़बाल निशान सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ सल्लमाकुमुल्लाहो ताला[3]।

फ़क़ीर की तरफ़ से दुआ व सलाम क़ुबूल करें। छोटे साहब की तस्वीर की रसीद में भाई मुहम्मद हुसेनखाँ से कहा गया था कि तुम तस्वीर के

---

१. यदि संसार न होता तो मैं दर्दमन्द न रहता। और यदि संसार मेरी दर्दमन्दी करे तो मैं उसके प्रेम में आबद्ध रहूँगा। इस दुःखदायी संसार से बढ़कर दूसरा कोई कष्ट नहीं, यदि कुछ है तो दुःखदायी है और यदि कुछ नहीं है तो दुःखदायी है। २. द्वेष। ३. ईश्वर आप की रक्षा करे।

पहुँचने की इत्तिला दे देना, सो अब तुम्हारी तहरीर से मालूम हुआ कि उन्होंने इत्तिला दी है। हाल तस्वीर का ये है कि मैंने उसे सर पर रखा, आँखों से लगाया, गोया छोटे साहब को देखा। लेकिन इसका सबब न मालूम हुआ कि नवाब साहब ने हमसे बात न की। ख़ैर, दीदार तो मयस्सर हुआ, गुफ़्तार भी अगर ख़ुदा चाहेगा तो सुन लेंगे। देखो मुंशी साहब आईने की तस्वीर की सनत[1] को सब पसन्द करते हैं, मगर फ़क़ीर इसका मौतक़द[2] नहीं। अब देखो हज़रत की तस्वीर में कुहनियों तक हाथ की तस्वीर है। आगे पहुँचे और नीचे का पता नहीं। मुकालमा[3] एक तरफ़ मुसाफ़हे[4] की भी हसरत रह गई। इस वक़्त जुदागाना ख़त लिखने की फ़ुर्सत नहीं। नवाब साहब से मेरा बहुत-बहुत सलाम और इश्तियाक़[5] कहना, बल्कि ये ख़त उनको ज़रूर देना कि वो पढ़ ले। मैं सादात[6] का नियाज़मन्द और अली का ग़ुलाम हूँ।

बन्दए शाहे शुमायमो सनाखाने शुमा[7]

१७ ज़ीक़ाद १२८१ हि० मुताबिक १३ अप्रैल १८६५ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

१७

(३० जुलाई, १८६५ ई०)

साहब,

मेहरबानीनामा के गोया अल्फ़ाज़ उसके सरासर नवाब मीर ग़ुलाम बाबा

१. फोटोग्राफ़ी। २. श्रद्धा रखने वाला। ३. वार्त्तालाप। ४. हस्तान्दोलन ५. उत्कण्ठा। ६. हज़रत अली और फ़ातिमा की सन्तान। सैयद वंश के लोग। ७. आप को स्तुति करता हूँ और तुम्हारे बादशाह का ही दास हूँ।

साहब की ज़बानी थे, पहुँचा। जवाब लिखता हूँ और पुर्सिश[1] का शुक्र बजा लाता हूँ। एक करन[2]— बारह बरस से फ़िरदौस मकान[3] नवाब यूसुफ़अलीखाँ वालीए रामपूर अपने अशार मेरे पास भेजते थे और सौ रुपये महीना माह बमाह बसबीले हुंडवी भिजवाते थे। उस मग़फ़ूर[4] की अन्दाज़ादानी[5] देखिये कि मुझसे कभी उस रुपये की रसीद नही ली। अपने खत में हुंडवी भेजा करते, मैं खत का जवाब लिख भेजता। इस महाना के अलावा कभी दो सौ कभी ढाई सौ भेजते रहते। फ़ितना व फ़साद के दिनों मे क़िले की आमद मफ़क़ूद[6], अँग्रेजी पिन्शन मस्दूद[7]। ये बुज़ुर्गवार वजहे मुक़र्ररी माह ब माह और फ़ुतूह[8] गाह गाह भेजता रहा। तब मेरी और मेरे मुतवस्सिलों[9] की ज़ीस्त[10] हुई। रईसे हाल को खुदा बदौलत व इक़बाल अबदन मोबिदन[11] सलामत रखे। वजहे मुक़र्ररी की हुडवी हर महीने बहस्बे दस्तूरे क़दीम भेजे जाता है। फ़ुतूह की रस्म देखिये जारी रहे या नहीं।

मेरे पास रुपये कहाँ जो क़ात ए बुरहान को दुबारा छपवाऊँ? पहले भी नवाब मगफ़ूर ने दो सौ रुपये भेज दिये थे, तब पहला मसविदा साफ़ हो कर छपवाया गया था। अब भी वादा किया था कि अप्रैल की वजहे मुक़र्ररी के साथ दो सौ पहुँचेंगे। वो आख़िरे अप्रैल १८६५ ई० हाल मे मर गये। अप्रैल का रुपया रईसे हाल से मैंने पाया। मुसरिफ़े किताब[12] का रुपया न आया। याद दिलाऊँगा मगर उस मरहूम का वादा सरिश्तए दफ़्तर से न था, जो अज़रू ए दफ़्तर उसकी तस्दीक़ हो। बहरहाल फ़िक्र मे हूँ। अगर अस्बाब[13] मे

---

१. पूछताछ। २. युग। ३. स्वर्गस्थ ४. स्वर्गीय। ५. विचारशीलता। ६. समाप्त। ७. रुकी हुई। ८. अतिरिक्त आय। ९. यदा-कदा। १०. आश्रितों। ११. जीवन। १२. अनन्त काल तक। १३. पुस्तक का व्यय। १४. कारण।

मुसाअ्रदत[1] की फह्वल मुराद[2]। वर्ना-उचे मा दरकार दारेम अ्क्सरे दरकार नीस्त[3]।

मुशी साहब, इस खत को ज़रूरी जानकर बैरग भेजता हूँ।

नजात का तालिब

—गालिब

१८

(११ सितम्बर, १८६५ ई०)

मुशी साहब, सआ्रदत व इकबाल निशान मुशी मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' सैफ़ुल हक़ सल्लमकुमुल्लाहो ताला[4]।

दुआ्र और सलाम, शुक्र और सिपास[5]। तुम्हारा खत मरकूमा ३० अगस्त परसों बरोज़े जुमा ८ सितम्बर १८६५ ई० को पहुँचा। कल दसवी सितम्बर माहे हाल को सौ रुपये मुन्दरिजा इसके एक सराफ़ से वसूल हो गये। छोटे साहब ने बड़ी जवाँ मर्दी और बड़ी हिम्मत की। इस सर्फ़[6] में मेरा काम हुआ्र और उनका नाम हुआ्र। अल्लाह्, अल्लाह्, अब भी हिन्दुस्तान मे ऐसे लोग हैं कि न मैंने उनको देखा, न उन्होंने मुझको देखा। न मेरा कोई हक़ उन पर साबित, न उनको कोई खिदमत मुझसे लेनी मंजूर। खैर फ़क़ीर हूँ, जब तक जीऊँगा दुआ्र दूँगा। तमाम उम्र ममनून[7] और शर्मिन्दा रहूँगा। तुम्हारा भी एहसान मानूँगा। अब दो-एक दिन मे काग़ज आ जाये तो उसका इतिबा

---

१. सहायता। २. मेरा उद्देश्य यही है। ३. जितनी चीजों की आवश्यकता है, उससे अधिक मेरे पास है। ४. ईश्वर सुरक्षित रखे। ५. कृतज्ञता और अभिनन्दन। ७. व्यय। कृतज्ञ।

शुरू हो जाये। तुम नवाब साहब को मेरा सलाम कहो और ये ख़त दिखा दो और अर्ज़ करो कि आज तक किसी भाई या किसी दोस्त का रुपये-पैसे का एहसानमन्द नहीं हुआ था, अब एहसान भी उठाया तो अपने आक़ा[1] अली उल मुर्तज़ा रज़ीउल्ला अनहो के फ़र्ज़न्द का।

वो जो एक और किताब का तुमने ज़िक्र लिखा है, वो एक लड़के पढ़ाने वाले मुल्ला ए मकतबदार[2] का ख़ब्त है। रहीम बेग उसका नाम, मेरठ का रहने वाला, कई बरस से अन्धा हो गया है। बावजूद ना बीनाई[3] के अहमक़[4] भी है। उसकी तहरीर मैंने देखी, तुमको भी भेजूंगा। मगर एक बड़े मज़े की बात है कि उसमें बेशतर वो बातें हैं, जिनको 'लतायफ़े ग़ैबी' मे रद कर चुके हो। बहरहाल उसके जवाब की फ़िक्र न करना। फ़क़्त, वस्सलाम वल इक्राम।

दोशम्बा ११ सितम्बर १८६५ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

१६

(१७ सितम्बर, १८५६ ई०)

मुशी साहब सआदत व इक़बाल निशान सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ तुम सलामत रहो, तुम्हारे ख़त के सफ़ ए सादा[5] पर ये सतरें रक़म करता हूँ ताकि तुम अपने ख़त के पहुँचने से इत्तिला पाओ। 'नाम ए ग़ालिब' साहबे मतबे[6] ने अपनी बिक्री के वास्ते नहीं छापी, जो मैं मोल लेकर भेजूं और तुमसे उसकी

---

१. स्वामी। २. पाठशाला का अध्यापक। ३. दृष्टिहीनता। ४. मूर्ख। ५. कोरे पृष्ठ पर। ६. मुद्रणालय का स्वामी।

क़ीमत माँग लूँ। मैंने आप तीन सौ जिल्दें छपवाईं। दूर व नज़दीक बाँट दीं। आज यकशम्बा है, पार्सल रवाना न होगा। जितने ये नुस्खे अब मेरे पास बाक़ी हैं, कल तुम्हें भेज दूँगा।

हाँ साहब, सौ रुपये का नोट पहुँचा और रुपया वसूल हुआ। कापी आज शुरू हो गई है, जिस दिन नोट पहुँचा उसके दूसरे दिन रुपया मिल गया। तीसरे दिन मैंने तुमको तुम्हारे रजिस्ट्रीदार ख़त का जवाब लिख भेजा। यक़ीन है कि मेरा ख़त पहुँच गया होगा और तुमने बमूजिब[1] मेरी ख़ाहिश के नवाब साहब को दिखा दिया होगा। कल हज़रत का भी एक ख़त आया है। उसका जवाब भी आज तुम्हारे ख़त के साथ इर्साल होता है। बन्दापर्वर सच कहते हो, रहीम बेग का वतने असली सरधना और फ़िलहाल मेरठ में मुक़ीम मुअल्लमी[2] उसका पेशा है और ८-१० बरस से अन्धा। नज़्म व नस्र[3] में मौलवी इमामबख़्श सहबाई का शागिर्द और फ़ारसी शेर कहता है।

यकशम्बा १७ सितम्बर १८६५ ई०।

राक़िम

—ग़ालिब अलीशाह

२०

(२३ जनवरी, १८६६ ई०)

साहब,

मैं ख़ुदा का शुक्र बजा लाता हूँ कि तुम अपने वतन गये और अज़ीज़ाने वतन[4] को देख कर ख़ुश हुए और माल ख़ैर व आफ़ियत[5] अपने मुहसिन व

१. तदनुसार। २. अध्यापन। ३. पद्य और गद्य। ४. स्वदेश के सम्बन्धी लोग। ५. कुशल-क्षेम युक्त।

मुरब्बी[1] की ख़िदमत में फिर आ पहुँचे। नवाब साहब से मेरा बहुत सलाम कहना और कहना कि उस ख़त में सलाम सिर्फ़ वुफ़ूरे इश्तियाक़[2] से लिखा है। मुहब्बतनामा[3] जुदागाना जल्द भेजूंगा।

अजी हाँ मियाँ सैफ़ुलहक़ रामपुर से आकर तीन सौ जिल्दें 'दुरफ़िशे कावयानी' की तैयार पाईं। नवाब मीर गुलाम बाबाख़ाँ साहब से हिस्स ए बिरादराना[4] को डेढ़ सौ जिल्द का पुश्तारा[5] बनवाया। उस पर टाट लिपटवाया, डाकघर भिजवाया। मुस्तरद आया[6]। सरकारी डाकवालों ने हर्गिज़ उसका भेजना क़ुबूल न किया। ठेके वाले, पम्फलेट पाकिट वाले, रेलवाले मुत्तफ़िक़ुल्लफ़्ज़[7] उसके इर्साल से इन्कार करते हैं। तुम ये रुक्क़ा हज़रत को पढ़वाओ और इस बाबा मे जो वो फ़रमायें, वो मुझको लिखो। मुद्दआ ये है कि किसी तरह ये पुश्तारा वहाँ पहुँच जाये। इस ख़त का जवाब जिस क़द्र जल्द लिखोगे मुझ पर ज़्यादा एहसान करोगे।

सेशम्बा २३ जनवरी १८६६ ई०

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२१

(२१ फ़रवरी, १८६६ ई०)

मुशा साहब, सआदत व इक़बाल निशान, सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ को फ़क़ीर असदुल्लाह् का सलाम। कल सेशम्बा फ़रवरी सुबह के वक़्त छै पार्सल ३६

---

१. उपकारी। २. पूर्ण उत्कण्ठा, भरपूर लालसा। ३. प्रेम-पत्र। ४. बन्धुत्व का भाग। ५. गट्ठा। ६. लौटाया गया। ७. एक मत से।

'दुरफ़िशे कावयानी' के नवाब मीर ग़ुलाम बाबा खाँ साहब की ख़िदमत में इर्साल किये। कल ही शाम के वक़्त आपका इनायतनामा पहुँचा। हाल मालूम हुआ। ख़ैर, अब और न भेजूँगा।

साहब, ये तुमने पाँच रुपये के टिकट क्यों भेजे ? मैं न किताब फ़रोश[1], न दलाल। ये हरकत मुझे पसन्द न आई और तुमने बुरा किया। हज़रत १६ जिल्दें 'लतायफ़े ग़ैबी' की भेज कर उसके पान-सात दिन के बाद बीस 'नाम ए ग़ालिब' का पार्सल इर्साल किया है। 'लतायफ़' की रसीद तुमने भेज दी, यक़ीन है कि 'नाम ए ग़ालिब' का पार्सल भी पहुँच जाएगा। घबराओ नहीं। नवाब साहब की ख़िदमत में मेरा सलाम और इश्तियाके मुलाक़ात[2] अर्ज़ करना।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२२

(१ मार्च, १८६६ ई०)

खाँ साहब, सआदत व इक़बाल निशान मियाँ दादखाँ 'सय्याह' को फ़क़ीरे गोशानशी[3] का सलाम पहुँचे। तुम्हारा कोई ख़त, सिवाय इस ख़त के, जिसका जवाब लिखता हूँ, हर्गिज़ नहीं पहुँचा। बहुत दिन से मुझको ख़याल था कि मौलाना सय्याह ने मुझको याद नहीं किया। कल नागाह[4] तुम्हारा ख़त पहुँचा। आज उसका जवाब लिखता हूँ।

---

१. विक्रेता। २. भेंट की उत्सुकता। ३. एकान्तवासी। ४. अकस्मात। ५. कष्ट।

मुहर मैं तो खोदने का नहीं जो इस क़दर उज्र चाहते हो, खुदवा देने में क्या तकल्लुफ़ और क्या ज़हमत ? मैं अहबाब[1] का खादिम[2] हूँ। मीर गुलाम बाबाखाँ से मेरा सलाम कहिये और नगीं मय नक्शा बेतकल्लुफ़ भेज दीजिये। आपके हुक्म की तामील और उस नगीं की दुरुस्ती हो जाएगी। खातिर जमा रहे। ज्यादा क्या लिखूँ ?

अजी सय्याह साहब, हमारा ध्यान तुम मे लगा रहता है। कभी-कभी खत लिखते रहा करो। मैं ऐसा गुमान करता हूँ कि अगर मीर गुलाम बाबाखाँ साहब को मुहर खुदवानी न होती और वो तुमसे न कहते तो तुम हर्गिज़ मुझको खत न लिखते। ये तुम्हारा खत गोया मीर गुलाम बाबाखाँ के हस्बुल हुक्म[3] था कि उन्हीं को उसका जवाब लिखूँ और उसके नाम का खत भेजूँ। मगर फिर सोचा कि तुम आजुर्दा[4] हो जाओगे, तुम्हीं को खत लिखा। भाई, ये तरीका फ़रामोशकारी[5] का अच्छा नहीं। गाह गाह खत लिखा करो। वस्सलाम।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२३

(२२ मार्च, १८६६ ई०)

इक़बाल निशान सैफ़ुलहक़ को दुआ पहुँचे। पाँच इश्तिहार अखबार की खरीदारी के और तीन इश्तिहार किताब की खरीदारी के आपके पास पहुँचते हैं। छोटे साहब को मुलाहिज़ा करवाइये और अतराफ़ व जवानिब[6] दूर व नज़दीक भेजिये। जो साहब किताब व अखबार दोनों के खरीदार

---

१. आत्मीयजन। २. सेवक। ३. आदेशानुसार। ४. दुःखी। ५. विस्मरण का ढंग। ६. आस-पास।

हों, वो उसके ख़रीदने की इत्तिला का ख़त मीर फ़ख़्रुद्दीन मुहतमिम[1] 'अकमलुल मताबे' के नाम लिखे और वो ख़त मेरे पास भेज दें। जो साहब फ़क़्त अख़बार के ख़रीदार हों वो उसकी इत्तिला का ख़त लिखें।

—ग़ालिब

२४

(२३ अप्रैल, १८६६ ई०)

मौलाना सैफ़ुलहक़,

अब तो कोई ख़त तुम्हारा नोट और हुंडवी और टिकट से ख़ाली नहीं होता। भला ये तो फ़रमाइये कि ये ढाई रुपये किस बाबत के और किस जिन्स की क़ीमत के हैं? अगले पाँच रुपये पर मैं बेमज़ा हुआ था, ये ढाई और तुर्रा हुए। बहरहाल इनका हाल लिखो कि कैसे हैं और काहे के हैं? इस रुक़्क़े का जवाब जल्द लिखो। टोपियाँ बादे ईद भेजी जाएँगी।

इनायत का तालिब

—ग़ालिब

२५

(१७ जून, १८६६ ई०)

साहब, मेरा सलाम तुम्हारा ख़त पहुँचा, दोनों ग़ज़लें देखीं, ख़ुश हुआ। फ़क़ीर का शेवा[2] ख़ुशामद नहीं और फ़ने शेर[3] में अगर इस शेवे की रिआयत की जाये तो शागिर्द नाक़िस रह जाता है। याद करो कभी कोई ग़ज़ल तुम्हारी इस तरह की नहीं हुई कि जिसमें इस्लाह न हुई हो, ख़ुसूसन[4] रोज़मर्रा ए

---

१. प्रबन्धक। २. ढंग। ३. काव्य-शास्त्र। ४. विशेष रूप से।

उर्दू[1] में। दोनों ग़ज़ले लफ़्ज़न और मानीअन[2] बे ऐब हैं। कहीं इस्लाह की हाजत नहीं। आफ़रीं और सद आफ़रीं और सद हज़ार आफ़रीं।

मीर गुलाम बाबाख़ाँ साहब अगर वाक़ई ऐसे ही हैं जैसे तुम लिखते हो तो बेशक वो शख़्स हज़ारों में एक है। लारैब फ़ी[3] क्या फ़रमाइश करूँ और क्या तुमसे मँगाऊँ ? वहाँ कौन-सी चीज़ है कि यहाँ नहीं। आम मुझको बहुत मरग़ूब[4] हैं, अगूर से कम अज़ीज़ नहीं, लेकिन बम्बई और सूरत से यहाँ पहुँचने की क्या सूरत ? मालदे का आम यहाँ पैवन्दी और विलायती करके मशहूर है। अच्छा होता है। कमाल ये कि वहाँ बहुत अच्छा होगा। सूरत से दिल्ली आम भेजने महज़ तकल्लुफ़ है। रुपये के आम और चार रुपये महसूले डाक और फिर सौ में शायद दस पहुँचे। मेरे सर की क़सम, कभी ऐसा इरादा न करना। यहाँ देसी आम अनवा व अक़साम[5] के बहुत पाकीज़ा, लज़ीज़ और ख़ुशबू इफ़रात[6] से हैं। पैवन्दी आम भी बहुत हैं। रामपूर से नवाब साहब अपने बाग के आमों से अक्सर बसबीले अर्मुग़ाँ[7] भेजते रहते हैं। ए लो, आज बरेली से एक बहँगी एक दोस्त की भेजी हुई आई। दो टोकरे, हर टोकरे में सौ आम। कल्लू दरोग़ा ने मेरे सामने वो टोकरे खोले। दो सौ में से तिरासी आम अच्छे निकले और एक सौ सत्रह आम बिल्कुल सड़े हुए। अवायले जून[8] माहे हाल में एक हफ़्ता मेंह बरस कर फिर अब वही आग बरस रही है और लू चल रही है।

२६

(५ सितम्बर, १८६६ ई०)

भाई सैफ़ुलहक़, तुम्हारा ख़त पहुंचा। क़ाज़ी साहब बड़ौदा को माफ़ रखा।

---

१. मुहाबरेदार उर्दू। २. शब्दतः और अर्थतः। ३. निस्सन्देह। ४. प्रिय। ५. विविध प्रकार के। ६. आधिक्य। ७. भेंट के रूप में। ८. जून के प्रारंभ मे।

अगर कोई वजह अपने पर उनके इताब[1] की पाता तो उनसे उज्र करता और अपना गुनाह माफ़ करवाता। जब सबबे मलाल[2] ज़ाहिर नहीं तो मैं क्या करूँ? तुम बुरा न मानो, किस वास्ते कि अगर मैं बुरा हूँ तो उसने सच कहा और अगर मैं अच्छा हूँ और उसने बुरा कहा तो उसको ख़ुदा के हवाले करो--

'ग़ालिब' बुरा न मान जो दुश्मन बुरा कहे
ऐसा भी कोई है कि सब अच्छा कहे जिसे

साहब, इस बुढ़ापे मे तस्वीर के पर्दे मे कहाँ खिचा-खिचा फिरूँ? गोशानशीं[3] आदमी, अक्स की तस्वीर उतारने वाले को कहाँ ढूंढूँ? देखो, एक जगह मेरी तस्वीर बादशाह के दरबार मे खिची हुई है, अगर हाथ आ जायेगी तो वो वर्क़[4] भेज दूँगा।

अजी वो तो मैंने नवाब साहब को हँसी से एक बात लिखी थी। दोस्ताना इस्तिलात[5] था। भइ, मैं बहरा हूँ, गाना क्या सुनूँगा? बूढ़ा हूँ, नाच क्या देखूँगा? ग़िज़ा छै माशे आटा, खाना क्या खाऊँगा? बम्बई-सूरत मे अँग्रेज़ी शराबें होती हैं, अगर वहाँ आता और शरीके महफ़िल होता तो पी लेता।

नजात का तालिब.
—ग़ालिब

२७

(१८ नवम्बर, १८६६ ई०)

साहब,

मैं तुमसे शर्मिन्दा। पहला ख़त तुम्हारा मय क़सीदा पहुँचा। मैं क़सीदा किसी किताब मे रख कर भूल गया। अब दूसरा ख़त देख कर क़सीदा याद

१. अप्रसन्नता। २. दुःख का कारण। ३. एकान्तसेवी। ४. पृष्ठ। ५. प्रेम।

आया। हरचन्द ढूंढ़ा, न पाया। बड़ी बात ये है कि इस क़दर मुझको याद है कि उसी वक़्त मैंने उन अशार को सरासर देख लिया था। अशार सब हमवार[1] थे। तुम अँदेशा न करो और क़सीदा नज़्र गुज़रानो और माल ख़ैर[2] वतन को जाओ। लेकिन भाई, वतन पहुँच कर ज़रूर मुझको ख़त लिखना और अपने घर का पता लिखना। ताकि मैं इस निशान से तुमको ख़त भेजूँ। नवाब मीर गुलाम बाबाख़ाँ साहब को फ़क़ीर की तरफ़ से सलाम कहना। फ़क़त।

सुबह सेशम्बा, १८ नवम्बर १८६६ ई०।

२८

(३ जनवरी, १८६७ ई०)

मुंशी साहब,

वही जहान[3], वही ज़मीन, वही आस्मान, वही सूरत, वही दिल्ली, वही नवाब मीर ग़ुलाम बाबाख़ाँ, वही सैफ़ुल हक़ 'सय्याह', वही ग़ालिब नीमजान[4] अँग्रेजी डाक जारी, हरकारों को रेल की सवारी, रबीउल अव्वल[5] में तुम्हारा ख़त आया, रबी उस्सानी, जमादिल अव्वल, जमादिउस्सानी, रज्जब, आज शाबान की २६ है। सुबह के वक़्त ये ख़त लिख रहा हूँ। ८ बज गये हैं। इस वक़्त तक न तुम्हारा कोई ख़त आया, न कोई नवाब साहब का इनायत नामा[6] वास्ते ख़ुदा के मेरे इस ख़त का जवाब जल्द लिखो और उस ख़त में तर्के नामा व पयाम का सबब[7] लिखो। आज ही के दिन एक पार्सल छै टोपियों का इर्साल करता हूँ। ख़ुदा करे पार्सल पहुँच जाये और टोपियाँ तुम्हारे पसन्द आयें। नवाब साहब

---

१. उचित। २. सकुशल। ३. संसार। ४. अर्धमृत। ५. एक महीने का नाम। ६. कृपा-पत्र। ७. पत्र-सन्देश के न भेजने का कारण।

की खिदमत ये मेरा सलाम पहुँचाना और इताब[1] की वजह दरियाफ़्त करके लिखना। खत बेरंग है और पार्सल पैड।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२६

(१२ फ़रवरी, १८६७ ई०)

मुंशी साहब शफ़ीक़[2], बदिल मेहरबान, अज़ीज़तर अज़ जान[3] सैफ़ुलहक़ मियाँ दादखा को फ़कीर ग़ालिब अलीशाह की दुआ पहुँचे। परसों नवाब साहब का खत आया। साहब टोपियों की हक़ीक़त ये है कि तुमने लतायफ़े ग़ैबी' की १५ जिल्दे सात रुपये आठ आने दाम भेजकर मँगवाईं, फिर दो रुपये के टिकट भेज कर टोपियाँ मँगवाई। मैंने तुम्हारे भेजे हुए रुपयों की टोपियाँ खरीदकर तुमको भेज दीं। चाहे तुम पहनो, चाहें छोटे साहब को नज़्र करो।

तुम्हे जो मैंने 'सैफ़ुलहक़' खिताब दिया है, अपनी फ़ौज का सिपहसालार मुक़र्रर किया है। तुम मेरे हाथ हो, तुम मेरे बाज़ू हो, मेरे नुत्क़[4] की तलवार तुम्हारे हाथ से चलती रहेगी। 'लतायफ़े ग़ैबी' ने आदा[5] की धज्जियाँ उड़ा दीं।

एक नई बात सुनो। मुहम्मद मिज़्राखाँ मेरे सबबी भाई[6] का नवासा है। उसने एक अख़बार निकाला है मुसम्मा[7] ब 'अशरफ़ुल अख़बार'—उसका लिफ़ाफ़ा तुमको भेजता हूँ। उसको पढ़कर मालूम कर लोगे कि तुम्हारा एक ऐतराज़ क़तील के कलाम पर छापा गया है। इस इर्साल व एलाम[8] से सिर्फ़

---

१. अप्रसन्नता। २. दयालु। ३. प्राणों से भी प्रियतर। ४. वाणी। ५. शत्रु लोग। ६. रिश्ते का भाई, मुँह बोला भाई, सकारण बन्धु। ७. नामक। ८. विज्ञप्ति।

इत्तिला मज़ूर है। हाँ, एक बात ये भी है कि छोटे साहब की नज़र से गुज़र जाये और उस सरकार में ये अखबार ख़रीद किया जाये और तुम उनकी तरफ़ से हुक्म ख़रीदारी इब्तिदा ए जनवरी[1] १८६७ ई० मे बनाम मुहम्मद मिर्ज़ाखाँ लिखो और वो ख़त इस पते से दिल्ली रवाना करो, जो उनके अखबार के आखिर मे लिखा है।

हैरान हूँ कि छोटे साहब के खत का क्या जवाब लिखूँ ? उन्होंने मुझे शर्मिन्दा किया। अपने को छोटा और मुझको बजुर्ग लिखा। सैयद तो सब मुसलमानो के बुजुर्ग होते है, मैं तो मुसलमानो मे भी एक ज़लील[2], अलील[3], फ़क़ीर, हक़ीर[4] आदमी हूँ। ये उनकी बुजुर्गी, उनकी खूबी, उनकी मेहरबानी है। हक़ताला उनको सलामत रखे और इन मुकद्दमात मे मिन्कुल्लिल वुजूह[5] उनको फ़तह व ज़फ़र[6] नसीब हो। मेरा सलाम कहना और ये इबारत पढा देना।

हाँ साहब, बिरादर ब जाँ बराबर[7] मिर्ज़ा मुईनुद्दीन हुसेनखाँ बहादुर को मेरा सलाम कहना और कहना कि भाई मेरा जी देखने को बहुत चाहता है। पहले बरख़ुर्दार[8] शहाबुद्दीनखाँ साहब से पूछो, वो इजाज़त दे तो फौरन रेल-पेल करते चले आओ। फ़क़त।

सेशम्बा ७ शव्वाल १२८३ हि०, मुताबिक १२ फ़रवरी १८६७ ई०।

दीदार का तालिब[9]
—ग़ालिब

३०

(३१ मार्च, १८६७ ई०)

भाई,

तुम जीते रहो और मरातिबे आलिया[10] को पहुँचो। लो, एक हँसी की बात

---

१. जनवरी का प्रारभ। २. अपमानित। ३. रुग्ण। ४. तुच्छ। ५. सब भाँति से। ६. विजय। ७. प्राणों के समान। ८. सुपुत्र। ९ दर्शनाभिलाषी। १०. उच्च-पद।

सुनो। हमारा खत मुंशी कन्हैयालाल के नाम का मेरे पास आया। हरचन्द मैंने ख़याल किया। इस नाम का कोई आशना[1] मुझे याद न आया। ये नादानी उन्होंने मुझसे कह न दिया कि मेरे नाम का खत आये तो मेरे पास भेज देना। बेखबरी मे जो खत आया मै न नाम से वाकिफ, न मुकाम से वाक़िफ, खत फेर न दूँ तो क्या करूँ? खत के वापिस करने के बाद एक दिन आप भाई मिर्जा मुहम्मद हुसेनखाँ के साथ मेरे पास आये और तार्रुफे कदीम[2] याद दिलाया। देखना मियाँ क्या खूब ब्यान है। फरमाते हैं कि मै गदर से पहले दो-तीन बार तेरे पास हाजिर हुआ हूँ। इन्साफ करो, दो-तीन मुलाकाते और दस-ग्यारह बरस की बात! मै निसयान[3] का पुतला, मेरा क़ुसूर क्या? बहरहाल ये शरीफ है और उम्दा रोज़गार किये हुए है।

साहब, मैंने 'अवध अखबार' मे देखा कि छोटे साहब मुक़दमा जीते और बम्बई के साहबो मे उनकी अफ़्ज़ाइशे जाह व जलाल[4] व ताज़ीम[5] व तौक़ीर[6] कमाल हुई। मै तो तहनियत[7] मे खत लिखूँगा मगर रश्क आता है कि ब हवालए 'अवध अखबार' लिखूं और ब हवालए सैफ़ुलहक न लिखूं। ज्यादा-ज्यादा।

--असदुल्लाह गालिब

३१

(२३ अप्रैल, १८६७ ई०)

मुशी साहब, सआदत व इकबाल निशान, अजीज़तर अज़जान सैफ़ुलहक मियाँ दादखाँ 'सय्याह' को ग़ालिब की दुआ पहुँचे। परसों एक खत तुम्हारा

१. परिचित। २. पुराना परिचय। ३. विस्मृति। ४. प्रतिष्ठा और ऐश्वर्य मे वृद्धि। ५. आदर। ६. मान्यता। ७. बधाई।

और एक ख़त छोटे साहब का पहुँचा। तुम्हारे ख़त मे पचास-पचास रुपये के दो नोट पहुँचे। सौ रुपये वसूल हो गये। आज तुमको इत्तिला और नवाब साहब को शुक्रिया लिख कर रवाना करता हूँ।

भाई, तुमने अखबार अतराफ़ मे व जवानिब[1] मे मेरा हाल देखा होगा। मैं अब महज़ निकम्मा हो गया। खुदा झूठ न बुलवाये, पचास जगह से अशार वास्ते इस्लाह के आये हुए बक्स मे धरे हैं। अज़ाँ जुम्ला तीन साहबों के नाम लिखता हूँ। मीर इब्राहीम अलीखाँ साहब, मीर आलम अलीखाँ साहब, नवाब अब्बास अलीखाँ साहब रईसे हाल रामपूर के हक़ीकी मामूँ। ग़र्ज़ कि उन्ही औराक़ मे तुम्हारे काग़ज भी धरे हुए हैं। जिस दिन जरा इफ़ाक़त[2] पाऊँगा तो उन सबका कवागज़ को देखूँगा।

३२

तुम्हारा खत पहुँचा। आज जवाब लिखता हूँ। पहले ये पूछता हूँ कि मेरी तरफ से जो ऐतज़ार[3] छपा है, वो तुम्हारी नज़र से गुज़रा है या नही? न गज़रा हो तो 'अकमलुल अखबार' माहे शव्वाल के चारों हफ़्ते के दोवर्क़े देख लो। एक हफ़्ते मे निकल आएगा।

वाक़ई ऐतराज़ के जवाव एक मौलवी ने लिखे हैं। इस हफ़्ते के अक़मलुल अखबार में देख लो। जो तुम से कलाम करे, उसी अन्दाज से तुम भी कलाम करो।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१ आसपास के समाचार-पत्र। २. स्वास्थ्य। ३. क्षमा-याचना।

मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' के नाम

३३

(११ जून, १८६७ ई०)

मुशी साहिब, स आदत व इक़बाल निशाँ सैफ़ुल हक़ मुशी मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' को ग़ालिब नातवाँ नीमज़ाँ की दुआ पहुँचे। भाई, मेरा हाल इसी से जानो कि अब मे खत नही लिख सकता। आगे लेटे-लेटे लिखता था। अब राशा[1] व ज़ोफ़े बसारत[2] के सबब से वो भी नही हो सकता। जब हाल ये है तो कहो साहब, मै अशार की इस्लाह क्यों कर दूँ? और फिर इस मौसम मे, कि गर्मी मे सर का भेजा पिघल जाता है, धूप को देखने की ताब नही। रात को सहन मे सोता हूँ, सुबह को दो आदमी हाथों मे लेकर दालान मे ले आते है। एक कोठरी है अँधेरी, उसमे डाल देते है। तमाम दिन इस गोश ए तारीक[3] मे पड़ा रहता हूँ। शाम को फिर दो आदमी बदस्तूर ले जाकर पलग पर सहन मे डाल देते है। तुम्हारी गज़ले, मीर इब्राहोमअलीखाँ बहादुर की गज़ले, मोर आलमअलीखाँ बहादुर की गजले, हकीम मीर अहमद हसन साहब की गज़ले और क्या कहूँ किसकी ग़ज़ले। ये सब एक जगह धरी है। अगर कोई दिन ज़िन्दगी और है और ये गर्मी खैर से गुज़र गई तो सब ग़ज़लों को देखूँगा।

तस्वीर का हाल ये है कि एक मुसव्वर[4] साहब मेरे दोस्त, मेरेचे हरे की तस्वीर उतार कर ले गये। उसको तीन महीने हुए। आज तक बदन का नक़शा खीचने को नही आये। मैंने गवारा किया आइने पर नक़शा उतरवाना भी। एक दोस्त इस काम को करते है। ईद के दिन वो आये थे। मैंने उनसे कहा कि भाई, मेरी शबीह[5] खींच दो। वादा किया था कि कल नही तो परसों असबाब खींचने का लेकर आऊँगा। शव्वाल, जीकादा, जिहज्जा, मुहर्रम ये पाँचवाँ महीना है, आज तक नहीं आये।

---

१. कम्पन। २. दृष्टि मान्द्य। ३. अंधेरा कोना। ४. चित्रकार। ५. चित्र।

आग़ा ग़ुलाम हुसेनख़ाँ साहब का क़ता पहुँचा। उसमे कुछ तो शेर इस्लाह तलब भी थे, अब इस्लाह दे कौन ? मैं तो अपनी मुसीबत मे गिरफ़्तार, बारे एक मेरा शागिर्द रशीद[1] मुंशी हरगोपाल 'तफ़्ता' बसवारी रेल मेरे देखने को आया था। उसको मौक़ा व महल[2] बता दिया, जो मैं कहता गया, उसी तरह वो बनाता गया। वो क़ते का क़ाग़ज़ बाद इस्लाह के 'अकमल उल मताबे' मे भेज दिया। हफ़्ते आइन्दा मे तुम भी देख लोगे।

मर्गेनागाह का तालिब
—ग़ालिब

३४

(२५ अगस्त, १८६७ ई०)

नूरे चश्म इक़बाल निशाँ सैफ़ुलहक़ मियाँ दादख़ाँ 'स'याह' को ग़ालिब नीमजाँ की दुआ पहुँचे। वाक़ई तुम्हारे दो ख़त आये है। आगे मैं लेटे-लेटे कुछ लिखता था, अब वो भी नही हो सकता। हाथ मे राशा, आँखों मे ज़ोफे बसर[3]। कोई मुतसद्दी मेरा नौकर नही। दोस्ते आशना[4] कोई आ जाता है तो उससे जवाब लिखवा देता हूँ।

भाई, मैं तो कोई दिन का मेहमान हूँ। और अखबार वाले मेरा हाल क्या जाने ? हाँ, 'अकमलुल-अख़बार' और 'अशरफ़ुल अख़बार' वाले कि, ये यहाँ के रहने वाले है और मुझसे मिलते रहते है, सो इनके अख़बार में मैंने अपना मुफ़स्सल[5] हाल छपवा दिया है और उसमें मैंने उन्ह चाहा ख़तों के जवाब और अशार के इस्लाह से, उस पर किसी ने अमल न किया। अब

---

१. शिक्षित शिष्य। २. अवसर और स्थान। ३. दृष्टि-दौर्बल्य। ४. परिचित मित्र। ५. विस्तृत।

तक हर तरफ से ख़तों के जवाब का तक़ाज़ा और अशार वास्ते इस्लाहों के चले आते हैं, और मैं शर्मिन्दा होता हूँ। बूढ़ा, अपाहिज, पूरा बहरा, आधा अन्धा, दिन-रात पड़ा रहता हूँ। हाजती पलग के तले धरी रहती है। तश्त[1] चौकी पलग के पास रहता है। सो तश्त चौकी पर तीसरे-चौथे दिन इत्तिफाक जाने का होता है। और हाजती[2] की हाजत[3] बसबबे सुरअते बोल[4] के घटे भर मे पाँच-छै बार होती है।

तस्वीर खीचने वाला जो हिन्दुस्तानी एक दोस्त था, शहर से चला गया। एक अँग्रेज है, वो खीचता है। मुझमे इतना दम कहाँ कि कोठे पर से उतरूँ, पालकी मे बैठूँ और उसके घर जाऊँ और घटे-दो घटे कुर्सी पर बैठूँ और तस्वीर खिंचवा कर जीता-जागता अपने घर फ़िर आऊँ। अब तुम अज़राहे मेहरबानी मेरा—इब्राहीम अलीख़ाँ बहादुर और हकीम सैयद अहमद हसन साहब को और जब बम्बई से वापिस आ जाये, नवाब गुलाम बाबाख़ाँ को ये ख़त देना। तुम्हारे हाँ लड़के का पैदा होना और उसका मर जाना मालूम हो कर मुझको बडा गम हुआ। भाई, इस दाग़ की हक़ीक़त मुझसे पूछो कि ७१ बरस की उम्र तक सात बच्चे पैदा हुए, लड़के भी और लड़कियाँ भी और किसी की उम्र-पन्द्रह महीने से ज्यादा न हुई। तुम अभी जवान हो। हक़ताला तुम्हे सब्र और नेमुल बदल[5] दे। वस्सलाम।

—ग़ालिब

३५

(२५ जनवरी, १८६८ ई०)

साहब,

तुम्हारे ख़त के पहुँचने से कमाल ख़ुशी हुई। टोपियाँ अगरचे तुम्हारे सर

---

१. बडा थाल। २. मूत्र-पात्र। ३. आवश्यकता। ४. जल्दी-जल्दी पेशाब आना ५. क्षतिपूर्त्ति।

पर ठीक न आईं, लेकिन जाया[1] न गईं। मेरे शफ़ीक[2] और तुम्हारे मुरब्बी[3] के सर्फ़[4] मे आईं। तुमको और टोपियाँ भेजूँगा।

मुसव्वर से सख्त आजिज़[5] हूँ। वादा ही वादा है, वफ़ा का नाम नही।

कुल्लियाते मीर तक़ी[6] का इन्तिखाब तुम्हारे खत के पहुँचने से दो दिन पहले मीर फ़ख्रुद्दीन ने इर्साल कर दिया। टिकट उनके हवाले कर दिये।

हज़रत बुहतान[7] लगाने की खू[8] किससे सीखे हो? मेरे पास कोई गज़ल तुम्हारी नहीं है। नवाब साहब को सलाम कहना और मेरी जबानी कहना कि टोपियों की मेरा आमुंग़ां[9] समझना। सैफ़ुल हक़ की नज्र तसव्वुर न करना।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१. व्यर्थ। २. मित्र। ३. अभिभावक। ४. व्यवहार, व्यय। ५. तग, परेशान। ६. मीर तकी का काव्य-संग्रह। ७. कलंक। ८. स्वभाव। ९. उपहार।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़का' के नाम

१

(३० जुलाई, १८६३ ई०)

मुबह सेशम्बा १३ सफ़र साले ग़फ़र (१२८० हि०)। माहब, मैं तुमको इख़वानुस्सफा[1] मे गिनता हूँ। अपना नूरे नज़र[2] व लख्ते जिगर[3] जानता हूँ। देखो, तुम पर मुझको क्या ऐतमाद है कि ख़ुदा ज़ब्ते राज़[4] नहीं कर सकता और तुम से राज़दारी और अमानत मे उस्तुआरी[5] चाहता हूँ। कसीदे व गजल मे सादे तहसीन[6] ब इक्तिज़ा ए बख्त[7] व क़िस्मत है, न ब अन्दाज़ ए अर्ज़िशे कलाम[8], ममदूह[9] मुख़न फ़हम होता तो मुझको मुतवस्सित[10] के तसाहुल[11] का वहम होता है, अग्निया[12] को न मजाक़े शेर[13] मे निस्बत न मुताले अशार[14] की फ़ुर्सत। मुतवस्सित ने बकद्रे (हिम्मत ?) सिलसिले ज़ुबानी[15] की, लेकिन मर्ज़ी[16] ने नाक़द्रदानी की।

मौलवी गुलाम गौसखाँ 'बेखबर' मीर मुशी लेफ़्टंट गवर्नर मुख़लिसे ख़ालिसुल इख़लास[17] है, हर्गिज़ उनको मुद्दई से तलम्मुज़[18] नहीं। अलबत्ता उसको

---

१. आत्मीय-जन। २. आँख की पुतली। ३. जिगर का टुकड़ा। ४. रहस्य को रोके रखना। ५. दृढ़ता। ६. साधुवाद का चिह्न। ७. भाग्य की इच्छा पर आश्रित। ८. कविता सुनाने की प्रार्थना के आधार पर अनुमान लगाना। ९. जिसकी प्रशसा की जाये। १०. माध्यम, बीच का आदमी। ११. आलस्य, उपेक्षा १२. सम्पन्न लोग। १३. काव्य-रुचि। १४. काव्य का अध्ययन। १५. गति। १६. शरण-स्थल, ठिकाना। १७. अत्यन्त शिष्ट। १८. शिष्यत्व।

ख़ुशगवार जानते है और ये कभी न होगा कि वो मेरा मुक़ाबिला करे और क़ात ए बुरहान का जवाब लिखे—

बातिलस्त उचे मुद्दई गोयद[1]

मुद्दई अपने जाम मे मुझको अपना हमफन[2] जानकर हसद[3] करता है। मै अमीर अली शेर (?) जैसा मुहतसिब[4] और मौलवी जामी जैसा मुफ़्ती[5] कहाँ से लाऊं जो न्याव करे और काजिब[6] को सज़ा दे ? शुक्र है ख़ुदा का कि तुम सुख़नवर[7] और सुख़नदाँ[8] हो और यक़ीन है कि क़लम रवे हिन्द[9] मे और भी ऐसे आदमी होंगे कि मेरे और मुद्दई के रुत्बे को मुमयिज़्ज[10] हो सकेंगे।

ईदस्त बादा शुद फलकों सागिर आफताब[11]

ख्वालसन् लिल्लाह[12], फ़लक[13] ज़र्फ़[14] और आफ़ताब मज़रूफ़[15] है। ये शख़्स ज़र्फ़ को मज़रूफ और मज़रूफ़ को ज़र्फ़ ठहराता है। इसको कौन मुसल्लम[16] रखेगा ? इससे बढ़कर एक और खद्शा[17] है याने मुशब्बा[18] और मुशब्बाबिही[19] मे वजहे शबा[20] शर्त है। आफ़ताब व सागर[21] मे तद्वीर वजहे[22] शबा है, शराब और फलक मे वजहे शबा कहाँ ?

मै अपने को ऐसा नही जानता कि तुम्हारे कलाम को इस्लाह दूँ। क़द्रदानी[23] क्यों कर कहूँ, क़द्र अफ़ज़ाई[24] करते हो। दोस्ताना, न उस्तादाना

---

१. विरोधी जो कुछ कहता है, सब झूठ है। २. हम व्यवसायी। ३. ईर्ष्या, जलन। ४. हिसाब करने वाला, पूछताछ करने वाला। ५. मुस्लिम धर्मशास्त्र के अनुसार निर्णय देने वाला। ६. झूठा। ७. कवि। ८. काव्य के मर्मज्ञ। ९ हिन्दुस्तान। १०. विवेकी। ११. ईद का दिन है, आकाश शराब है और सूरज प्याला। १२. केवल ईश्वर के लिये। १३. आकाश। १४. पात्र। १५. जो वस्तु पात्र मे रहती है, आधेय। १६. सर्वमान्य। १७. आशंका १८ उपमेय। १९. उपमान। २०. समान धर्म। २१. मधुप्याला। २२. आकाश। २३. गुण-ग्राहकता। २४. गुणों की वृद्धि।

ज़ो खयाल मे आएगा, कहा जाएगा। अगर आपने इस रविश का याने इस्तिस्लाह[1] का इल्तिज़ाम[2] किया है तो जब तक काग़ज़े अशार मेरे पास से वापिस न जाया करे, माकुतिब फीगो शुहरत[3] न पाया करे। मजमूअए कलामे साबिक[4] भेज दोगे, मै बकमाल तीव्रे खातिर[5] उसको देखकर दूँगा। इस्तिजाज़त[6] क्या जरूर ?

१३ सफर १२८० हि०, मुताबिक ३० जुलाई १८६३ ई०।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

२

(२६ अगस्त, १८६३ ई०)

हजरत मौलवी साहब,

मै बरस दिन से बीमार और तीन महीने से साहबे फर्राश[7] हूं। उठने-बैठने की ताक़त मफ़क़ूद[8], फ़ोडों से बदन लालाज़ार[9] पोस्त[10] से हड्डियाँ नमूदार[11]। फोडे ऐसे जैसे अगारे सुलगते है। नाज़ा[12] पर दस जगह फाये लगते है। जाफ व नातवानी अलावा, सोज़े गमे हाए निहानी[13] अलावा। सनते सहले मुम्तने[14] में मैने नवाब मुख्तारुल मुल्क[15] को कसीदा भेजा, कुछ क़द्रदानी न फरमाई।

---

१ परामर्श। २. किसी बात का उत्तरदायित्व लेना, स्वीकार करना। ३. जो इसमे लिखा गया है, प्रसिद्धि है। ४. पहले की कविताओं का संग्रह। ५. प्रसन्नता से। ६. आज्ञा-याचना। ७. शय्याशायी। ८. लुप्त। ९. लाला नामक फूलो की वाटिका। १०. चर्म। ११. प्रकट। १२. शरीराग। १३. मानसिक शोक की वेदना पृथक्। १४. छुपा हुआ। १५. नवाब मुख्तारुल मुल्क मीर तुराब अलीखाँ सालार जंग प्रथम, हैदराबाद के प्रधान मंत्री थे।

रद्दे फ़िर्क़ए वहाबिया[1] मे एक मस्नवी जो साबिक़ में लिखी थी वो मुहीउद्दौला को भेजी, रसीद भी न आई, अब सुनता (हूँ) कि मौलवी 'गुलाम इमाम' शहीद शागिर्दे क़तील' वहाँ कोस[2] 'अनादिला गैरी' बजा रहे हैं और सुखन नाशनासों[3] को अपना ज़ोरे तबा दिखा रहे हैं। एक कम सत्तर बरस की उम्र मेरी हुई, सिवाय शुहरते खुश्क[4] के फने शेर का कुछ फल न पाया। फर्मान्दिहाने अस्त्र[5] मौतकद[6] हो गये, मगर कुछ हात न आया। 'अहसनत[7]' व 'मरहबा'[8] का शोर सामे फ़रसा[9] हुआ। ख़ैर, सताइश[10] का हक़ सताइश से अदा हुआ, मुख्तारुल मुल्क ने ये भी न किया। न मदह[11] की दाद दी, न मदह का सिला[12] दिया। हैरान हूँ कि नवाब साहब मुझे क्या समझे। मुहीउद्दौला से और कुछ नही कहता मगर ये कि खुदा समझे।

कल से पलग पर लेटा-लेटा गज़ल को देख रहा हूँ और लेटे-लेटे ये सतरे लिखता हूँ--

दीदेम गुलो लाला चहा रग बराबुर्द[13]

फक़ीर के नज़दीक दीदेम ज़ायद है अगर यों हो तो बेहतर है--

हरेक ज़ गुले लाला···(चहारग बराउर्द)
बाशद शफ़क़्के काँ बलबे लाल तो माँद
गर चर्ख बकामे दिले मारग बराबुर्द[14]

---

१. वहाबी (मुसलमानों मे सुधारवादी आन्दोलन) सम्प्रदाय के खण्डन में। २. दुन्दुभि। ३. काव्य से अपरिचित। ४. कोरी प्रशंसा। ५. समकालीन शासक। ६. भक्त। ७. साधुवाद। ८. साधुवाद। ९. स्रोता को बहरा बनाने वाला। १०. प्रशंसा। ११. प्रशंसा। १२. प्रतिफल। १३. गुले और लाला को देखा, उसमे विचित्र प्रकार के रंग है। १४. यद्यपि आकाश ने हमारी इच्छा के अनुसार रंग उत्पन्न किये किन्तु प्रात. और साय की लालिमा तुम्हारे अधरों की समता कहाँ कर सकती है।

'बाशद' मुख़िल्ले मानी[1] है, अगर इसकी जगह 'आरद' हो तो बेहतर मगर 'आरद' सीग़ा मुस्तक़बिल[2] का और आउर्द माज़ी[3] और फ़ाइल[4] दोनों फ़ेलों[5] का चर्ख़[6]। हरचन्द असातिज़ा[7] ने यों भी लिखा है, मगर फ़ारसी गोयाने हिन्द[8] न मानेंगे। पस इस शेर को यों लिखना चाहिए--

हाशा के शफ़क़ मिस्ले लबे लाले तो बाशद
के चर्ख़ ब कामे दिल मा रंग बरावुर्द

मिस्रा--ख़ूं शुद दिल गम दीद ए···

ये शेर हमवार है, ना साद[9] के क़ाबिल, न इस्लाह का मुहताज। चौथा और पाँचवाँ ये दो शेर, वाह क्या कहना है--

ऐ अहले विरा चूं न तवाँ दाश्त अज़ीज़स्त

ये भी हमवार है, न साद चाहता है, न इस्लाह--

गोई के ज़बाँ दर दहनम बर्गे हिनाबूद
ता बोसा ज़दम आँ कफ़े पा रंग बरावुर्द[10]

मौलवी साहब, ये बात तो कुछ नही। ज़बान चाटने का आला है न चूमने का, ज़बान बर्गे हिना[11] बन गई तो बोसे से कफ़ेपा[12] क्यों हिनाई[13] हो जाये ?

---

१. अर्थ का विरोधी। २. भविष्य। ३. भूत। ४. कर्त्ताकारक। ५. क्रिया। ६. आकाश। ७. आचार्य (ब. व.)। ८. भारत के फ़ारसी कवि। ९. अस्वीकृति। १०. यद्यपि मेरे मुंह मे जीभ पर मेंहदी का पत्ता था, किन्तु जब मैंने तुम्हारा चुम्बन लिया तो उसका रग तुम्हारे तलवों पर आ गया। ११. मेंहदी का पत्ता। १२. पाँव का तलवा। १३. मेंहदी के रग का।

गोई दहनम लबज़ रंगे बर्गे हिनादारत
ता बोसा ज़दम आँ कफ़े पा रंग बरावुर्द

मक़्ता[1] और इसके ऊपर का शेर दोनों अच्छे। अब आप इस खत की रसीद लिखिये और उसमे गुलाम इमाम शहीद का हाल मुफ़स्सल लिखिये कि उनकी वहाँ क्या सूरत है। एक शख़्स मुझसे यों कहता था कि मुख़्तारुल मुल्क ने मुँह न लगाया मगर मुहीउद्दौला ने चार सौ रुपये महीना सरकार जनाब आली से मुक़र्रर करा दिया है।

रोज़ा चहारशम्बा, १० रबीउल अव्वल १२८० हि०, मुताबिक़ २६ अगस्त १८६३ ई०।

३

(२५ सितम्बर, १८६३ ई०)

मौलाना,

एक तफ़क्कुदनामा[2] पहले भेजा था, उसके जवाब मे यहाँ से खत जवाब-तलब गया था। फिर एक और मेहरबानीनामा आया। इसमे मैंने अपने खत का जवाब न पाया। नाचार इस खत के जवाब की निगारिश[3], अपने खत जवाब तलब के पासुख़[4] आने पर मौक़ूफ़ और हिम्मत आज़ादाना, न फ़ितरते कय्यादाना[5] इस तहरीर के पाने पर मसरूफ़ रखी गई। बारे, वो कुल नज़र अफ़ोज़[6] और तबीयत उसके मुशाहदा[7] से तरब अन्दोज़[8] हुई। अब दिरगवर्ज़[9] की तक़्सीर[10] माफ़ कीजिये और अपनी दोनों निगारिशों का जवाब लीजिये।

---

१. गजल का अन्तिम पद। २. पूछ-ताछ का पत्र। ३. लेखन। ४. उत्तर। ५. मक्कारी। ६. नेत्रानन्दक। ७. निरीक्षण। ८. आनन्दमय। ९. विलम्ब। १०. अपराध।

साहब, तारीखे इन्तिबा ए कुल्लियात[1] ख़ूब लिखी है। मगर हज़ार हैफ़[2] के बादज़ इतिबा पहुँची। किताब की रौनक़ अफ़ज़ा न हुई, बन्दा पर्वर तुम चिरागे दूदमान[3] मेहर व वफ़ा और मिनजुम्ला इखवानुस्सफ़ा[4] हो। मुझसे तुम्हे मुहब्बत रूहानी है, गोया ये जुम्ला तुम्हारी ज़बानी है। दोस्त की भलाई के तालिब[5] हो, इस शेवे मे शरीके ग़ालिब[6] हो। एक ख़ाहिश मेरी क़ुबूल हो, ताकि मुझको राहत हुसूल[7] हो, मबादी[8] का ज़िक्र नही करता हूँ। वाक ए हाल दिलनशीन करता हूँ।

जनाब मौलवी मुईउद्दीनखाँ साहिब के बुज़ुर्गों मे और फ़क़ीर के बुज़ुर्गों मे बाहम वो ख़ुल्लत[9] व सुफ़ूत मरई[10] थी कि वो मुक़्तज़ी[11] इसकी हुई कि हममे और उनमे बिरादराना इतिबात[12] व इस्तिलात बाहम[13] रहे और हमेशा यों ही बल्कि रोज़ अफ़्ज़ूँ[14] रहेगा। खत मे खत मलफ़ूफ़[15] करना जानिबे हुक्काम[16] ऐ ममनू है, अगर यों न होता तो मै उनके नाम का खत तुम्हारे खत मे मलफ़ूफ करके भेजता। नाचार अब आप से ये चाहता हूँ कि आप मौलवी साहब से मिले और उनको ये खत अपने नाम का दिखाये और मेरी तरफ़ से बाद सलाम मेरे कुल्लियात के पार्सल का उनके पास और उनके ज़रिय ए इनायत[17] से इस मुजल्लद का हज़रत फ़लक रफ़त[18] नवाब मुस्तारुल मुल्क बहादुर की नज़र

---

१. काव्यसग्रह की छपाई की तिथि। २. हाय-हाय, सकट। ३. कुल-दीपक। ४. बन्धु। ५ इच्छुक। ६. ग़ालिब के साथ। ७. शान्ति की प्राप्ति। ८. आरम्भ, किसी विद्या की प्रारम्भिक बाते, जिनके जाने बिना उस विद्या को प्राप्त नहीं किया जा सकता। ९. हार्दिक मित्रता। १०. विशुद्ध स्नेह। ११. जिसका तकाजा हो। १२. मेल-मिलाप। १३. प्रेम-व्यवहार, परस्पर। १४. नित्य वृद्धिशील। १५. लिफाफे मे बन्द। १६. अधिकारियों की ओर से। १७. कृपा से। १८. श्रेष्ठ पद प्राप्त।

से गुजरना और जो कुछ उसके गुज़रने के बाद बाक़ी हो, दरियाफ़्त करके मुझको मुन्तलै[1] फरमाये ।

जुमा १० रबीउस्सानी १२८० हि० मुताबिक २५ सितम्बर १८६३ ई० ।

—ग़ालिब

४

(१८ अक्तूबर, १८६३ ई०)

बन्दा पर्वर,

आज तुम्हारा इनायतनामा आया और आज ही मैंने उसका जवाब डाक मे और उस खत के साथ पार्सल कुल्लियात का भी इर्साल किया। दसवे-बारहवे दिन खत और महीने-बीस दिन मे पार्सल पहुँचेगा । खत का जवाब जरूरी उल इर्साल[2] नही, लेकिन पार्सल की रसीद जरूर लिखिएगा । आपके खत की इबारत तो मै समझा लेकिन मुद्दआ मुझ पर न खुला। मैंने पार्सल कब आपके पास भेजा और कब आपको लिखा कि आप ये पार्सल मुईउद्दीन खाँ को दे दीजिएगा ? पार्सल का लिफाफ़ा मौलवी साहब के नाम का और आपको उसके इर्साल की इत्तिला और आप से ये खाहिश कि मौलवी मुईउद्दीनखाँ साहब से मिलिये और मेरा खत जो आपके नाम का है, उन्हे दिखाइये और उनसे पार्सल का हाल दरियाफ़्त फ़रमाइये । आप विलायती भी नहीं जो मै ये तसव्वुर करूँ कि उर्दू इबारत से इस्तिबाते मतलब[3] अच्छी तरह न कर सके। बहरहाल अब मुद्दआ समझ लीजिये और मौलवी साहब से मिलने का इरादा फ़रमाइये और पार्सल का हाल मालूम करके लिखिये।

---

१. सूचित । २. आवश्यक रूप से भेजना । ३. अर्थ का निष्कर्ष ।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़क़ा' के नाम

५ जमादिल अव्वल १२८० हि० व नोज़ दहुम अक्तूबर १८६३ ई०।

दाद का तालिब

—गालिब

५

साहब,

पहले मत्ले[1] मे लुत्फ़ नहीं। हाँ मज़मून लतीफ़ है, वो फ़र्द में खूब आ गया है। मत्ल ए सानी[2] बसब्बे ताक़ीदात[3] के मुहमिल[4] रह गया, 'वर्ना' का काफ़िया[5] और शेर मे और तरह से बँध गया। तीसरा शेर अल्फ़ाज़ बदलने से बहुत अच्छा हो गया। जो शेर बेतसर्रुफ़[6] बदस्तूर रहा, उसका ज़िक्र कुछ ज़रूर नही।

साक़ी अभो छनी···

छनी लफ़्ज़ ग़रीब है न अहले देहली[7] के ज़बान ज़द[8] न गोशज़द[9]। ग़रबाल को छलनी कहते हैं, जिसकी फ़ारसी 'परवंजन' है और जिस कपड़े में सायलात[10] को छाने, फ़ारसी उसकी 'लाए पाला' और उर्दू 'साफ़ी' है, ब या ए मारूफ़[11] 'बराबर न हुआ था'···तक़र्रुर वक़्ते मर्ग का इन्कार हश्व[12] बल्कि मुहमल है, मगर हाँ, तक़र्रुर का वक़्त अज़ल[13] को क़रार दिया जाये।

---

१. ग़ज़ल का पहला पद। २. कसीदे अथवा ग़ज़ल के आरम्भिक शेर को छोड़कर कोई अन्य ऐसा शेर जिसके दोनो चरणों में अन्त्यानुप्रास हो। ३. शब्दों को इधर-उधर करना जिससे अर्थ में कठिनाई हो। ४. अस्पष्ट। ५. अन्त्यानुप्रास, तुक। ६. अपरिवर्तित। ७. दिल्ली निवासी। ८. प्रचलित। ९ सुना हुआ, श्रुत। १०. द्रव पदार्थ। ११. वह उर्दू वर्णमाला का एक अक्षर जो गोल लिखी जाती है, ई उच्चरित होती है। १२. निरर्थक शब्द, भरती के शब्द। १३ मृत्यु।

मक़्ता मेरी पसन्द नहीं है, मेरे सर की क़सम इसको न रखो और मक़्ता लिख लो।

शम्बा १४ नवम्बर १८६३ ई०।

—ग़ालिब

६

(२८ नवम्बर, १८६४ ई०)

बन्दा पर्वर,

तुम्हारे दोनों ख़त पहुँचे। ग़ालिब गुसिस्ता दम कोता क़लम[1] न लिखे तो ये और बात है। दोनों ख़त आपके और एक पार्सल मुहम्मद नजीबख़ाँ का ब तक़दीम[2] ब ताख़ीर[3] दो-से रोज़ मौसूल[4] हुए आपका पार्सल बादे मुशाहिदा[5] आपको भेजा जाएगा। ख़ाँ साहब के पार्सल में एक किताब अर्मुग़ाँ[6] और औराक़े इस्लाह[7] भेजे जाएँगे।

हा हा हा 'मुहर्रिक़े कातै' का तुम्हारे पास पहुँचना—

कामे के ख़ासतम ज़ खुदा शुद मयस्सरम[8]

मैं इस ख़ुराफ़ात का जवाब क्या लिखता ? मगर हाँ, मुख़न-फ़हम दोस्तों को गुस्सा आ गया। एक साहब ने फ़ारसी इबारत में इसके अयूब[9] ज़ाहिर किये, दो तालिबे इल्मों[10] ने उर्दू ज़बान में दो रिसाले जुदा-जुदा लिखे। दाना[11] हो और मुन्सिफ़[12] हो, 'मुहर्रिक़' को देख कर जानोगे कि मौल्लिफ़[13]

---

१. अर्ध-मृत ग़ालिब, जिसकी लेखनी में शक्ति नहीं। २. प्राथमिकता देते हुए। ३. विलम्ब। ४. प्राप्त। ५. निरीक्षण। ६. भेंट। ७. संशोधन के पृष्ठ। ८. मैं ईश्वर से जो चाहता था, वह मिल गया। ९. दोष। १०. विद्यार्थी। ११. ज्ञानी। १२. न्यायी। १३. सम्पादक।

उसका अहमक़ है और जब वो अहमक़ 'दाफ़े हिज़यान' व 'सवालात अब्दुल करीम' और 'लतायफे गैबी' को पढ़कर मुतनब्बे[1] न हुआ और 'मुहर्रिक़' को धो न डाला तो मालूम हुआ कि बेहया भी है। 'दाफे हिज़यान', 'सवालात', 'लतायफ़े ग़ैबी' तीनों नुस्ख़े एक पार्सल में इस ख़त के साथ रवाना होते हैं। यक़ीन है कि ब तक़दीम व ताख़ीर[2] एक दो रोज़ नज़रे अनवर[3] से गुज़रे। फ़िलहाल इस पार्सल की रसीद बफ़ौरे बुरूद[4] लिखिएगा। जब आपका भेजा हुआ नुस्ख़ ए मुस्तरद[5] पहुँचे, तो उसकी रसीद रकम की जाएगी[6]। चार नुस्खे पार्सल मे हैं वो आप लीजिये और दो मुहम्मद नजीबख़ाँ को दीजिये।

दोशम्बा, २८ नवम्बर १८६४ ई०।

—ग़ालिब

७

बन्दा पर्वर,

कल आपका तफ़क्कुदनामा[7] पहुंचा, आज मैं पासुख-तराज़[8] हुआ। जिस काग़ज पर मैं ये नुक़ूश[9] खैंच रहा हूँ, आपके ख़त का दूसरा सिरा सिरे-वर्क़ है। पहचान लीजिये और मालूम कीजिये कि आपका मज़मूअ ए कलाम मुअज्जिज़ निज़ाम[10] और उसके बाद दो ख़त पहुँचे। मैं सहीफ़ए शरीफ़े[11] की रसीद लिख चुका हूँ। बल्कि इसी ख़त मे मुहम्मद नजीफ़ख़ाँ को सलाम और अर्मुग़ाँ का शुक्र और औराके अशार[12] इस्लाह तलब की रसीद मैंने लिख दी है। पार्सल के सरनामे से मेरा नाम मिटा नहीं। पार्सल तलफ हुआ

१. सावधान। २. देर-सबेर। ३. शुभनेत्र। ४. मिलते ही। ५. लौटाई हुई प्रति। ६. लिखी जाएगी। ७. कृपा-पत्र, जिज्ञासा सम्बन्धी। ८. उत्तर देनेवाला। ९. अंकन। १०. सुव्यवस्थित। ११ पुस्तक। १२. कविता के पृष्ठ।

नहीं। आठ-दस रोज़ हुए होंगे कि वो मुजल्लद[1] उसी पार्सल में, कि, उस रुगदी[2] कर लिया है, बाद अदा ए महसूल आपका नाम लिखकर रवा कर दिया है। यक़ीन है कि बाद आपके ख़त की रवानगी के आपके पास पहु गया होगा।

हाँ साहब, ख़ते दीरोज़ा[3] के साथ एक ख़त मौलवी नजफ़अली साहब नाम, मय इस हुक्म के कि मौलवी साहब के पास पहुँचाऊँ, मैंने पाया हाल ये है कि मौलवी साहब से मेरी मुलाकात नहीं। सिर्फ़ इत्तिहादे मानव के इक़्तिजा[4] से उन्होंने 'दाफ़े हिज़यान' लिखकर फ़ने सुख़न[5] में मुझको मद दी है। मुंशी गोबिन्दसिंघ देहलवी एक उनके शागिर्द और मेरे आशना ह उनको वो ख़त बजिन्सही भेज दिया। यक़ीन है कि वो मौलवी नजफ़अल साहब को भेज देंगे। उन्हीं के इज़हार से दरियाफ़्त हुआ कि मौलवी साह मुर्शिदाबाद बंगाले में है। नवाब नाज़िम ने उनको नौकर रख लिया है। ह शऊर ने बक़द्रे हाल एक एक कद्रदाँ[6] पाया, ग़ालिब मोख़्त ए अख़्तर[7] व हुनर की दाद भी न मिली।

कसम बख़ुद न पिज़ीरस्त दहर बाज़म बुदं
चू नाम ए के बुवद ना नविश्तए उन्वानश[8]

ये शेर मेरा है। वलीअहद ख़ुसखे देहली[9] मिर्ज़ा फ़तहउलमुल्क बहादु मग़फ़ूर के क़सीदे का और देखो एक रुबाई मेरी—

---

१. ग्रन्थ। २. परागमुख, उल्टा। ३. कल (गत)। ४. अर्थैकता ५. इच्छा। ६. काव्य-शास्त्र। ७. गुणज्ञ। ८. अभागा। ९. मुझे किसी ने स्वीकार नहीं किया किन्तु कालचक्र मुझे उन्हीं के पास ले गया जैसे शीर्षकहीन (बिना नाम का) पत्र इधर-उधर भटकता है। १०. दिल्ली के सम्राट् के युवराज।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़का' के नाम

दस्तम ब किलीदे मख़ज़ने मी बायस्त
वरबुवद तिही ब दामने मी बायस्त
या हीच गहम बकस ने उफ़्तादे कार
या खुद बे ज़माना चूँ मने मी बायस्त[1]
इन्नालिल्लाहे व इन्नाइलहे राजऊन[2]।
ऐ इताबत व इनायत हमशक्ल[3]

८

(१ मई, १८६६ ई०)

आपका खत हावी ए हल्ले शुबहात[4] जिस दिन पहुँचा, उसके दूसरे दिन जवाब लिखकर भेज दिया। दो मिस्रों मे दोलफ़्ज़ बदले गये। दो शेरों के बाब मे कुछ तक़रीर दर्ज हुई। दो तीन शेरो मे तुम्हारी राय मुसल्लम[5] रही। बावजूद फ़िक्दाने हाफ़िज़ा[6] व इस्तीला ए निस्दान[7] एक मिस्रे का बदला हुआ लफ़्ज़ याद है—

चे ग़र्रा गर्रे ए ए पेशानिए समन्दे उम्र[8]

दूसरा तबद्दुल[9] इसी कदर याद रह गया है कि 'शब गिरो गिराँ रिकाब'

---

१. मेरा हाथ खजाने की ताली पर रहता था। रिक्त हस्त लोग मेरी ओर देखते थे। या तो मेरा काम कभी किसी से न पड़ा या स्वयं भाग्य था। २. सब कुछ ईश्वर का है, सब का अवसान ईश्वर में है। ३. तुम्हारा क्रोध भी कृपा के समान है। ४. आपका पत्र समस्त सन्देहों को दूर करने वाला है। ५. स्वीकृत, प्रामाणिक। ६. स्मृति का अभाव। ७. विस्मृति की विजय। ८. तुम अपनी आयु पर इतना गर्व क्यों करते हो। ९. परिवर्तन।

कुछ इसी तरह के दो लफ़्ज़ थे। वे वाओ आतिफ़ा[1] कुछ तक़द्दुम[2] व ताख़ुर[3] हो गया है।

सुबह शम्बा ३ जिलहज्जा मुताबिक़ यकुम मई साले हाल।

—ग़ालिब

८

(१२ मई, १८६६ ई०)

मेरे मुशफ़िक़[4], मेरे शफ़ीक़[5], मुझसे हेच पोच[6] के मानने वाले, मुझसे बुरे को अच्छा जानने वाले, मेरे मुहिब्ब[7], मेरे महबूब[8], तुम को मेरी खबर भी है ? आगे नातवाँ था, अब नीमजाँ हूँ। आगे बहरा था, अब अन्धा हुआ चाहता हूँ। रामपूर के सफ़र का वो आवुर्द[9] है राशा[10] व ज़ोफ़े बसर[11]। जहाँ चार सतरें लिखीं, अगुलियाँ टेढी हो गईं, हर्फ सूझने से रह गये। इकहत्तर बरस जिया, बहुत जिया। अब ज़िन्दगी बरसों की नहीं, महीनों और दिनों की है—

पहला खत तुम्हारा पहुँचा, इससे तुम्हारा मरीज़ होना मालूम हुआ। मुतवातिर[12] दूसरा खत मय ग़ज़ल आया। ग़ज़ल को देखा। सब शेर अच्छे और लतीफ़। हाफ़िज़े[13] का ये हाल है कि ग़ज़ल की ज़मीन[14] याद नहीं। इतना याद है कि एक लफ़्ज़ में कोई शेर बदला गया था। ग़र्ज़ कि वो ग़ज़ल

---

१. बिना 'व' (संयोजक) के। २. प्राथमिकता। ३. विलम्ब। ४. मित्र। ५. दयालु। ६. अकिंचन। ७. प्रेमी। ८. प्रिय। ९. भेंट। १०. कम्पन। ११. अग्निमान्द्य। १२. निरन्तर, लगातार। १३. स्मरण शक्ति। १४. ग़ज़ल का छन्द, अन्त्यानुप्रास और अन्त्यानुप्रास से पहले का शब्द।

बादे मुशाहदा[1] तुमको भेजी गई। और लिखा गया कि नवीदे हुसूले सेहत[2] जल्द भेजो।

कल एक ख़त रजिस्टरीदार आया, गोया सितारा दुम्बालेदार[3] आया। हैरान कि माजरा क्या है। बारे, खोला और देखा। खते नवीदे रफ़ए मर्ज़[4] व हुसूले सेहत से खाली और शिकवा हाए बेजा[5] से लबरेज़।

साहब, मेरे नाम का ख़त जहाँ से रवाना हो वहीं रह जाये तो रह जाये, वर्ना दिल्ली के डाकखाने में पहुँच कर क्या मजाल है जो मुझ तक न पहुँचे। वहाँ के डाक के कारपर्दाज़ों को इख़्तियार है, मकतूब अलै[6] को दे या न दे। आप मिर्ज़ा साबिर का तज़किरा माँगते हैं, उसका ये हाल है कि ग़दर से पहले छपा और ग़दर में ताराज[7] हो गया। अब एक मुजल्लद उसका कहीं नज़र नहीं आता। बस, अब मुझे इतना लिखना बाक़ी है कि उस ख़त की रसीद और अपनी ख़ैर व आफ़ियत जल्द लिखो।

सुबह जुमा २५ जीहज्जा १२८२ हि०, १२ मई १८६६ ई०।

जवाबे ख़त का तालिब
—ग़ालिब

१०

(४ दिसम्बर, १८६६ ई०)

दोस्ते रूहानी[8] व बिरादरे ईमानी मौलवी हबीबुल्लाखाँ मीर मुंशी को फ़क़ीर ग़ालिब का सलाम। तुमने यूसुफ़अलीखाँ को कहाँ से ढूँढ़ निकाला और

---

१. निरीक्षण के पश्चात्। २. स्वास्थ्य प्राप्ति की शुभ-सूचना। ३. पुच्छल। ४. रोग मुक्ति का शुभ समाचार। ५. अनुचित शिकायतें। ६. जिसके नाम पत्र लिखा गया। ७. नष्ट। ८. अभिन्न मित्र।

उनका तख़ल्लुस[1] और उनका ख़िताब किससे मालूम किया? बग़ैर निशाने महल्ले के उनको ख़त क्यों कर भेजा और वो ख़त उनको क्यों कर पहुँचा।

हैरत् अन्दर हैरतस्त ऐ यारे मन[2]

पहले ये तो कहो कि 'दुरफ़िशे कावयानी'[3] और वो क़ता जिसकी पहली बैत[4] "ये है तुम को पहुँचा है या नही? अगर पहुँचा तो मुझको रसीद क्यों न लिखी?

मौलवी अहमद अली 'अहमद' तख़ल्लुस नुस्ख ए
दर ख़ुसूसे गुफ़्तगू ए पार्स इशा कर्दा अस्त[5]

अगर ये पार्सल पहुँच गया है, तो रसीद लिखो और दीबाचए मानी[6] जदीद की दाद दो और अगर नहीं पहुँचा तो मुझको इत्तिला हो कि एक नुस्ख़ा और भेजूँ।

ज़ीस्न दुश्वार[7]। इस महीने याने रज्जब की आठवीं तारीख़ से तेहत्तरवाँ बरस शुरू हुआ। ग़िज़ा सुबह को सात बादाम का शीरा, क़न्द के शरबत के साथ दोपहर को सेर भर गोश्त गाढा पानी, करीब शाम कभी-कभी तीन तले हुए कबाब। छै घडी रात गये पाँच रुपये भर शराबे ख़ानासाज और उसी क़दर अरक़ेशीर[8]। आसाब[9] के ज़ोफ़ का ये हाल कि उठ नही सकता और अगर दोनों हाथ टेक कर चार पाया बनकर उठता हूँ तो पिंडलियाँ लरज़ती है। माहाज़ा दिन भर में दस बारह बार उसी क़दर रात भर में पेशाब की हाजत होती है। हाजती पलंग के पास लगी रहती है, उठा और पेशाब

---

१. काव्य नाम। २. मित्र, आश्चर्य मे आश्चर्य है। ३. दो चरण। ४. मौलवी अहमद अली का काव्य नाम 'अहमद' है, उन्होंने फ़ारसी भाषा में एक पुस्तक लिखी है। ५. दूसरी भूमिका। ६. जीवन कठिन। ७. दूध को फाड़ने के पश्चात् जो पानी रहता है। ८. रगे।

किया और पड़ रहा। असबाबे हयात[1] मे से ये बात है कि शब[2] को बदखाब[3] नहीं होता। बाद इराकते बोल[4] बेतकल्लुफ़ नींद आ जाती है। एक सौ बासठ रुपये आठ आने की आमद, ३०० का खर्च। हर महीने में एक सौ चालीस का घाटा। कहो जिन्दगी दुश्वार है या नहीं? मुर्दन नागवार बदीही[5] है, मरना क्यों कर गवारा होगा।

भाई, ये खत अज़राहे एहतियात बैरग भेजता हूँ।

जवाबे खत का तालिब

—ग़ालिब

अज़रू ए जन्तरी[6] २६ और अज़ए रूयत[7] २५, रज्जब १२८३ हि० और ४ दिसम्बर १८६६ ई०।

११

(११ जनवरी, १८६७ ई०)

जानों[8] बल्कि जान[9] मौलवी मुशी हबीबुल्लाखाँन को गालिबे खस्तादिल का सलाम और नूरे दीदा[10] व सुरूबरे सीना[11] मुशी मुहम्मद मीराँ[12] को दुआ और मुझको फ़र्जन्दे अर्जमन्द[13] की नवीद[14]। जो निगारिश[15] साहिबज़ादे के तरफ़ से थी, रस्मुलखत[16] ब ऐनही[17] तुम्हारी थी। अब तुम बताओ कि रुक्का उसकी तरफ़ से तुमने लिखा है या खुद उसने तहरीर किया है? लड़का तुम्हारा तुम्हारे साथ हैदराबाद नहीं आया, ज़ाहिरा अब तुमने वतन से बुलाया है।

१. जीवन। २. रात। ३. उन्निद्र। ४. मूत्रत्याग। ५. अवाञ्छित मृत्यु आवश्यक है। ६. पंचाग के अनुसार। ७. चन्द्रदर्शन के अनुसार। ८. प्रिय-प्रेमपात्र। ९. प्राण। १०. नेत्र ज्योति ११. हृदय का हर्ष। १२. हबीबुल्लाखाँ का पुत्र। १३. सुपुत्र। १४. शुभ-समाचार। १५. लेखन। १६. लेख, लिखावट। १७. यथार्थ में।

मुफ़स्सल[1] लिखो कि नख़्ले मुराद[2] का समर[3] यही है या उसके कोई भाई-बहन और भी हैं ? ये अकेला आया है या क़बायल[4] को भी इसके साथ तुमने बुलाया है ? हाँ साहब, मुहम्मद मीराँ ये इस्म[5] मुक्तज़ी[6] इसका है कि आप क़ौम के सैयद हों। मशा ए इफ़राते पुरमिश[7] वफ़ूरे मुहब्बत[8] है, न फ़िज़ूली[9]।

यूसुफ़अलीखाँ शरीफ़ व आलीखानदान[10] हैं। बादशाहे देहली की सरकार से तीस रुपये महीना पाते थे। जहाँ सल्तनत गई वहाँ वो तनख़ा भी गई। शाइर हैं। रेख़्ता[11] कहते हैं। हवसपेशा[12] हैं। मुज़्तर है[13], हर मुद्दआ के हुसूल को आसान समझते हैं। इल्म इसी क़दर है कि लिख-पढ़ लेते हैं। इनका बाप मेरा दोस्त था। मैं इनको बजाए फ़र्ज़न्द[14] समझता हूँ। बक़द्र अपनी दस्तगाह[15] के कुछ महीना मुक़र्रर कर दिया है। मगर बसबबे क़सरते इयाल[16] वो उनको मुक्तफ़ी[17] नहीं, तुम उनकी दरख़ास्त के जवाब से क़त नज़र न करोगे तो क्या करोगे ?

साहब, मैं बएने[18] इनायते इलाही[19] क़सीरुल अहबाब[20] हूँ। एक दोस्त ने कलकत्ता में मुझे इत्तिला दी कि मौलवी अहमदअली मुदर्रिस मदर्से ए कलकत्ता ने एक रिसाला[21] लिखा है, नाम उसका 'मुईदे बुरहान' है। उस रिसाले में दफ़ै किये हैं, तेरे वो ऐतराज जो तूने दकनी पर किये हैं और तहरीर पर कुछ ऐतराज़ात[22] वारिद किये हैं और अहले मदर्सा और शोअरा ए कलकत्ता[23] ने तक़रीज़े[24] और तारीख़े[25] बड़ी धूम की लिखी है।

---

१. विस्तृत। २. लालसा रूपी वृक्ष। ३. फल। ४. परिवार। ५. नाम। ६. जिसका तक़ाज़ा किया जाये। ७. जानने की तीव्र लालसा। ८. प्रेमपूर्ण उत्सुकता। ९. व्यर्थ। १०. कुलीन। ११. हिन्दी-उर्दू कविता। १२. लालची। १३. व्यग्र, बेचैन। १४. पुत्र स्थानीय। १५. सामर्थ्य। १६. बाल-बच्चों की अधिकता। १७. पर्याप्त। १८. यथार्थ। १९. ईश्वर की दया से। २०. जिसके अधिक मित्र हों। २१. पुस्तिका। २२. आक्षेप। २३. कलकत्ते के कवि। २४. सम्मतियाँ (रचना के सम्बन्ध में)। २५. तिथि व्यक्त करने वाली कविता।

पस भाई, मैंने इतने इल्म पर एक क़ता लिखकर छपवाया और कई वर्क़ उस दोस्त को और चार जिल्दे 'दुरफ़िशे कावयानी' अलावा औराक़े मज़कूर[1] भेज दिये। इसी ज़माने में तीन-चार वर्क़, ख़ूब याद है कि 'दुरफ़िश' की जिल्द में रख-रख कर तुमको भेजे हैं। या तो मुझे ग़लत याद है या 'तुमने दुरफ़िश' को खोल कर देखा नहीं वो औराकमय दुरफ़िश ज़ीनते ताके निसियाँ[2] है। वो वर्क़ इस लिफ़ाफ़े मे अपने नज़दीक मुकर्रर[3] भेजता हूँ तुम भी देखो और साहिबज़ादी भी देखें और ये जाने कि फिलहाल नज़्मे फ़ारसी यही है और बस।

हाँ साहब, 'अवध अख़बार' मे एक क़सीदा मौलवी ग़ुलाम इमाम का देखा। 'मकाँ तग अस्त', 'जहाँ तग अस्त' मदहे मुख़्तारुल मुल्क[4] में, मुतज़िम्ने इस्तिदुआ ए मस्कने वसीह[5]। महीने भर बाद इसी 'अवध अख़बार' में ये ख़बर देखी कि नवाब ने मस्कान[6] तो न बदला मगर तीस रुपये महीना बढ़ा दिया। इसी अख़बार मे फिर देखा गया कि एक साहब ने मौलवी ग़ुलाम इमाम के कलाम पर ऐतराज़ किया है और उनके शागिर्द, 'वज़ीह' तख़ल्लुस ने उसका जवाब लिखा है। आप से इम रू ए दाद[7] की तफ़सील और जवाब ऐतराज व मौतरिज़[8] के नाम का तालिब हूँ। बसबीले इस्तिजाब[9]।

दोशम्बा १६ शाबान १२८३ हि० (मुताबिक़ ११ जनवरी १८६७ ई०)।

१२

(१५ फरवरी, १८६७ ई०)

भाई, मैं नहीं जानता कि तुमको मुझसे इतनी इरादत[10] और मुझको तुमसे

---

१. उल्लिखित पृष्ठ। २. विस्मृति की ताक की शोभा। ३. दुबारा। ४. हैदराबाद के तत्कालीन प्रधान मंत्री सालार जग (प्रथम)। ५. एक विस्तृत मकान की प्रार्थना के विषय का। ६. घर। ७. कार्रवाई, वृत्तान्त। ८. आपत्ति उठाने वाला। ९. प्रार्थना के रूप में। १०. श्रद्धा।

इतनी मुहब्बत क्यों है, ज़ाहिरा मामल ए आलमे अरवाह[1] है। असबाबे ज़ाहिरी[2] को इसमे दख़ल नही। तुम्हारे ख़त का जवाब मय औराके मसविदा रवाना हो चुका है। वक़्त पर पहुँचेगा। 'सत्तर-बहत्तरा' उर्दू में तर्जुमा 'पीरे खरफ़[3]' है। मेरी तेहत्तर बरस की उम्र है, पस मै अखरफ़[4] हुआ। हाफ़िज़ा गोया कभी था ही नही। सामिआ[5] बातिल[6] बहुत दिन से था, रफ़्ता-रफ़्ता वो भी हाफ़िज़े की मानिन्द मादूम[7] हो गया। अब महीने भर से ये हाल है कि जो दोस्त आते हैं, रस्मी पुरसिशे मिजाज[8] से बढ़कर जो बात होती है वो काग़ज़ पर लिख देते है। गिज़ा मफ़कूद[9] है। सुबह को क़न्द और शीर ए बादामे मुक़श्शर[10], दोपहर को गोस्त का पानी, सरे शाम गोश्त के तले हुए चार कबाब, सोते हुए पाँच रुपये भर शराब और इसी क़दर गुलाब, खरफ़ हूँ, पोच[11] हूँ, आसी[12] हूँ, फासिक़[13] हूँ, रूसियाह[14] हूँ, ये शेर मीर तक़ी का मेरे हस्बे हाल है—

मशहूर है आलम मे मगर हों भी कहीं हम
अल क़िस्सा[15] न दर पै हों हमारे कि नहीं हम

आज इस वक़्त कुछ इफ़ाक़त[16] थी, एक और ख़त ज़रूरी लिखना था, बकस खोला था तो पहले तुम्हारा ख़त नज़र पड़ा। मुकर्रर पढ़ने से मालूम हुआ कि बाज़ मतालिब के जवाब लिखे नही गये।

---

१. आध्यात्मिक-जगत् का सम्बन्ध। २. प्रत्यक्ष जगत्। ३. मूर्ख बूढ़ा। ४. सठियाया हुआ। ५. श्रवण-शक्ति। ६. निकम्मा। ७. नष्ट। ८. शिष्टाचार का कुशल-प्रश्न। ९. समाप्त। १०. छिलके उतरे हुए बादाम का हलुवा। ११. अयोग्य। १२. दोषी। १३. अपराधी। १४. कलंकित। १५. सारांश यह कि। १६. चैन।

मीर हबीबुल्लाह 'ज़का' के नाम

नाचार अब किताबत जुदागाना मे लिखता हूँ, ताकि खिलत[1] का हाल और मेरे हालात तुमको मालूम हो जाये कि मै क़ौम का तुर्के सलजूक़ी[2] हूँ। दादा मेरा 'माविराउन्नहर' से शाहआलम के वक़्त मे हिन्दुस्तान में आया। सल्तनत ज़ईफ़ हो गई थी, सिर्फ़ पचास घोडे नक़्क़ारा व निशान से शाहआलम[3] का नौकर हुआ। एक परगना सरे हासिल ज़ात की तनखा और रिसाले की तनखा में पाया। बाद इन्तिक़ाल उसके जो, तबायफ़ुल मलूक का हंगामा गरम था। वो इलाका न रहा। बाप मेरा अब्दुल्लाबेगखाँ बहादुर लखनऊ जाकर नवाब आसफ़उद्दौला का नौकर रहा। बाद चन्द रोज हैदराबाद जाकर नवाब निज़ामअलीखाँ[4] का नौकर हुआ। तीन सौ सवार की जमीयत[5] से मुलाजिम रहा। कई बरस वहाँ रहा। वो नौकरी एक खानाजंगी के बखेड़े मे जाती रही। वालिद ने घबराकर अलवर का क़स्द[6] किया। रावराजा बख्तावर सिंघ[7] का नौकर हुआ। वहाँ किसी लड़ाई में मारा गया। नसरुल्लाह बेगखाँ बहादुर मेरा हक़ीक़ी चचा मरहटों की तरफ़ से अकबराबाद क सूबेदार था। उसने मुझे पाला। १८०३ ई० में जब जरनेल लेक साहब का अमल हुआ, सूबेदारी कमिश्नरी हो गई और साहिबे कमिश्नर एक अँग्रेज़ मुक़र्रर हुआ। मेरे चचा को जरनेल लेक साहब ने सवारों की भरती का हुक्म दिया। चार सौ सवार का बिरगिडेर हुआ। एक हज़ार सात सौ रुपये ज़ात का और लाख डेढ लाख रुपये साल की जागीर हीनेहयात[8] अलावा साल भर मर्ज़बानी की[9] थी कि बमर्गे नागाह[10] मर गया। रिसाला बरतरफ़ हो गया। मुल्क के-

१. राजकीय सम्मान के रूप में दी जाने वाली पोशाक। २. सलजूक— एक तुर्क सरदार, इसने सलज़ूक़िया वंश की नींव रखी थी। ३. शाह आलम (द्वितीय), १७५९ में गद्दी पर बैठा, मृत्यु १८०६ ई०। ४. हैदराबाद के शासक निजामुलमुल्क आसफ़जाह (प्रथम) का पुत्र। ५. सेना की टुकडी। ६. विचार। ७. अलवर के तत्कालीन राजा। ८. आजीवन। ९. सूबेदारी। १०. आकस्मिक मृत्यु।

एवज़ नक़दी मुक़र्रर हो गई। वो अब तक पाता हूँ। पाँच बरस का था, जो, बाप मर गया। आठ बरस का था, जो, चचा मर गया। १८३० ई० मे कलकत्ता गया[1]। नवाब गवर्नर से मिलने की दरख़ास्त की। दफ़्तर देखा गया। मेरी रियासत का हाल मालूम किया गया। मुलाज़मत हुई, सात पार्चे[2] और जीगा[3] सरपेच मालाए मरवारीद[4] ये तीन रक़म खिलत मिला। ज़ाँ बाद[5] जब देहली मे दरबार हुआ मुझको भी खिलत मिलता रहा। बाद ग़दर बजुर्मे मुसाहिबते बहादुर-शाह[6] दरबार व खिलत दोनों बन्द हो गये। मेरी बरात[7] की दरखास्त गुज़री। तहक़ीक़ात होती रही। तीन बरस के बाद पिंड छूटा। अब खिलते मामूली[8] मिला। गर्ज़ कि ये खिलत रियासत का है, एवज़े खिदमत नही, इनामी नहीं। मऊजुल ज़हन नही हूँ, ग़लतफहम नहीं हूँ, बदगुमान नहीं हूँ। जो जिसको समझ लिया उसमें फ़र्क़ नहीं आता। दोस्त से राज़ नहीं छिपाता। किसी साहब ने हैदराबाद से गुमनाम खत डाक मे भेजा। बन्द बुरी तरह किया था, खोलने में सतर कट गई। वारे, मतलब हाथ से नहीं जाता। भेजने वाले की ग़र्ज़ ये थी कि मुझको तुम से रंज व मलाल हो। क़ुदरत ख़ुदा की मेरी मुहब्बत और बढ़ गई और मैंने जाना कि तुम मुझे दिल से चाहते हो। बो खत बजिन्सही तुम्हारे पास इस खत में मलफ़ूफ़ करके भेजता हूँ। ज़िन्हार[9] दस्तखत पहचान कर कातिब[10] से झगड़ा न करना। मुद्दआ इस ख़त के भेजने से ये है कि तुम्हारी तरक़्क़ी ए मन्सब[11] और अफ़ज़ूनी ए मुशाहरा[12] इस खत

---

१. वास्तव में ग़ालिब १८२७ मे कलकत्ता गये थे और १८२९ मे लौटे। २. राजकीय सम्मान में दी जाने वाली एक विशेष प्रकार की पोशाक। ३. पगड़ी में बाँधा जाने वाला एक रत्नजटित आभूषण। ४. मोतियों की माला। ५. इसके बाद। ६. बहादुरशाह के पार्षद होने के अपराध में। ७. बरी करना। ८. नियमानुसार। ९. कदापि। १०. लिखने वाला। ११. पदवृद्धि। १२. वेतन वृद्धि।

से मुझे मालूम हुई थी। सुबह जुमा दहुम शव्वाल १२८३ हि० १५ फरवरी १८६७ ई०।

१३

(१४ मार्च, १८६७ ई०)

जाने ग़ालिब,

तुमने बहुत दिन से मुझको याद नही किया। एक खत मेरा जरूरी जवाब तलब गया हुआ है और आमद व रफ़्त डाक की मुद्दत गुज़र गई। उसका जवाब तो सौ काम छोड़ कर लिखना था। 'मूइदे बुरहान' मेरे पास भी आ गई और मैं उसकी खुराफ़ात का हाल ब क़ैदे शुमारे सफ़ा व सतर[1] लिख रहा हूँ। वो तुम्हारे पास भेजूँगा। शर्ते मवद्दत[2] व शर्ते आ कि जाती न रही हो और बाक़ी हो, ये है कि मैं हूँ या न हूँ तुम इसका जवाब लिखो। मेरे भेजे हुए अक़बाल[3] जहाँ जहाँ मुनासिब जानो दर्ज कर दो। मैं अब क़रीबे मर्ग हूँ। गिज़ा बिल्कुल मफ़क़ूद और अमराज़[4] मस्तूली[5] बहत्तर बरस की उम्र। इन्नालिल्लाह व इन्ना इलहे राजऊन। मियाँ मुहम्मद मीराँ को दुआ।

जवाब का तालिब

—ग़ालिब

१४

(१८ मार्च, १८६७ ई०)

बन्दा पर्वर,

आपका मेहरबानीनामा पहुँचा। तुम्हारी और साहजादे की खैर व

---

१. पृष्ठ और पंक्ति की गिनती के अनुसार। २. मित्रता। ३. कविताएँ। ४. रोग (ब. व.)। ५. बलशाली।

आफ़ियत[1] मालूम होने से दिल खुश हुआ। जो आपकी इबारत से समझ गया हूँ, उसका जवाब लीजिये और जो नही समझा वो मुताबिक मेरी इल्तिमास[2] के मुझे समझा दीजिये। इमाद अमायदे शोअराए कदीम[3] मे से है। उसकी पान-सात बैत की एक ग़ज़ल है। जिसका मत्ला[4] ये है—

पाए सर ता न शवद राह तो रफ़्तन न तुवाँ
जुज़ बे जारूब मिजा कू ए ता रफ़्तन न तुवाँ[5]

पहले मिस्रे मे 'रे' मफ़्तूह[6] और दूसरे मिस्रे मे मज़्मूम[7], बाकी अशार मे 'गुफ़्तन व सुफ़्तन' वगैरा काफ़िये है। उस्ताद दो मिस्रो मे हरकत माकब्ल रूए मुख्तलिफ़[8] लाया। अगर मैंने पचास शेर के क़सीदे मे एक शेर ऐसा लिखा तो क्या ग़ज़ब हुआ। आया मोतरिज़[9] साहब इस्तिनाद[10] बमिस्ले नज़ीर[11] को नही जानते और नहीं मानते? ये दस्तूर मेरा निकाला हुआ नही कदीम से है।

बन्दानवाज़ मैंने लिखा कि 'मुईदे बुरहान' मेरे पास आ गई है और मै उसके ऐतराज़ात के जवाब ब निशाने सफ़ा व सतर एक तख्ते काग़ज पर लिख रहा हूँ। बाद इत्मामे निगारिश[12] तुम्हारे पास इस मुराद से भेजूँगा कि तुम अज़राहे इनायत 'मुईद' का जवाब लिखो। मेरी निगारिश जो पसन्द आये उसको भी जा बजा[13] दर्ज कर दो। तुमने उस दरख्वास्त का जवाब हाँ-नाँ कुछ न लिखा। अब इनायत फ़रमा कर उन तीनो बातो का जवाब लिखिये और ज़रूर लिखिये। मियाँ मुहम्मद मोरां को दुआ।

---

१. कुशल-क्षेम। २. प्रार्थना के अनुसार। ३. प्राचीन कवियों के स्तम्भ। ४. ग़ज़ल का पहला शेर, दोनों चरणों मे अन्त्यानुप्रास रहता है। ५. जब तक पूरी लगन न हो तुम्हारे मार्ग पर नही चला जा सकता। ६. अकारयुक्त। ७. उकारयुक्त। ८. विरुद्ध। ९. आक्षेप करने वाला। १०. प्रामाणिक व्यक्ति। ११. दृष्टान्त के अनुसार। १२. लिखने के पश्चात्। १३. यत्र-तत्र।

१५

(२७ जनवरी, १८६८ ई०)

मुशी साहब अल्ताफ़ निशान[१] सआदत व इक़बाल तवामान[२] मुशी हबीबुल्लाखाँ को गालिब सोस्त ए अख्तर[३] की दुआ पहुँचे। तुम्हारा खत पहुँचा। पढ़कर दिल खुश हुआ। तुम मेरी बात पूछते हो, लेकिन मै क्या लिखूँ? उगलियाँ कहने मे नही। एक आँख को बीनाई जायल[४]। जब कोई दोस्त आ जाता है तो उस खत का जवाब लिखवा देता हूँ। मशहूर है ये बात कि जो कोई किसी अपने अज़ीज़ की फ़ातिहा[५] दिलाता है, मौते[६] की रूह को उसकी बू पहुँचती है। ऐसे ही मै सूँघ लेता हूँ ग़िज़ा[७] को। पहले मिक़दार ग़िज़ा की तोलों पर मुन्हसिर थी, अब माशों पर है। जिन्दगी की तवक़्क़ो आगे महीनों पर थी, अब दिनों पर है। भाई, इसमे कुछ मुवालिग़ा[८] नहीं है। बिल्कुल मेरा यही हाल है। इन्नालिल्लाह व इन्ना इलहे राजऊन। दो अम शव्वाल १२८४ हि० (मुताबिक २७ जनवरी १८६८ ई०)।

अपनी मर्ग[९] का तालिब

—ग़ालिब

---

१. दयालु। २. युगल (जुड़वाँ)। ३. अभागा। ४. नष्ट। ५. मृतक के सम्बन्ध में की जाने वाली बलि जैसी एक विशेष-क्रिया। ६. मृतक। ७. भोजन का परिमाण। ८. अत्युक्ति। ९. मृत्यु।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

१

मेरे करम फरमा[1], मेरे शफ़ीक[2]—

शर्ते इस्लाम बुवद वर्ज़िशे ईमाँ बिल ग़ैब
ऐ तो ग़ायब ज़ नज़र मेरा तो ईमाने मनस्त[3]

आपके इस ख़त का जवाब बाद लिखने इस शेर के मुन्हसिर इल्तिमास[4] पर है कि मेरी तरफ़ से तहरीरे जवाबे ख़त में कभी तक़सीर[5] न होगी। लेकिन अग़लब[6] व अक्सर इब्तिदा ब तहरीर न होगी। ये ख़त नाचार अज़रूए इज़्तिरार[7] वापिस भेजता हूँ। वास्ते ख़ुदा के मेरे पीर व मुर्शिद के इर्शादात[8] को एक और काग़ज़ पर अपने हाथ से नक़ल करके भेज दीजिये ताकि मुझ बदनसीब को मालूम हो कि हज़रत ने क्या लिखा है। जनाब चौधरी ग़ुलाम रसूल साहब की ख़िदमत में सलामे नियाज़। उस्ताद शेख़ अता हुसेन साहब की जनाब में सलाम।

२

(१८ नवम्बर, १८५८ ई०)

बन्दा पर्वर,

आपका तफ़क़्क़ुदनामा मुर्हरिरा[9] १५ नवम्बर आज पंजशम्बा के दिन १८

---

१. दयालु। २. मित्र। ३. ग़ैब (अदृश्य) पर विश्वास लाना इस्लाम की एक शर्त है। दृष्टि से ओझल रहने पर भी तुम्हारे प्रेम पर मेरा भरोसा है। ४. प्रार्थना। ५. अपराध। ६. लगभग। ७. आतुरता के कारण। ८. आज्ञा, उपदेश (ब. व.)। ९. लिखित।

नवम्बर को यहाँ पहुँचा । मारहरे का ख़त दिल्ली चौथे दिन आया है, दिल्ली का ख़त मारहरे देर मे क्यों पहुँचता है ? लो तुम्हारी ख़ुशी, अब के ये ख़त वैरंग भेजता हूँ, मगर मुझको इत्तिला दीजिएगा कि किस दिन पहुँचा ।

११ मई १८५७ ई०, को यहाँ फ़िसाद शुरू हुआ । मैंने उसी दिन घर का दरवाज़ा बन्द और आना-जाना मौक़ूफ़[1] कर दिया । बेशग़ल ज़िन्दगी बसर नहीं होती । अपनी सरगुज़श्त[2] लिखना शुरू की । जो सुना गया वो भी ज़मीम ए सरगुज़श्त[3] करता गया । मगर बतरीक़े लुज़ूम मालायल्ज़म[4] उसका इल्तिज़ाम[5] किया है कि बज़बाने फ़ारसी ए क़दीम जो दसातीर[6] की ज़बान है, उसमे ये नुस्ख़ा लिखा जावे और सिवाय अस्मा[7] के, कि, वो नही बदले जाते, कोई लुग़ते अरबी[8] इसमे न आवे । चुनाँचे एक नुस्ख़ा आपकी ख़िदमत मे भेजता हूँ । मगर ये नज़्र है जनाब क़िब्ला व काबा हज़रत साहबे आलम साहब की और चूँकि वो आपके बुज़ुर्ग है जुरत[9] न कर सका कि आपकी नज़्र करूँ और सैर[10] मे उनको मुश्तरक[11] रखूँ । नज़्र उनकी है और फ़ैजयाबी[12] आपकी मुतालै[13] से । हयहात[14] ये कातिब[15] असातिज़ा[16] के कलाम को क्या बिगाड़ देते है, गोया मस्ख़[17] कर देते है । उनसे बईद[18] नही, लेकिन तुमसे और हज़रत साहब से बईद है कि सह्व[19] कातिब का न समझ लिया ।

---

१. स्थगित । २. सस्मरण । ३. सस्मरण का क्रोड-पत्र । ४. जो अनिवार्य नही है । ५. अनिवार्य । ६. फ़ारसी का एक शब्दकोश । ७. नाम । ८. अरबी का शब्द । ९. साहस । १०. मनोरजन, भ्रमण । ११. सहभागी । १२. यश-प्राप्ति । १३. अध्ययन । १४. हाथ । १५. लिखने वाले । १६. आचार्य (ब. व.) । १७. विकृत । १८. दूर । १९. गलती, भ्रम ।

मन अाँ दरिया ए आशोबम के अज़ तासीरे खासियत।[1]

दो काफ़ों[2] का अलत्तवातुर[3] आना दूसरी बात है, 'दरिया ए आशोब' क्या टकसाल बाहर लफ़्ज़ है। इस्तिआरा[4] बिलकिनाया[5] सही, मगर ये महल[6] नहीं है। यहां तो दरिया चाहिए बेशाइबा[7] इस्तिआरा व किनाया। अयाज़न बिल्लाह् 'उर्फ़ी' अगर एक बडा क़दह[8] भंग का या एक बोतल शराब की पिये हुए होता तो भी यों न लिखता। उस ग़रीब का मिस्रा यों है—

मनअाँ दरिया ए पुर आशोबम के अज़ तासीरे खासियत।

दरिया मौसूफ़[9], पुर आशोब सिफ़त[10], दूसरे मिस्रे का काफ़ सिफ़त की तफ़्सीर। अब रू ए सुखन[11] हज़रत साहब आलम साहब की तरफ़ है। उम्मीदवार हूँ कि मेरे हमउम्र मुर्शिद, मेरे हमफ़न मखदूम[12] मेरी तक्सीर माफ़ करे। अगर चे तिरेसठ बरस की उम्र में बहरा हो गया हूँ। पर बीनाई[13] में फ़ितूर नहीं। ऐनक से इअानत[14] चाहनी मंज़ूर नहीं। बावजूदे हिद्दते बसर[15] बसबबे नक़्से फ़हम[16] के दस्तखती इबारत मुझसे पढ़ी नहीं जाती। आगे जो दो बार मैंने जवाब लिखा है, सिर्फ कराइन[17] मलहूज़[18] रखे हैं, वर्ना इबारत बइस्तीफ़ा[19] मुझसे नहीं पढ़ी गई। आखिर चौधरी साहब तो आपके

---

१. मैं परेशानियों का समुद्र हूँ और उस समुद्र की विशेषता यही है। २. ककार। ३. निरन्तर। ४. रूपक। ५. सकेत में। ६. स्थान। ७. निस्सन्देह। ८. प्याला। ९. विशेष्य। १०. विशेषण। ११. सम्बोधन। १२. सेव्य। १३. दृष्टि। १४. सहायता। १५. दृष्टि के रहते हुए भी। १६. बुद्धिभ्रम। १७. लक्षण, शिष्टाचार (ब. व.)। १८. जिसका ध्यान रखा जाये। १९. पूरी।

मोतक़िदो[1] मे व मज़िले अज़ीज़ों[2] के है। जो आप फ़रमाया करें, वो उन्ही अल्फ़ाज़ को लिख दिया करे। अब सब इबारत का जवाब जब लिखूँगा कि किताब की रसीद और उस मतलब का इआदा[3] तहरीरे बदस्तखत चौधरी साहब मेरे पास आ जाएगा।

३

(९ दिसम्बर, १८५८ ई०)

जनाब चौधरी साहब,

आपका इनायतनामा इस वक़्त पहुँचा और ये वक़्त सुबह का है, दिन बुध का, रबीउस्सानी की चौबीसवीं (१२७५ हि.) और दिसम्बर की पहली (१८५८ ई०) किताब के पार्सल की रसीद मालूम हुई। हकीम अब्दुल-रहीमखाँ कोई नामी और नामवर नहीं है, यहाँ के क़ज़्ज़ाक़ों मे से एक शख्स है। तिबाबत[4] करने लगे हैं। मेरे भी आशना है, सिर्फ़ सलामलेक[5], ज्यादा रब्त नहीं है। सो उनका हाल मुझको मालूम नही है कि वो कहाँ है और किस तरह हैं। आगे हज़रत साहब की खिदमत मे अर्ज़ किया था कि आप जो कुछ लिखें वो बक़लम चौधरी साहब लिखा जाये। हज़रत ने न माना और फिर इबारत बदस्तखत खास लिखी। वल्लाह, बिल्लाह, न मुझसे न और किसी से पढ़ी गई। नाचार उनका खत फिर आपको भेजता हूँ। हज़रत मे कुछ न फ़रमाइएगा, मगर इस इबारत को अपने हाथ से नक़ल करके मुझको भिजवाइएगा ज़रूर और जल्द। शफ़ीक़े मुकर्रम[6] जनाब चौधरी गुलाम रसूल साहब की खिदमत में सलाम पहुँचे।

---

१. विश्वास रखने वाला। २. आत्मीयजन। ३. बात को दुहराना। ४. चिकित्सा। ५. नमस्कार। ६. दयालु मित्र।

४

(१८५८ ई०)

चौधरी साहब ज़ाफ़ीक़े मुकर्रम की खिदमत मे बाद इसलि सलाम मसनून[1] अर्ज़ करता हूँ कि आपने ज़र्रापर्वरी[2] और दरवेश नवाज़ी की, वर्ना मैं सज़ावारे सतायश[3] नही हूँ। एक सिपाहीज़ाद ए हेचमदाँ[4] और फिर दिल अफ़्सुर्दा[5] व खाँ फ़ुसुर्दा हाँ एक तबा मौज़ूं और फ़ारसी ज़बान से लगाव रखता हूँ और ये भी याद रहे कि फ़ारसी की तरक़ीबे अल्फ़ाज़ और फ़ारसी अशार के मानी के परवाज़[6] मे मेरा क़ौल अक्सर खिलाफ़े जम्हूर[7] पाइएगा। और हक बज़ानिब मेरे होगा। पहले मैं हज़रत से पूछता हूँ कि ये साहब जो शरहे[8] लिखते हैं, क्या ये सब ईज़दी सुरोश[9] है और इनका कलाम वही[10] है? अपने-अपने क़यास[11] मे मानी पैदा करते है। ये मैं नहीं कहता कि हर जगह उनका कयास ग़लत है, मगर ये भी नही कोई कह सकता कि जो कुछ ये फ़रमाते हैं, वो सही है।

इसी छापे मे आप जिसका हवाला देते हैं—

मन के बाशम अक़्ले कुल[12]

इस शेर की शरह को मुलाहिज़ा कीजिये। इबारत वो ताक़ीद से लबरेज़ कि मक़सूद शारेह का[13] समझा भी नहीं जाता और जब गौर व ताम्मुल[14] के

---

१. अभिवादन करने के पश्चात्। २. अकिंचन का पालन। ३. प्रशंसा-पात्र। ४. निपट मूर्ख, सैनिक पुत्र। ५. खिन्न हृदय। ६. उड़ान। ७. सर्वसाधारण के विरुद्ध। ८. यथार्थ। ९. व्याख्याएँ। १०. ईश्वर के दूत। ११. ईश्वरी सन्देश। १२. अनुमान। १३. मैं कौन बड़ा बुद्धिमान् हूँ। १४. व्याख्याकार का उद्देश्य। १५. सोच-विचार।

बाद समझ लीजिये तो वो मानी हर्गिज़ लायक़ इसके नहीं है कि फ़िक्रे सलीम[1] इसको क़ुबूल करे। फिर—

एहसान तो बशिगाफ़्ता

इस मिस्रे की तौजी कितनी बेमज़ा और बेनफ़ा है ?

उर्फ़ी को कहाँ से लाऊँ जो उससे पूछूँ कि भाई तूने इस शेर के क्या मानी रखे हैं ? किस्सा कोताह्[2]—

दीवाँगिरीए मुहब्बते तो किम रोज़ मुसल्लमस्त मारा
बेगाना ज़ ताज कर्द तारक आवारह् ज़ कफ़शकर्द पारा[3]

जैसा कि दूसरे शेर के मफ़हूम[4] को शारेह[5] कहता है दीवानगी में ये हालत बईद[6] नहीं। ऐसा ही अगर कोई कहे मन्सबे दीवानी[7] से ये बात बईद है तो फिर शारेह क्या जवाब देगा ? हाँ ये कहेगा कि ग़ल्बे ए मुहब्बत[8] में पासेवज़ा[9] न रहा और दीवानजी साहब कचहरी से नंगे सर और नंगे पाँव निकल भागे। हमने माना, मगर हम ये पूछते हैं कि 'दीवानगी' क्यों न लिखे कि दूसरे शेर के मानी बेतकल्लुफ़ मुन्तबिक़[10] हो जायें और तौजीहात[11] दरम्यान न आये ? फ़क़ीर के नज़दीक 'दीवानगी ए मुहब्बत' तो सही और बेतकल्लुफ़ है और 'दीवानगी व मुहब्बत' तो गलते महज़[12] और 'दीवानगरी ए मुहब्बत' तो

---

१. शुद्ध बुद्धि। २. बात संक्षेप में। ३. यह प्रमाणित है कि तुम्हारे प्रेम ने हमें पागल कर दिया है। इसीके कारण सिर से ताज गया और पैरों की जूतियाँ गईं। ४. भाव। ५. व्याख्याकार। ६. दूर। ७. दीवान का पद ८. प्रेमाधिक्य। ९. वेशभूषा का लिहाज। १०. चरितार्थ। ११. कारण। १२. केवल अशुद्ध।

तकल्लुफ़े महज़। दीवानगी और मुहब्बत दो सिफ़ते क्यों जमा करे ? ग़ौर कीजिये अत्फ़ेबाब[1] ये चाहता है कि ये शख़्स पहले से दीवाना था और फिर उसी हालत में उसको मुहब्बत पैदा हुई। दीवानगी मे ताज व कफ़्श[2] बेजा थे, मुहब्बत पैदा होने के बाद ये हालत तारी हुई[3] ? क्या बेमजा तौजी[4] है। हाँ, 'दीवानगी मुहब्बत' यानी वो जुनूँ[5] जो फ़र्ते मुहब्बत[6] में बहम पहुँचा, उसने इस अहवाल को पहुँचाया। फ़क़ीर 'दीवानगी ए मुहब्बत' कहेगा और 'दीवानगी व मुहब्बत' कहने को मना करेगा और 'दीवानगरी ए मुहब्बत' कहने को न माने[7] आएगा, न तस्लीम करेगा। ज्यादा इससे क्या अर्ज करूँ ? याद आवरी[8] और मेहर गुस्तरी[9] का शुक्र बजा लाता हूँ और बस।

अब यहाँ से रू ए सुख़न[10] हज़रत पीर व मुर्शिद साहब आलम साहब की तरफ़ है। आपने मख़दूम व मुत्ता[11] हज़रत साहब की ख़िदमत मे बन्दगी अर्ज करता हूँ और हैरान हूँ कि और क्या कहूँ। ये मुद्दआ चौधरी साहब की तहरीर से मालूम हो गया था। इसका जवाब लिखा गया। हज़रत के दस्तख़ते ख़ास की लिखी हुई इबारत से जो समझता हूँ उसका जवाब लिखता हूँ और जो मुझसे नही पढ़ा गया वो तावीज़े बाज़ू कर रखता हूँ। अगर बफ़र्ज़े मुहाल[12] कभी मुलाक़ात होगी तो आप से दरयाफ़्त करके पासुख गुज़ार[13] हूँगा। हाँ हज़रत, सच है मीर अमीन हसनख़ाँ मेरे दोस्त हैं और मिर्ज़ा अब्बास मेरा भानजा। फ़ितना व फ़साद के ज़माने मे बिलगिराम मे रहा, अब वो फ़र्रुख़ाबाद मे डिप्टी कलक्टर है। आपकी और भाई मुंशी नबी बख़्श साहब

---

१. संयोजक 'व'। २. जूता। ३. छा गई। ४. तर्क। ५. उन्माद। ६. प्रेमाधिक्य। ७. बाधक। ८. स्मरण ९. दयालुता। १०. सम्बोधन। ११. आदेश करने वाला, जिसकी आज्ञा शिरोधार्य हो। १२. कठिनाई से। १३ उत्तर देने वाला।

की मुलाक़ात से मेरा दिल बहुत खुश हुआ। याद रहे सुख़न फ़हमी[1] इस बुज़ुर्गवार[2] का हक़ है। अब आगरे मे बेकार और पिन्शन के उम्मीदवार हैं—

ताहर चे गुफ़्ती अज़ तो मुकर्रर शुनो दमे[3]

शुदे की रिआयत से कि वो ब याये मजहूल[4] है बमानी 'मीशुद' अक्सर साहब गुफ़्ते को भी ब याए मजहूल पढ़ते है, ताकि 'मीगुफ़्त के मानी पैदा हों। इस सूरत मे खिताब से बतर्फ़े ग़ैब[5] के रुजू करते है, और 'गुफ़्ती' ब याए मारूफ़[6] से सीग़ा ए वाहिद हाज़िर[7] है, अज़मना[8] मे से अशारे ज़मान ए माज़ी[9] रखता है। और 'शुदन', 'शवद', ये सब इस्तिक़बाल मुक्तज़ी[10] है और मारूफ़ गुफ़्ती माज़ी है। पस अगर गुफ़्ती बया ए मारूफ़ कहिये तो ऊपर के मिस्रे में बुदे कहना होगा, 'बूदे' का मुख़फ़्फ़फ़[11]। खुलासा ये कि अगर वहाँ बुदे कहिये तो यहाँ गुफ़्ती बया ए मारूफ़ बे तकल्लुफ़ दुरुस्त और बयाए मजहूल ग़लत है और अगर वहाँ 'शदे' कहिये तो यहाँ 'गुफ़्ते' बयाए मजहूल कहिये। 'ग़ैबत' और खिताब का तफ़र्क़ा[12] मिटा दीजिये। गुफ़्ते बयाए मजहूल में खितावे हाज़िर मुक़र्रर रहता है और 'तो' का लफ़्ज़ जो क़रीब है वो इस मानी को हाथ से जाने नही देता। नज़ाइर[13] इसके फ़ारसी मे बहुत हैं। रुबाई के बाब की पुर्सिश[14] हर्गिज़ न रहे, नहीं कही। ज़्यादा हद्दे अदब।

---

१. काव्यमर्मज्ञता। २. वयोवृद्ध। ३. तुमने जो कुछ कहा, मै उसे दुबारा सुनता। ४. वह 'ए' जो लम्बी लिखी जाती है, उस 'ए' के साथ। ५. परोक्ष, अन्य पुरुष के प्रति। ६. गोल लिखी जानेवाली 'ए' 'इसका उच्चारण ई' होता है। ७. द्वितीय पुरुष का एकवचन। ८. युग (ब.व.) ९. भूतकाल। १०. जिसका तकाजा है। ११. सक्षिप्त। १२. अन्तर। १३. उदाहरण। १४. पूछ-ताछ।

५

बन्दा पर्वर,

मेहरबानीनामा आया, सर पर रखा, आँखों से लगाया। फ़ारसी को तकमील के वास्ते अस्लुलउसूल[1] मुनासिबत तबीयत की है, फिर ततब्बो[2] कलामे अहले ज़बान, लेकिन न अशारे क़तील व वाक़िफ़ व शोअरा ए हिन्दुस्तान[3] के ये अशार सिवाय इसके कि उनकी मौज़ूनी ए तबा का नतीजा कहिये और किसी तारीफ़ के शायाँ[4] नही है। न तरकीबे फ़ारसी, न मानी नाज़ुक[5]। हाँ, अल्फ़ाज़ फ़र्सूदा[6] व आमियाना[7] जो अतफ़ाले दबिस्ताँ[8] जानते हैं और जो मुतसद्दी नस्र मे दर्ज करते है, वो अल्फ़ाजे फ़ारसी ये लोग नज़्म मे खर्च करते है। जब रूदकी व अन्सरी व खाक़ानी व रशीद व तव्वात और उनके अमसाल व नज़ायर[9] का कलाम बिल इस्तेआब[10] देखा जाये और उनकी तरकीबों मे आशनाई बहम पहुँचे और ज़हन औजाज की तरफ़ न ले जाये तब आदमी जानता है कि हाँ फ़ारसी ये है।

"मन्के बाशम" इसकी जो शरह छापे मे लिखी है, उसको मुलाहिज़ा कीजिये और मानी मेरी खातिर निशान कीजिये तो मैं सलाम करूँ।

पहले नज़र यहाँ लड़नी चाहिए कि 'अज़ औजे[11] बयाँ अन्दाख्ता' का फाइल[12] कौन है और मफ़ऊल कौन है? अगर 'अक़्ले कुल' को 'अन्दाख्ता' का मफऊल और 'मन्के'[13] के काफ़ को क़ुदामिया[14] ठहराओगे तो बेशुबा 'अन्दाख्ता' के फाइल

---

१. विशुद्ध। २. अनुसरण। ३. हिन्दुस्तान के कवि। ४. योग्य। ५. सूक्ष्मार्थ। ६. घिसे-पिटे, पुराने। ७. सामान्य। ८. पाठशाला के बालक। ९. उदाहरण। १०. पूर्णतया। ११. आश्चर्य। १२. कर्त्ताकारक। १३. कर्म। १४. प्रश्नवाचक।

दो ठहरेंगे--एक 'नावके अन्दाज़े अदब' और एक 'मुर्गे औसाफ़े' तो। एक फ़ेल[1] और दो फ़ाइल ये क्या तरीक़ और तहक़ीक़ है।

अब फ़क़ीर से इसके मानी सुनिये--"मन" अन्दाख्ता का मफ़ऊल 'रा' मुक़द्दर[2], 'मन्के' का काफ़ तौसीफी[3] 'नाविके अन्दाज़े अदब' 'अदब आमोज़' यानी उस्ताद 'मुर्ग़े औसाफ़ तो' फ़ाइल यानी मुझको, कि, अक्ले कुल का उस्ताद हुँ। तेरे मुर्ग़े औसाफ ने औजे बयान से गिरा दिया। अक़्ले कुल तक, कि, वो उलवीयों[4] मे आला है, उसका नावक[5] पहुँच सकता था, मगर मुर्ग़े औसाफ उस मुक़ाम पर है कि जहाँ उस नावक अंदाज[6] को पहुँचाने की गुजाइश नही। औजे बयान[7] से गिरना आजिज़[8] आना है। क़ुदरत वो कि अक़्ले कुल से भी ज़्यादा और इज्ज़[9] ये कि औजे बयान से गिर गया। अच्छा मुबालग़ा[10] है मुर्गे औसाफ़ की बलन्दी का और क्या ख़ूब मज़मून है इज़हारे इज्ज का बावजूद दाव ए क़ुदरत--

ईसारे तो बरदूख्ता चश्मो दहने आज़[11]

इसके तो मानी वही है जो छापे मे लिखे हैं। मिस्र ए सानी[12] की शरह मे गुमराह हो गया।

एहसाने तो बिशगाफ्ता हर क़तर ए यमरा[13]

यानी एहसान तो हर क़तर ए दरिया बशिगाफ़्त ताहम बक़ैदे हिसाब नियामद। ये हेचमदाँ[14] इस मानी के मानी नही समझा। सीधी बात है,

---

१. क्रिया। २. लुप्त। ३. विशेषणवाची। ४. सैयदों, श्रेष्ठजनों। ५. तीर। ६. धनुर्धर। ७. वर्णन की उच्चता। ८. विवश, असहाय। ९. असमर्थता। १०. अतिरजना। ११. आपकी उदारता ने लालसा का मुँह सी दिया। १२. द्वितीय चरण। १३. आपका उपकार समुद्र की बूँदों से भी अधिक है। १४. अनभिज्ञ।

मगर खयाल में जब आएगी कि असातिज़ा के मुसल्लमात[1] मालूम हों। कमाले ईसार[2] व अता[3] में मरवारीद[4] व याक़ूत[5] व मादन[6] की कम्बख्ती आती है। लाल व दुर[7] का मादूम[8] हो जाना और बहर[9] व कान का खाली रह जाना, नई-नई तरह से बाँधा है। चुनाँचे मैंने किसी ज़माने में इसी ज़मीन मे एक क़सीदा लिखकर वज़ीरुद्दौला वाली ए टोक[10] को भेजा था उसमे के दो शेर आपको लिखता हूँ—

नामूस निगह दाश्ती अज़ जूद बगेती
जुज़ पर्दगियाने हरम मादनो यम रा
वक़्तस्त के ईं क़ौम ब हर कूचा व बाज़ार
पुर्मन्द ज़हम मन्शए रुस्वाई ए हम रा

पर्दगियाने हरम व मादन व यम यानी लाल व गौहर जो कसरते ईसार म कूचे व बाज़ार मे खाक आलूदा[11] पड़े हुए हैं, वो बहमदिगर[12] दर्दमन्दाना ये गुफ़्तगू करते हैं कि इस शख्स ने सबकी हुरमतें[13] रखलीं और सबकी आबरूएँ बचाईं। हमको इस कदर बेहुरमत और जलील क्यों रखा है?

क़तर ए दरिया[14] का हिसाब के वास्ते चीरना बेहिसाब है। मक़ूला[15] उर्फ़ी का ये है कि जितने मोती दरिया मे हाथ आये वो बख्श दिये और बख्शिश का शौक बाकी रहा। चूंकि क़तरे मे बिल क़ुव इस्तेदाद[16] मोती हो जाने की है, तो इस एहतिमाल[17] से हर क़तरए दरिया को चीर डाला कि अगर मोती हाथ आवे तो वो सायलों[18] को दिये जावे। पहले मिस्रे में हिर्स[19] का सेर[20] कर देना मुआफिके मुसल्लमाते शेरे मुस्तने[21] और उसका मरफ़ूअ[22] में

१. सर्वमान्य। २. पूर्ण त्याग। ३. दान। ४. मोती। ५. लाल। ६. खान। ७. मोती। ८. अभाव। ९. समुद्र। १०. टोंक के राजा। ११. मिट्टी में ढँके हुए। १२. परस्पर। १३. प्रतिष्ठा। १४. समुद्र की बूँद। १५. उक्ति। १६. योग्यता की शक्ति। १७. आशंका। १८. प्रार्थियों। १९. लालच। २०. तृप्त। २१. निषिद्ध। २२. उकार युक्त, ऊँचा उठाना।

आना इग़राक़[1] दूसरे मिस्रे में ये एहतिमाल इस्तेदाद[2] बिलक़ुवा[3] क़तरे को चीर डालना और फिर इस तरह कि हर क़तरे को। ये इग़राक़ाह से गुज़र कर तबलीग़[4] व गुलू[5] है।

यहाँ से खिताब[6] हज़रत साहबे आलम की तरफ़ है। मखदूम[7] मुकर्रम[8] व मुता ए मुअज्ज़म[9] क़िब्ल ए दीदा व दिल[10], कि, जो मेरे और अपने मिलने को अज़ किस्म फ़र्जे मुहाल[11] नही मानते हैं, खुदा करे ऐसा ही हो, जैसा वो जानते हैं। तक़्सीर[12] माफ़ हो अगर दुनिया मे जुहूरे अम्र[13] बहस्बे मुसाअदते असबाब[14] है, तो इस तमन्ना का हुसूल[15] मानिन्द इम्कादए शबाब[16] है। कोई वजह नही पाता आपके यहाँ तशरीफ़ लाने की और कोई सूरत नज़र नही आती मेरे वहाँ आने की। अगर .चे हैज़[17] इमकान से बाहर नही मगर वक़ूअ[18] मे ताम्मुल[19] है। अब जो भाई मुंशी नबी बख्श साहब को खत लिखूंगा तो आपका सलाम ज़रूर लिख दूंगा। आपने अहबाबुल बाज़[20] की खैर व आफ़ियत उमूमन[21] लिखी, बित्तख्सीस[22] हज़रत शाह आलम साहब का सलाम न लिखा। क्या वो वहाँ नही है और अगर और कही है तो उनका हाल मुझको लिखिये और अगर वहाँ है तो मेरा सलाम उनको कहिये।

रुबाई के बाब मे बयान मुख्तसर ये है कि उसका एक वज़न[23] मुअय्यन[24] है।

---

१. अतिशयोक्ति। २. योग्यता, पात्रता। ३. सामर्थ्य से। ४. प्रचार। ५. अत्युक्तिपूर्ण। ६. सम्बोधन। ७. सेव्य। ८. उपकारी। ९. महान् आदेशक। १०. नेत्र और हृदय के आराध्य। ११. कठिन। १२. अपराध। १३. विषय का प्रकटन। १४. मित्रता के कारणों के अनुसार। १५. प्राप्ति। १६. जवानी के लौटने के समान। १७. नपुसक। १८. अस्तित्व। १९. सन्देह, दुविधा। २०. प्रमुख आत्मीयजन। २१. सामान्यतया। २२, विशेष रूप से। २३. छन्द की गति। २४. निश्चित।

अरब में दस्तूर न था सिवाय अजम[1] के। ये बहर हज़ज[2] में से निकाला है। मफ़ऊल-मफ़ालन-फ़ऊलन फ़ऊलन, हज़ज मुसद्दस[3] अख़रबे मक़बूज़[4] मक़सूर[5] इस वज़न पर फ़ालन बढ़ा दिया है, 'मफऊल-मफ़ाअलन फ़ऊलन फालन' ज़िहाफत[6] इसमें बाज़ के नज़दीक अठारह और बाज़ के नज़दीक चौबीस है और वो सब जायज़ और रवा है और इस बहर का नाम 'बहरे रुबाई' है। रुबाई सच है कि सिवाय इस बहर के और बहर मे नहीं कही जाती और ये जो मत्ला[7] और हुस्ने मत्ला[8] को रुबाई कहते हैं, इस राह से है कि मिस्रे चार हैं, वर्ना रुबाई नहीं है, नज़्म है। क़ुदमा[9] को बेशतर इसका इल्तिज़ाम[10] था, कि हर मिस्रे मे क़ाफ़िया[11] रखते थे। ख़ाकानी बरिआयते[12] सनते ज़ू काफ-एतैन कहता है—

मन बूदम व आँ निगारे रूहानी रोए
अफ़गन्दह् दरां दो ज़ुल्फ़े चौगानी गोए
ख़ल्क़े वदर ईस्तादा ख़ाक़ानी जोए
मन दर हरम विसाल सुभानी गोए[13]

मैं पाँच-सात बरस से बहरा हो गया हूँ। एक रुबाई चार क़ाफिए की इस मजमूने ख़ास की मैंने लिखी है, बे रिआयते सनते ज़ू क़ाफ़एतैन[14]—

---

१. ईरान। २. एक छन्द। ३. छह चरण की कविता। ४. अधिकृत मफाईलुन मे से 'म' और 'न' गिराकर 'फाईल' करके मफ़ऊल बनाया। ५. संक्षिप्त। ६. छन्द में गण की न्यूनता या अधिकता। ७. गज़ल का पहला शेर, जिसके दोनों चरणों में अन्त्यानुप्रास रहता है। ८. गजल का दूसरा शेर। ९. प्राचीन (कवि)। १०. अनिवार्यता। ११. अन्त्यानुप्रास। १२. सुविधा के साथ, अन्त्यानुप्रासों मे युक्त। १३. मैं हूँ और मेरी वह प्रेमिका है जिसकी आकृति आध्यात्मिक है। उसकी दो जुल्फ़ें गेंद के समान पड़ी हैं जिसके द्वार पर अगणित सम्राट् पडे हुए हैं और मैं उसके दर्शन के लिए ईश्वर का नाम जप रहा हूँ। १४. दो काफ़ियों वाले।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

दारम दिले शादो दीद ए बीनाए
व ज़ करीं गोशम न बुवद परवाए
ख़ूबस्त के नशनोमे ज़हर ख़ुदराए
गुलबाँगे अनारब्बकुमुल आलाए[1]

फ़क़ीर इस बाब मे मुतास्सिब[2] है। और वज़न की दो बैत[3] में क़ाफ़िएवाली को रुबाई न कहेगा।

नस्र आरी[4] न क़ाफ़िया न वज़न; नस्र मुसज्जा[5] क़ाफ़िया मौजूद, वज़न मफ़क़ूद[6]। मगर इसमें तरजीह की रिआयत ज़रूर है यानी फ़िक्रे मे के अल्फ़ाज़ मुमासिल[7] और मुलायम हमदिगर[8] हो और अगर ये बात न होगी और सिर्फ़ क़ाफ़िया होगा तो उसको मुक़फ़्फ़ा[9] कहेगे न मुसज्जा[10]। नस्र मुरज्जज़[11] वो है कि वज़न हो और क़ाफ़िया न हो। जब आप लाला क़तील के घड़े हुए फ़िक्रे देख चुके है तो मुझको फ़िक्रातराशी की तकलीफ़ क्यो देते है। ज़माने गुजिश्ता मे भाई ज़ियाउद्दीनख़ाँ साहब 'नय्यर' तख़ल्लुस एक मुख़्तसर सा दीवान हज़रत निज़ामी का मुझको दिखलाने लाये थे, उसमे नस्र मुरज्जज़ थी। मै उस दिन नवाब मुस्तफ़ाख़ाँ 'हसरती' व शेफ़्ता को ख़त लिखा चाहता था। उसी वजह पर ख़त लिखा और वो ख़त 'पजआहग' मे है। मगर मैंने उस तर्ज़ मे बमुक़तज़ाए शूख़ी ए तबह[12] ये बात की है कि एक जगह जो फ़िक्रे

---

१. मेरा हृदय स्वस्थ्य है और नेत्र ठीक है। यदि मेरे कान नही है तो कोई परवाह नहीं। बहुत अच्छा हुआ जो मै अभिमानियों की यह बात नहीं सुनना चाहता कि वे मेरे प्रभु है। २. सकीर्ण। ३. एक शेर (कविता)। ४. अनलकृत सरल गद्य। ५. अलंकृत गद्य। ६. छन्द की गति लुप्त। ७. समान। ८. परस्पर। ९. अनुप्रासात्मक गद्य। १०. अन्त्यानुप्रास युक्त। ११. ऐसा गद्य जिसके वाक्य सन्तुलित और सानुप्रास हों। १२. स्वभाव की अत्यधिक चंचलता से।

मुक़फ़्फ़ा[1] हो गये हैं और वो लफ़्ज़ मुझको पसन्द आये हैं, मैंने उनको यो ही रहने दिया है। इसको दस्तूर मे तसव्वुर न कीजिएगा। वो रुक्का ये है—

[उद्धृत-पत्र फ़ारसी मे है। पत्र बहुत बड़ा है, अतः यहाँ नही दिया जा रहा है।]

६

(१८५९ ई०)

जनाब चौधरी साहब की खिदमत में सलाम अर्ज़ करता हूँ और शुक्रे एहसान[2] बजा लाता हूँ। 'हाशा' और 'हाशल्लाह' के जवाब को हवाला इन सुतूर[3] पर रखता हूं कि जवाब जनाब हज़रत साहब के इर्शाद के जवाब मे लिखूंगा। आपको इतना लिखना और काफ़ी है कि अपने अम्मेवाला क़द्र[4] जनाब चौधरी गुलाम रसूल साहब को फ़कीर का सलामे नियाज़ पहुँचाइये और जनाब शेख़ अताहुसेनसाहब 'अता' को भी सलाम कहिये।

अब खिताब जनाब हज़रत आलम साहब की तरफ है। पीर व मुर्शिद क़लम का काम ज़बान से लेना यानी तहरीर के मतालिब[5] को पढ़ना और पढ़ा देना आसान है और जबान का काम क़लम से लेना दुश्वार है। यानी जो कुछ कहा चाहिये उसको क्यों कर लिखा चाहिये। वो बात कहाँ कि कुछ मैंने अर्ज़ किया कुछ आपने फ़रमाया, दो-चार बातों में झगड़े ने अंजाम पाया। खैर, दौलते हम ज़बानी[6] मयस्सर ?

---

१. अन्त्यानुप्रासित। २. कृतज्ञता। ३. पंक्तियाँ। ४. प्रतिष्ठित चाचा। ५. तात्पर्य (ब० व०)। ६. वार्त्तालाप की सम्पत्ति।

चौधरी अब्दुलगफ़ूर 'सुरूर' के नाम

आपका हुक्म बजा लाने को अपना शर्फ़ जानता हूँ और अर्ज़ करता हूँ कि निज़ामी अब ऐसा हुआ कि जब तक फ़रीदाबाद का खत्री दिलवाली सिंघ सुम्मा मुतखल्लुस[1] व 'क़तील' जिसको हज़रत ने मरहूम लिखा है, उसकी तसदीक़ न करे, तब तक उसका कलाम क़ाबिले इस्तिनाद[2] न हो। 'क़तील' असातज़ ए सल्फ़[3] के कलाम से क़तअन्[4] आशना ही नहीं। उसके इल्मे फ़ारसी का माखज़[5] उन लोगों की तक़रीर है कि नवाब सआदतअलीखाँ के वक़्त मे मुमालिक मग़रबी[6] की तरफ़ से लखनऊ मे आये और हंगामा आरा[7] हुए—बेश्तर साद (?) व कश्मीरी या काबली व क़न्धारी व मकरानी। अहयानन्[8] कोई आम्मा[9] अहले ईरान[10] मे से होगा, माना कि उज्मा ए ईरान[11] में से भी कोई होगा।

तक़रीर[12] और है, तहरीर[13] और है। अगर तक़रीर बऐनहीं[14] तहरीर मे आया करे, तो ख़ाजा बक़रात से और शर्फ़ुद्दीनअली यज़दी और मुल्ला हुसेन वायज़ काशफ़ी और ताहिर वहीद से, ये सब नस्र में क्यों खूने जिगर खाया करते? वो सब तरह की नस्रे जो लाला दिलवाली सिंघ क़तील मुतवफ़्फ़ी[15] ने बतक़लीदे अहले ईरान[16] लिखी हैं, न रक़म[17] फ़रमाया करते?

ये शरूस मुद्दई है कि कदा (कदह्) का लफ़्ज़ सिवाय पाँच-चार इस्म[18] के और इस्म के साथ तरकीब नहीं पाता। पस आरज़ूकदा और देवकदा और नश्तरकदा और अमसाल[19] इसके जो हजार जगह अहले ज़बान के कलाम मे

---

१. काव्य नामवाला। २. प्रमाण योग्य। ३. पूर्ववर्त्ती आचार्य। ४. पूर्णतया। ५. उद्धृत करने का आधार। ६. पश्चिमी प्रदेश। ७. उत्पात करने वाला। ८. संयोगवश। ९. सामान्य। १०. ईरानवासी। ११. ईरान के महान् व्यक्ति। १२. भाषण। १३. लेखन। १४. पूर्णतया। १५. स्वर्गीय। १६. ईरानवासियों के अनुकरण पर। १७. लेखन। १८. संज्ञा। १९. उदाहरण।

आया है वो नादुरुस्त है। मैं और आप बैठे और उसके ख़ुराफात पढ़े जाये और जो मैं अर्ज़ करूँ उस पर हजरत गौर फ़रमाये। तब मालूम हो कि ये कितना लगो[1] और फारसीदानी से कितना बेगाना है।

आमदम बरसरे मतृआ[2]। नस्र मुरज्जज़ उसको कहते हैं कि वज़न हो और क़ाफ़िया न हो, मुक़ाबिल मुक़फ़्फ़ा[3] के क़ाफिया हो और वज़न न हो। और यहाँ ये भी समझना चाहिए कि वज़न मे क़ैद मजूर नही। मसलन् हज़रत निज़ामी अलैइर्रहमा[4] की नस्र का वज़न ये है—मफ़ऊल मुराएलन मफ़ाएलन मफ़ऊल मुफाएलन। हजरत ज़हूरी अलैइर्रहमा फ़रमाते हैं—

रायतश सरो बुने गुलशने फ़तह
ख़जरश माही ए दरिया ए ज़फ़र[5]

ये नस्र मुरज्जज़ है, वज़न इसका फ़अलातन फ़अलातन फ़ाअलन[6]। कातिबों ने मुक़फ़्फ़ा करने के वास्ते सूरत बदल दी है और वो तसर्रुफ़[7] किया है कि नस्र न मुरज्जज़ रही न मुक़फ़्फ़ा। चुनाँ च असातिजरा फ़न[8] लन्तनालुल बिर्रहत्ता तनफ़िक़ू[9] इस आयते सरासर हिदायते असर को नस्र मुरज्जज़ कहते है और इसका वज़न ये है—"फ़ाअलातन फ़ाअलातन फ़ाअलन" वो यज्जुको मिन है सो लायहतसबो[10] इसका वज़न 'फ़ऊलन फ़ऊलन फ़ऊलन फ़ऊल' बन्दे की तहक़ीक़ात यही है कि नस्र तीन क़िस्म पर है, मुक़फ़्फ़ा—क़ाफ़िया है और वज़न नहीं। मुरज्जज़—वज़न है और क़ाफिया नही। आरी—न वज़न है न क़ाफिया। मुसज्जा ही, मुक़फ़्फ़ा है कि दोनों फिक्रो मे अलफ़ाज़ मुलायम और

---

१. निरर्थक। २ विषय पर आता हूँ। ३. अन्त्यानुप्रासयुक्त। ४. स्वर्गीय। ५. तुम्हारी ध्वजा विजय की प्रतीक है और तुम्हारी तलवार जीत के समुद्र को मछली है। ६. प्रयोग। ७. इस विषय के आचार्य। ८. जब तक तुम खर्च नहीं करोगे, तुम कदापि भलाई नहीं प्राप्त कर सकते। ९. ईश्वर अनन्त दान देता है।

मुनासिबे हमदिगर[1] हों। नज़्म मे ये सनत[2] आ पड़े तो उसको मुरस्सा कहते है। और नस्र इस सनत पर मुश्तमिल[3] हो तो उसको मुसज्जा कहते है। इस कायदे को अब्दुलरज़्ज़ाक बदल सकता है न साहिबे 'कुलज़मे हफ़्त गाना[4]' न ये कतर ए बे सरोपा[5]।

'हाशा व हशालिल्लाह[6]' कलाम अहले अरब मे इसी तरह है, ज़िस तरह आप फरमाते है, मगर पारसियों ने अज़राहे तसर्रुफ़ बमानी ए ज़िन्हार क़रार दिया है, यानी ताकीद। अगर मन्फी[7] पर आये तो नफ़ी[8] की ताकीद और मुस्बत[9] पर आये तो इस्बात[10] की ताकीद। मै किसी कलेमे का इस्तेमाल नही करता। जब तक अहले ज़बान के कलाम मे नही देखता। 'ऐशी' बेचारा उसके लायक नही कि मुस्तनद अलै[11] बने। मगर ये लफ़्ज ग़लत नहीं लिखा है उस ग़रीब ने।

हज़रत क़िब्ला फारसियों के तसर्रुफात अगर देखिये तो हैरान रह जाइये। मुझको इस वक़्त कहाँ याद है और किताब का क्या नाम, कोई वर्क़ भी लिखा हुआ मेरे पास नही। हाशा का कोई शेर मौकदे नफ़ी[12] अगर याद आएगा तो आपको लिखा जाएगा—

हरज़ा मश्ताब व पै जादा शनासाँ बर्दार
ऐ के दर राहे सुख़न चूँ तो हजार आमदो रफ़्त[13]

---

१. परस्पर सन्तुलित। २. अलकार (यहाँ शब्दलंकार)। ३. सम्मिलित ४. सात समुद्र का मालिक 'कुलज़म' नामक पुस्तक का रचयिता। ५. मै अकिंचन। ६. मै कदापि ऐसा नही कर सकता। ७. निषिद्ध। ८. निषेध। ९ प्रमाणित। १०. प्रमाण। ११ प्रामाणिक। १२. निर्दिष्ट निषिद्ध। १३. बेहूदा लोगो की तरह मत दौड़। बुद्धिमान लोगो की पगडण्डी पर चल। कविता के इस मार्ग पर हजारो आये और चले गये।

ये मसनवी जिसमे ये मिस्रा है—

हाशलिल्लाह के बद न मी गोयम्[1]

कलकत्ता मे मैंने लिखी थी। पाँच हज़ार आदमी फ़राहम थे और जो ऐतराज़ मुझ पर किये थे उसमे से एक ऐतराज़ ये था कि 'हमाआलम' ग़लत है, यानी 'हमा' का लफ़्ज़ 'आलम' के लफ़्ज के साथ रब्त नहीं पा सकता। कतील का हुक्म यों है। अर्ज़ किया गया कि हाफ़िज कहता है—

हमा आलम गवाहे इस्मते ऊस्त[2]

सादी कहता है—

आशकम बरहमा आलम के हमा आलम अज़ूस्त[3]

ग़र्ज इस तहरीर से ये है कि मसनवी वहाँ लिखी गई और एक-एक नक़्ल मौलवी करम हुसेन बिलगिरामी और मौलवी अब्दुल क़ादर रामपूरी और मौलवी नेमत अली अज़ीमाबादी और उनके अमसाल और नज़ायर के पास भेजी गई। अगर ये लोग जगह पाते तो मेरी खाल उधेड़ डालते। अब एक नुस्खा है 'अब्तालेजरूरत' अगरचे साहब उसका हिन्दी है, बल्कि हिन्दू है, मगर क़ाबिल अच्छा है। देखिये, असातिज़ा क्या क्या तसर्रुफ़ात[4] नुमायाँ कर गये है।

मैंने आज तक उर्दू मे 'इतिज़ारी' बमाने 'इन्तिज़ार' न आप लिखा, न अपने शागिर्दों को लिखने दिया। असातिज़ए मुसल्लुमुल सुबूत[5] के हाँ फ़ारसी में मौजूद है। हाशा ऐसा नहीं कि उनमे फारसीवालो को ताम्मुल[6] हो। ज्यादा हद्दे अदब।

---

१. मैं कदापि बुरा नही कहता हूँ। २. समस्त ससार उसकी पवित्रता की साक्षी है। ३. मैं समस्त विश्व का प्रेमी हूँ क्योंकि यह ब्रह्माण्ड उससे बना है। ४. प्रयोग। ५. प्रामाणिक और सर्वमान्य आचार्य। ६. शंका।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

७

(फरवरी, १८५९ ई०)

जनाब चौधरी साहब,

आप को बाद इब्लाग़े सलाम[1] आपके खत के पहुँचने से आगही देता हूँ और ये भी आपको मालूम रहे कि आपके चचा साहब के खत का जवाब इससे आगे भेज चुका हूँ । मैं नहीं आ सका ।

यहाँ पिन्शन का मुक़दमा पेश है । कभी साहब बहादुर कमिश्नर बहादुर के पास, कभी साहब डिप्टी कमिश्नर बहादुर के पास जाना होता है। खुद न जाऊँ तो खयाल रहता है कि खुदा जाने किस वक़्त बुला भेजे या किस वक़्त कोई पुर्सिश[2] आ जाये । बाईस महीने से वो रिज़्क़ कि जो मुक़व्विमे जिस्म[3] और मुफर्रहे रूह[4] था, मसदूद[5] है। क्या खाऊँ और क्योंकर जीऊँ ? लिल्लाहुल हम्द[6] कि गुनहगार नहीं ठहरा। पिन्शन पाऊँगा,मगर वो पिन्शन गवर्नमेण्ट के पोलिटिकल सरिश्ते से मुक़र्रर की हुई है। सो देहली का एजेंटी दफ़्तर फ़र्द फ़र्द लूट गया। कोई काग़ज बाक़ी नहीं रहा । अब ये शहर पजाब अहाते में मिल गया। पजाब का नवाब लफ्टट गवर्नर बहादुर यहाँ का सदर ठहरा। उस दफ़्तर में मेरी रियासत का, मेरी माश[7] का, मेरी इज्ज़त का नाम व निशान नहीं है। ऐसे ऐसे पेच पड़ गये हैं। कुछ निकल गये हैं, कुछ बाक़ी रहे हैं। ये भी निकल जाएँगे—

कार हा आसाँ शवद अम्मा व सब्र[8]

---

१. अभिवादन भेजने के पश्चात् । २. पूछ-ताछ । ३. जो शरीर को ठीक रख सके । ४. आत्मा को हर्ष प्रदान करने वाला । ५. स्थगित । ६. ईश्वर की स्तुति । ७ वृत्ति । ८. धैर्य के कारण सभी काम सरल हो जाते हैं ।

यहाँ से रू ए सुख़न साहबे आलम साहब की तरफ़ है। जनाब रफ़अतमाब[1] मौलाई व मुर्शिदी तस्लीम[2] क़ुबूल करे और उस तहरीर से, जो अब मेरे पास भेजी है, मुझको शादाँ[3] और अपने बख़्त[4] और क़िस्मत पर नाज़ाँ[5] तसव्वुर फ़रमावें। सब समझा और सब मतालिब का जवाब लिखता हूँ। पहले अपना एक शेर कमाले गुस्ताख़ी को कारफर्मा[6] कर लिखता हूँ और ये नहीं लिखता कि ये शेर मैंने क्यों लिखा है। शेर ये है—

मरा बग़ैर ज़े यक जिन्स दर शुमारा वुर्द
फ़ुग़ाँ के नीस्त ज़ परवाना फ़र्क़े ता मगसश[7]

बहरहाल हज़रत को ये मालूम है कि मैं अहले ज़बान[8] का पैरो[9] और हिन्दियों में सिवाय अमीर ख़ुसरो देहलवी के सबका मुनकिर[10] हूँ। जब तक क़ुदमा[11] या मुताख़रीन[12] में–मिस्ल[13] सायब व कलीम व असीर व हज़ीं के कलाम में कोई लफ़्ज़ या तरकीब नहीं देख लेता उसको नज़्म और नस्र मे नही लिखता। जिन लोगों के मुहक़्क़िक़[14] होने पर इत्तिफ़ाक़ है जम्हूर[15] को, उनका हाल क्या गुज़ारिश करूँ ?

एक उनमें साहबे 'बुरहान कातै' हैं। अब इन दिनों मैं 'बुरहान क़ातै' देख रहा हूँ और उसके फ़हम की ग़लतियाँ निकाल रहा हूँ। अगर ज़ीस्त[16] बाक़ी है तो उन नुकात[17] को जमा करके उस नुस्ख़े[18] का नाम 'क़ातै बुरहान' रखूँगा।

---

१. उच्च पद प्राप्त। २. अभिवादन। ३. प्रसन्न। ४. भाग्य। ५. गर्वित। ६. प्रभावशाली। ७. मुझे सामान्य लोगों में सम्मिलित कर दिया गया। मैं इस बात पर रोता हूँ कि मक्खी और परवाने में अन्तर नहीं किया गया। ८. भाषाविद्। ९. अनुयायी। १०. अस्वीकार करने वाला। ११. प्राचीन (लेखक, कवि)। १२. पूर्ववर्ती लोग। १३. जैसे। १४. शोध करने वाला। १५. सर्वसाधारण। १६. जीवन। १७. तथ्य। १८. प्रति।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

कुजा बूद मंज़िल कुजा ता खत्म[1]

शेरे फ़िरदौसी मे 'अंगबीन व शहद' और शेरे उस्ताद में 'हिर्सव आज़' वाक़ई बादी उन्नज़र[2] में ज़ायद मालूम होता है। 'शीरे नाब' बेहतर है, लेकिन 'हिर्सव आज़' को क्या कीजिएगा? मै अर्ज़ करता हूँ कि वहाँ भी 'खश्म व आज़' है। हर्गिज़ 'हिर्स व आज़' नहीं है। हुकुमा[3] और सूफ़िया[4] क़ुव्वते ग़ज़बी और क़ुव्वते शहवी की ताहील[5] मे मेहनते करते है। क़ुव्वते ग़ज़बी की इस्लाह[6] से फ़ज़ीलत[7], शुजाअत[8], और क़ुव्वते शहवी की इस्लाह से फ़ज़ीलते इफ़्फ़त[9] हासिल है और ये मसला इल्मे अखलाक़[10] मे मुबर्हन[11] है। दवीदए मन हिर्सव आज़ बे माने महज़ उस्ताद को बदनाम किया। एक इस्म से दो मुसम्मा[12] तराशे। वाहदे हक़ीक़ी[13] का तस्निया[14] इससे अलावा। मर्द आरिफ़ हकीम ने क़ुवते शहवी की इस्लाह का ज़िक्र किया और क़ुव्वते ग़ज़बी का मज़कूर[15] भी न किया। मैंने खुद 'खश्म व आज़' देखा है और यही बजा है। शहद की जगह 'शीर' और 'हिर्स' की जगह खश्म दुरुस्त—मेरी राय आपकी राय के मुताबिक, मगर गोगदं[16] सुर्ख और पील[17] सफ़ेद में साकित[18] हूँ। ये तक़रीर, कि गोगर्द सुर्ख कामयाब और पील सफ़ेद नायब है, मेरे दिलनशीं न हुई। किब्रीते अहमर[19] और कीमिया[20] और अन्क़ा[21] इन सबका एक हुक्म है। नज़र इस क़ायदे पर लाल-सफेद बेहतर है और किब्रीते अहमर और पील सफ़ेद बेजोड़ है, जैसे अमीर खुसरो की अनमेलियाँ[22]।

---

१. मंजिल कहाँ थी और मैं कहाँ जा रहा हूँ। २. दृष्टिदोष। ३. चिन्तक। ४. सूफी साधक। ५. औचित्य। ६. सुधार। ७. बड़प्पन। ८. वीरता। ९. पवित्र बड़प्पन। १०. सदाचार शास्त्र। ११. प्रमाणित, असदिग्ध। १२. नाम रखने वाला। १३. वास्तविक एक वचन। १४. द्विवचन (अरबी में द्विवचन भी होता है)। १५. उल्लेख। १६. गंधक। १७. हाथी। १८ मौन। १९. लाल गन्धक। २०. रसायन। २१. एक काल्पनिक पक्षी, अलभ्य वस्तु। २२. पहेलियाँ।

एक क़ायदा और अर्ज़ करता हूँ, 'कम' का लफ़्ज़ अहले फ़ारसी[1] के मन्तिक़[2] में कहीं इफ़ादए मानी[3] सल्बे कुल्ली[4] भी करता है। जैसे—'कम आज़ार' यानी 'नियाज़ अरिन्दा' न ये कि 'कम आज़ारिन्दा' 'कम हिम्मता' यानी 'बेहिम्मता' बल्कि अन्दक का लफ़्ज़ भी इस तरह आता है जैसा कि मेसल्लकावन्दे नेमत[5] निज़ामी रहमतुल्लाह अलै[6] फ़रमाता है--

पसोपेश चूं आफ़ताबम यकेस्त
क़ुरोग़म फ़रा वां फ़रेब अन्दकेस्त[7]

यानी फ़रेब बिल्कुल नहीं, न ये कि कुछ है। कमयाब[8] और नायाब[9] एक चीज़ है। निज़ामी ने 'लाल सपेद' कहा है, किसी साद्दे तबह[10] ने उसको ग़लत समझ कर पील सपेद बना दिया है, 'अगबीन' व 'शहदनाब' शायद मिस्ले ग़म व अन्दोह[11] व मसर्रत[12] व फ़रहत[13] हो, या न हो, शीरेनाबा ही हो, बल्कि शीरनाब बेहतर है, लेकिन हिर्स व आज़ तो किसी तरह दुरुस्त नहीं। आरिफ़[14] का दावा नाक़िस[15] और लग़ो रहा जाता है। अगर ये क़बाहत[16] लाज़िम न आती तो भी हम हिर्स व आज को मुसल्लिम[17] न रखते, किस वास्ते कि ग़ुलाम का शुबा बकमाले वुजूहे ग़म व अन्दोह[18] व अद्ल[19] व दाद[20] का नज़ीर नहीं हो सकता। हाँ अंगबीन व शहद के जवाज़[21] में हम मुज़ायका[22] न करेंगे मगर शीरेनाब को उससे अच्छा समझेंगे शहर मेवे की हलावत[23] के वास्ते

---

१. फ़ारसी भाषी। २. बातचीत। ३. अर्थ (भाषा ये) की प्राप्ति। ४. सब कुछ अस्वीकार। ५. स्वामी। ६. ईश्वर उन पर दया करे। ७. मैं सूर्य के समान हूँ मेरा आगा-पीछा एक ही है। मुझ में प्रकाश है, बनावट या अन्धकार नहीं है। ८. दुर्लभ। ९. अलभ्य। १०. मनस्वी। ११. शोक। १२. प्रसन्नता। १३. हर्ष। १४. ज्ञानी। १५. त्रुटिपूर्ण। १६. त्रुटि। १७. प्रामाणिक। १८. दुःख और शोक के कारण। १९. न्याय। २०. न्याय, प्रशंसा। २१. औचित्य। २२. आपत्ति। २३. मिठास।

और शीर अफ़्ज़ाइशे लताफ़त[1] के वास्ते। 'हाशा' व 'हाशल्लाह' का जवाब आग़ाज़े तहरीर[2] में लिख चुका। आपके इस नज़ीर लिखने से उसके जवाज़ पर मेरा यकीन न बढ़ा। लो कश्फ़ल ग़िताऊलमा अज्दवत यकीनन इज्द तो यक़ीनन[3]।

नस्रे मुरज्जज़ के बाब में पीर व मुर्शिद को इतना ताम्मुल[4] क्यों है? ये जो नस्रें आपने लिखी हैं, सिवाय उस नस्र के, जिसको आगे लिखूंगा, ये तो सब मुसज्जा हैं। यानी पहले फ़िक्रे का हर लफ़्ज़ वज़न में मुआफ़िक़ है दूसरे फ़िक्रे के लफ़्ज़ से। नज़्म में यें सनत आ पड़े तो नज़्म को मुरस्सा कहेंगे और नस्र में बाक़ै हो तो नस्र को मुसज्जह कहते हैं वो नस्रे मुसज्जा की मिसाल हमको दें। जिन्हार जिन्हार[5] ये नस्र मुरज्जज नहीं, मुसज्जा है। हां ये नस्र मुरज्जज़ है—

साहबां मुशफ़्फ़ा शफ़ीक़े दिली ज़ैदुअल्ताफ़कमअली इलल अब्द, बादे तब्लीग़ बन्दगी व नियाज़। बर ज़मीर मुनीरे रोशन बाद[6]।

अगर वो नस्र, कि, जिसको मैंने मुसज्जा कहा है, मुरज्जज़ है तो उस कम्बख़्त नस्र का क्या नाम है? नहीं वो मुसज्जा है और ये मुरज्जज़ है। मैं तो बहुत मुख़्तसर व मुफ़ीद[7] लिख चुका हूँ। आप न मानें तो क्या करूं? वज़न न हो क़ाफ़िया हो वो मुक़फ़्फ़ा, वज़न न हो क़फ़िया हो वो मुक़फ़्फ़ा, वज़न न हो वो मुक़फ़्फ़ा वजन हो क़ाफ़िया न हो वो मुरज्जज़। अल्फ़ाज़ व फ़िक़्रतैन[8] वज़न

---

१. आनन्द का आधिक्य। २. लेखन का प्रारम्भ। ३. जब विश्वास अधिक हुआ तो मेरी भ्रान्ति दूर हो गई। ४. आशंका। ५. कदापि कदापि। ६. आप मुझ पर हृदय से प्रेम करते हैं। ईश्वर करे यह प्रेम प्रलय पर्यन्त बना रहे। अभिवादन पहुँचने के बाद निवेदन है, आपका अन्तःकरण अधिक प्रकाशमान हो। ७ संक्षिप्त और लाभकर। ८. दो वाक्य।

मे बराबर हो वो मुसज्जा। इस सनत[1] को बेशतर नस्रे मुक़फ़्फ़ा में सर्फ़[2] करते है और चाहो क़ाफ़िये का इल्तिज़ाम[3] न करो। ब हररंग मुल्ला[4] यही है। हज़रत ने नस्रे मुसज्जा को मुरज्जज़ कहाँ है। जवाब वही है कि अगर मुरज्जज़ ये है तो मुसज्जा किस नस्र को कहते है ? इससे ज़्यादा न मुझको इल्म, न यारा ए कलाम।

क़तील लखनवी और ग़यासुद्दीन मुल्ला ए मकतबी[5] रामपूरी की क़िस्मत कहाँ से लाऊँ कि तुम जैसा शख़्स मेरा मौतक़द[6] हो और मेरे क़ौल[7] की मोतमद[8] समझे। बादे इतमाम[9] ख़त की तहरीर के ख़्याल आया कि शायद किसी बात का जवाब रह न गया हो।

मैंने आपके ख़त को देखा और एक बात 'दस्तूरे शिगरफ़[10] की इबारत में नज़र आई।

मुरज्जज़ कलामीस्त मंज़ूर के वज़न दारद सज्जह नदारद[11]।

इस तारीफ़ को देखिये और नमून ए नस्र को देखिये, वो मौजूँ कहाँ है। 'जो वज़न दारद' उस पर सादिक़ आये ? वज़न बमानी[12] तक़्ती ए शेर मफ़्क़ूद[13]। 'सजा नदारद' ख़ुदा जाने ये बुज़ुर्ग सजा किसको कहता है। सजा हमवज़न[14] होना दो लफ़्ज़ों का फ़िक़्रतैन[15] में या मिस्रैन[16] में, सो इस नस्र में मौजूद है। मौजूद को मफ़्क़ूद[17] और मफ़्क़ूद को मौजूद लिखा है और फिर कलाम उसका मक़बूल[18] है।

---

१. अलंकार। २. प्रयोग। ३. अनिवार्यता। ४. तीसरा हिस्सा। ५. पाठशाला का अध्यापक। ६. भक्त। ७. कथन। ८. विश्वस्त। ५. समाप्ति के पश्चात्। १०. अच्छा नियम। ११. जिसमें लय हो, किन्तु अन्त्यानुप्रास न हो, उसे मुरज्जज कहते हैं। १२. छन्द के गण, मात्रा की व्यवस्था। १३. लुप्त। १४. समान मात्रा (छन्द)। १५. दो वाक्य। १६. दो चरण। १७. लुप्त। १८. लोकप्रिय।

अल्लाह्, अल्लाह्, मुल्ला ग़यासुद्दीन लिखता है, पस 'मुरज्जज नस्से बाशद के कल्माते फ़िक्रतैन अक्सर जाहा ए हमवज़न वाशद, दर तक़ाबुले यकदीगर,बदूं रिआयत सजा'। ख़ुदा के वास्ते सजा तो उसी को कहते हैं कि कल्मात फ़िक्रतैन या मिस्रैन हमवज़न यकदीगर हों, सो इस नस्र मे मौजूद । 'बदूं रिआयत सजा' के क्या मानी ? मगर ये दोनों साहब वज़न को बराबर होना कल्मात का समझते हैं और सजा तक़्फ़ी ए शेर को कहते हैं । इस अक़ीदे की रकाकत[1] अज़हर मिनश्शम्स[2] है, 'साहबे शिगरफ़' का कलाम नस्र[3] और मौलवी ग़यासुद्दीन का कलाम हदीस नही है, आप भी ग़ौर फ़रमाइये और इन्साफ़ कीजिये ।

८

(१८५८ ई०)

शफीके मुकर्रम[4] मज़हरे लुत्फ़ व करम[5] जनाब चौधरी साहब की ख़िदमत में बाद सलाम ये अर्ज़ करता हूँ कि आपका मेहरबानीनामा आया, मेरा रज व तशवीश[6] मिटाया । मेरी ख़िदमत मक़बूल[7] हुई । ख़ुशी हुसूल हुई । मीर इमदादअली शाह को मेरी दुआ कहना, उनका बाप मेरा बड़ा यार था । मेरी तरफ़ से ख़ातिर जमा कर दीजिएगा । अब सबील[8] अच्छी निकल आई, चौधरी साहब के ज़रिये से जो कुछ मुझको भेजना होगा, भिजवाऊँगा । जनाब चौधरी साहब आज का मेरा ख़त कास ए गदाई[9] है, यानी

---

१. अधमता, अपमान । २. सूर्य से अधिक उजागर । ३. क़ुरान की ऐसी सूक्तियाँ जिनका अर्थ अस्पष्ट है, असन्दिग्ध कथन । ४. दयालु मित्र । ५. आनन्द और कृपा के उद्भवस्थल । ६. आशंका, दुविधा । ७. स्वीकृत, प्रिय । ८. साधन । ९. भिक्षा-पात्र ।

तुमसे कुछ माँगता हूँ। तफ़सील ये कि बाक़रअली देहलवी के मतबे[1] में से एक अख़बार हर महीने में चार बार निकला करता था, मुसम्मा[2] बं 'देहली उर्दू अख़बार'। बाज़ अशख़ास[3] सनीने माज़िया[4] के अख़बार जमा कर रखा करते हैं। अगर अ हयानन[5] आपके या किसी आपके दोस्त के 'हाँ जमा होते चले आये हों, तो अक्तूबर १८३७ ई० से दो-चार महीने के आगे के औराक़[6] देखे जायें। जिसमें बहादुरशाह की तख़्तनशीनी का ज़िक्र और मियाँ ज़ौक़ के दो सिक्के उनके नाम के कहकर नज़्र करने का ज़िक्र मुंदरिज[7] हो। बेतकल्लुफ़ वो अख़बार छापे का अस्ल बजिन्सही मेरे पास भेज दीजिये। आपको मालूम रहे कि अक्तूबर की सातवीं-आठवी तारीख़ १८३७ ई० मे ये तख़्त पर बैठे हैं और ज़ौक़ ने उस महीने के बाद सिक्के कहकर गुज़राने हैं। एहतियातन पाँच महीने तक के अख़बार देख लिये जाये। यहाँ तक मेरी तरफ़ से इबराम[8] है कि अगर बमिस्ल किसी और शहर में कोई आपका दोस्त जामें[9] हो और आपको उस पर इल्म हो तो वहाँ से मँगवा भेजिये। वस्सलाम माल इक्राम।

८

(१८५८ ई०)

शफ़ीक़ मेरे, इनायत फ़र्मा मेरे,

तुम्हारी मेहरबानी का शुक्र बजा लाता हूँ। निहायत सई[10] ये थी कि आपकी तरफ़ से ज़ुहूर में आई। मैंने मुहतमिमे मतबा[11] 'जामे जहाँनुमा' को

---

१. छापाख़ाना। २. नामधेय। ३. व्यक्ति (ब० व०)। ४. गत वर्ष के। ५. संयोगवश। ६. पृष्ठ (ब० व०)। ७. लिखित। ८. कष्ट। ९. संचय करने वाला। १०. प्रयत्न। ११. छापाख़ाने का प्रबन्धक।

लिख भेजा है और तर्के सई[1] किया है। आप भी फ़िक्र न कीजिये। अगर कहीं से आपके पास आ जाये तो मुझको भेज दीजिये, मेरे पास आएगा तो मैं तुमको इत्तिला दे दूँगा। इनायते इलाही[2] का कौन शख़्स मुश्ताक़[3] न होगा? इसकी पुर्सिश ज़ायद। मैं ख़िदमतगुज़ारी को हाजिर हूँ। वो जब चाहें अपना कलाम भेज दे। मेरा सलाम और ये पयाम कह दीजिएगा।

साहब तुमने हमारे पीर व मुर्शिद को हम पर ख़फ़ा कर दिया है। भला वो ख़त न लिखे, न लिखे, कभी तुमको फ़रमावें कि ग़ालिब को मेरी दुआ लिख भेजना। बहरहाल मेरा सलामे नियाज़ अर्ज़ कीजिये और उनके मिजाजे मुबारक[4] की ख़ैर व आफ़ियत[5] लिखिये और ये लिखिये कि अगर ख़ुदा न ख़ास्ता[6] वो मुझसे नाख़ुश हैं तो नाख़ुशी की वजह क्या है? अपने चचा साहब की ख़िदमत मे सलाम पहुँचाइएगा और मौलाना अता को सलामे शौक़ कहिएगा।

१०

(१८५८ ई०)

मेरे शफ़ीक़ को मेरा सलाम पहुँचे। दोनो मुख़म्मस[7] बाद इस्लाह पहुँचते हैं। मंशा ए इस्लाह[8] समझ लीजिये। सैयद आली नसब[9] सरवरे वाला[10] हसबी ये इफ़्तिताहे कलाम[11] और इब्तिदाए ख़िताब[12] के दरख़ोर[13] न था। मिस्रा ए सालिस[14] उसकी जगह रख दिया गया। दूसरे बन्द की तख़मीस[15] दो तरह पर

---

१. प्रयत्न छोड़ देना। २. ईश्वर की दया। ३. इच्छुक। ४. स्वास्थ्य। ५. कुशलता। ६. ईश्वर न चाहे। ७. पाँच चरण की कविता। ८. संशोधन का तात्पर्य। ९. कुलीन। १०. श्रेष्ठ सरदार। ११. कथन का प्रारम्भ। १२. सम्बोधन का प्रारम्भ। १३. योग्य। १४. तीसरा चरण। १५. पाँच भागों में विभाजन।

है, दोनों बे ऐब हैं और मजीद[1] लुत्फ़ किसी में नहीं। जिन मिस्रों को चाहो रहने दो।

'गुज़श्त अज अफ़लाक' व 'आज अफ़लाक गुज़िश्त' एक फ़ारसी रहा और दूसरा हिन्दी, हज़रत ने दोनों फारसी में लिखे थे। नदायम[2] फेल पर मुरत्तब हुआ करती है, तर्जुमा उसका पशेमानी[3]। हज़रत यूसुफ को नदामत क्यों हो? मगर खिजालत[4] इसका तर्जुमा है शर्मिन्दगी। आप ग़ौर कीजिये कि नदामत और खिजालत में कितना फर्क़ है। जहाँ आपने अर्क़रेज[5] नदामत लिखा, वो महल खिजालत का था, आपने नदामत क्यों लिखा? बहरहाल वो मिस्रा तो बदल गया लेकिन इत्तिला ज़रूर थी।

'तरह' बफ़तह[6] अव्वल व सुकून सानी[7] बमानी फरेब और तस्वीर के खाके को भी कहते हैं और बमानी आसाइशे दुनिया[8] भी मजाज़[9] है। मुरादिफ़े तर्ज़[10] व रविश भी 'तरह' है, बफ़तहतैन[11]। इसका तफर्क़ा[12] मंजूर रहा करे। 'नसीम' तखल्लुस अच्छा है। अगर कोई ये कहे कि 'नसीम' मुअन्नस[13] है, जवाब इसका ये है कि 'जुरत' और 'बहशत' और ऐसे बहुत से तखल्लुस हैं कि वो मुअन्नस हैं, बाई हमा[14] अगर बदला चाहिए तो इसका हमवज़न 'सलाम' व 'सलीम' और 'खयाल' भी है, इसमें से जो पसन्द आये।

आपके अम्मेआली मिक़दार[15] और आपके बुज़ुर्ग आमोज़गार[16] को मेरा सलाम पहुँचे।

---

१. अतिरिक्त। २. ग्लानि। ३. ग्लानि। ४. लज्जा। ५. लज्जित करने वाला, दास। ६. अकार युक्त। ७. दूसरे का हलन्त होना। ८. संसार की समृद्धि। ९. लाक्षणिक। १०. पर्यायवाची। ११. दो अकार युक्त। १२. अन्तर। १३. स्त्रीलिंगवाची। १४. तथापि। १५. श्रेष्ठ चाचा। १६. गुरु।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

यहाँ से रू ए सुखन हज़रत पीर व मुर्शिद साहब आलम की तरफ़ है। पीर व मुर्शिद की ख़िदमत मे सलाम और मुर्शिदज़ादों[1] की जनाब मे दुआ ए तूले उम्र व दवामे दौलत[2] पहुँचा कर ये अर्ज़ करता हूँ कि वाक़ई हज़रत शाह आलम का इनायतनामा आया था और मैं इसका जवाब भेज चुका हूँ। अजब है कि हज़रत की तहरीर मे जहाँ उनके ख़त का ज़िक्र था, वहाँ मेरे ख़त का मज़कूर[3] न था और इन सुतूर[4] की तहरीर के बाद अपने ख़त का पहुँचना गुमान नही कर सकता। मैं इसमे उनको यहाँ का हाल लिख चुका हूँ।

'पंज आहंग' आपने ली, दीवाने फ़ारसी आप के पास है, मगर यो समझिये कि ये दोनों नातमाम[5] है और अब कहीं से उसका इतमाम[6] मुमकिन नहीं। खैर, जो कुछ है ग़नीमत है। 'दस्तम्बू' मैंने नज़्र की है, 'मेहरेनीम रोज़' मालूम नहीं कि आपके पास है या नही। खुलासा ये कि शेर को मुझसे और मुझको शेर से हगिंज़ निस्बत[7] बाक़ी नहीं रही। इस फ़ितना व फ़साद के बाद एक क़सीदा जो दस्तम्बू में है और एक क़सीदा नवाब लफ़्टंट गवर्नर बहादुर ग़र्ब ब शुमाल[8] की मदह[9] में और दो बैत का एक क़ता और एक रुबाई। इस नज़्म के सिवाय अगर कुछ लिखा हो तो मुझसे कसम लीजिये।

क़ता—ब आदम जन ब शैताँ तौक़े लानत
सुपुर्दन्द अज़ रहे तकरीमो तज़लील

---

१. गुरुपुत्र। २. दीर्घायु और स्थायी सम्पत्ति का आशीर्वाद। ३. उल्लेख। ४. पंक्तियाँ। ५. अपूर्ण। ६. समाप्ति। ७. सम्बन्ध। ८. पश्चिमोत्तर। ९. प्रशंसा।

व लेकिन दरअसीरी तौक़े आदम
गिराँ तर आमदज़ तौक़े अज़ाज़ील[1]
रूबाई--दुनिया हीचस्तो शादी व ग़म हीचस्त
हंगामे सूरो बज़्मे मातम हीचस्त
रू ए दिल बे यके देह के दो आलम हीचस्त
ईं नीज़ फ़रोगुज़ार के ईं हम हीचस्त[2]

इस वामांदगी[3] के दिनों मे छापे की 'बुरहान क़ातें' मेरे पास थी, उसको मैं देखा करता था। हज़ारहा लुग़त[4] ग़लत, हजारहा बयान लग़ो[5], इबारत पोच[6], इशारात[7] पा दर हवा[8]। मैंने सौ दो सौ लुग़त के अग़लात[9] लिखकर एक मजमूआ बनाया है और 'क़ातें बुरहान' उसका नाम रखा है। छपवाने का मक़दूर[10] न था मसविदा कातिब से साफ करवा लिया है, अगर कहो तो बसबीले मुस्तआर[11] भेज दूं। तुम और चौधरी साहब और जो और

---

१. ईश्वर ने आदम और शैतान दोनों के गले मे तौक़ डाला। शैतान का तौक अपमान का था और आदम के गले की तौक़ थी 'हव्वा' उसकी पत्नी दोनों को उनके अनुसार आज्ञापालन और अपमान का काम सौंपा गया किन्तु आदम का तौक़ शैतान के तौक़ से भारी सिद्ध हुआ। २. ससार व्यर्थ, प्रसन्नता व्यर्थ, दुःख व्यर्थ, हर्ष के समारोह, खुशी की गोष्ठियाँ और शोक व्यर्थ है। उस एक की ओर आकर्षित हो, लोक-परलोक दोनों नाशमान् हैं। संसार के समस्त कार्यों को छोड़, ये सब कुछ व्यर्थ है। ३. दुर्बलता, विवशता। ४. शब्द। ५. असत्य। ६. व्यर्थ। ७. संकेत। ८. निराधार। ९. अशुद्धियाँ। १०. सामर्थ्य। ११. थोड़े दिनों के लिए माँगी हुई चीज के रूप में।

सुख़नशनास[1] और मुन्सिफ़[2] हों वो उसको देखें और फिर मेरी किताब मेरे पास पहुँच जाये।

११

जनाबे आली, 'छा छा' तर्जुमए हिन्दी है, एक बार 'छा' किफ़ायत करता है। 'अनवा अनवा' हमारी आपकी बोलचाल मे है, लेकिन तहरीर मे दुरुस्त नही। 'चमन पुर फ़ज़ा' (फ़ज़ा मे ज्वाद) को 'चमन पुर फ़िज़ा' (फ़िज़ा ज़े से) जा ए हव्वज़[3] से क्यों लिखा ? खिताब वाहद ग़ायब[4] फ़क़त 'शीन' (श) है न 'अश', हाँ अगर आख़िर लफ़्ज मबनी[5] हा ए इन्हाई[6] हरकत पर हो, मिस्ल ग़म्जह् व 'चश्मह् व ख़ानह् व दानह् तो उसको यो लिखते हैं--चश्म इश, ग़म्जाइश ख़ानाइश दानाइश और बाक़ी और सब अल्फ़ाज़ का हर्फ़। आख़िर शीन से मिल जाता है। खिताबे वाहिद हाज़िर[7], खिताबे वाहिद ग़ायब[8], खिताबे मुतकल्लम[9] त, श, म है। 'अ' को यहाँ क्या दख़ल ? और वो जो दख़नी बोहरा यनी जामें[10] 'बुरहान क़ातें' अत, अश अम लिखता है, ग़लत करता है। जहाँ तुमने बाद अपने नाम के ये अशार लिखे है—

परीशाँतर ज़ख़ीशम दास्तानेस्त[11]

वहाँ रब्ते कलाम[12] जाता रहा था। एक जुम्ला फ़ाज़िल[13] कर दिया है।

---

१. कविता के गुणज्ञ। २. न्यायी। ३. ज़े। ४. अन्य पुरुष एकवचन का सम्बोधन। ५. निर्भर। ६. सूचक 'हा'। ७. द्वितीय पुरुष का एकवचन। ८. अन्य पुरुष का एकवचन। ९. प्रथम पुरुष। १०. संकलनकर्त्ता। ११. मैं स्वजनों से बहुत परेशान हूँ। इसकी कहानी बड़ी है। १२. वाक्य-प्रवाह। १३. अतिरिक्त।

यानी बदीं अशार ज़माज़मा सरास्त। ये खबर उस काफ़े तौसीफ़ी[1] की है। और आगे जो नस्र है, उसका फ़ाइल[2] वही मुसन्नफ़[3] है।

पीर व मुर्शिद साहब आलम साहब की खिदमते आली मे मेरा सलामे मसनून अर्ज कीजिएगा और ये अर्ज़ कीजिएगा कि आपके मशूरे अतूफत[4] का जवाब बइन्फिराद[5] आपकी खिदमत मे पहुँचेगा।

१२

मेरे शफ़ीक़े दिली[6] को मेरा सलाम पहुँचे। कल इशा[7] का पार्सल पहुँचा और आज खत। इंशा का नाम बहारिस्तान और आपका तखल्लुस 'सुरूर' अच्छा नाम है। कते का वादा नहीं करता। किस वास्ते कि अगर बेवादा पहुँच जायेगा तो लुत्फ़ ज्यादा देगा और न पहुँचेगा तो पहले शिकायत[8] न होगा।

रफ़ए फ़ितना व फ़साद और बिलाद[9] मे मुसल्लम[10]। यहाँ कोई तरह आसाइश[11] की नहीं है। अहले देहली उमूमन बुरे ठहर गये। ये दाग़ उनकी जबीने हाल[12] से मिट नहीं सकता। मैं अमवात[13] मे हूँ, मुर्दा शेर क्या कहेगा? ग़ज़ल का ढंग भूल गया। माशूक किसको क़रार दूँ जो गज़ल की रविश[14] ज़मीर[15] मे आवे? रहा क़सीदा ममदूह[16] कौन है? हाय अनवरी गोया मेरी ज़बान से कहता है—

ऐ दरेग़ा नीस्त ममदूहे सज़ावारे मदीह
ऐ दरेग़ा नीस्त माशूक़े सज़ावारे ग़ज़ल[17]

---

१. विशेषणवाची 'क'। २. कर्ताकारक। ३. लेखक। ४. कृपापूर्ण आदेश। ५. एक एकशः। ६. हार्दिक मित्र। ७. लेख। ८. शिकायत की जगह। ९. नगर। १०. सम्पूर्ण। ११. सुख। १२. माथा। १३. मृत्यु (ब०व०)। १४. ढंग। १५. अन्तःकरण। १६. प्रशंस्य। १७. इस बात का दुःख है कि मेरे लिए कोई प्रशंस्य व्यक्ति नहीं है। कोई ऐसी प्रेमिका नही है जो ग़ज़ल के उपयुक्त हो।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

गवर्नमेंट के दरबार मे हमेशा से मेरी तरफ़ से क़सीदा नज़्र गुज़रता है, अशर्फ़ियाँ नहीं। और खिलत रियासते दूदमानी[1] का सातपार्चा और तीन रक़म जीगा[2] व सरपेच व मालाए मरवारीद[3] मुझको मिला करता है। अब नवाब गवर्नर जनरल बहादुर यहाँ आते है। दरबार मे बुलाये जाने की तवक़्क़ो नहीं। फिर किस दिल से क़सीदा लिखूँ?

सनाअ़ते शेर[4] आज़ा व जवारेह[5] का काम नहीं, दिल चाहिए, दिमाग़ चाहिये, ज़ौक़ चाहिए, उमग चाहिए। ये सामान कहाँ से लाऊँ जो शेर कहूँ? चौसठ बरस की उम्र व वलवलए शबाब[6] कहाँ? रिआयते फ़न[7] इसके असबाब कहाँ? इन्नालिल्लाह व इन्नाइलहे राजऊन।

१३

मेरे शफ़ीके दिली चौधरी अब्दुलग़फ़ूर साहब को ख़ुदा सलामत रखे। देखो, मेरे हवास का अब ये आलम है कि तुम्हारे नाम की जगह तुम्हारे चचा साहब का नाम लिखा था। इसी तरह साबिक़ के खत मे सरनामे पर ये लिखा होगा—

बहार पेशे जवाने के ग़ालिबश नामन्द
कुनूं बे बी के च ख़ूंमी चकदज़ हर नफ़सश[8]

जो ख़त के आपके ख़ुतूत के जवाब मे आये, उनके भेजने की क्या हाजत थी। आपकी सई[9] और अपनी नाकामी पहले से मेरे दिलनशी और ख़ातिर-निशान है, जैसा कि कोई उस्ताद कहता है—

---

१. वंशपरम्परागत २. पगड़ी में बाँधने का रत्नजटित आभूषण। ३. मुक्तामाला। ४. काव्य-कला। ५. शरीर के अंग-प्रत्यग। ६. यौवन की उमंग। ७. कला का ध्यान। ८. वह नवयुवक, जिसका नाम ग़ालिब है। देखिये, अब उसकी प्रत्येक साँस से किस प्रकार रक्त बह रहा है। ९. प्रयत्न।

तिही दस्ताने क़िस्मत रा चे सूद अज़ रहबरे कामिल
के ख़िज़्र अज़ आबे हैवाँ तिश्ना मी आरद सिकन्दर रा[1]

वो अख़बार न कहीं से हाथ आया और न आयेगा। मैं अपने ख़ुदा से उम्मीदवार हूँ कि मेरा काम बग़ैर इसके निकल जाएगा।

बन्दा पर्वर[2], मेरा कलाम—क्या नज़्म क्या नस्र, क्या उर्दू, क्या फ़ारसी—कभी किसी अहद में मेरे पास फ़राहम नहीं हुआ। दो-चार दोस्तों को इसका इल्तिज़ाम[3] था कि वो मसविदात मुझसे लेकर जमा कर लिया करते थे, सो उनके लाखों रुपये के घर लुट गये। जिसमें हज़ारों रुपये के किताबख़ाने भी गये। इसमें वो मजमूआ हाए परेशान भी ग़ारत हुए। मैं ख़ुद इस मसनवी के वास्ते ख़ूँ दर जिगर हूँ। हाए क्या चीज़ थी, पार्सल में ख़ुतूत भेजने महले अंदेशा है, ख़ुदा ने बचाया। चूंकि अब वो ख़त आपके कुछ काम के न समझा, अज़ राहे एहतियात[4] पार्सल में से निकाल लिये।

१४

जनाब चौधरी साहब की याद आवरी[5] और मेहरगुस्तरी[6] का शुक्र बजा लाता हूँ। आपका ख़त मय क़सीदा व मसनवी पहुँचा। मसनवी को जुदागाना बतरीके पम्फ़लेट पाकिट भेजता हूँ और ये ख़त जुदागाना इर्साल करता हूँ, लिफ़ाफ़ा इसका भी आपके नाम का है। आपके जवाब का माजिरा और सुबह को इधर का क़स्द[7] और फिर अपने चचा साहब के कहने से नज़र ताबिस्ताँ[8] पर इस अज़्म[9] का मुल्तवी रखना मालूम हुआ। आपके चचा साहब ने

---

१. अभागों के लिए अच्छा से अच्छा पथप्रदर्शक निरर्थक है। ख़िज़्र सिकन्दर को अमृत पिलाने के लिये ले गया किन्तु वह वहाँ से प्यासा ही आया। २. सेवकों के पालनकर्त्ता। ३. अनिवार्यता। ४. सावधानी के लिए। ५. स्मरण। ६. दयाशीलता। ७. विचार। ८. ग्रीष्म ऋतु। ९. विचार।

करामात की कि जो आपको मना किया। डाक की सवारी पर अगर आप इस शहर मे मेरे मकान पर आ जाते तो मुमकिन था मगर रहना शहर मे बे हुमूले इजाजते हाकिम एहतिमाले[1] जरर रखता है। अगर खबर न हो तो न हो, अगर खबर हो जाये तो अलबत्ता क़वाहत है। ज़िन्हार[2] कभी ये गुमान न कीजिएगा कि दिल्ली की अमलदारी मेरठ और आगरा और बिलादे शर्किया[3] की मिस्ल है, ये पजाब इहाते मे शामिल है। न क़ानून, न आईन। जिस हाकिम की जो राय मे आवे, वो वैसा ही करे। बहरहाल—

ऐ वाए ज़े महरूमीए दीदार दिगर हीच[4]

इशा अल्लाह् अल अज़ीम[5], दो-तीन महीने मे यहाँ भी सूरत अमन व आमान की हो जाएगी, मगर मेरी आरज़ू ब इस्तेफ़ा इस सूरत मे भी बर न आएगी। मै ये ताके हुए हूँ कि मेरी और तुम्हारी मुलाक़ात इस तरह से हो कि हम तुम हों, और हज़रत साहबे हों और बाहम हर्फ़ व हिकायत[6] करे। अगर ज़माना मेरी खाहिश के मुआफ़िक़ नक़्श[7] क़बूल करता है तो मै मारहरा को आता हूँ। हज़रत पीर व मुर्शिद का इश्तियाक़ और इसी जलसे मे तुम्हारे दीदार का शौक ऐसा नही है कि मुझको आराम से बैठा रहने देगा।

साहब, ये मसनवी तो मेरे वास्ते एक मर्सिया हो गई है। इस बुजुर्गवार के जिगर मे क्या-क्या घाव पड़े होंगे तब ये तराविशे खूंनाबा[8] ज़ुहूर मे आई होगी। मज़ा ये है कि उनवाने[9] बयान से हक़ब जानिब उन्ही के मालूम होता है। चूंकि अस्ल काग़ज़ मेरी नज़र मे नही और हक़ीक़ते हाल मुझ पर मजहूल[10] है। इस वास्ते अजाम व आग़ाज़[11], अन्दाज़ा व अन्दाज़ कुछ नही समझा।

---

१. आवश्यक। २. कदापि। ३. पूरब के नगर। ४. तुम्हारे दर्शन न होने के कारण मुझे दु:ख है और सब व्यर्थ है। ५. ईश्वर महान् है। ६. बातचीत। ७. प्रभाव। ८. खून के आसुओं की वर्षा। ९. शीर्षक। १०. अज्ञात। ११. इति और प्रारम्भ।

हक व इस्लाह[1] को आप बनज़रे इमान[2] मुलाहिज़ा फ़रमायें। मैंने बहस्बे दस्तूर हर जगह मन्शाए इस्लाह[3] लिख दिया है। शेख साहब से मेरा सलाम कहिएगा और कहिएगा कि क्या करूँ दूर हूं, माज़ूर हूँ। मदद नही कर सकता, इआनत[4] के मरासिमे[5] तक़दीम[6] को नही पहुंचा सकता। खुदा तुम्हारा निगहबान[7] रहे। वस्सलाम।

१५

(अप्रैल, १८६० ई०)

जनाबे आली,

आपका तफ़क्कुदनामा[8] मरक़ूमए याज़दहुम शाबान[9] (१२७६ हि०) मुताबिक़ पंजुम मार्च (१८६१ ई०) बकंदे रोज़े दो शम्बा पहुंचा। पहले तो इन तारीखों के हिसाब से ततावुक[10] मे मैं उलझा, फिर खत के पहुंचने से बहुत खुश हुआ। डाक क्या है, खाक है। खैर, उधर पढ़ा, इधर जवाब लिखा। खुदा करे ये मेरा खत जल्द पहुँचे वर्ना ये आपको खयाल होगा कि ग़ालिब ने हमारे खत का जवाब न लिखा।

हक़ीक़त मेरी मुजमिलन[11] ये है कि राह व रस्म मुरासिलत[12] हुक्कामे आली मुक़ाम[13] बदस्तूर जारी हो गई है। नवाब लेफ़्टट गवर्नर बहादुर ग़र्ब व शुमाल[14] को नुस्खए 'दस्तम्बू' बसबीले डाक भेजा था। उसका खते फ़ारसी

---

१. सशोधन। २. गहरी दृष्टि से। ३. सशोधन का तात्पर्य। ४. सहायता। ५. रीति-रिवाज। ६. प्रामुख्य। ७. रक्षक। ८. आदेश-पत्र। ९. ग्यारहवी शाबान का लिखा हुआ। १०. साम्य। ११. सम्पूर्णतया। १२. पत्राचार। १३. स्थानीय बड़े अधिकारियों से। १४. पश्चिमोत्तर।

मुशइरे तहसीने इबारत[1] व क़ुबूले सिद्क़े इरादत व मवद्दत[2] बसबीले डाक आ गया। फिर क़सीदा बहारिया तहनियत[3] व मदहत[4] मे भेजा। उसकी रसीद आ गई। वही 'खान साहब बिसियारे मेहरबाने दोस्तॉ' अलक़ाब[5] और कागज़ अफ़शानी[6]। अर्ज़ॉ बाद[7] एक क़सीदा जनाब राबर्ट मिटगुमरी साहब लफ़्टट गवर्नर बहादुर क़लम रूवे पजाब[8] की मदह मे बतवस्सुत[9] साहबे कमिश्नर बहादुर देहली गया, उसके जवाब मे भी खुशनूदीनामा[10] बतवस्सुत कमिश्नर बहादुर मुझको आ गया। पिन्शन अभी तक मुझको नही मिली। जब मिलेगी हज़रत को इत्तिला दी जाएगी।

पीर व मुर्शिद आलिम[11] है और मैं जाहिल[12] हूँ। उनके तस्लीम[13] न करने को मैने तस्लीम किया और फिर तस्लीम[14] बजा लाया। ऐ हज़रत, जनाब मख़दूम मुकर्रम चौधरी गुलामरसूल साहब की खिदमत मे उन्ही अल्फ़ाज़ मे रस्मे मुबारकबाद अदा की गई थी। न इबारत आराई[15], न तबा आज़माई। कुछ अजब नही कि वो खत भी मई-जून में आपको पहुँच जाये। आपका भी तो मार्च का खत मुझको अब आखिर अप्रैल मे पहुँचा है।

जनाब शेख साहब क्यों मुझको महजूब[16] करते है? उस बाब मे इससे ज्यादा अर्ज़ नहीं कर सकता कि इफ़ादा[17] मुश्तरिक[18] है। क़सीदा व मसनवी भेज दीजिये। लुत्फ़[19] उठाऊँगा और जो कुछ मेरे खयाल मे आएगा बेतकल्लुफ़ अर्ज़ करूँगा। मेरा सलाम कहिये और मसनवी और कसीदा उनसे लेकर जल्द भेज दीजिये। अपने अम्मे आली मिक़दार[20] की खिदमत मे मेरा सलाम

---

१. लेखन की प्रशसासूचक। २. मित्रता और शुभ भावनाओ की स्वीकृति का सूचक। ३. बधाई। ४. प्रशसा। ५. विरद। ६. शुभ कागज। ७. इसके पश्चात्। ८. पंजाब-प्रदेश। ९. द्वारा। १०. प्रसन्नता का पत्र। ११. ज्ञानी। १२. निरक्षर। १३. स्वीकार। १४. अभिवादन। १५. भाषा का अलकरण। १६. लज्जित। १७. लाभ। १८. साझे का। १९. आनन्द। २०. प्रतिष्ठित चाचा।

पहुंचाइये और कहिये कि हज़रत ख़ुलासए मकतूबे साबिक़[1] यही अल्फ़ाज़ हिन्दी थे। शायद कुछ तग़य्युर[2] बिल मुशदिफ़[3] हो तो हो। ये शादी बसद हज़ार[4] मसर्रत आपको मुबारक हो और इनकी औलाद देखनी और इसी तरह उनकी शादी करनी नसीब हो। फ़ैज़अलीख़ाँ साहब को मेरा सलाम पहुँचे। मैं भी आपकी मुलाक़ात का मुश्ताक़ और आपका मद्दाह[5] रहूँगा। ख़त का लिफ़ाफ़ा इस ख़त में मलफ़ूफ़ करके भेजता हूँ। ये आज पहुँचा और आज ही मैंने उसका जवाब लिखा। कातिब वहीं है जो लिफ़ाफ़ए मलफ़ूफ़ा का मकतूब अलैं[6] है।

१६

(१८६० ई०)

मेरे शफ़ीक चौधरी अब्दुलग़फ़ूर साहब अपने ख़त और क़सीदा भेजने का मुझको शुक्र गुज़ार[7] और क़सीद ए साबिक़[8] की अब तक इस्लाह न पाने से शर्मसार[9] तसव्वुर फ़रमाये और इन दोनों क़सीदों के बाहम[10] पहुँचने का इन्तिज़ार करे।

नवीदे वस्ल वयम मी देहद सितारा शनास
न कर्दा ज़र्फ निगाहे मगर दर अख़्तरे मन[11]

---

१. पिछले पत्र के विवरण के अनुसार। २. भ्रम। ३. एकार्थी। ४. सैकड़ों हजार। ५. प्रशंसक। ६. लिखने वाला। ७. आभारी। ८. पहले का क़सीदा। ९. लज्जित। १०. एक साथ। ११. ज्योतिषियों ने यह बताया कि मुझे प्रेमिका मिलेगी, किन्तु उन्होंने भाग्य के नक्षत्रों का गम्भीरता से अवलोकन नहीं किया (मैं इतना अभागा हूँ कि मुझे प्रेमिका के दर्शन नहीं होंगे।)

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

तहक़ीक़, कि, अब रू ए सुख़न जनाब फ़ैज़ निसाब[1] जामे मदारिज[2] जमाउल जमा[3], बज्मे वहदत[4] के फ़र[5] व जिन्दा शमा[6], मुस्तगर्क़[7] मुशाहिदए शाहिदे ज़ात[8], हज़रत साहबे आलम साहब कुदसी सिफ़ात की तरफ है और ये शेरे इफ्तिताहे कलाम[9] है।

पहले कुछ बाते, कि, बादी उन्नज़र[10] में खारिज अज़ मबहस[11] मालूम होंगी, लिखी जाती है। मै पाँच बरस का था कि मेरा बाप मरा, नौ बरस का था कि चचा मरा। उसकी जागीर के एवज मेरी और मेरे शुरका ए हक़ीक़ी[12] के वास्ते, शामिल जागीर नवाब अहमदबख़्शखाँ दस हज़ार रुपये साल मुक़र्रर हुए। उन्होंने न दिये, मगर तीन हजार रुपये साल। उसमें से खास मेरी जात का हिस्सा साढे सात सौ रुपये साल। मैंने सरकार अंग्रेज़ी में ये गबन जाहिर किया। कोल बर्क साहब बहादुर रेज़ीडेण्ट देहली और अस्तरलंग साहब बहादुर सेक्रेतर गवर्नमेंट कलकत्ता मुत्तफ़िक़[13] हुए मेरा हक दिलाने पर। रेज़ीडेंट माज़ूल[14] हो गये, सेक्रेतर गवर्नमेंट बमर्ग नागाह[15] मर गये। बाद एक जमाने के बादशाह देहली ने पचास रुपये महीना मुक़र्रर किया। उनके वलीअहद[16] ने चार सौ रुपये साल। वलीअहद इस तक़र्रुर के दो बरस बाद मर गये। वाजिदअलीशाह बादशाह अवध की सरकार से बसिला मदह गुस्तरी[17] पान सौ रुपये साल

---

१. कल्याण के आधार। २. उच्च-पदों के अधिकारी। ३. बहुवचन का बहुवचन। ४. ईश्वर की एकता की सभा। ५. ज्योति। ६. दीपक। ७. मग्न। ८. उत्तम कुल के साक्षी। ९. रचना का पहला शेर। १०. सरसरी तौर पर। ११. विवाद के बाहर, विवाद के अयोग्य। १२. असली साझेदार। १३. सहमत। १४. विपरीत। १५. आकस्मिक मृत्यु से। १६. युवराज-राजकुमार फ़तहउल मुल्क, मृत्यु १० जुलाई १८५६ ई०। बहादुरशाह के पुत्रों। १७. प्रशंसा के फलस्वरूप।

मुक़र्रर हुए। वो भी दो बरस से ज़्यादा न जिये, यानी अगरचे अब तक जीते हैं, मगर सल्तनत जाती रही, और तबाही ए सल्तनत दो ही बरस में हुई। दिल्ली की सल्तनत कुछ सख़्त जान थी, सात बरस मुझको रोटी देकर बिगड़ी। ऐसे ताल ए मुरब्बी कुश[1] और मुहसिन सोज़[2] कहा पैदा होते हैं ? अब मैं जो वाली ए दकन[3] की तरफ़ रुजू करूं, याद रहे कि मुतवस्सित[4] या मर जाएगा या माज़ूल[5] हो जाएगा और अगर ये दोनो अम्र[6] वाक़े न हुए तो कोशिश उसकी ज़ाया[7] हो जाएगी और वाली ए शहर[8] मुझको कुछ न देगा और अहयानन[9] उसने सुलूक किया तो रियासत ख़ाक में मिल जाएगी और मुल्क में गधे के हल फिर जाएंगे। ऐ ख़ुदावन्द बन्दा परवर ये सब बातें वक़ूई[10] और वाकई हैं, अगर इनमें क़तै नज़र करके[11] कसीदे का क़स्द करूं, क़स्द तो कर सकता हूं, तमाम[12] कौन करेगा ? सिवाय एक मलेका[13] के, कि, वो पचास-पचपन बरस की मश्क़ का नतीजा है, कोई क़ुव्वत बाकी नहीं रही। कभी जो सावित्र की अपनी नज़्म व नस्र देखता हूँ तो ये जानता हूँ कि ये तहरीर मेरी है मगर हैरान रहता हूँ कि ये नस्र मैंने क्यों कर लिखी थी और ये शेर क्यों कर कहे थे। अब्दुल कादर 'बेदिल' का ये मिस्रा गोया मेरी ज़बान से है—

आलम हमा अफ़साने ए मा दारदो मा हीच[14]

---

१. अपने उपकारियों को नाश करने वाला। २. उपकार करने वाले को कष्ट पहुँचाने वाला। ३. हैदराबाद का निज़ाम। ४. माध्यम, जिस व्यक्ति के द्वारा सम्पर्क स्थापित होने वाला था। ५. अपदस्थ। ६. काम। ७. नष्ट। ८. नगर का शासक। ९. यदि। १०. घटित। ११. दृष्टि हटा कर। १२. पूर्ण। १३. योग्यता, अभ्यास जन्य योग्यता। १४. संसार मेरे किस्से-कहानियाँ लेकर घूम रहा है, लेकिन मैं तो कुछ भी नहीं हूँ।

पायाने उम्र[1] है। दिल व दिमाग जवाब दे चुके है। सौ रुपये रामपूर के, साठ रुपये पिन्सन के रोटी खाने को बहुत है। गिरानी और अजानी[2] उमूरे आम्मा[3] मे से है। दुनिया के काम ख़ुश-नाख़ुश चले जाते है। क़ाफ़िले के काफिले आमद ए रहील[4] है। देखो मुशी नबीबख्श मुझ से उम्र मे छोटे थे, माहे गजिश्ता मे गुजर गये। मुझ मे कसीदे के लिखने की क़ुव्वत कहाँ ? अगर इरादा करूँ तो फ़ुर्सत कहाँ ? कसीदा लिखूं, आप के पास भेजूँ, आप दकन को भेजे, मुतवस्सित कब पेश करने का मौका पाये ? पेश किये पर क्या पेश आये ? इन मराहिल[5] के तै होने तक मैं क्यों कर जीऊँगा ? इन्नालिल्लाह व इन्ना इलहे राजऊन। ला इलाहा इल्लिल्लाह व ला माबूद इल्लिल्लाह व ला मौजूद इल्लिल्लाह कानल्लाहो वलम यकुन शै युन वल्लाह अलान कमाकान।[6]

१७

जनाब चौधरी साहब को सलाम पहुंचे। आपने अपने मिज़ाज की नासाज़ी का हाल कुछ न लिखा। अगर पीर व मुर्शिद भी न लिखते तो मै क्यों कर इत्तिला पाता और अगर इत्तिला न पाता तो हुसूले सेहत[7] की दुआ क्यो कर माँगता ? कल से वक्ते खास मे दुआ माँग रहा हूं, यक़ीन है कि पहले तुम तन्दुरुस्त हो जाओगे अज़ाँ बाद[8] ये खत पाओगे। अक्सर साहब अतराफ़ व जवानिब[9] से माहे 'नीममाह' भेजने का हुक्म भेजते है और मै जी

---

१. आयु का अन्तिम भाग। २. सस्तापन। ३. जन सामान्य का विषय। ४. मृत्यु के लिए तत्पर। ५. मजिले। ६. सब कुछ ईश्वर का है, हम सब ईश्वर के यहाँ लौटेंगे। ईश्वर के अतिरिक्त कुछ नही, ईश्वर के अतिरिक्त कोई स्तुत्य नही, ईश्वर के अतिरिक्त किसी का अस्तित्व नही। जब कुछ नही था तब भी ईश्वर था। ईश्वर अब भी वैसा ही है जैसा पहले था। ७. स्वास्थ्य प्राप्ति। ८. इसके पश्चात्। ९. आसपास के लोग।

मे कहता हूँ कि जब 'महरे नीमरोज़' की इबारत को नही समझे तो 'माहे नीमनाह' को लेकर क्या करेंगे ? साहब, 'महरे नीमरोज़' के दीबाचे मे मैंने लिख दिया है कि इस किताब का नाम 'परतविस्ताँ' है और इसके दो मुजल्लद हैं। पहली जिल्द मे इब्तदाए खल्कते आलम[1] से हुमायूँ की सल्तनत तक का ज़िक्र, दूसरे हिस्से मे अकबर से बादशाह तक की सल्तनत का बयान। पहले हिस्से का नाम 'महरे नीमरोज़', दूसरे हिस्से का इस्म[2] 'माहे नीममाह'। बारे, पहला हिस्सा तमाम हुआ, छापा गया, क़स्द था जलालुद्दीन अकबर के हालात के लिखने का, कि, अमीर तैमूर तक का नाम व निशान मिट गया। आँ दफ़्तर रा गाव खुर्द व गाव रा क़स्साब बुर्द, क़स्साब दर राह मुर्द[3]। जो किताब मैंने लिखी ही न हो वो भेजूँ कहाँ से ?

पीर व मुर्शिद को मेरी बन्दगी और साहबज़ादे को दुआ। ख़ुदावन्द मुझे मारहरा बुलाते है और मेरा कस्द मुझे याद दिलाते है, उन दिनो मे कि दिल भी था और ताकत भी थी। शेख मुहसिनुद्दीन मरहूम से बतरीक़े तमन्ना कहा गया था कि जी यों चाहता है कि बरसात में मारहरा जाऊँ और दिल खोल कर और पेट भर कर आम खाऊँ। अब वो दिल कहाँ से लाऊँ ? ताकत कहाँ से पाऊँ ? न आमों की तरफ़ वो रग़बत[4], न मेरे मे उतनी आमों की गुजाइश। निहार मुँह[5] मैं आम न खाता था, खाने के बाद मै आम न खाता था। रात को कुछ खाता ही नहीं, जो कहूँ बैनुल तामेन[6]। हाँ, आखिरे रोज़[7] बादे हज़म मेदी आम खाने बैठ जाता था। बेतकल्लुफ़ अर्ज़ करता हूँ, इतने आम खाता था कि पेट भर जाता था और दम पेट में न समाता था। अब भी उसी वक़्त खाता हूँ, मगर दस-बारह, अगर पैवन्दी आम बड़े हुए तो पाँच-सात।

---

१. सृष्टि के उत्पादन से लेकर। २. नाम। ३. इस दफ़्तर को गाय खा गई, गाय को कसाई ले गया, कसाई मार्ग मे मर गया। ४. रुचि। ५. निराहार। ६. दो भोजनों के मध्य। ७. सन्ध्या समय।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

दरेग़ा के अहदे जवानी गुज़िश्त
जवानी मगो ज़िन्दगानी गुज़िश्त[1]

अब इसके वास्ते क्या सफर करूँ ? मगर हज़रत का देखना इसके वास्ते मुतहम्मिले रंजे सफर[2] हूँ तो जाड़े मे, न बरसात मे।

ऐ वाए जे महरूमी ए दीदारो दिगर हीच[3]

१८

(सितम्बर, १८६० ई०)

मेरे मुशफिक,

आपका खत आया और उसके आने मे तुम्हारी रंजिश का वसवसा[4] मेरे दिल से मिटाया। एक क़ायदा आपको बताता हूँ, अगर उसको मंजूर कीजिये तो खुतूत के न पहुँचने का एहतिमाल[5] उठ जाएगा और रजिस्ट्री का दर्दे सर जाता रहेगा। आध आना न सही एक आना सही, आप भी खत बैरंग भेजा कीजिए और मै भी बैरग भेजा करूँ। पेड खुतूत तलफ़[6] भी होते हैं। इस क़ायदे का जैसा कि मै वाज़े[7] हुआ हूँ, बादी भी हुआ और ये खत बैरंग भेजा।

पिन्सन जारी हो गया। तीन बरस का चढ़ा हुआ रुपया मिल गया। बाद अदाए क़र्ज़ सतासी रुपये ग्यारह आने बचे। अब माह ब माह रुपया मिलता है मगर यही तीन महीने सितम्बर, अक्तूबर और नवम्बर मे गये।

---

१. हाय ! यौवन का समय बीत गया। यह मत कहो कि यौवन ही गया, यह कहो कि जीवन ही चला गया। २. यात्रा के कष्ट को सहन करने के लिए। ३. जब तुम्हारे दर्शन से ही मैं वंचित हूँ तो सब व्यर्थ है। ४. आशंका। ५. सन्देह। ६. नष्ट। ७. आरम्भकर्त्ता।

दिसम्बर १८६० ई० से तनख़ाह शशमाही[1] हो जाएगी। इससे बढ़कर ये बात है कि चार रुपये सैकड़ा सालाना उमूमन वज़ा हुआ करेगा। इस हिसाब से मेरे हिस्से मे ढाई रुपया महीना आया। बासठ आठ आने के साठ रहेंगे। कुछ रामपूर से माह ब माह आता है। ये दोनों आमदनें मिलकर ख़ुश व नाख़ुश गुज़ारा हो जाता है।

यहाँ शहर ढै रहा है, बड़े-बडे नामी बाज़ार, ख़ास बाज़ार और उर्दू बाज़ार और ख़ानम का बाज़ार, कि, हर एक बजा ए ख़ुद एक कस्बा था, अब पता भी नही कि कहाँ थे। साहबाने अमकना व दुकाने[2] नही बना सकते थे कि हमारा मकान कहाँ था और दुकान कहाँ थी। बरसात भर मेह नही बरसा। अब तेशा व कलन्द[3] की तुगयानी[4] से मकान गिर गये। गल्ला गिराँ[5] है, मौत अर्ज़ाँ[6] है। मेवा के मोल अनाज बिकता है। माश की दाल ८ सेर, बाजरा १६ सेर, गेहूँ १२ सेर, चने १६ सेर, घी १ सेर, तरकारी मँहगी। इन सब बातों मे बढ़कर ये बात है कि कँवार का महीना जिसे जाड़े का दवार[7] कहते हैं—पानी गरम, धूप तेज, लू चलती है, जेठ-असाढ़ की-सी गरमी पडती है।

हज़रत रफ़अत दरजत[8] जनाब साहबे आलम की ख़िदमत मे दोस्ताना सलाम और मुरीदाना[9] बन्दगी व इन्किसारे तमाम[10] अर्ज़ करता हूँ। हज़रत को किस राह से मेरे आने का इन्तिज़ार है? मैंने मुर्शिदज़ादे[11] के ख़त मे कब अपना अज़्म[12] लिखा। किसने आपसे मेरी ज़बानी कहा कि आप रोज़े ख़ानगी के तक़र्रुर से इत्तिला चाहते हैं। हाँ, आपकी क़दमबोसी[13] की तमन्ना और अनवरुद्दौला के दीदार की आरज़ू हद से ज्यादा है और ऐसा जानता हूँ कि ये

---

१. छमाही। २. घर और दुकान के मालिक। ३. कुदाल और खुरपा। ४. बाढ। ५. मंहगा। ६. सस्ती। ७. द्वार। ८. उच्च पद पर आसीन। ९. शिष्यत्व का। १०. अशेष सेवकाई के साथ। ११. गुरुपुत्र। १२. निश्चय १३. चरण-चुम्बन।

आरज़ू गोर[1] में ले जाऊँगा। तनख़ाह् के इजरा[2] का हाल और मुस्तक़बिल[3] में उसके वसूल की सूरत इन सतरों से, जो आग़ाज़े मकतूब[4] में चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर साहब की ख़िदमत में लिखी गई है, मय रूदादे शहर[5] मालूम कर लीजिएगा।

लाला गोबिन्द परसाद साहब ह्नोज़[6] मेरे पास नही आये है। दुनियादार नही, फ़क़ीरे ख़ाकसार[7] हूँ। तवाज़ो[8] मेरी ख़ू[9] है। इजाहे मक़ासिदे ख़ल्क[10] में हत्तलवुसअ[11] कभी करूँ तो ईमान नसीब न हो। इन्शा अल्लाहुल अज़ीज़[12] वो फ़क़ीर से राज़ी और ख़ुशनूद रहेंगे।

जनाब मुस्तताब[13] हज़रत मुहम्मद अमीर साहब की ख़िदमत में बाद सलामे नियाज़[14] ये गुज़ारिश है कि मेरे पास हज़रत का सलाम व पयाम अब की बार भी नहीं पहुँचा। अब इन सुतूर[15] को अपना ज़रियए इफ़्तिख़ार[16] समझा, और नवेदे मक़दम मुबारक[17] से बहुत ख़ुश हुआ। ये ख़ानाकूची[18] और गुरेज़पाई[19] और बेइत्मिनानी का आपको मुझ पर गुमान है और इसका रंज है, ये ख़िलाफे वाक़ै किसने आपसे कहा है? मय ज़न व फ़र्ज़न्द[20] हर वक़्त इसी शहर में क़ुलज़ुमे ख़ूँ[21] का शनावर[22] रहा हूँ। दरवाज़े से बाहर क़दम नही रखा। न पकड़ा गया, न निकाला गया, न क़ैद हुआ, न मारा गया। क्या अर्ज़ करूँ कि मेरे ख़ुदा ने मुझ पर कैसी इनायत की और क्या नफ़्से

---

१. कब्र। २. चालू। ३. भविष्य। ४. पत्र का आरम्भ। ५. नगर के वृत्तान्त के साथ। ६. अभी। ७. अकिंचन। ८. आव-भगत। ९. स्वभाव। १०. सामान्य जनता की इच्छापूर्ति। ११. यथाशक्ति। १२. ईश्वर जो चाहे। १३. शुभान्वित। १४. प्रार्थनापूर्वक अभिवादन। १५. पंक्तियाँ। १६. गौरव का कारण। १७. शुभ-सूचना। १८. समस्त परिवार के साथ प्रस्थान। १९. भगोड़ापन। २०. पत्नी और बेटे के साथ। २१. रक्त का समुद्र। २२. तैराक।

मुतमइन्ना[1] बरूशा। जान व माल व आबरू मे किसी तरह का फ़र्क़ नहीं आया। तनख़ाह, जिसको हज़रत ने योमिया[2] लक़ब[3] दिया है, उसका हाल ऊपर की तहरीर से दरयाफ़्त होगा। फ़क़ीर को अपना दोस्त और मौतक़द[4] और मुश्ताक़[5] तसव्वुर फ़रमाते रहिएगा। मुशिदज़ादए मुर्तज़वी दूदमान[6] सैयद शाहआलम को सलाम व दुआ। डिप्टी साहब से मुझसे मुलाक़ात कसरत से नहीं है, उनको कसरते अशग़ाल[7] से फ़ुर्सत नहीं, मुझको इफ़राते जोफ़[8] से ताक़त नही। अगर बहस्बे इत्तिफ़ाक़[9] कहीं मुलाक़ात हो गई तो आपका सलाम कह दूंगा। आप अपने इख़्वाने आली शान[10] को मेरा सलाम पहुँचा दीजिएगा।

बन्दए शाहे शुमायेमो सनाख़ाने शुमा[11]

१६

(जून, १८६२ ई०)

हज़रत चौधरी साहब इनायत नाम ए साबिक़[12]—

था तो ख़त पर न था जवाब तलब
कोई इसका जवाब क्या लिखता?

आज दोपहर को ये ख़त पहुँचा, आज ही आख़िरे रोज़ जवाब लिख कर रख छोड़ता हूँ, कल सुबह को बशर्ते हयात[13] डाक मे भेजवा दूंगा। 'क़ातेअ बुरहान' के मुजल्लदात[14] जो बमूजिबे तौक़ी ए ख़रीदारी[15] मेरी मिल्क[16] हैं, वो

१. धैर्य। २. दैनिक। ३. विरद। ४. भक्त, विश्वासी। ५. प्रेमी। ६ हजरतअली के वंश के गुरु-पुत्र। ७. कार्याधिक्य। ८. निर्बलता की अधिकता। ९. संयोगवश। १०. प्रतिष्ठित बन्धु-बान्धव। ११. आपके शासक का दास हूँ और आपका प्रशंसक। १२. पहले का पत्र। १३. जीवित रहा तो। १४. प्रतियाँ। १५. खरीदने के आदेशानुसार। १६. सम्पत्ति।

अव्वले जुलाई में मेरे पास और उनमे से दो मुजल्लद आखिर जुलाई मे आपके पास पहुँचेगे। एक आप रहने देगे और एक पीर व मुर्शिद की नज्र करेगे इन्शा अल्लाहुल अलीउल अज़ीम[1]।

हब्बज़ा फ़ैज़ ताल्लुक़ मौज्जिज़े किलकश निगर
गर रवद सद साला रहे पेशे नज़र बाशद हमाँ[2]

ये शेर मौलाना नूरुद्दीन 'ज़ुहूरी' रहमतुल्लाह् अलैं[3] का ममदूह की खुशनवीसी की तारीफ़ मे है। मुबालग़ा[4] सरहदे तबलीग़[5] व ग़ुलू[6] को पहुँच गया है। खुलासा ये कि उसका लिखा हुआ क़ता या कोई इबारत सौ बरस की राह पर से आदमी को नज़र आती है। वजह इसकी ये कि हर्फ़ बहुत रौशन, साफ़ और जली[7] है और चूँकि ये अम्र बहस्बे आदत व अक़्ले मुम्तने[8] है, इस रू से उसको मोजिज़ ए क़लम[9] कहा और चूँकि मौजिज़ा[10] खिर्के आदत है और खिर्के आदत एक अम्र है मुसल्लमाते जम्हूर[11] मे से, पस मुन्किर[12] को गुजाइशे इन्कार न रही। यहाँ से ये खयाल आएगा कि 'फ़ैज़े ताल्लुक' बेकार रहता है। मै कहता हूँ कि वो हुस्ने इलहाम[13] है यानी निगाह को अज़ाँजा कि बासिरा मुश्ताक़े हुस्न[14] है, उस खत से वो ताल्लुक़ बहम पहुँचा है कि अगर वो खत सौ बरस की राह पर हो, तो भी निगाह उससे मुताल्लिक़[15] रहती है, जैसे तायर[16] को अपना आशियाना[17] और मुसाफ़िर को अपना वतन और आशिक़

---

१. ईश्वर महान् है। २. साधु-साधु, आपकी लेखनी (लिखावट) का यह चमत्कार है कि मीलों दूर से यह ज्यों का त्यों पढ़ा जाता है। ३. स्वर्गीय। ४. अत्युक्ति। ५. प्रचार की सीमा। ६. अतिशयोक्ति। ७. स्पष्ट। ८. बुद्धि का निषेधक। ९. लेखनी का चमत्कार। १०. वीर का चमत्कार, विनोदी का चमत्कार। ११. सर्वसम्मत। १२. अस्वीकार करने वाला। १३. दैवी सन्देश। १४. मेरी आँखे ही क्या मेरी दृष्टि भी आपके सौन्दर्य को देखने के लिए लालायित है। १५. सम्बन्धित। १६. पक्षी। १७. घोंसला।

को माशूक़ का ख़द्[1] व ख़ाल[2] मुसाफ़ते बईदा[3] से पेशे नज़र रहता है। चाहो एक मालूल[4] की दो इल्लत[5] समझो--फ़ैज़े ताल्लुक मज़कूर[6] और हुस्ने ख़त मुक़द्दर[7], चाहो फ़ैज़े ताल्लुक़ को इद्दिआ[8] कहो और हुस्ने ख़त जो तकदीर में है, उसको सबब समझो ताल्लुक़ का और मुवक्किद[9] जानो इद्दिआ का। सुनो दावे के वास्ते दलील मौजू है। इद्दिआ को दलील ज़रूर नहीं है। हाँ, इद्दिआ पर ताकीद तरीक़ ए बलाग़त[10] है। ये लताफ़ते मानवी[11] ख़ास उस बुज़ुर्ग के हिस्से में आई है। मैं जानता हूँ मुश्तरी[12] और अतारिद[13] ने मिल कर एक सूरत पकडी थी। उसका इस्म नूरुद्दीन और तख़ल्लुस जुहूरी था।

अल्लाह् अल्लाह् फ़रमाता है--

मुरब्बत कर्द शबहा बर तो मेरे बामो दर लाज़िम
न मी बाशद चिरागे ख़ाना हाए बेनवायाँ रा[14]

जुहूरी का ममदूह और माशूक एक है यानी सुलतान जलीलुल क़द्र इब्राहीम आदिलशाह। पादशाहो के मज़र[15] बलन्द होते हैं और क्या बईद[16] है कि रिआया व मुलाज़मीन मे से कुछ लोग ज़ेरे कस्र[17] रहते हो, इस वास्ते बादशाह दिन को उस मज़रे बलन्द[18] पर नहीं चढ़ता कि मबादा[19] रैयत या मुलाज़िमों की

---

१. कपोल। २. आकृति पर सुन्दरता के लिए लगाया गया काजल का चिह्न। ३. बहुत दूर। ४. वह चीज जिसका कोई कारण हो। ५. कारण। ६. उल्लिखित। ७. वह शब्द जो वाक्य में न हो, किन्तु अर्थ के समय ग्रहण किया जाये। ८. बिना तर्क की बात। ९. प्रेरक। १०. आलकारिक शैली। ११. अर्थ-सौन्दर्य। १२. बृहस्पति। १३. बुध। १४. उनका रात के समय छत पर आना आवश्यक है, क्योंकि दरिद्र लोगों (जिन लोगों के घर मे दीपक लगाने के लिये पैसे नहीं हैं) का काम चले। १५. दृश्य। १६. दूर। १७. राजप्रासाद के आश्रय में। १७. ऊँचा दृश्य। १९. ईश्वर न करे।

जोरू-बेटियाँ नज़र आयें। रात को उनके घर तारीक[1] होते हैं। अगर कोई बलन्द मकान पर चढ़ा तो कुछ नज़र न आएगा। ये मदह हुई इफ़्फ़त[2] की और इफ़्फ़त एक फ़ज़ीलत[3] है फ़ज़ायले अरब[4] मे से। अब इबहाम[5] को सोचिये। ममदूह ने रातों को कोठे पर चढ़ना अपने ऊपर लाज़िम किया है, इस वास्ते कि रिआया के घरों मे चिराग़ नहीं। अगर किसी को किसी कपड़े में पैबन्द लगाना या कोई चमड़े की चीज़ गाँठने या किसी मरीज़ का तफ़ह्हुसे हाल[6] मज़ूर हो तो वो घर उस ममदूह के परतवे जमाल[7] से रोशन हो जाये, चिराग़ की हाजत[8] बाक़ी न रहे। जो काम जो शख़्स चाहे वो कर ले। मुरव्वत के लफ़्ज़ का मजा वज्दानी[9] है। सिवाय इस लफ़्ज के कोई लफ़्ज़ यहाँ काम नही आता। अगर हिफ़्ज़े नामूस[10] रिआया है तो मुरव्वत है और अगर मुफ़लिसों[11] की कारबरारी[12] है तो मुरव्वत है। कालिबे मानी[13] की जान है ज़ुहूरी, नातिक़[14] की सरअफ़राज़ी[15] का निशान है ज़ुहूरी। ज्यादा क्या लिखूँ ?

२०

(१८६२ ई०)

जनाब चौधरी साहब,

आप के तलत्तुफ़नामा[16] के वुरूद[17] की मसर्रत और पार्सल के न पहुँचने की हैरत, बाइस[18] इसकी हुई कि आपको फिर तकलीफ़ दूँ और बाअ़ाँ कि[19]

---

१. अन्धकृत। २. पवित्रता। ३. बड़प्पन, श्रेष्ठत्व। ४. चार श्रेष्ठतत्व। ५. क्लिष्टता। ६. निदान, वास्तविकता की खोज। ७. छवि। ८. आवश्यकता। ९. आनन्दपूर्ण। १०. सतीत्व की रक्षा, लज्जा की रक्षा। ११. दरिद्र। १२. इच्छापूर्ण होना। १३. अर्थ (भाषा) की आत्मा। १४. वाक्शक्ति। १५. सिर ऊँचा उठाने का भाव, गर्व। १६. कृपा-पत्र। १७. प्राप्ति। १८. कारण। १९. यद्यपि।

ख़त जवाब तलब न था, जवाब लिखूं। बन्दा पर्वर मैंने पार्सल की रसीद ले ली थी। अब आप के ख़त को पढ़ कर कारपरदाज़ाने डाक के पास वो रसीद भिजवाई, उन्होंने किताब देखकर मेरे आदमी से कह दिया कि सिकन्दरारांव की रसीद ये मौजूद है। अब पार्सल की जवाबदेही वहाँ वालों के ज़िम्मे है। ये सुनकर मैंने ये मुनासिब जाना कि वो रसीद आपके पास भेज दूँ। आप सिकन्दरारांव के डाकखाने मे भिजवा कर उनसे पार्सल मँगवा ले और अब उस रसीद का मेरी तरफ़ राजे होना[1] किसी सूरत मे ज़रूर नही। वस्सलाम।

२१

जनाब चौधरी साहब,

स्याही फीकी, काग़ज़ पतला। पीर व मुर्शिद की इबारत एक तरफ़, आपकी तहरीर भी मग़शूश[2] हो गई। बहरा हो गया हूँ, मगर हिद्दते बसर हनोज़ बाक़ी है। तुम्हारी इबारत का जो लफ़्ज़ पढ़ लिया क़रीने से उसका मुहावरा भी मालूम हो गया। हजरत की तहरीर का एक लफ़्ज़ सिवा ए 'सम्आदते तवाम शाहआलम' के अगर पढ़ा गया हो तो दीदे[3] फूटे, ईमान नसीब न हो। वो ख़त बदस्तूर आपके पास वापिस भेजता। अर्दली[4] सफ़ेद कागज़ पर हर्फ़ बहर्फ़[5] उसकी नक़्ल करके फिर मुझे भेज दीजिये ताकि उसके ज़वाब लिखने में सम्आदत[6] हासिल करूँ। लेकिन बहुत जल्द, बहुत जल्द। आपकी निगारिश[7] से इतना दरियाफ़्त हो गया कि अब आप अच्छे हैं। अलहम्दुलिल्लाह[8]। जनाब मुम्ताज़अलीख़ाँ साहब कहाँ और मारहरा कहाँ! बहरहाल मेरा सलाम।

---

१. वापिस लौटना। २. त्रुटिपूर्ण। ३. दृष्टि। ४. एक प्रकार का काग़ज़। ५. अक्षरशः। ६. शुभकारिता। ७. लेखन। ८. ईश्वर की प्रशंसा।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

२२

बन्दा पर्वर,

बहुत दिन के बाद परसों आपका खत आया। सरनामे पर दस्तखत और के, और नाम आपका पाया। दस्तखत देखकर मफ़हूम[1] हुआ, खत के पढ़ने से मालूम हुआ कि तुम्हारे दुश्मन व आरिज़ ए तप व लर्ज़ा[2] रंजूर[3] हैं। अल्लाह्-अल्लाह्, ज़ोफ़ की ये शिद्दत[4] कि खत के लिखने से माज़ूर हैं। खुदा वो दिन दिखाये कि तुम्हारा खत तुम्हारा दस्तखती आये। सरनामा देख कर दिल को फ़रहत[5] हो, खत पढ़कर दूनी मसर्रत हो। जब तक ऐसा खत न आएगा, दिले सौदाज़द[6] आराम न पाएगा। क़ासिदे डाक[7] की राह देखता रहूँगा। जनाबे ईजदी[8] मे सरगर्म दुआ रहूँगा। आपके अम्मेआली मिक़दार[9] और बुज़ुर्ग[10] आमेज़गार को मेरा सलाम मय सिनूफ़े इश्तियाक़[11] ब उलूफ़े एहतिराम[12]।

जनाब चौधरी साहब, आओ, हम-तुम हज़रते आलम[13] के पास चले और अपनी आँखे उनके कफ़ेपाए[14] मुबारक से मले। मैं सलाम अर्ज़ करूँगा, तुम मौरिफ़[15] होना कि गालिब यही है, अहले देहली मे आपके दीदार का तालिब[16] यही है। मैंने अज्मे कदमबोसी[17] किया, पीर व मुर्शिद ने मुझे गले लगाया। फ़रमाते हैं कि 'ग़ालिब तू अच्छा है ? अर्ज़ करता हूँ कि 'अलहम्दुलिल्लाह् हज़रत का मिज़ाजे मुक़द्दस[18] कैसा है ?' इर्शाद हुआ कि 'मौलवी सैयद

---

१. ज्ञात। २. ज्वर और कम्पन से। ३. दुःखी। ४. आधिक्य। ५. हर्ष। ६. दुःखी हृदय। ७. डाक का हरकारा। ८. ईश्वर के सम्मुख। ९. प्रतिष्ठित चाचा। १०. शीलवान वृद्धपुरुष। ११. प्रेम की प्रणाली के साथ। १२. असीम सम्मान। १३. संसार के स्वामी। १४. चरण। १५. परिचय करने वाला। १६. इच्छुक। १७. चरण चुम्बन का निश्चय। १८. शुभ स्वास्थ्य।

बरकात हुसन तेरी बहुत तारीफ़ करते रहते है।' जनाब ये उनकी खूबियां है, मैं ऐसा नहीं हूँ, जैसा वो कहते है। काश वो मेरी रंजूरी का हाल कहते। जोफ़े क़ुवा[1] व इज़्मिहलाल[2] कहते ताकि मैं उनके कलाम की तस्दीक़ करता, उनकी ग़मखारी और दर्दमन्दनवाज़ी का दम भरता।

दरकशाकशे ज़ोफ़म न गुस्लद ख़ाँ अज़तन
ई के मन न मी मीरम हम ज़ेनातवानीहास्त[3]

हज़रत ने मेरी गिरफ़्तारी का नया रंग निकाला। 'बोस्ताने खयाल' के देखने का दाना डाला। मुझमें इतनी ताक़ते परवाज़[4] कहाँ कि बला से अगर फँस जाऊँ, दाम[5] पर गिरके दाना ज़मीन पर से उठा लूँ? हज़रत सच तो यों है कि गमहाए रोज़गार[6] ने मुझको घेर लिया है, साँस नहीं ले सकता, इतना तंग कर दिया है। हर बात सौ तरह से खयाल मे आई, पर दिल ने किसी तरह तसल्ली न पाई। अब दो बाते सोचता हूँ—एक तो ये कि जब तक जीता हूँ, यों ही रोया करूंगा। दूसरी ये कि आखिर एक न एक दिन मरूँगा। ये सुग़रा व कुबरा[7] दिलनशीं है, नतीजा इसका तस्कीन[8] है। हैहात[9]—

मुन्हसिर मरने पै हो जिसकी उमीद
नाउमीदी उसकी देखा चाहिए

ऐ हजरत शाहआलम साहब, मेरा सलाम लीजिये। काग़ज़ बाकी नहीं रहा, अपने सब भाइयों को, मय मीर वज़ीरअली साहब मेरा सलाम कह दीजिएगा।

---

१. दुर्बल शरीर। २. कमज़ोरी। ३. दुर्बलता की अधिकता के कारण शरीर से प्राण नही निकल रहे है, मै जो अभी नहीं मर रहा हूँ उसका कारण यही है कि मैं दुर्बल हूँ। ४. उड़ने की शक्ति। ५. जाल। ६. शोक। ७. छोटा-बड़ा तथ्य। ८. आश्वासन। ९. हा हन्त।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

२३

चौधरी साहब मुशफ़िक़े मुकर्रम[1] को मेरा सलाम !

आपका ख़त, कि, सिवाए चन्द सतर के, जो तुमने लिखी थी, सरासर हज़रत साहब का दस्तख़ती था, पहुँचा। सुभान अल्लाह, हज़रत को किस क़दर मुहब्बत है तुम्हारे साथ। तुम्हारी नासाज़ीए मिजाज[2] का कैसा मलाल और तुम्हारे न देखने का कैसा रंज है ? सच यों है कि तुम ख़ूबाने रोज़गार[3] में से हो। तौक़ी[4] क़ुबूल अहले नज़र का हासिल होना आसान नहीं है। सलामत रहो, ख़ुश रहो। मुख़्तसर--

कारत बजहाँ जुम्ला चुनाँ बाद के ख़ाही[5]

अब रूए सुख़न हज़रत साहब की तरफ़ है। ख़िदमते ख़ुद्दामे वाख़दूम ख़ादिम नवाज़[6] मे बाद तस्लीम[7] मारूज़[8] है, तफ़क्कुद नाम ए नामी[9] में सूरत इज्ज़ व शर्फ़[10] नज़र आई। अल्लाह् अल्लाह्। तुमने मेरी नज़र मे मेरी आबरू बढ़ाई। हज़रत की क़द्रदानी की क्या बात है। आपका इल्तिफ़ात[11] मूजिबे मुबाहत[12] है। ये बात बतरीक़े तैलिसान[13] ज़बान पर आई है वर्ना क़द्रदानी कैसी, क़द्र अफ़ज़ाई है। नज़ीरी अलैइर्रहमा का शेर एक काग़ज़ पर लिख कर मेरे गले में डाल दीजिये और ज़ुम्रए शोअरा[14] में से मुझको निकाल दीजिये। शेर ये है—

---

१. आदरणीय मित्र। २. अस्वस्थता। ३. सौभाग्यशाली। ४. आदेश-पत्र। ५. ईश्वर तुम्हारा अभीष्ट कार्य सफल करे। ६. सेवकों पर दया करने वाले सेवकों के सुश्रेष्य की सेवा में। ७. अभिवादन। ८. कथित। ९. श्रेष्ठ कृपा-पत्र। १०. प्रतिष्ठा और आदर की आकृति। ११. स्नेह। १२. गर्व के योग्य। १३. रूमाल, वह रूमाल जिसे नमाज पढ़ते समय उपदेशक कंधे पर रखता है। १४. कवि समुदाय।

जौहरे बानिशे मन दर तहे ज़गार बेमुन्द
आँ के आईन ए मन साख़्त न परदाख़्त दरेग़[1]

दावा और चीज़ है और कमाल और है। इल्मे अरबी और शै[2] है और फ़ारसी की हक़ीकते हाल[3] और है। जिलालाए[4] तबातबाई रहमतुल्लाह् अलै ने सैदा ए हिन्दी को एक रुक़्क़ा लिखा। इबारत इस वक़्त याद नही आती मगर ये मज़मून उसका कि एक दिन मौलाना उर्फ़ी अलैइर्रहमा और अबुलफ़ज़ल मे मुबाहसा[5] हुआ। शेख ने उर्फ़ी से कहा कि हमने तहक़ीक को ब सरे हद्दे इफ़रात[6] पहुँचा दिया और फ़ारसी में ख़ूब कमाल पैदा किया। उर्फ़ी ने कहा—इसको क्या करोगे कि हमने जब से होश संभाला है, घर के बूढ़ो और बूढियो से जो बात सुनी, फ़ारसी मे सुनी। शेख गुफ़्त-मा फ़ारसी अज़ अनवरी व ख़ाक़ानी फरा गिरिफ़्ताएम व शुमा अज पीर ज़नाँ आमोख़्ता एद। उर्फ़ी फ़रमूद-"अनवरी व ख़ाकानी नीज़ अज पीर ज़नाँ आमोख़्ता बाशद।" ख़त्म।[7]

ग़ालिब कहता है कि हिन्दुस्तान के सुख़नवरों[8] मे हज़रत अमीर ख़ुसरो देहलवी अलैइर्रहम के सिवा कोई उस्ताद मुसल्लमुल सुबूत[9] नही हुआ। ख़ुसरो कैख़ुसरो[10] कलम रवे सुख़नतराज़ी[11] है या हम चश्मे निज़ामी गजवी[12] व हम तरहे[13] सादी शीराज़ी[14] है। ख़ैर, फ़ैज़ी भी नग़्ज़गोई[15] मे मशहूर है, कलाम उसका पसन्दीदए जम्हूर[16] है। देखो, अब्दुलक़ादर बदायूनी क्या लिखता

---

१. मेरे गुण छिपे रहे जैसे मैल चढ़ने पर दर्पण छिप जाता है। २. पदार्थ। ३. यथार्थता। ४. प्रकाशमान। ५. वाद-विवाद। ६. अत्यधिक। ७. शेख ने कहा है कि मैंने अनवरी और खाक़ानी से सीखी है और तुमने बूढ़ी स्त्रियों से फ़ारसी पढ़ी है। उर्फ़ी ने कहा—अनवरी और खाक़ानी ने भी बूढ़ी औरतों से सीखी। ८. कवि। ९. प्रामाणिक। १०. ईरान का एक सम्राट्,। ११. काव्य-प्रदेश। १२. निजामी के समकक्ष। १३. समान। १४. शीराज के सादी के सदृश। १५. श्रेष्ठ रचना। १६. लोक-प्रिय।

है—रहे·····(?) आरज़ू, फ़क़ीर और शैदा और बहार वग़ैरहुम[1] इन्हीं मे आ गये। नासिरअली और बेदिल और ग़नीमत उनकी फ़ारसी क्या? हरेक का कलाम बनज़रे इन्साफ़[2] देखिये, हाथ कंगन को आरसी क्या?

'मिन्नत' और 'मकी' और 'वाकिफ़' और 'क़तील' वे तो इस क़ाबिल भी नहीं कि इनका नाम लीजिए। इन हज़रात मे आलिमे उलूमे अरबिया[3] के शरूस हैं, खैर हों, फाज़िल[4] कहलाये, कलाम मे उनके मज़ा कहाँ? ईरानियों की-सी अदा कहाँ? फ़ारसी की क़ायदादानी[5] मे अगर कलाम है, इसमे पैरवीए क़यास[6] एक बलाए आम है। वारुस्तए स्यालकोटी ने खान आरज़ू की तहक़ीक़ पर सौ जगह ऐतराज़ किया है और हर ऐतराज़ बजा है। बाई हमा[7] वो भी जहाँ अपने क़यास पर जाता है, मुंह की खाता है। मौलवी अहसानुल्लाह् 'मुमताज' को सन्न ए लफ़्ज़ी[8] मे दस्तगाह[9] अच्छी थी। इस शेवा[10] व रविश को खूब बरत गये, फ़ारसी वो क्या जाने? क़ाज़ी मुहम्मद सादिक 'अख्तर' आलिम[11] होंगे, शायरी से उनको क्या इलाक़ा? एक बात हजरत को और मालूम रहे कि हिन्दी[12] फ़ारसी वालो ने कमाल को वहम मे मुन्हसिर रखा है।

कालपी के नवाबजादों मे से एक साहब 'क़तील' के शागिर्द थे। मैंने एक रुक्का क़तील का उनके नाम देखा है कि—क़तील उनको लिखता है कि जामा गुज़ाश्तन ब माने मुर्दन मुसल्लम[13]। लेकिन बहुत एहतियात किया करो, मौका देख लिया करो, जब लिखा करो। मैं कहता हूँ कि एहतियात क्या और मौका क्या? 'फलाँ मुर्द' 'बहमा जामे गुज़ाश्त' फिर वो कहता है कि

---

१. आदि। २. न्याय की दृष्टि से। ३. अरबी के विद्वान्। ४. विद्वान्। ५. व्याकरण का ज्ञान। ६. कल्पना करना। ७. इन सब बातों के रहते हुए भी। ८. शब्द-प्रयोग। ९. सामर्थ्य। १०. ढंग। ११. विद्वान्। १२. हिन्दुस्तान के। १३. वेश छोड़ने का अर्थ है मरना—यह सत्य है।

'कदा' के साथ सिवाय पाँच-सात लफ़्ज़ के और लफ़्ज़ को तरकीब न दो। फिर फ़रमाता है कि 'हमा' के लफ़्ज़ को जमा[1] के साथ लाओ, मुफ़र्द[2] से न मिलाओ।

नक़्ल—मैंने दस्तम्बू में लिखा है कि 'हमा कस दानद', एक शख़्स ने, कि, वो भी मौलवी कहलाता है, मेरी ग़ीबत[3] में कहा कि 'हमाकस दानद' क्या तरकीब है? एक लड़का मेरा शागिर्द वहाँ मौजूद था, उसने कहा कि ये तरकीब बएनही[4] 'सायब' की है, जैसा कि वो कहता है—

हमाकस तालिबे आँ सर्वे खाँस्त ईजा
आबे हैवाँ जे नफ़से मोऱ्तेगानस्त ईजा[5]

उसने कहा कि तुम्हारा उस्ताद 'हाशल्लाह्'[6] को माक़ब्ले कलमा[7] मनफ़ी लाया है और ये जायज़ नहीं।

हाशल्लाह् के बद न मी ग़ोयम[8]

मेरे शागिर्द ने कहा ये तरकीब अनवरी की है—

हाशालिल्लाह न मरा बल्ले मलिक रा न बूद
बा सगे कूए तो ई जुहरा वो यारा व मजाल[9]

मौलवी हिदायतअली 'तमकीन' का आज तक मैंने नाम नहीं सुना था, छिपे हुए रुस्तुम हैं। 'सायब' अगरचे इस्फ़हानी नज़ाद[10] था, मगर वारिदे

---

१. बहुवचन। २. एकवचन। ३. निन्दा। ४. ज्यों की त्यों। ५. उस प्रेमिका को संसार चाहता है। इन प्रेमियों की जो साँस चलती है, वह अमृत का काम करती है। ६. ईश्वर ऐसा न करे। ७. वाक्य के आरम्भ में। ८. ईश्वर जानता है मैं बुरा नहीं कहता हूँ। ९. तुम्हारी गली के कुत्ते को जो गौरव प्राप्त है वह बड़े-बड़े सम्राटों को भी प्राप्त नहीं, मेरी तो बात ही क्या? १० वंश।

शाहजहाँबाद था। 'इन्तिक़ाम कशीदन' व 'इन्तिक़ाम गिरफ़्तन' दोनो बोल गया। मौलवी साहब लुच फ़ारसी[1] बोलते है। ला हौला वला क़ुव्वता इल्लाह् बिल्लाह्[2]।

'कलीम' बवज़्ने फ़ईल मीगए इस्मे फ़ाइल[3] है मिस्ले करीम व रहीम व बशीर व समीअ व बसीर व कलीम अस्माए इलाही[4] है। कलीम अगर बमाने हमकलाम[5] लीजिए तो इस्मे इलाही उसको क्यो कर क़रार दीजिए? हज़रत का मिस्रा—

हस्त कलामे ज़कलामे कलीम[6]

मखदूश[7] अजबत्ता है यानी या कलेमा अज़ कलामे कलीम, या क़लामे अज़ कल्माते कलीम चाहिए। 'कलामे अज कलाम' मुफ़र्रद[8] मे से मुफ़र्रद को निकाला चाहिए, गो जायज न हो।

'गोबाश' व 'गोबाशद' हर्गिज़ महले तरद्दुद[9] नही, औहाम व वसवास[10] क़वायद मे पेश नहीं जाते—

ऐ करीमे के अज़ खज़ान ए ग़ैब[11]

हर्गिज़ याए मारूफ[12] नहीं है, या ए मजहूल[13] है। या ए मारूफ़ यहाँ नामक़बूल[14] है—

---

१. ग्राम्य फ़ारसी। २. ईश्वर के अतिरिक्त किसी मे सामर्थ्य नहीं। ३. कर्त्ताकारक। ४. ईश्वर के नाम। ५. किसी से बात करने वाला। ६. यह ईश्वर के वाक्यों मे से एक वाक्य है। ७. सन्दिग्ध। ८. एकवचन। ९. सन्देह-स्थल। १०. सन्देह और आशका। ११. हे दाता, तुम्हारे अदृश्य कोश से। १२. ऐसा 'यकार' जिसका उच्चारण 'ई' होता है। १३. जिस 'यकार' का उच्चारण 'ए' होता है। १४. अस्वीकृत।

खुदा ए के बाला व पस्त आफ़रीद[1]

ऐसा खुदा, ऐसा करीम, इस तहतानी[2] को या ए वहदत कहो, या ए तौसीफ़ कहो, या ए ताज़ीम कहो, जिस तरह कहो, मजहूल आएगी।

२४

(१८६३ ई०)

बन्दा पर्वर,

परसो तुम्हारा खत आया, आज जवाब लिख रखता हूँ, कल डाक में भिजवा दूंगा। मेरा हाल क्यों पूछो? अपने को देखो, जो तुम्हारा ढग है, वही मेरा रग है। बुसर व औराम[3] मर्ज़े खास और रज़े आम, ये एक इजमाल[4]। दूसरा इजमाल सुनो कि महीने भर साहबे फ़र्राश हूँ। सुबह से शाम तक पलंग पर पड़ा रहता हूँ। महल सराय[5] अगरचे दीवानखाने[6] के बहुत क़रीब है, पर क्या इमकान[7] जो जा सकूं। सुबह को ९ बजे खाना यहीं आ जाता है। पलग पर से खिसल पड़ा, हाथ-मुँह धोकर खाना खाया, फिर हाथ धोये, कुल्ली की, पलग पर जा पड़ा। पलग के पास हाजतो लगी रहती है। उठा और हाजती मे पेशाब किया और पड रहा। मुद्दतो से ये मरज़ है कि पेशाब जल्द-जल्द आता है। इस साहबे फ़र्राश[8] होने को देखो और दम बदम[9] तक़ाज़ ए बौल[10] को देखो। पाखाना अगरचे दिन-रात मे एक दफ़ा जाता हूँ,

---

१. ईश्वर ने आकाश और पृथ्वी को उत्पन्न किया (उसने धनी और दरिद्र, ऊँच और नीच को पैदा किया।) २. अधिकृत। ३. फुन्सी और शोथ। ४. स्पष्टीकरण। ५. अन्तःपुर। ६. बैठक। ७. सम्भावना। ८. खटिया पकड़ने वाला। ९. क्षण-क्षण। १०. मूत्र का तकाजा।

मगर सुऊबत[1] को तसव्वुर करो। एक फोड़ा दाये पहुँचे मे, जिसको साअद कहते हैं, दो फ़ोड़े बाये पहुँचे में। ये सहल हैं। बाये पाँव में कफ़ेपा[2] व पुश्तेपा[3] से लेकर आधी पिडली तक वरम[4] और वरम भी सख्त। रवादात[5] व महल्लिलात[6] से कुछ न हुआ। अब तजवीज़ है कि नीब का भुर्ता बाँधिये, जब पके-फूटे तब मरहम लगाइये। कहो, कफ़ेपा मे जराहत[7] का अमल हुआ तो कयाम का कहाँ ठिकाना ?

ये हाल, जैसा कि मैं ऊपर लिख आया हूँ मुजमल[8] व जुज्वी[9] है। मेरा कयास इसका मुक़्तज़ी[10] है कि पीर व मुर्शिद हज़रत साहबे आलम मुझसे आज़ुर्दा है और वजह इसकी ये है कि मैंने मुमताज़ व अख्तर की शायरी को नाकिस कहा था। इस रुक्के मे एक मीज़ान अर्ज़ करता हूँ। हजरत साहब इन साहबों के कलाम को यानी हिन्दियों के अशार को 'क़तील' और 'वाक़िफ' से लेकर 'बेदिल' और नासिरअली तक इस मीज़ान मे तौले। रुद की-फ़िरदौसी से लेकर खाक़ानी व सनाई व अनवरी वग़ैरहुम तक एक गिरोह। इन हजरात का कलाम थोड़े-थोड़े तफावुत[11] से एक वज़ा पर है। फिर हज़रत सादी तर्जे खास के मौजिद[12] हुए। फ़ुग़ानी और एक शेवए खास[13] का मुब्दा[14] हुआ, खयाले हाए नाज़ुक व मानी बलन्द लाया। इस शेवे की तकमील की ज़ुहूरी व नज़ीरी व उर्फी व नवई ने। सुभान अल्लाह्, क़ालिबे सुखन[15] मे जान पड़ गई। इस रविश को बाद इसके साहबाने तबा ने सलासत[16] का चरबा दिया। सायब, व कलीम, व सलीम व क़ुदसी व हकीम सफ़ाई इस जुम्रे[17] मे

---

१. पीडा। २. पाँव का तलवा। ३. पाँव के पजे का ऊपरी भाग। ४. शोथ। ५. फोड़े को नरम करने वाली औषधियाँ। ६. ऐसी औषधियाँ जो फोडे को पिघलाती है। ७. शल्य, आपरेशन। ८. संक्षिप्त। ९. आंशिक। १०. तक जा करने वाला। ११. पृथकता। १२. आविष्कर्त्ता। १३. विशेष शैली। १४. उद्भव-स्थल। १५. काव्य का शरीर। १६. कोमलता। १७. समूह।

हैं। रूदकी व असदी व फ़िरदौसी, ये शेवा सादी के वक़्त मे तर्क हुआ और सादी की तर्ज़ ने बसबबे सहल मुम्मतने[1] होने के रिवाज न पाया। फ़ुगानी का अन्दाज़ फैला और उसमे नये-नये रंग पैदा होते गये। तो अब तर्जें तीन ठहरी हैं—खाकानी और उसके अक़रान,[2] ज़ुहूरी और उसके अमसाला,[3] सायब और उसके नज़ायर खालिसनल्लाह[4] मुमताज़ व अख्तर वगैरहुम का कलाम इन तीन तर्जों मे से किस तर्ज़ पर है ? बेशुबा फ़रमाओगे कि ये तर्ज़ और ही है, पस तो हमने जाना कि उनकी तर्ज़ चौथी है। क्या कहना है ! अच्छी तर्ज़ है, मगर फ़ारसी नहीं है, हिन्दी है। दारुलज़रबे शाही[5] का सिक्का नहीं है, टकसाल बाहर है। दाद दाद, इन्साफ़ इन्साफ़—

अगरचे शायराने नग़्ज़ गुफ़्तार
ज़ यक जामंबंद दर बज़्मे सुखन मस्त
वले वे बादए बाज़े हरीफ़ाँ
खुमारे चश्म साक़ी नीज़ पैवस्त
मशो मुन्किर के दर अशआर ई क़ौम
व राए शायरी चीजे दिगर हस्त[6]

वो 'चीज़े दिगर' पारसियों के हिस्से में आई है, हाँ उर्दू जबान मे अहले हिन्द ने वो चीज पाई है। मीर तक़ी अलैहिर्रहमात[7]।

बदनाम होगे जाने भी दो इम्तिहाँ को
रखेगा कौन तुमसे अज़ीज अपनी जाँ को

---

१. निषेधक। २. समकालीन। ३. समान। ४. ईश्वर पवित्र है। ५. शाही टकसाल। ६. अच्छे कवि गोष्ठी में एक प्याले में मस्त हो जाते हैं। कुछ पतिप्रेमियों के प्याले मे मधुबाला की आँख की खुमारी भी सम्मिलित हो जाती है। फ़ारसी कविता में केवल कविता नहीं और भी बहुत-सी चीजें हैं। ७. स्वर्गीय।

चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के नाम

सौदा—

दिखलाए ले जाके तुझे मिस्र का बाज़ार
ख़ाहाँ[1] नहीं लेकिन कोई वाँ जिन्से गिराँ[2] का

क़ायम—

'क़ायम' और तुझसे तलब बोसे की क्यों कर मानूं ?
है तो नादाँ मगर इतना भी बद आमोज़[3] नहीं।

मोमिनखाँ—

तुम मेरे पास होते हो गोया
जब कोई दूसरा नहीं होता

नासिख के हाँ कमतर और आतिश के हाँ बेशतर ये तेज़ नस्तर है। मगर उनका कोई शेर इस वक़्त याद नही आता। याद क्या आवे, लेटा हुआ हूँ, दमबदम पाँव के वरम की टीस होश उड़ाए देती है। इन्नालिल्लाह् व इन्नाइलहे राजऊन।

२५

(१८६३ ई०)

आ हा हा जनाब मुंशी मुमताज़ अलीखाँ साहब मारहरा पहुँचे। साहब ये तो सय्याह गीती न वर्द सानी मख़्दूमे जहानियाँ गर्द[4] है। बहरहाल आपने दीवाचा[5] बहुत अच्छा लिखा है। किताब को इससे रौनक़ हो जाएगी। नज़्म मे वो पाया बलन्द, कि, शायरी उनके शेर पर लाली ए अजुम[6] निसार करे[7]।

---

१. इच्छुक। २. मँहगी वस्तु। ३. बुरा शिक्षक। ४. यह संसार भ्रमण नहीं है, तुम दूसरे मख़्दूमे जहानियाँ हो। (मख़्दूम ने विश्व भ्रमण किया था)। ५. भूमिका। ६. तारों की लालिमा। ७. न्यौछावर करे।

ख़ुद बलागर्दां[1] हो लोलीए समा[2] हर मिस्रे पर दिल व जान वारे, सदक़े क़ुर्बान हो।

वार करे (बमाने हमला करने के है) और वो जो आपका मक़सूद[3] है उन मानों में वारना और वारे आया है, न वार करना और वार करे। आपको याद होगा कि चन्द सतरें मैंने बहज़ार दुश्वारी लिख कर तुम्हे भेजी थी, ख़ाहिश ये थी कि यही सतरे मेरे मख़दूम और मख़दूमज़ादे[4] की नज़र से गुज़र जाये। आज एक ख़त मैंने पीर व मुर्शिद का और पाया, वो अभी नही पढ़ा। मगर शाहआलम साहब इस ख़त की पुश्त पर लिखते है कि तूने मेरे ख़त का जवाब नही लिखा, हालाँ कि मै इन सतरो मे ये लिख चुका हूँ कि न मुझे तहरीर की ताक़त, न इस्लाह[5] के हीश। एक बात को दस-दस बार क्या लिखूं ? अब मेरा अन्जामेकार[6] दो तरह पर मुतसव्विर[7] है, या सेहत या मर्ग[8]। पहली सूरत मे ख़ुद इत्तिला दूंगा, दूसरी सूरत में सब अहबाबे ख़ारिज[9] से सुन लेगे। ये सतरे लेटे-लेटे लिखी हैं।

२६

(१८६३ ई०)

एक इबारत लिखता हूं चूंकि लिफ़ाफ़ा चौधरी अब्दुलग़फ़ूर साहब के नाम का होगा। पहले वो पढ़े फिर मेरे पीर व मुर्शिद की नज़र से गुज़रानें फिर मुर्शिदज़ादा शाहआलम साहब को दिखावे।

बरस दिन से फ़िसादे ख़ून[10] के अवारिज़[11] मे मुब्तला हूँ बुसूर व औराम[12]

---

१. जिसकी बलि दी गई हो। २. आकाश की नर्तकी—शुक्र। ३. अभीष्ट। ४. स्वामी के पुत्र। ५ संशोधन। ६. परिणाम। ७. कल्पित। ८. मृत्यु। ९. परित्यक्त सम्बन्धी। १०. रक्तविकार। ११. रोग (ब० व०)। १२. फुन्सी और शोथ (व० ब०)।

में लद रहा हूँ। बरस दिन में औजाअ[1] सहते-सहते रूह तहलील[2] हो गई, निशिस्त व बरख़ास्त[3] की ताक़त न रही और फोड़े तो ख़ैर, मगर दोनों पिंडलियों में हड्डियों के क़रीब दो फोडे हैं। खड़ा हुआ और हड्डियाँ चरने लगीं और रगें फटने लगीं। बायें पाँव पर कफ़ेपा[4] से जहाँ वो फ़ोड़ा है, पिंडली तक वरम है, रात-दिन पड़ा रहता हूँ। पलंग के पास हाजती लगी रहती है। खिसल पड़ा, बाद रफ़ए हाजत फिर लेट रहा। इसी सूरत से रोटी खाता हूँ। अशार की इस्लाह यककलम[5] मौकूफ़, खुतूते ज़रूरी लेटे-लेटे लिखता हूँ। दो खत हज़रत साहब के आये। जवाब न लिखा सका, आज अपने को ताने देकर मर्द बनाया, जब ये इबारत लिखी, चौधरी साहब को सलाम, हज़रत साहब को बन्दगी।

---

१. पीड़ाएँ। २. छिन्न-भिन्न। ३. बैठना-उठना। ४. पैर का तलवा। ५. पूर्णतया।

साहब आलम मारहरवी

१

(१८५८ ई०)

पीर व मुर्शिद,

सलामे नियाज़[1] पहुँचे। कफउल खाजीब सूरे जनूबी मे से एक सूरत है। 'तुलू' का हाल मुझको कुछ मालूम नहीं। अख्तर शनासाने हिन्द[2] को इसका कुछ हाल मालूम नहीं और उनकी जबान मे इसका नाम भी, यक़ीन है, कि न होगा। क़ुबूले दुआ वक़्ते तुलू मिनजुम्ला[3] मजामीने शेरी[4] है[5] जैसे कता[6] का परतवे माह[7] मे फट जाना और ज़मर्रुद[8] से अफ़ई[9] का अन्धा हो जाना। आसफ़ुद्दौला ने अफ़ई तलाश करके मँगवाया और क़ताते ज़मर्रुद[10] उससे माहाज़ी ए चश्म[11] रखे। उसका कुछ असर न हुआ। ईरान व रूम व फ़रंग से अनवा अनवा[12] कपडे मँगवाये, चाँदनी मे फैलाते, मसका भी नही।

तहवीले आफ़ताब वहयल[13] के बाब मे मोटी बात ये है कि २२ मार्च को वाक़े होती है। कभी २१, कभी २३ भी आ पड़ती है, इससे तजाबुज[14] नहीं।

---

१. प्रार्थनापूर्वक अभिवादन। २. भारत के नक्षत्रज्ञ। ३. सब मिलाकर। ४. काव्य सम्बन्धी। ५. कवि समय है। ६. कवि मान्यता के अनुसार एक सूक्ष्म वस्त्र जो चाँदनी के कारण फट जाता है। ७. चाँदनी। ८. पन्ना। ९. साँप। १०. पन्ने के टुकड़े। ११. आँख के सामने। १२. भाँति-भाँति के १३. सूर्य का मेष राशि में प्रवेश करना। १४. अवज्ञा।

रहा 'ताले वक़्ते तहवील' दुरुस्त करता, बे कुतुबे फ़न[२] और मुब्लग़े इल्म[३] मुमकिन नहीं। मेरे पास ये दोनों बातें नहीं।

बे दानम के गेती चसाँ मी रवद
चे नेको चे बद दर जहाँ मी रवद[४]

मैं तो अब रोज़ व शब[५] इसी फिक्र मे हूँ कि जिन्दगी वे तो यों गुज़री, अब देखिये मौत कैसी हो--

उम्र भर देखा किया मरने की राह
मर गये पर देखिये दिखलाये क्या ?

मेरा ही शेर है और मेरे ही हस्बे हाल[६] है।

सिक्के का वार तो मुझ पर ऐसा चला जैसे कोई छुरा या कोई गर्बाब[७]। किससे कहूँ ? किसको गवाह लाऊँ ? ये दोनों सिक्के एक वक्त मे कहे गये है, यानी जब बहादुरशाह तख्त पर बैठे तो ज़ौक़ ने ये दो सिक्के कह कर गुज़राने। बादशाह ने पसन्द किये। मौलवी मुहम्मद बाक़र जो ज़ौक़ के मोतक़िदीन[८] मे थे, उन्होंने 'दिल्ली उर्दू अखबार' मे ये दोनों सिक्के छापे। इससे अलावा अब (तक) वो लोग मौजूद है कि जिन्होंने उस जमाने मे मुर्शिदाबाद और कलकत्ते में ये सिक्के सुने हैं और उनको याद है। अब ये दोनों सिक्के सरकार के नज़दीक मेरे कहे हुए और गुज़राने हुए साबित हुए है। मैंने हरचन्द कलम रवे हिन्द[९] में 'दिल्ली उर्दू अखबार' का पर्चा ढूंढा, कहीं हाथ न आया।

---

१. संक्रान्ति का समय। २. विषय से सम्बन्धित पुस्तकें। ३. शुद्ध ज्ञान। ४. मैं जानना चाहता हूँ कि संसार किस तरह चल रहा है—संसार में अच्छे बुरे कैसे है (मैं जानना चाहता हूँ)। ५. दिन-रात। ६. स्थिति के अनुरूप। ७. तोप का गोला। ८. श्रद्धालु। ९. भारत देश।

ये धब्बा मुझ पर रहा। पिन्सन भी गई और वो रियासत का नाम व निशान, खिलत व दरबार भी मिटा। खैर, जो कुछ हुआ, चूंकि मुआफ़िक़े रज़ा ए इलाही[1] के है, उसका गिला क्या—

चूं जुम्बिशे सिपहर ब फ़र्मान दावरस्त
बेदाद न बुवद ऊँचे बमा आस्माँ देहद[2]

ये तहरीर बतरीक़े हिकायत है न बसबीले शिकायत।

गोयन्द अज़ अबुल हसन खिरकानी रहमतुल्लाह् अलै पुर्सिश रफ़्त के चे हालदारी ? फ़रमूद-कुदाम हाल ख़ाहद बूद, कसेरा के ख़ुदा अज़ वै फ़र्ज़ तलबत पयम्बर सुन्नत ब ज़न माल ख़ाहद व मलकुल मौत जान ।[3]

क़िस्सा मुख़्तसर अब ज़ीस्त[4] बउम्मीदे मर्ग है। 'क़ातै बुरहान' चौधरी साहब की नस्र के अजज़ा[5] के साथ भेजा जाएगा ब मुक़ाबला 'बुरहान क़ातै' मुन्तबा[6] देखा जाये, और बेहैफ़[7] व बेमेल अज़राहे इन्साफ़ देखा जाये। मुर्शिदज़ादों को सलामे मसनून[8] और दुआए अफ़ज़ूनी ए उम्र व दौलत पहुँचे।

२

पीर व मुर्शिद,

आज ही एक ख़त चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर साहब के नाम का रवाना किया

---

१. ईश्वर की इच्छा के अनुसार। २. जब आकाश ईश्वर के आदेशानुसार गतिशील है, तो फिर यह क्यों कहते हो कि हमारे ऊपर आस्मान ने यह आफ़त डाली। ३. किसी ने अबुल हसन खिरकानी से पूछा कि आपका क्या हाल है ? उन्होंने कहा—उस आदमी का क्या हाल होगा जिससे ईश्वर कर्त्तव्य-परायण होने के लिए कहता है और पैगम्बर सुन्नत (मुहम्मद ने जैसा किया, वैसा करो), पत्नी धन चाहती है और यमराज प्राण। ४. जीवन। ५. गद्य के अंश। ६. छपा हुआ। ७. बिना पश्चात्ताप। ८. अभिवादन-श्रुत।

है और इस खयाल से कि वो गर्मी ए हंगाम ए शादी[1] मे इस खत का आपकी नज़र से गुज़रानना भूल न जाये, ये खत जुदामाना आपको आज ही भेजता हूँ। असहाबे सुल्सा की इबारत नस्रे मुरज्जज़[2] के बाब मे इतनी ही है, 'वज़न दारद, सजा नदारद[3], खुदा के वास्ते, वज़न तफ़्तीहे शेर[4] को कहते हैं, वो मिसाल की नस्र मे कहाँ है? सजा उसको कहते हैं कि कल्माते फ़िक्रतैन[5] वज़न में बराबर हों, ये सनत मिसाल की नस्र में मौजूद है। जो है उसका सल्ब[6] जो नहीं उसका सुबूत क्यों कर मानूं? क्या आपकी ये मर्जी है कि अल्फ़ाज़ के हम वज़न होने को वज़न तफ़्तीहे शेर क़ो सजा मान ले। मै तो न मानूंगा। आपको इख़्तियार है। ये कलाम मासूम का नही कि उसके मुसल्लम[7] न रखने से आदमी काफ़िर हो जाये। ज़बाने फ़ारसी मुर्दे का माल है। अरब के हाथ बतरीक़े यग़मा[8] आया है, जिस तरह चाहे सर्फ़[9] करे।

खाजा नसीरुद्दीन 'तूसी' आठ हर्फ़ का ज़बाने फ़ारसी मे न आना लिखते हैं और 'ज़ाल' (ज़) नुक़तेदार का ज़िक्र नही करते। इल्लाह्[10], कोई लुग़ते फ़ारसी[11] का ऐसा बताइये कि जिसमे 'ज़ाल' (ज़) आई हो? गुज़ाश्तन व गुज़िश्तन व पिज़ीरफ़्तन सब ज़े (ज़) हैं। काग़ज़ 'दाल' (द) मोहमिला[12] से है, उसका ज़ाल से लिखना और कवाग़ज़ को उसकी जमाक़रार देना तारीब[13] है बतहक़ीक[14] आवर इस्मे आतिश वदाले अबजद है न बदाले शखज[15] कोई लफ़्ज़ मुत्तहदुल मखरज[16] फ़ारसी में नहीं बल्कि क़रीबुल

---

१. विवाह की व्यस्तता। २. जिस गद्य के दो वाक्य अन्त्यानुप्रास और समान गतिवाले हो। ३. एक प्रकार की गति हो, अन्त्यानुप्रास न हो। ४. लय, गति। ५. दो चरण। ६. ढग। ७. प्रामाणिक। ८. लूट का माल। ९. व्यय। १०. इसके अतिरिक्त। ११. फ़ारसी का शब्द। १२. निरर्थक 'द'। १३. किसी अन्य भाषा का अरबीकरण। १४. जाँच से। १५. अ ब ज द को 'द' से, श ख ज़ को 'द' से नहीं। १६. निश्चित उद्गम। १७. तद्भव।

मख़रज[७] भी नहीं। 'ते' है 'तो' नहीं, 'सीन' है 'से' नहीं, 'स्वाद' नही, 'हाए हन्मज़' है 'हाए हुत्ती' नहीं। यहाँ तक कि क़ाफ़ नहीं। इस राह से कि ग़ैन मुत्तहदुल मख़रज बल्कि क़रीबुल मखरज़ है। 'ज़े' के होते 'जाल' क्यों कर ?

वो मियाँ साहबे हाँसी के रहने वाले बहुत चौड़े-चकले जनाब अब्दुल वासह फ़रमाते है कि 'बेमुराद' सही और 'नामुराद' ग़लत। अरे सत्यानास जाये, 'बेमुराद' और 'नामुराद' मे वो फ़र्क़ है जो ज़मीन व आसमान मे है। 'नामुराद' वो है कि जिसकी कोई मुराद, कोई ख़ाहिश, कोई आरज़ू बर न आवे। 'बेमुराद' वो कि जिसका सफ़ ए ज़मीर[१] नुक़ूशे मुद्आ[२] से सादा हो, अज़ क़िस्म बे मुद्आ बे ग़र्ज़ व बेमतलब, हस्बतिल्लाह। इन दोनों अम्रों मे कितना फ़र्क है ? 'ना परवाह' और 'नाकाम' और 'ना दुरुस्त' और 'नाचार' के ये मुख़फ़्फ़फ़[३] 'ना आहार' है और 'नामुराद' और 'ना इन्साफ़' ये सब दुरुस्त है। हाँ, कहाँ गये हाँसी वाले मुअल्लिम[४]।

क़ाफ़िया शायगाँ[५] कि जिसको अरब ईता कहता है, वो दो तरह पर है, ख़फ़ी[६] व जली[७]। अहले ख़िरद[८] ने खाक उड़ाई है। और बात बनाई है। खफ़ी और जली की तफ़सीर[९] में वो कुछ लिखा है कि साहब तबए सलीम[१०] कभी उसको न समझे, चे जाए आँके माने[११]। असल ये है कि ईता को क़ाफ़िया है कि जो दो हर्फ़ एक सूरत के हों जैसे अलिफ़ फ़ाइल गोया व बीना व शनवा। शेरे असीर—

---

१. अन्तःकरण। २. इच्छा के चिह्न। ३. सक्षिप्त। ४. अध्यापक। ५. शब्द के बहुवचन द्वारा निर्मित अन्त्यानुप्रास। ६. गुप्त। ७. व्यक्त। ८. बुद्धिमान लोग। ९. व्याख्या। १०. बुद्धिमान्। ११. मैं क्या समझूं।

साहबे आलम मारहरवी

ऐ दान ए तसबीहे खयालत दिले दाना
सद हल्क़ए मस्ताने रुखत दीदर बीना[1]

और 'नून' 'दाल' मुज़ारे[2] का जैसा उस्ताद के इस मतले में है—

दिल शीशओ चश्माने तो हर गोशा बरन्दश
मस्तस्त मबादा के ब्बनागाह सिकन्दश[3]

और ऐसा ही है 'अलिफ़' 'नून' जमा का, मिस्ले[4] चिराँग़ा व जवानाँ और ऐसा ही है आलिफ़-नून हालिया[5] मानिन्द गिरियाँ व खन्दाँ। पस अगर ये मतले में आ पड़े तो ईता ए जली[6] है, अगर ग़ज़ल या क़सीदे में बतरीक़े तकरार[7] काफ़िये मे आ पड़े तो ईता ए खफ़ी[8] है। अइम्मा ए फ़न[9] ने वो कुछ लिखा है कि समझ मे नही आता। अगर क़ायले तहक़ीक़ हो तो मेरे बयान पर गौर करो और जो अब्दुल बासह और ग़यासुद्दीन और अब्दुल रज़्ज़ाक इन नामों की शौक़त नजर में है, तो तुम जानो। एक शरूस भीक माँगता है, बाप ने उसका नाम मीर बादशाह रख दिया है।

अस्ल फ़ारसी को इस खत्री बच्चे 'क़तील' अलै माअलैं[10] ने तबाह किया। रहा-सहा ग़यासुद्दीन रामपूरी ने खो दिया। उनकी-सी क़िस्मत कहाँ से लाऊँ जो साहब आलम की नज़र मे ऐतवार पाऊँ? ख़ालसन् लिल्लाह्, ग़ौर करो

---

१. बुद्धिमान् लोगों के लिए तुम्हारा ध्यान ही माला जपने का काम करता है। दृष्टि रखने वाला जब तुम्हारा दर्शन करता है तो मस्त हो जाता है। २. विधि-व्याकरण। ३. नेत्र और हृदय चारों ओर से उसकी ओर आकर्षित है। वे सब मस्त हैं, ऐसा न हो कि वे उसे नष्ट कर दें। ४. समान। ५. वर्त्तमानकालिका। ६. प्रकट। ७. पुनरावृत्ति। ८. ग्रह। ९. कला का नेतृत्व करने वाले। १०. वे और जो उनके साथी हैं।

कि वो ख़राने ना मुशख़्ख़स[1] क्या कहते हैं और मैं ख़स्ता व दर्दमन्द क्या बकता हूँ। वल्लाह, न कतील फ़ारसी शेर कहता है और न ग़यासुद्दीन फ़ारसी जानता है। मेरा ये ख़त पढ़ो। ये नहीं कहता कि ख़ाही न ख़ाही पढ़ो। क़ुव्वते मुमय्यज़ा[2] से काम लो, इन ग़ोलो[3] पर लानत करो, सीधी राह पर आ जाओ अगर नहीं आते तो तुम जानो। तुम्हारी बुज़ुर्गी और मिर्ज़ा तफ़्ता की निस्बत पर नज़र करके लिखा है, नही कहता कि ख़ाही न ख़ाही मेरी तहरीर को मानो। मगर उस ख़त्री बच्चे और उस मुअल्लिम[4] से मुझको कमतर न जानो। अरबी का हर्फ़ और है और फ़ारसी का क़ायदा और है। समझो या न समझो तुमको इख़्तियार है। अक़्ल को काम फ़रमाओ, गौर करो समझो, अब्दुलवासह पैगम्बर न था, क़तील ब्रह्मा न था, 'वाकिफ़' गौसुल आजम[5] न था। मैं यज़ीद[6] नही हूँ, शिमर[7] नही हूँ। मानते हो मानो, न मानो तुम जानो।

३

बाद हम्दे ख़ुदावन्द[8] व नाते रसूल सल्लल्ला अलेह व सल्लम[9] पहले किब्ल ए रूह व ख़ां[10] जनाब साहब आलम साहब को बन्दगी और हज़रत मक़बूल आलम की शादी की मुबारकबाद, क्या अर्ज़ करूँ कि मेरा हाल क्या है ? इज़्मेहलाल क़ुवा[11] का हाल मुख़्तसर ये है कि अगर कोई दोस्त ऐसा कि जिससे तकल्लुफ़

---

१. अविदित मूर्ख। २. विवेक शक्ति। ३. शैतान। ४. अध्यापक। ५. शेख अब्दुलकादर जीलानी का विरद। ६. अमीर मुआविया का पुत्र, दुश्चरित्र, इसी ने इमाम हुसैन को शहीद कराया था। ७. यजीद की सेना का एक अधिकारी, इसी ने हजरत हुसेन को मारा था। ८. ईश-स्तुति के पश्चात्। ९ ईश्वर उनकी रक्षा करे, उन हजरत मुहम्मद की स्तुति। १०. पवित्र आत्मा। ११. शरीर की शिथिलता।

की मुलाक़ात है, आ जाये तो उठ बैठता हूँ, वर्ना पड़ा रहता हूँ। जो कुछ लिखना होता है वो भी अक्सर लेटे-लेटे लिखता हूँ। आज दोपहर को मीर अब्दुल अज़ीज़ साहब आये। मैं बे कुलाह[1] व पैरहन[2] पलंग पर लेटा हुआ था। उनको देखकर उठा, मुसाफ़िहा[3] किया। उन्होंने जनाब शाह आलम साहब का खत मय मसविदाते अशार दिया और फरमाया कि परसों जाऊँगा। अर्ज़ किया कि आखिरे रोज़[4] आप तशरीफ़ लाये, खत का जवाब और इस्लाही मसविदा ले जायें। वो तशरीफ़ ले गये, मैं लेट रहा। दिन को सोने की आदत नही है। जी में कहा आओ, बेकार क्यों रहो, खत का जवाब आज लिख रखो। उठे कौन ? बक्स खोले कौन ? लड़कों की दवात क़लम मूँढे पर पलंग के पास रख ली। अब सुक़तज़ी[5] इसका हुआ कि आग़ाज़नामा बनाम बनाम अक़्दस[6] हो।

हज़रत नुस्खा 'क़ातै बुरहान' तीसरी-चौथी नजर मे मुकम्मिल होकर मसविदात एक कातिब के हवाले हुए। आठ जुज़्ब[7] लिखे गये। काम व बेश दो जुज़्ब बाकी है। परसों तक आ जाएँगे। बाद इसके इन्तिवा की फ़िक्र होगी। जब वो अज़ीमत[8] अम्ज़ापिज़ीर[9] हो जाएगी हजरत की नजर से भी शर्फ़ पाएगी। हजरत सैयद आलम को नियाज खुरशीदे आलम को सलाम, चौधरी साहब को न सलाम, न नियाज, सिर्फ़ ये पयाम[10] कि हम तुम्हारे खत को मुफ़र्रहे रूह[11] समझते थे। बातों का मज़ा मिलता था,खैर व आफ़ियत मालूम हो जाती थी, वो वज़ीफ़ ए रूहानी[12] मुन्क़ता[13] क्यों हुआ ? साहब ये रविश अच्छी नहीं। गाह गाह रसल व रसायल[14] का तौर बना रहे।

---

१. बिना टोपी। २. बिना वस्त्र पहने। ३. हस्तान्दोलन। ४. सायंकाल। ५. आग्रही। ६. पवित्र। ७. सोलह पेज का फर्मा। ८. निश्चय, तंत्र-मत्र। ९. भेजने योग्य। १०. सन्देश। ११. आत्मा को हर्षित करने वाला। १२. आत्मिक भोजन। १३. समाप्त, रोका हुआ। १४. पत्र-व्यवहार।

४

(१८६१ ई०)

पीर व मुर्शिद,

इस मतले व हुस्ने मतले[1] को क्या समझूँ और उसका शुक्र क्यों कर बजा लाऊँ ? खुदा की बन्दानवाजियाँ[2] हैं कि मुझ नगे आफ़रीनशे[3] को अपने खासाने दरगाह[4] से भला कहवाता है। जाहिरा मेरे मुक़द्दर मे ये सआदते उज्मा थी कि मै उस वबा ए आम[5] मे जीता बच रहा। अल्लाह् अल्लाह। ऐसी कुश्तनी व सोख्तनी[6] को यों बचाया और फिर इस रुतबे को पहुँचाया। कभी अर्श[7] को अपने नशेमन[8] क़रार देता हूँ और कभी बहिश्त को अपना पईबाग[9] तसव्वुर करता हूँ। वास्ते खुदा के और अशार न फरमाइएगा वर्ना बन्दा दावए खुदाई[10] करने मे मुहाबा[11] न करेगा।

"किताबे इफ़ादत माब पजे आहग नुस्ख ए शरीफ़ तालीफ़"

इसके आगे ग़ुलाम से कुछ न पढ़ा गया, मगर चौधरी साहब और हज़रत शाह अमीर साहब और मौलवी फ़ज्लेअहमद साहब ये तीन इस्म[12] मालूम हुए। फिर भी दूसरे इस्म मे मुतरद्दिद[13] हूँ कि आया मेरा क़यास मुताबिक़े वाक़े[14] है या नही। हाँ, चौधरी साहब और मौलवी फ़ज्ले अहमद साहब, इन दो नामो मे तरद्दुद बाक़ी नही। माहाज़ा ये न समझा कि मकसूद[15] । क्या है ? अगर

---

१. गजल मे पहले शेर का दूसरा शेर। २. भक्तवत्सलता। ३. निर्लज्ज। ४. निजी निवासस्थान। ५. सामान्य विपत्ति। ६. जलाने योग्य। ७. नवे आकाश मे ईश्वर का आसन। ८. आश्रय। ९. गृहोद्यान। १०. ईश्वरत्व का दावा करना। ११. आगा-पीछा। १२. नाम। १३. चिन्तित। १४. वास्तविक। १५. अभीष्ट।

पंजआहग मतलूब[1] है तो उसका जवाब ये है कि मेरा एक सबबी[2] भाई है नवाब ज़ियाउद्दीनखाँ सल्लमुल्लाह ताला वो मेरी नज़्म व नस्र को फ़राहम करता रहता था। चुनाँचे "मजमूअ ए नस्र"[3] और "कुल्लियाते नज़्मे उर्दू"[4] सब नुस्खे इसके क़ुतुबखाने मे थे। वो क़ुतुबखाना, डर कर अर्ज़ करता हूँ, बीस हज़ार रुपये की मालियत का होगा, लुट गया। एक वर्क़ न रहा। हाँ, छापे की पज आहगे अब भी बिकती है और मायूब वद[5] व ऐब है, एक तो ये कि जो बादे इन्तबा अज़ किस्म नस्र तहरीर हुआ है, वो इसमें नही, दूसरे कापीनवीस ने वो इस्लाह मेरी नस्र को दी है कि मेरा जी जानता है। अगर कहूँ कोई सतर गलती से खाली नही तो इग़राक़[6] है। बेमुबालिग़ा ये है कि कोई सफ़ा अंगलात से खाली नहीं बहरहाल अगर फ़रमाइये तो लेकर भेज दूं। मखदूमज़ादा हाए वाला तबार[7] पहला नाम समझ मे नही आया, मगर पहले उनकी खिदमत मे और फिर सैयद मक़बूले आलम की खिदमत मे सलामे मसनून और इश्तियाक़े रोज़ अफ़ज़ूं अर्ज़ करता हूँ।

५

(२६ अगस्त, १८६६ ई०)

हज़रत साहब क़िब्ला काबा जनाब साँहिबे आलम को फ़क़ीर असदुल्लाह् की बन्दगी।

दीबाचे[8] का अज़ीमाबाद को रवाना होना मालूम हुआ, मगर ये न मालूम हुआ कि लख्ते जिगर[9] व नूरे बसर[10] मौलवी सय्यद फ़र्ज़न्द अहमद को वो दीबाचा पसन्द आया या नहीं। हाथ राशादार[11], आँखे जईफ़ुल बसर[12] हवास मसलूब[13] हैं।

---

१. अभीप्सित। २. कारण बन्धु। ३. गद्य-संकलन। ४. समग्र उर्दू-काव्यसंग्रह। ५. दोषपूर्ण, निकृष्ट। ६. अतिशयोक्ति। ७. श्रेष्ठ, कुलीन। ८. प्रतिदिन वृद्धिशीलता की लालसा। ९. भूमिका। १०. हृदय का टुकड़ा (पुत्र)। ११. आँख की ज्योति। १२. कम्पन-युक्त। १३. आँख की दृष्टि, जीर्णशीर्ण।

क़िस्सा मुख़्तसर मिनकुल्लुलवजूह[1] ग़ालिब मग़लूब[2] है। दो महीने हुए मुंशी हरगोपाल तफ़्ता बसवारी रेल यहाँ आये। एक शब रहे। सुबह को तशरीफ़ ले गये।

मख़दूम ज़ादए शाह आलम को सलाम और ये पयाम कि बुतलाने हिस हाफ़िज़े[3] के सबब आपके इख़वान[4] के नाम भूल चुका हूँ। उन सब साहबों की ख़िदमत में और मियाँ बरकात हसन साहब और चौधरी अब्दुलग़फ़ूर साहब की ख़िदमत में सलाम पहुँचाये और ये भी कह दें कि मौलवी ग़ुलाम ग़ौसख़ाँ मीर मुंशी ने आपका दीबाचा और मेरा मजमूअ ए नस्र मुरत्तब[5] करके मुंशी मुम्ताज़ अलीख़ाँ को भेज दिया है। अब छपवाने में उनको इख़्तियार है।

—असद

---

१. पराजित। २. स्मरणशक्ति का लोप। ३. पारिवारिक जन। ४. क्रमबद्ध।

शाह आलम के नाम

१

(१८६० ई०)

मख़दूमज़ादा वाला तबार[1] हज़रत शाह आलम सलाम व दुआए दरवेशाना[2] क़ुबूल फ़रमाये। आपका माल ख़ैर[3] वतन पहुँचना और बुज़ुर्गों के क़दमबोस[4] और भाइयों के हमागोश[5] होना आपको मुबारक हो—

यूसुफ़ अज़ मिस्र बकनाँ आमद[6]

तफ़र्क़ए औक़ात[7] व सफ़रे रामपूर व शिद्दते तमव्वुज[8] मुक़्तज़ी[9] इसकी हुई कि हनोज़ तुम्हारे मसविदात देखे नही गये ता नुज़ूले बाराने रहमते इलाही[10] और भी चुपके बैठे रहो। अपने मामूँ साहब को नियाज़े मौतक़दाना[11] और अपने भाइयों को सलामे मुख़लिसाना[12] कहिएगा और अपने वालिद माजिद[13] यानी मेरे मुर्शिद हमउम्र[14] व हमफ़न[15] को वो सलाम जिससे मुहब्बत टपके और इश्तियाक बरसे, पहुँचाइएगा और अर्ज़ कीजिएगा कि आरज़ू ए दीदार[16] हद से गुज़र गई। या रब जब तक हज़रत साहबे आलम को मारहरा मे और

---

१. श्रेष्ठकुल। २. साधुओं का आशीर्वाद। ३. सकुशल। ४. चरण-चुम्बन। ५. आलिंगित। ६. यूसुफ़ मिश्र से कनाँ मे आये। ७. समय का अन्तर। ८. हिलोरों की अधिकता। ९. प्रेरक, कारण। १०. जब तक ईश्वर की दया-वर्षा न हो। ११. श्रद्धायुक्त अभिवादन। १२. शिष्ट नमस्कार। १३. आदरणीय पिता। १४. समवयस्क। १५ सम-व्यवसायी। १६. दर्शनाभिलाषी।

अनवरद्दौला को कालपी में न देख लूं और उनसे हमकलाम[1] न हो लूं, मेरी रूह कब्ज़ का[2] हुक्म न हो। लेकिन १२७७ हि० में दो महीने बाकी हैं। अब के मुहर्रम से इस ज़िलहज्जा तक मेरा मुद्आ हासिल हो जाये।

मुशफ़क़ी मुकर्रमी[3] चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर साहब को मेरा सलाम कहिएगा और ये पयाम पहुँचाइएगा कि हज़रत साहबे आलम की तमन्नाए दीदार[4] बकदे[5] मारहरा किनाया[6] इससे है कि और किसी का दीदार भी मतलूब है--

खाहिशे वस्ल[7] मुक़द्दर है को मज़कूर[8] नहीं

उनके उस खत का जवाब जो परसों मुझको पहुँचा है, सोमजामे में लपेट कर भेजूंगा। इन्शा अल्लाह् उल अज़ीज़।

हाँ, जनाब शाहआलम साहब फिर रू ए सुखन आपकी तरफ़ है। जनाब मीरवज़ीर अलीसाहब बिलगिरामी यहाँ तशरीफ़ लाये मेरे मस्कन[9] से एक हीर परताब[10] के फ़ासले पर चाँदनी चौक में क़ुतुबुद्दीन सौदागर की हवेली मे उतरे हैं। मुरफ़ी साहब का काम उनके सुपुर्द हुआ है, यानी डिप्टी कलक्टर और डिप्टी मजिस्ट्रेट हैं और हज़ार रुपये तक का मुक़द्दमा अदालते दीवानी का भी करते हैं। लेकिन हनोज क़ायम मुक़ाम[11] हैं। वो साहब जिसका नाम लिख आया हूं, बतरीक़े रुखसत सपाटू गया है। एक दिन फकीर भी उनके मकान पर चला गया था। हुस्ने सूरत[12] और हुस्ने सीरत[13] दोनों उनमे जमा हैं। आँखे उनके हुस्ने सूरत से रोशन हो गई और दिल उनके हुस्ने सीरत से खुश हो गया। वाह, खाके पाक बिलगिराम[14] मैंने वहाँ के जिस बुज़ुर्गवार को देखा, बहुत अच्छा पाया।

---

१. वार्त्तालाप। २. शरीरत्याग का। ३. दयालु मित्र। ४. दर्शन की लालसा। ५. शर्त के साथ। ६. संकेत। ७. मिलन की इच्छा। ८. उल्लेखनीय। ९. घर। १०. वह अन्तर जो तीर फेकने और जाकर गिरने के स्थानों के बीच मे हो। ११. स्थानापन्न। १२. मुख का सौन्दर्य। १३. स्वभाव का सौन्दर्य। १४. बड़ी गराम की पवित्र मिट्टी।

२

(२५ अगस्त, १८६० ई०)

मख़दूम ज़ादे आलीशान, मुक़द्दसे दूदमान[1] हज़रत शाह आलम अम्न व आमान[2] व इज्ज व शान[3] व इल्म व उम्र से बरख़ुर्दार[4] रहें। हमारे हज़रत हमको भूल गये। हाँ, सच है उनका लुत्फ़ चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर साहब के जौहरे मेहर व मुहब्बत[5] का अर्ज़ था। जब जौहर न रहा तो अर्ज़ कहाँ ? बहरहाल जनाब हज़रत साहबे आलम साहब को मेरी बन्दगी पहुँच जाये और ये सतरें उनकी नजर से गुज़र जायें। चौधरी अब्दुलग़फ़ूर खाँ साहब को सलाम कहिएगा और ये पूछिएगा की कसीदे का बाद इस्लाह के न पहुँचना मेरा गुनाह है या उसके सिवा कोई और क़ुसूर है ? अगर वही जुर्म है तो माफ़ कीजिए, अगर कोई और जुर्म भी है तो मुझे इत्तिला दीजिये।

इन दो पयाम की तबलीग[6] के बाद फिर रू ए सुख़न आपकी तरफ़ है। आपका ख़त मेरे नाम का और उसके साथ एक ख़त डिप्टी मीर वजीरअली साहब के नाम का पहुँचा, वो पढ़ा और भिजवा दिया। जो आदमी ख़त लेकर गया था वो दुबारा जवाब माँगने को गया। पहली बार हुक्म हुआ कि कल आइयो। दूसरी बार हज़रत न मिले। मैंने उसके जवाब से क़तै नज़र करके अपनी ख़िदमत गुज़ारी की आपको इत्तिला दी।

या ए तहतानी[7] लिख चुका था कि एक चपरासी आया और उसने ख़त तुम्हारे नाम का टिकट लगा हुआ दिया, और कहा कि डिप्टी साहब ने सलाम कहा है और ये ख़त दिया है। अब मैं ये ख़त अपना मय उनके ख़त के डाक घर मे भेजता हूँ। सुबह का वक़्त, यकशम्बा का दिन, ८ सफर और २५ अगस्त

---

१. पवित्र वंश। २. शान्ति। ३. प्रतिष्ठा ४। सुपुत्र। ५. ममता और प्रेम का प्रताप। ६. प्रचार। ७. वह 'य' जो नुक़्ते के साथ लिखा जाता है।

की है। डिप्टी साहब चाँदनी चौक-हाफ़िज़ क़ुत्बुद्दीन सौदागर की हवेली मे रहते हैं। बाक़ी उनके हालत उनके खत से मालूम हो जायेगे। अपने मामूँ साहब की खिदमत मे नियाज और अपने भाई साहबों की खिदमत मे फ़कीर की दुआ पहुँचाइएगा।

वस्सलाम। ८ सफ़र, २५ अगस्त।

अब्दुल रज़्ज़ाक़ 'शाकिर' के नाम

१

मख़दूम व मुकर्रम, मज़हरे लुत्फ़ व करम[1] जनाब मौलवी साहब अशरफ़ुल वकला[2], दरवेश गोशानशी[3] ग़ालिब हज़ी[4] का सलाम। आपके इनायतनामे के वुरूद से मैं आपका एहसानमन्द हुआ और दिल से आपको दुआएँ दीं। क्यों हज़रत, आप हैरान हुए होंगे कि ये शख़्स इतना फ़िज़ूल और लग़ो[5] क्यों है? ख़त के पहुँचने से इज़हारे मिन्नतपज़ीरी[6] अगर गिज़ाफ़[7] नहीं तो क्या है? अब इस ख़ुशी और दुआएँ देने की वजह सुनिये, यानी आपके सबब मैंने अपने वाला बिरादर अज़जाँ अज़ीज़तर[8] ब दिल नज़दीक व अज़ दीदादूर[9], ना मेहरबान बख़ुद मग़रूर मीर क़ासिमअली ख़ाँ का रुक़्क़ा अपने नाम का पाया। अल्लाह् अल्लाह् अगर आप बाअस[10] न होते तो भाई साहब काहे को मुझको ख़त लिखते। उन्हीं से पूछिए कि कभी तुमने असद को ख़त लिखा है? पस, बाद इस तौज़ीह[11] के, आपकी तहरीर का जवाब लिखता हूँ।

आपका, वास्ते इस्लाह कलाम के, रुजू करना मेरी तरफ़ मूजिब नाज़िश[12] का है। मेरी तरफ़ इस फ़ने ख़ास में ये है कि जो शेर बे ऐब होता है, उसको बदस्तूर रहने देता हूँ और जहाँ लफ़्ज़ के बदले लफ़्ज़ लिखता हूँ, उसकी वजह ख़ातिर निशान कर देता हूँ, ताकि आइन्दा साहब कलाम[13]

---

१. आनन्द और दया के उद्भव-स्थल। २. वकीलो में श्रेष्ठ। ३. एकान्तसेवी साधु। ४. दुःखी। ५. निरर्थक। ६. कृतज्ञता प्रकाशन। ७. असत्य। ८. प्राण से भी प्रिय। ९. हृदय के निकट आँखों से दूर। १०. कारण। ११. स्पष्टीकरण। १२. गर्व का कारण। १३. कवि।

इस क़िस्म के कलाम मे ख़ुद अपने कलाम का मसलह[1] रहे। मत्ले का ये मिस्रा—

सरख़ुश सरशार मस्शम यल्ले[2]

लिसाने फ़ारसी[3] में 'सरशार' सिफ़त[4] है प्याले की, माने लफ़्ज़ी इसके लबरेज। पस शारिब[5] को लबरेज़ क्योंकर कहेंगे। और ये जो उर्दू 'मस्त व सरशार' मुतरादिफ़ुल मानी[6] इस्तिमाल मे आते है, अम्र जुदागाना है। फारसी में ततब्बो[7] उर्दू का नाजायज। 'रिन्दे आलम सोज़' शोअरा ए अजम[8] मे बमानी रिन्दे बेनाम ब नंग आया है, जैसा कि उस्ताद कहता है—

रिन्दे आलम सोज़ रा बा मस्लहत बीनी चेकार[9]

हुस्ने मत्ला मुस्त था। 'मी रसद बर बादा·····' 'बरशीशा' यहाँ अन्सब[10] है। 'ज़लहद चूं ख़ाक जस्तम·····' ख़ाक को जस्तन से क्या इलाक़ा? "नक़्द जाँ रा मेहर बस्तम यल्ले" ताक़ीद मानदी है। "तालिबे अहदे अलस्तुम···" "तालिबे अहदेअलस्त" यानी अहदेअलस्त" किससे माँगता है? हाँ" सरख़ुश अहदेअलस्त ब महल व ब मौक़ा।

मुतवक़्के[11] हूँ कि मेरा ये रुक़्क़ा जो आपके नाम का है, जनाब मीर क़ासिमअलीख़ाँ साहब को पढ़ा दीजियेगा और अब जो आप मुझे खत लिखें, तो ये भी लिखिएगा कि हनोज़ वो सद्र अमीन हैं या तरक़्क़ी की और सद्रुस्मुदूर[12] हो गये और अगर तरक़्क़ी नहीं की तो क्या वजह?

---

१. पथ-प्रदर्शन। २. बहुत मस्त, (यहाँ सब शब्द पर्यायवाची है)। ३. फ़ारसी भाषा। ४. विशेषण। ५. पीने वाला। ६. समानार्थक। ७. अनुकरण। ८. ईरानी कवि। ९. पीने वाले को इससे मतलब क्या कि संसार मे क्या अच्छा है और क्या बुरा है। १०. बहुत उचित। ११. आशान्वित। १२. प्रधान न्यायाधीश।

अब्दुलरज्ज़ाक़ 'शाकिर' के नाम

२

जनाब मौलवी साहब मख़दूम मौलवी मुहम्मद अब्दुलरज्ज़ाक़ साहब 'शाकिर' की ख़िदमत मे बाद सलाम ये इल्तिमास[1] है कि मौलवी साहब आलीशान मौलवी मुफ़्ती असदुल्लाहखाँ बहादुर की ख़िदमत मे फ़क़ीर का सलाम पहुँचाइये। मैं तो आप से अर्ज करता हूँ मगर आप मुफ़्ती साहब से कहिये कि मुझको बावजूद शिद्दते निसयान[2] आपका तशरीफ़ लाना याद है। छापे के अजज़ा[3] उठा कर मैंने आपके सामने एक गज़ल अपनी पढी थी, जिसके दो शेर क़ताबन्द है—

अज़िन्दा गौहरे चू मनन्दर ज़माना नीस्त
ख़ुद रा ब ख़ाके रह गुज़र हैदर अफ़गनम
मन्सूर फिर्क ए अली उलहियाँ मनम
आवाज़ ए 'अना असदुल्लाह' दर अफ़गनम[4]

ख़ुदा करे हज़रत को भी ये वाक़ा याद हो इत्तिहादे इरमी[5] दलीले मवद्दते रूहानी[6] है।

अख़ी ए मुकर्रम मीर क़ासिमअलीखाँ को सलाम पहुँचे। साले गुज़िश्ता की तातील की तरह दिल्ली आकर मुझसे बे मिले न चले जाइएगा।

---

१. अनुरोध। २. विस्मरण की अधिकता। ३. अंश। ४. इस युग मे मुझसे योग्य कोई नहीं है और मैं अपने को हजरत के मार्ग का रजकण मानता हूँ। मैं अली के मन्सूरिया सम्प्रदाय का हूँ और सारे संसार में "मैं असदुल्लाह" की ध्वनि गुँजा दूँ। ५. एक नाम का होना। ६. आत्मिक मित्रता।

फिर हज़रत मकतूब अलै[1] से कलाम है। अशार बाद हक व इस्लाह[2] के पहुँचते हैं। ये रुतबा मेरा अर्ज़िश के फ़ोक़[3] है कि मैं आपके कलाम में दख़ल व तसर्रुफ़[4] करूँ। बन्दानवाज़, फ़ारसी मे ख़तों का लिखना पहले से मतरूक[5] है। पीराना सरी[6] व ज़ोफ़ के सदमों से मेहनत पज़ोही[7] व जिगर कावी[8] की क़ुव्वत मुझमें नहीं रही। हरारते गरीज़ी[9] को जवाल[10] है और ये हाल है--

मुज़महिल[11] हो गये क़ुवा[12] ग़ालिब
वो अनासिर[13] मे ऐतेदाल[14] कहाँ

कुछ आप ही की तख़सीस[15] नही, सब दोस्तों को जिनसे किताबत रहती है, उर्दू ही मे नियाज़नामे लिखा करता हूँ। जिन-जिन साहबों की ख़िदमत मे आगे मैंने फ़ारसी ज़बान मे ख़ुतूत व मकातीब[16] लिखे और भेजे थे, उनमे जो साहब इलल आन[17] ज़ीहयात[18] व मौजूद हैं, उनसे भी इन्दल ज़रूरत[19] इसी ज़बाने मुख़्वज[20] मे मकातिब व मुरासलत[21] का इत्तिफ़ाक़ हुआ करता है। पारसी मकतूबों, रिसालों, नुस्खो और किताबों के मजमूए शीराज़ा बस्ता[22] छापा होकर अतराफ़ व अक्साए अजम[23] मे फैल गये। हाल की नस्लों को कौन फ़राहम करने जाये ? जाँकनी[24] के खयालात में मुझको उनकी तहरीर व ताल्लुक़ व बार[25] से दस्तबरदार व आज़ाद व सुबुकदोश[26] कर दिया। जो नस्ले कि मजमूअ व यकजा होकर जहाँ-जहाँ

१. जिसे पत्र लिखा गया। २. सशोधन। ३. ऊपर, श्रेष्ठ। ४. परिवर्तन। ५. त्यक्त। ६. बुढ़ापे का समय। ७. श्रम करना। ८. कड़ी मेहनत। ९. स्वाभाविक ऊष्णता। १०. पतन। ११. लुप्त। १२. शरीर के अंग। १३. महाभूत। १४. सन्तुलन। १५. विशेषता। १६. पत्र (ब. व.)। १७. अब तक। १८. जीवधारी। १९. आवश्यकतानुसार। २०. प्रचलित भाषा। २१. पत्र-व्यवहार। २२. सजिल्द। २३. आसपास और ईरान के सुदूरवर्ती प्रदेश। २४. यमयातना। २५. बोझ। २६. छुटकारा।

मुन्तशिर हो गई है और आइन्दा हों, उन्ही को जनाबे अहदियत जिल्लते अज़मतहू मक़बूले क़ुलूले अहले सुखन[1] व मतबूए तबा ए अरबाबे फ़न[2] फरमाइये और मैं अब इन्तिहाए उम्रे ना पायेदार[3] को पहुँच कर आफ़ताबे लबेबाम[4] और हुजूमे अमराज़े जिस्मानी[5] व आलामे रूहानी[6] से ज़िन्दा दर गोर[7] हूँ। कुछ यादे खुदा भी चाहिए। नज़्म व नस्र के कलमरौ[8] का इन्तिज़ाम एज़दे[9] दाना व तवाना[10] की इनायत व अयानत[11] से खूब हो चुका। अगर उसने चाहा तो क़यामत तक मेरा नाम व निशान बाक़ी व क़ायम रहेगा। पस, उम्मीदवार हूँ कि आप उन्हें नज़ूरे मुहक़्क़रा[12] यानी तहरीराते रोज़मर्रा उर्दू ए सादा व सरसरी कोता इमकान ग़नीमत जान कर क़ुबूल फ़रमाते रहें और दरवेश दिलरीश[13] व फ़िरोमाँद ए कशाकशे मग्रासी[14] के ख़ातमा बख़ैर[15] होने की दुआ माँगे। अल्लाह् बस मा सिवा हवस।[16]

ताक़ीदे मानवी[17] को हुज़ूर खुद जानते होंगे। इसकी तौज़ीह् व तफ़सील मे तहसील[18] हासिल व ततवील ला तायल[19] की सूरत नज़र आती है, लिहाज़ा खामे फ़रसाई[20] बरू ए कार[21] नही आती।

---

१. काव्य-मर्मज्ञों के लिए मनोरजक। २. कला के जानकारों के स्वभाव के लिए ग्राह्य। ३. नश्वर आयु की अन्तिम अवस्था। ४. अस्तगत सूर्य। ५. शारीरिक रोगों की बहुलता। ६. आत्मिक क्लेश। ७. जीवित ही कबर मे। ८. राज्य, प्रदेश। ९. ईश्वर। १०. बुद्धिमान् और बलशाली। ११. कृपा और सहायता। १२. तुच्छ भेंट। १३. भग्नहृदय संन्यासी। १४. पाप समूह से संघर्ष करने की विवशता। १५. कुशलता से अन्त। १६. ईश्वर ही पर्याप्त है, शेष व्यर्थ है। १७. अर्थसम्बन्धी निर्देश। १८. प्राप्ति। १९. निरर्थक विस्तार। २०. कलम घिसाई। २१. सार्थकता।

३

(१८६४ ई०)

हज़रत तीन दोस्तों ने "मौलिफ़े मुहर्रिक़"[1] पर, जिसका नाम "साहब तपे मुहर्रिक़" रखा गया है, जूती-पैज़ार की है। एक रिसाला जो मौजूद था, भेजा जाता है। वो दो नुस्ख़े भी अगर बहम पहुँच गये तो भिजवा दूँगा। ग़ज़ल बाद इस्लाह के जाती है। तर्ज़े फ़क़ीर मुबारक हो।

४

हज़रत मतालबे इल्मी और शेअरी का लिखना मौक़ूफ़ सवाल[2] पर है। जब हुज़ूर की तरफ़ से कोई सवाल आएगा, बक़दरे अपने मालूम जवाब लिखा जाएगा—

है अपने गुनहे मुज़ीले उमीद[3]
ईमाँ कहाँ है, एक डर है

इस शेर मे क़स्द अच्छा है, मगर बयान नाक़िस है। मतलब तो ये है कि सिर्फ़ ख़ौफ़ असल ईमान नहीं, रजा[4] का भी शुमूल[5] चाहिए और बात इस तक़रीर मे से निकलती नहीं।

५

पीर व मुर्शिद,

एक शमा है दलीले सहर[6] सो खुमूश है

---

१. ग़ालिब की 'क़ातै बुरहान' नामक पुस्तक के उत्तर में सैयद सआदत अली ने यह पुस्तक लिखी थी। २. सवाल पर निर्भर। ३. पापनाश की आशा। ४. अनुमति। ५. सम्मिलन। ६. प्रभात का प्रमाण।

ये ख़बर है। पहला मिस्रा—

ज़ुल्मत कदे[1] में मेरे शबे ग़म का जोश है

ये मुब्तदा[2] है। शबे ग़म का जोश, यानी अँधेरा ही अँधेरा, ज़ुल्मत ग़लीज़[3] सहर[4] नापैदा, गोया खल्क़[5] ही नहीं हुई। हाँ, दलील सुबह की बूद[6] पर है बुझी हुई शमा, इस राह से कि शमा व चिराग़ सुबह को बुझ जाया करते हैं। लुत्फ़ इस मज़मून का ये है कि जिस शै को दलीले सुबह ठहराया, वो खुद एक सबब है मिनजुम्लए असबाबे तारीकी[7] के। पस देखा चाहिए जिस घर में अलामते सुबह[8] मूइते ज़ुल्मत[9] होगी, वो घर कितना तारीक[10] होगा।

मुत्तक़ाबिल[11] है मुक़ाबिल मेरा
रुक गया देख रवानी मेरी

तक़ाबुल[12] व तज़ाद[13] को कौन न जानेगा? नूर[14] व ज़ुल्मत[15], शादी[16] व ग़म, राहत व रंज, वुजूद[17] व अदम[18] मुक़ाबिल इस मिस्रे में बमानी मुरज्जै[19] है, जैसे हरीफ़ कि बमानी दोस्त के भी मुस्तामल[20] है। मफ़हूमे[21] शेर ये कि हम और दोस्त अज़ रू ए खूब आदते[22] ज़िद हमदिगर[23] हैं। वो मेरी तबा[24] की रवानी देख कर रुक गया।

---

१. ससार, अन्धकारपूर्ण स्थल। २. प्रारम्भित। ३. गन्दा। ४. प्रभात। ५. सृष्टि। ६. अस्तित्व। ७. अन्धकार के कारणों में से एक। ८. प्रातःकाल के लक्षण। ९. अन्धकार की सहायता करने वाले। १०. अन्धकारपूर्ण। ११. सामना। १२. आमना-सामना होना। १३. एक दूसरे के विरुद्ध होना। १४. प्रकाश। १५. अन्धकार १६. खुशी। १७. अस्तित्व। १८. अभाव। १९. ठिकाना। २०. प्रयुक्त। २१. तात्पर्य। २२. स्वभाव की दृष्टि से। २३. परस्पर विरुद्ध। २४. स्वभाव।

ग़ज़ल बाद इस्लाह के पहुँचती है। आप अपनी तरफ़ से इसको इस्तिस्लाह[1] समझते हैं और मैं इसको अपनी जानिब से इस्तिफ़ादा[2] जानता हूँ। वस्सलाम।

६

(१ अगस्त, १८६१ ई०)

फ़क़ीर असदुल्लाह ने इस कागज़ के लिफ़ाफ़े पर मुरसिल ए[3] मुहम्मद अब्दुलरज़्ज़ाक़ जाफ़री उल हैदरी और टिकट पर 'शाकिर' देख कर देर तक गौर की कि ये दो साहिब है। बाद ताम्मुल[4] याद आया कि मौलवी अब्दुल रज़्ज़ाक़ साहब इस्मे शरीफ़[5] और शाकिर तखल्लुस है। ग़ौर कीजिए कि निसयाँ[6] का क्या आलम है! वल्लाह, अगर मुझको याद हो कि साबिक मे कोई ग़ज़ल आपकी आई है, ये लिफाफ़ा लिखा हुआ यकुम अगस्त साले हाल का, कल मैंने डाक से पाया। आज गज़ल को देखा। कल ये लिफ़ाफ़ा रवाना करूँगा।

कोई आता नही तेरे हमता[7] होकर
आईना जब नज़र आया है तो अन्धा होकर

ये मतला दिलनशीं है मगर इतना ताम्मुल है कि आइने को अन्धा कहना चाहिए या नहीं ?

मर्दुमे चश्म सियह[8] जब नज़र आता है तेरा
बैठ जाता है मेरे दिल मे सुवैदा[9] होकर

---

१. परामर्श। २. लाभान्वित होना। ३. प्रेषित। ४. विलम्ब। ६. शुभ नाम। ६. विस्मरण। ७. समान। ८. काला। ९. काला तिल, विश्वास किया जाता है कि यह तिल हृदय पर होता है।

अब्दुलरज्ज़ाक़ 'शाकिर' के नाम

हुरमते मय[1] के लिए पीरे मुगाँ[2] का है ये हुक्म
रीश[3] क़ाज़ी की रहे पम्ब ए मीना[4] होकर

ये शेर बेलुत्फ़ हो गया, किस वास्ते, कि, जब क़ाज़ी की रीश कही तो वो इबहामे रोश[5] कहा रहा। कारगाहे हस्ती मे····।

"दागे सामाँ मिस्ले अन्जुम[6] अन्जुमन" वो शख़्स कि दाग़ जिसका सरमाया व सामान हो। मौजूदियत लाले की मुन्हसिर नुमाइशे दाग पर है वर्ना रंग तो और फूलों का भी लाल होता है। बाद इसके ये समझ लीजिये कि फूल के दरख्त या ग़ल्ला जो कुछ बोया जाता है, दहक़ाँ[7] को जोतने, बोने, पानी देने में मशक़्क़त करनी पड़ती है और रियाज़त[8] मे लहू गर्म हो जाता है। मक़सूद शाइर का ये है कि वुजूद[9] महज रंज व अना[10] है। मुज़ारे[11] का वो लहू जो किश्त व कार[12] मे गरम हुआ है, वही लाला[13] की राहत के खिरमन[14] का वर्क़[15] है। हासिले मौजूदियत दाग और दागे मुख़ालिफ़े राहत और सूरते रंज।

गुंचाता शिगुफ़्ता····कली जब नई निकले बसूरते कल्बे[16] सनोबरी नज़र आये और जब तक फूल बने "बर्गे आफ़ियत" मालूम। यहाँ मालूम बमाने मादूम[17] है और बर्गे आफ़ियत बमानी मायए आराम[18]।

---

१. सुरा की प्रतिष्ठा। २. मधुबाला। ३. डाढ़ी। ४. शराब के शीशे पर (कार्क के प्रचलन से पहले) लगने वाली रुई की डाट। ५. दाढ़ी की श्लिष्टता। ६. तारे के समान। ७. किसान। ८. साधना। ९. अस्तित्व। १०. शोक और कष्ट। ११. किसान। १२. खेती और काम। १३. एक लाल रग का फूल। १४. खलिहान, फसल। १५. बिजली। १६. हृदय। १७. लुप्त, नष्ट। १८. विश्राम का धन।

बर्गे ईसा बगोरे खीश फ़िरिस्त[1]

वर्ग और सर्व वर्ग बमानी साज़ व सामान है। ख़ाबे गुल[2] बा ऐतबार ख़ामोशी व बरजा[3] माँदगी परेशानी ज़ाहिर है, यानी शिगुफ़्तगी, वही फूल की पखड़ियों का बिखरा हुआ होना। गुचा[4] बसूरते दिल जमा है, बावस्फ़ जमीयते दिल गुल को ख़ाबे परीशाँ नसीब है।

"हम से रज़ ···· पुश्ते दस्त" सूरते इज्ज़ और "ख़स बदन्दाँ व काह बदन्दाँ गिरिफ्तन" भी इज़्हारे इज्ज़ है, पस जिस आलम मे कि बाग़ ने पुश्त दस्त[5] ज़मीन पर रख दी हो और शोले ने तिनका दाँतों मे लिया हो, हमसे रज व इज्तिराब[6] का तहम्मुल[7] किस तरह हो ?

क़िब्ला, इब्तिदाए फ़िक्रे सुखन[8] मे 'बेदिल' व 'असीर' व 'शौकत' के तर्ज़ पर रेख्ता लिखता था। चुनाँचे एक गज़ल का मक़ता[9] ये था—

तर्ज़े 'बेदिल' मे रेख्ता लिखना
असदुल्लाहखाँ क़यामत है

१५ बरस की उम्र से २५ बरस की उम्र तक मज़ामीने ख़याली[10] लिखा किया। दस बरस मे बड़ा दीवान जमा हो गया। आख़िर जब तमीज़ आई,

---

१. जो तुम ईसामसीह को देना चाहते हो, वह अपनी कबरों में ले जाओ। ईसामसीह चौथे आकाश पर जीवित हैं। वे प्रलय के समय पृथ्वी पर आकर उपहार स्वीकार करेंगे। इस पद का यह अर्थ भी हो सकता है कि ईसामसीह अपनी सामग्री पहले ही कबर मे भेज चुके हैं। २. फूल की नींद। ३. एक स्थान पर। ४. कली। ५. हथेली। ६. व्याकुलता। ७. सन्तोष। ८. काव्य-रचना के आरम्भिक दिनो। ९. अन्तिम शेर। १०. काल्पनिक विषय।

तो उस दीवान को दूर किया। औराक़[1] एक क़लम चाक किये।[2] दस-पन्द्रह शेर वास्ते नमूने के दीवाने हाल[3] में रहने दिये।

बन्दापर्वर, इस्लाहे नस्री की ज़रूरत नहीं। आपके इन्शा[4] की ये रविशे ख़ास दिलचस्प और बे ऐब है। इस वजह को न छोड़िये और जो मेरा ततब्बो[5] और मुझ पर तवज्जोह मंज़ूर हो तो 'पज आहंग' वग़ैरा मेरी मुसन्निफ़ात[6] को बश्रिमाने नज़र[7] व सर्फ़े हिम्मत[8] मुलाहिज़ा फ़रमाइये और मश्क़[9] बढ़ाइये। चश्मे बद्दूर[10] तबीयत हुज़ूर की निहायत आली और मुनासिब इल फ़न के है। मैं आपकी रसाइए ज़हन[11] और क़ुव्वते क़लम[12] से उमीदे क़वी[13] रखता हूँ कि अनकरीब बहुत ख़ूब लिखिएगा। मेरे और तमाम दोस्तों के फ़ख्र और दुश्मनों के रश्क हो जाइयेगा और इन्नाहाज़ा मिन बरकतुल इल्मे या मौलाना व बिल फज़्ल वल कमाल औलाना।[14]

७

(अक्टूबर, १८६५ ई०)

क़िब्ला व काबा,

फ़क़ीर या दर रिकाब[15] है, सेशम्बा[16], चार शम्बा[17] इन दोनों दिनों में से एक दिन आज़मे रामपूर[18] होगा। तकरीब[19] वहाँ के जाने की रईसे मरहूम[20] की

---

१. पृष्ठ (ब० व०)। २. पूरे फाड़ दिये। ३. वर्त्तमान गजल-सग्रह। ४. गद्य। ५. अनुकरण। ६. रचनाएँ। ७. गहरी दृष्टि से, ध्यानपूर्वक। ८. धैर्यपूर्वक। ९. अभ्यास। १०. बुरी नज़र न लगे। ११. बुद्धि की पहुँच। १२. लेखनी की शक्ति। १३. बहुत आशा। ४१. हे मौलाना, जो अपनी योग्यता में बहुत श्रेष्ठ हैं। १५. रिकाब पर पाँव। १६. मंगलवार। १७. बुधवार। १८. रामपुर पहुँचना १९. अवसर, समारोह। २०. स्वर्गीय-नरेश।

ताज़ियत[1] और रईसे हाल[2] की तहनियत[3]। दो-चार महीने वहाँ रहना होगा। अब जो कोई ख़त आप भेजे तो रामपूर भेजे। मकान का पता लिखना ज़रूर नहीं, शहर का नाम और मेरा नाम काफ़ी है।

मुख़म्मस[4] बाद इस्लाह, भेजा जाता है। हक़ तो ये है कि शेर आप रहते हैं और हज़[5] मैं उठाता हूँ। हुस्ने इत्तिफ़ाक़[6] से इस्लाहे ख़म्से[7] के वक़्त दोस्त ग़मगुसार[8], यारे वफ़ाशिआरे रोज़गार[9] ख़त्मुल उल्मामुतबह्हरैन[10] मुतबह्हरैल[11] मौलवी मुफ़्ती सद्रुद्दीनख़ाँ साहब बहादुर सद्रुस्सुदूर[12] देहली अलमुतख़ल्लिस व 'आज़र्दा' दामे बक़ा व ज़ादे अला[13] कि मुझसे मिलने ग़मख़ाने[14] पर तशरीफ़ लाये हुए मौजूद थे, ख़म्से को देख कर पसन्द फ़रमाया। हुज़ूर की बलाग़त[15] की तहसीन[16] की। अरबी मिस्रों के मेरे साथ शरीके ग़ालिब होकर मज़े लूटे और आपकी शीरीनीए गुफ़्तार[17] के वस्फ़[18] मे ता देर अज़बुलबयान[19] रुत्बुलनिसान[20] रहे। और मुझसे बक़द्र मेरे मालूम व बयान के आपकी सिफ़ाते हर्मादा[21] से वाक़िफ़ व आगाह होकर बहुत शाद व ख़ुर्सन्द[22] हुए। मुबारक हो। नादीदा[23] व ग़ायबाना[24] यानी महज़ मुश्ताकाना[25] व तमन्ना ए मुलाकात[26] व इज्ज़ व

---

१. शोक प्रकाशन। २. वर्तमान नरेश। ३. बधाई। ४. जिस कविता के प्रत्येक पद मे पाँच चरण रहते हैं। ५. आनन्द। ६. सयोग। ७. ऐसी कविता जिसके प्रत्येक पद मे पाँच पंक्तियाँ होती हैं। ८. सहानुभूति रखने वाला। ९. प्रेमी मित्र। १०. अगाध पांडित्ययुक्त महा विद्वान्। ११. मुस्लिम धर्मशास्त्रवेत्ता। १२. प्रधानन्यायाधीश। १३. श्रेष्ठ वंश की अवशिष्ट सम्पत्ति और सुपुत्र। १४. शोकग्रस्त घर। १५. गद्य अथवा पद्य की आलंकारिक शैली। १६. प्रशंसा। १७. वाणी की मधुरता। १८. प्रशंसा। १९. मधुरभाषी। २०. मधुर भाषा का प्रयोग करने वाले। २१. पुनीत प्रशंसा। २२. प्रसन्न और प्रमुख। २३. जिसे नहीं देखा गया। २४. परोक्ष। २५. प्रेमी होने के नाते। २६. भेंट की लालसा के कारण।

नियाज़[1] लिखने की इर्शाद कर गये हैं। लिहाज़ा मैं लिखता हूँ। क़ुबूल फ़रमाइएगा।

८

(१८६५ ई०)

किब्ला,

पहले मानीए अबयात के मानी[2] सुनिये।

"नक़्शे फर्यादी···" ईरान में रस्म है कि दादख़्वाँ[3] काग़ज़ के कपड़े पहन कर हाकिम के सामने जाता है। जैसे मशाल दिन को जलाना या ख़ून आलूदा[4] कपड़ा बाँस पर लटका कर ले जाना। बस शाइर ख़याल करता है कि नक़्श किसकी शोख़ी ए तहरीर का फ़रयादी है कि जो सूरते तस्वीर है, उसका पैरहन[5] काग़ज़ी है। यानी हस्ती अगरचे मिस्ले तसावीरे ऐतबारे महज़ हो, मूजिबे रज व मलाल व आज़ार[6] है।

"शौक़ हर रग·····" रक़ीब[7] बमानी मुख़ालिफ़ यानी शौक़ सरो सामान का दुश्मन है। दलील ये है कि क़ैस[8] जो ज़िन्दगी में नगा था, तस्वीर के पर्दे में भी नंगा ही रहा। लुत्फ़ ये है कि मजनूँ[9] की तस्वीर बातने उरियाँ[10] ही खिंचती है, जहाँ खिंचती है।

"ज़ुल्म ने दाद·····" एक बात मैंने अपनी तबीयत से नई निकाली है, जैसा कि इस शेर में—

---

१. प्रतिष्ठा और आदर के साथ। २. पदों के अर्थ का आशय। ३. प्रशंसा वा इच्छुक। ४. ख़ून में सराबोर। ५. वेश। ६. शोक, दुःख और उदासी का कारण। ७. प्रतिप्रेमी। ८. मजनूँ। ९. नग्न शरीर के साथ।

नहीं ज़रिय ए राहत जराहते पैकाँ[1]
बो ज़ख्मे तेग़ है जिसको के दिलकुशा[2] कहिये

यानी ज़ख्म तीर की तौहीन वसबबे एक रख्ता[3] होने के, और तलवार के ज़ख्म की तहसीन[4] बसबबे एक ताक-सा खुल जाने के। "ज़ख्म ने दाद न दी तगीए दिल की" यानी ज़ायल[5] न किया तगी को। "पुर अफ़्शाँ" बम नी बेताब और ये लफ़्ज़ तीर के मुनासिबे हाल है। मानी ये कि तीर तगी ए दिल की दाद क्या देता, वो तो खुद ज़ीक़े मक़ाम[6] से घबरा कर पुरफिशाँ[7] और सरासीमा[8] निकल गया।

नाम ए ग़ालिब का मकतूब इलैह[9] रहीमबेग नामी मेरठ का रहने वाला है। दस बरस से अन्धा हो गया है। किताब पढ नही सकता, सुन लेता है। इबारत लिख नहीं सकता, लिखवा देता है, बल्कि उसके हमवतन ऐसा कहते हैं कि वो क़ुव्वते इल्मी[10] भी नहीं रखता, औरों से मदद लेता है। अहले देहली[11] कहते हैं कि मौलवी इमामबख्श सहबाई मे उसको तलम्मुज़[12] नही है, अपना ऐतबार बढ़ाने को अपने को उनका शागिर्द बताता है। मै कहता हूँ कि वाए[13] इस हेच व पोच[14] पर जिसको 'सहबाई' का तलम्मुज़ मूजिबे इज्ज़ो वक़ार[15] हो। रिसाला उसका "साते बुरहान" दिल्ली पहुँच कर ढूँढूँगा अगर मिल गया तो खिदमत में पहुँचेगा। जनाब मुस्तताब[16] मीर कासिम अलीखाँ साहब सादिक़ुल कौल[17] हैं। मेरे घर आये होंगे, दरवाज़ा बन्द

---

१. बाण की नोंक का घाव। २. हृदय को आनन्द देने वाला। ३. छिद्र। ४. प्रशंसा। ५. नष्ट। ६. स्थान की संकीर्णता। ७. बरसाता हुआ, (रुदन करता)। ८. व्याकुल। ९. जिसे पत्र लिखा गया। १०. ज्ञान की सामर्थ्य। ११. दिल्लीवासी। १२. शिष्यत्व। १३. हाय-हाय। १४. नीच और तुच्छ। १५. आदर और प्रतिष्ठा। १६. शुभ। १७. सच्चे।

पाया होगा। मगर एक ख़दशा[1] है कि हज़रत मैं और मेरे भाई मिर्ज़ा अलीबख़्शख़ाँ में बहुत रब्त व इत्तिहाद[2] था और वो मरहूम ख़ुदायश बियामरजाद[3] किज्ब व गिजाफ़[4] ज़बुंल मसल[5] था। इस तसव्वुर से अगर मै इस जुम्ले के सच जानने मे ताम्मुल करूँ तो मेरा ताम्मुल बेजा[6] न होगा। बहरहाल उनको मेरा सलाम कहिएगा।

"सलाबची" एक लफ़्ज़ है, हिन्दियाने फ़ारसीदाँ[7] का अस्ल लुगत[8] 'चिलमची, और ये लुग़त तुर्की है। माहाजा "हबाबे आसमाँ" जब तक कि आसमाँ को बहर या दरिया न कहे। 'हबाबे आसमाँ' न मक़बूल न मसमूअ[9]। 'दनात' मसमूअ है, अगर फ़तहे अलिफ[10] का इश्बाअ[11] जायज़ हो वर्ना 'दनात पर्वरी' की जगह "अदना पर्वरी' बेहतर है। बल्कि 'दनात' बहरहाल सिफ़त है "परवरिश' मौसूफ़ की चाहिए न सिफ़त की--वस्सलाम।

६

(जनवरी, १८६६ ई०)

क़िब्ला,

आपको ये तो मालूम हो गया होगा कि ८ जनवरी को फ़क़ीर पहुँचा। थका-माँदा, खस्ता, रंजूर। हनोज़[12] इफ़ाक़ते कुल्ली[13] नहीं पाई। आज सुबहदम[14] हवा बन्द है। धूप तेज़ है। पुश्त ब आफ़ताब[15] तकिये के सहारे से बैठा हुआ

---

१. आशंका। २. मेल-मिलाप। ३. ईश्वर उसे क्षमा करे। ४. गप और शेखी। ५. लोकोक्ति, कहावत। ६. अनुचित। ७. भारत के फ़ारसी जानने वाले। ८. शब्द। ९. श्रुत। १०. अकार को इकार पढ़ना। २३. ज़बर, ज़ेर और पेश को इतना बढ़ाना कि 'आ' ए और ऊ हो जाये। १२. इस समय। १३. पूर्ण स्वास्थ्य। १४. भोर। १५. सूरज की ओर कमर किये हुए।

ये सतरें लिख रहा हूँ। ग़ज़ल पहुँची है। गोंद मे लिथड कर एक टुकड़ा कागज़ का अलग हो गया है, हज़रत ब एहतियात उसको लिफ़ाफ़े से निकालें—

है तुम्हारा आफ़ताबा[1] आफ़तावे आसमाँ[2]
देख लो अपनी चिलमची मे हबावे आसमाँ

अगर पसन्द आये तो इस मतले को यों रहने दीजिये।

मौलवी निज़ामी गंजवी अलैहिर्रहमा[3] का एक शेर तालिबे इल्मों[4] के हाथ पड़ा। उन्होंने अज़रू ए क़वायदे[5] नहो[6] इसमे कलाम करना शुरू किया। मौलवी के पास जब वो कलमात पहुँचे, तो फ़रमाया 'यारों, शेर मरा बमदर्सा के बुर्द।

जो साहब ये फ़रमाते हैं कि पहला मिस्रा मुब्तदा[7] नही हो सकता, उनसे पूछा चाहिए कि क्या आप इसी पहले मिस्रे मे से 'ज़ुल्मतकदे मे मेरे' इसको मुब्तदा और 'शबे ग़म का जोश है' इसको खबर ठहराते है? पस अगर यो है तो भी मुद्आ हासिल है। दूसरा मिस्रा दूसरी खबर सही। आखिर ये भी तो मुसल्लमाते फ़ने नहो[8] मे से है कि एक मुब्तदा की, दो, बल्कि ज्यादा खबरे हो सकती हैं। हाँ एक क़ायदा और है यानी जुम्ला ए फ़ेलिया[9] के मा क़ब्ल[10] जो इबारत होती है, उसको मुब्तदा नही कहते। इस मतले का मिस्र ए सानी[11] जुम्ल ए इस्मिया[12] है। अपने माक़ब्ले मुब्तदा को क़बूल करता है। अगर हमने नज़र इस दस्तूर पर मिस्र ए अव्वल[13] को मुब्तदा कहा तो भी

---

१. दस्तेदार लोटा। २. आसमान का सूर्य। ३. उन पर ईश्वर की दया रहे। ४. विद्यार्थी। ५. पिंगलशास्त्र के अनुसार। ६. व्याकरण। ७. प्रारम्भित। ८. पिंगलशास्त्र के सर्वमान्य तथ्य। ९. क्रिया से सम्बन्धित वाक्य। १०. पहले। ११. द्वितीय चरण। १२. कर्त्ता से सम्बन्धित वाक्य। १३. प्रथम चरण।

क़बाहत[1] लाज़िम नहीं आती। बहरहाल जो वो साहब इसी पहले मिस्रे को क़रार दें, वो मुझे क़ुबूल है। मगर शेर मेरा मुहमिल[2] नहीं। ज़्यादा इससे क्या लिखूँ? भाई मीर क़ासिमअलीख़ाँ साहब को बन्दगी।

१०

(१ अप्रैल, १८६६ ई०)

क़िब्ला,

उस इनायतनामे का जो मार्च गुज़श्ता मे पाया है, आज यकुम अप्रैल को जवाब लिखता हूँ, गोया नमाज़े सुबह क़ज़ा[3] पढ़ता हूँ। जनाब मौलवी ग़ुलाम ग़ौसख़ाँ बहादुर मीर मुंशी लफ़्टंट गवर्नरी गर्ब व शुमाल[4] का क्या कहना है। हुस्नेसीरत[5] जो बाद रियाज़ते शाक़ा[6] और बाद तहसीले फ़ज़ाइले अरबा[7] ए मलिक ए अदालत व हिकमत व शुजाअत व इफ़्फ़त[8] हासिल होता है, इस दाना दिल, बेदार मग़ज़[9] को फ़ितरत[10] ने वदीअत[11] किया है। हुस्ने सूरत[12] वो कि जो देखे, पहली नज़र मे हुस्ने ख़ुल्क़[13] लुत्फ़े तबा[14] उसको नज़र आये।

फ़क़ीर हमेशा मौरिदे ऐतराज़ात[15] रहा है, लेकिन अक्सर ऐसा होता है कि बाद दो-चार दिन के मोतरिज़[16] साहब का खत आया है लुग़त तरकीब मोतरिज़फ़ी[17] की सनद के अशार हज़रत ने उस खत मे दर्ज किये हैं। अल्लाह अल्लाह, जो कलकत्ते मे शोरे नशोर[18] उठा था। मेरा शेर—

---

१. त्रुटि। २. अस्पष्ट। ३. ऐसी नमाज़ जो समय पर न पढ़ी गई हो। ४. पश्चिमोत्तर। ५. सुस्वभाव। ६. कठिन साधना के पश्चात्। ८. विक्टोरिया के पार्षदों की श्रेष्ठताओं और युक्ति, वीरता तथा पावित्र्य की प्राप्ति के पश्चात्। ९. कुशाग्र बुद्धि। १०. स्वभाव। ११. अमानत। १२. आकृति का सौन्दर्य। १३. सुशीलता। १४. सुस्वभाव। १५. आक्षेप का स्थान। १६. आक्षेपकर्त्ता। १७. आक्षेपित। १८. अत्यधिक कोलाहल।

जुज्व ए अज़ आलमम व अज़ हमा आलम बेशम
हम चू मूए के बुतां रोज़ मियां बर खीज़द[1]

खस्ता जराहतहाए ऐतराज़[2] हुआ है। मन्शा ए ऐतराज़ ये कि आलम मुफ़रंद[3] है, उसका रब्त हमा के साथ बहस्बे इज्तिहादे कतील[4] ममनू है। क़ज़ारा[5] उस ज़माने में शाहज़ाद ए कामरान दुर्रानी[6] का सफ़ीर[7] गवर्नमेण्ट मे आया था। किफ़ायतखां उसका नाम था। उस तक ये क़िस्सा पहुँचा। उसने असातिज़ा के अशार पान-सात ऐसे पढ़े, जिनमें 'हमा आलम' व 'हमारोज़' व 'हमा जा' मरकूम[8] था और वो अशार "क़ातै बुरहान" मे मुदरिज[9] है।

हाँ साहब "क़ातै बुरहान" में और मतालिब बढ़ाये और एक दीबाचा दूसरा लिखा और 'दुरफ़िशे कादयानी' उसका नाम रखा और उसको छपवाया। एक मुजल्लद[10] उसका आज इस खत के साथ डाक मे भेजता हूँ। बाद पहुँचने के उसको देखिएगा और अक्सर वक़्ते फ़ुर्सत पेशे नज़र रखिएगा। और जिस दिन पहुंचे उसी दिन या उसके दूसरे दिन रसीद लिखिएगा। और अगर और साहब उसके तालिब[11] और खरीदार हों तो मुझको लिखिएगा। दस-पाँच, दो-चार जिल्द भेज दूंगा। ये नुस्खा मेरी तरफ़ से आपकी नज़्र। ग़ज़ल फिर भेजूंगा।

---

१. यद्यपि मैं विश्व का एक अंश हूँ, बुढ़ापे के कारण अब मैं निष्क्रिय और दुर्बल हूँ, अतः लोगों की दृष्टि में मेरा कोई स्थान नहीं है। यद्यपि मैं अब भी महत्वपूर्ण व्यक्तित्व रखता हूँ। जिस तरह कमर काफी स्थूल है किन्तु कवि बाल से बारीक बताते है। २. आक्षेप, चीर फाड़, छिन्न-भिन्न। ३. एकवचन। ४. कतील के आदेश के विपरीत। ५. अकस्मात्। ६. राजपुत्र कामरान शाहमुहम्मद का पुत्र और तैमूरशाह पुत्र अहमदशाह दुर्रानी का पोता था। इसने बहुत समय तक हिरात में शासन किया था। ७. राजदूत। ८. लिखित। ९. उल्लिखित। १०. सजिल्द। ११ माँगने वाले।

शहज़ादा बशीरुद्दीन के नाम

१

पीर व मुर्शिद सलामत,

आज़ा[1] फ़र्सूदा[2] और बोदे हो गये। रूह इनमे दौड़ती नही फिरती, मगर अभी मुफ़ारक़त[3] नही कर गई। खुदा जाने किस मकमन[4] मे है। कुवा[5] निकम्मे हो गये। अब वो काम जो उनसे मुताल्लिक थे, बन्द हो गये। आपका हुक्म मानना और आपकी खिदमत बजा लानी दिल से ताल्लुक़ रखती है, वो वज़ीफ़े ग़ैबी[6] यानी रूह के काम है। जब तक वो बाकी है, सरजाम पाते जाएँगे।

"खाकम बदहन" वास्ते अक़वाल[7] के है, जब कोई कलमा मकरूहे तबा[8] कहते है तो 'खाकम बदहन' कह लेते है—

बरखाक ब रेख्ती मए नाब मरा
'खाकम बदहन' मगर तो मस्ती रब्बी[9]

और 'खाकम बसर' और खाकम बफ़र्के आम है, जैसा कि मै एक शहज़ादे के मर्सिये में कहता हूँ—

ऐ अहले शहर मदफ़न ई दूदमाँ कुजास्त
खाकम बफ़र्क़ खाबगहे खुसरवाँ कुजास्त[10]

---

१. शरीर के अंग। २. जरा-जीर्ण। ३. प्रस्थान, पृथकता। ४. घर। ५. अंग। ६. आत्मा। ७. कथन (ब० व०)। ८. भद्दा। ९. मेरी शुद्ध सुरा पृथ्वी पर फेक दी, ईश्वर तेरे मुँह पर मिट्टी डाले किन्तु तू ईश्वर के आनन्द मे मस्त हो जा। १०. हे नागरिकों, इस वश का कब्रिस्तान कहाँ है? तुम्हारे सिर पर मिट्टी पड़े, सम्राटो के राजप्रासादों का पता नही है।

उस्ताद—

ख़ाकम बसर के आशिक़े कार आज़मूदा अम
दानम के बा रक़ीब बखिलवत चहा रवद[1]

आपके हाँ और मौलवी रूम के हाँ 'ख़ाकम बदहन' का मुतवक़्क़े नहीं, जैसा कि मौलवी मानवी ने नहीं लिखा, हज़रत भी अपने हाँ न लिखे।

फ़र्कस्त दरमियाना के बिसियार नाज़ुकस्त[2]

नज़ात का तालिब
—ग़ालिब

२

हज़रत पीर व मुर्शिद बरहक़ सलामत,

तक़्सीर[3] माफ़, मैं मुद्दई और आप मुद्दआ अलैह भी और हाकिम भी। वजहे इस्तिग़ासा[4] ये है कि आपने मुझे अपने हल्क़ ए इरादत[5] से ख़ारिज कर दिया। अरायज़े जवाब तलब[6] का जवाब नहीं। एक इनायतनाम ए साबिक़[7]—

आवे ज़ लहल मी रवद वर पर चर्ग

ये जुम्ला मुरक्कबा[8] लिखा हुआ था। मैं इसको पढ भी न सका, मानी तो अलावा रहे। मैंने अरीज़ा[9] लिखा और जुम्ले की हक़ीक़ते हाल का इन्किशाफ़[10]

---

१. उसके सिर पर मिट्टी पडे, मैं एक अनुभवी प्रेमी हूँ। मैं समझना चाहता हूँ कि एकान्त मे प्रतिप्रेमी के साथ क्या हो रहा है। २. कटि बहुत सूक्ष्म है। ३. अपराध। ४. वाद का कारण। ५. श्रद्धालु लोगों का मण्डल। ६. उत्तरणीय आवेदन-पत्र। ७. पहले का पत्र। ८. (इस पद का अर्थ ग़ालिब साहब भी नहीं समझ सके।) ९. मिश्रित वाक्य। १० प्रार्थना-पत्र। ११. स्पष्टीकरण।

चाहा, अब तक जवाब नहीं पहुँचा। जी घबरा रहा है। जब तक इसका जवाब न पाऊँगा, आराम न आएगा।

बरखुर्दार[1] इक़बाल निशान मिर्ज़ा शहाबुद्दीनखाँ बहादुर की ज़बानी आपके मिज़ाज मुबारक की खैर व आफ़ियत सुनी। मगर वो जो तहरीरे दस्तखती से तसल्ली होती है, वो कहाँ! हज़रत अब तो खालिसनलिल्लाहवरसूल मेरा गुनाह माफ़ और दस्तखते खास से मुझको इस जुम्ले के मानी लिख भेजिये। ज़्यादा हद्दे अदब।

अफ़ूए जुर्म का तालिब[2]
—ग़ालिब

३

बन्दा परवर,[3]

मेहरबानीनामा आया, सर पर रखा और आँखों पर लगाया। फ़ारसी की तकमील के वास्ते अस्लुल उसूल[4] मुनासिबते तबीयत की है, फिर ततब्बोए कलामे अहले ज़बान,[5] लेकिन न अशारे 'क़तील' व 'वाक़िफ़' व शोअराए हिन्दुस्तान के ये अशार सिवाय इसके कि उनको मौज़ूनीए तबा[6] का नतीजा कहिये और किसी तारीफ़ के शायाँ[7] नहीं है। न तरकीबे फ़ारसी, न मानीए नाज़ुक[8], हाँ अल्फ़ाज़े फर्सूदा आमियाना[9] जो अतफ़ाले दबिस्ताँ[10] जानते हैं और जो मुतसद्दी नस्र मे दर्ज करते हैं, वो अलफ़ाज़ फ़ारसी ये लोग नज़्म मे

---

१. सुपुत्र। २. अपराध की क्षमा चाहने वाला। ३. सेवकों का पालन करने वाला। ४. सिद्धान्त। ५. भाषा के लिए प्रामाणिक लोगों की रचना का अनुसरण। ६. स्वभाव की अनुकूलता। ७. उपयुक्त। ८. सूक्ष्मार्थ। ९. सामान्य और घिसे-पटे शब्द। १०. पाठशाला के बालक।

सर्फ़[1] करते हैं। जब 'रूदकी' व 'अन्सरी' व 'ख़ाक़ानी' व 'रशीद' व 'तवात' और उनके अमसाल व नज़ायर[2] का कलाम बइस्तीफ़ा[3] देखा जाये और उनकी तरकीबों से आशनाई बहम पहुँचे और जहन एविजाज[4] की तरफ़ न ले जाये तब आदमी जानता है कि ये फ़ारसी है—

मन के बाशम· · · ·

इसकी जो शरह[5] छापे मे लिखी है उसको मुलाहिज़ा कीजिये और मानी मेरे ख़ातिरे निशान कीजिये तो मै सलाम करूँ। पहले नज़र यहाँ लडनी चाहिए 'अजओजे बयाँ अन्दाख़्ता' का फ़ाइल[6] कौन है और मफ़ऊल[7] कौन है। अगर 'अक़्लेकुल' को अन्दाख़्ता का मफऊल और 'मन्के' के काफ़ को कुदामिया[8] ठहराओगे तो बेशुबा 'अन्दाख़्ता' के फ़ाइल दो ठहरेंगे, एक 'नावके अन्दाज़ अदब' और एक 'मुर्ग़े औसाफ़ेतो' एक फेल[9] और दो फ़ाइल, ये क्या तर्क़ीब और कैसी तहक़ीक़ है ?

अब फ़क़ीर से इसके मानी सुनिये "मन" अन्दाख़्ता का मफऊल[10] 'रा' मुक़द्दर[11], 'मन्के' का 'काफ़' तौसीफ़ी[12]। 'नावके अन्दाजे अदब' अदब आमोज़ यानी उस्ताद, 'मुर्ग़े तौसीफ़े तो' फ़ाइल, मुझको कि 'अक़्ले कुल' का उस्ताद हूँ, तेरे मुर्ग़े तौसीफ़ ने ओजे बयान[13] से गिरा दिया। 'अक्ले कुल' तक कि वो उलुवीयों[14] में आला है। इसका नावक[15] पहुँच सकता था मगर मुर्ग़े औसाफ़[16] उस मुक़ाम पर है, जहाँ उस 'नावके अन्दाज़[17]' को नावक के पहुँचाने की

---

१. प्रयुक्त। २. उदाहरण और दृष्टान्त। ३. पूर्णतया। ४. वक्रता। ५. व्याख्या। ६. कर्त्ता। ७. कर्म। ८. प्रश्नवाचक। ९. क्रिया। १०. कर्म। ११. ऐसे शब्द जो वाक्य मे न हो किन्तु अर्थ करते समय जिस का व्यवहार किया जाये। १२. विशेषणवाचक। १३. दर्णन की उच्चता। १४. सैयद लोग। १५. एक प्रकार का तीर। १६. गुणसमूह का पक्षी। १७. धनुर्धारी।

गुजाइश नहीं। औजे बयान[1] से गिरना आजिज़[2] आ जाना है। क़ुदरत वो कि अक़्ले कुल से भी ज्यादा और इज्ज़ ये कि औजे बयान से गिर गया। क्या अच्छा मुबालिग़ा[3] है मुर्ग़े औसाफ़ की बलन्दी का और क्या खूब मज़मून है इज़हारे इज्ज़[4] बावजूद ए दाव ए क़ुदरत ! १२।

ईसारे तो बर्दूख्ता चश्मो दहन आज़[5]

इसके मानी तो वही है जो छापे मे लिखे है। मिस्र ए सानी[6] की शरह[7] मे गुमराह हो गया।

'एहसान तो हर क़तर ए दरया बे शिगाफ़्त, ताहम बक़ैदे हिसाब नियामद' ये हीचमदाँ इस मानी के मानी नही समझा। सीधी बात है, मगर खयाल मे जब आएगी कि असातिज़ा के मुसल्लमात[8] मालूम हों। कमाले ईसार व अता[9] मे मरवारीद व याकूत[10] व बहर[11] व मादन[12] की कमबख्ती आती है। लाल व दुर[13] का मादूम[14] हो जाना और बहर व कान का खाली रह जाना नई-नई तरह से बाँधा है, चुनाँचे मैने किसी ज़माने मे इसी ज़मीन में एक कसीदा लिख कर वज़ीरुद्दौला वाली ए टोंक[15] को भेजा था। उसमें के ये दो शेर आपको लिखता हुं--

नामूसे निगह दाश्ती अज़ जूद ब गीती
जुज़ पर्द गयाने हरमे मादने यम रा
वक़्तस्त के ई क़ौम बहर कूचा व बाज़ार
पुर्सन्द ज़ हम मन्शा ए रुसवाइ ए हमरा

---

१. वर्णन की उच्चता। २. विवश होना। ३. अत्युक्ति। ४. प्रतिष्ठा का प्रकटीकरण। ५. तुम्हारी उदारता ने लालसा के मुख और नेत्रों को सी दिया। ६. प्रति चरण (कविता)। ७. व्याख्या। ८. सर्वमान्य। ९. त्याग और दान। १०. लाल। ११. समुद्र। १२. खान। १३. मोती। १४. लुप्त। १५. टोंक के राजा।

"पर्दगियान हरम मादनो यम" लाल व गौहर जो कसरते ईसार[1] कूचा[2] व बाज़ार मे ख़ाक आलूदा[3] पड़े हुए हैं, वो बाहमदिगर दर्दमन्दाना ये गुफ़्तगू करते है कि इस शख़्श ने सब की हुरमते[4] रखली और सबकी आबरूएँ बचाई, हमको इस क़दर बेहुरमत[5] व ज़लील क्योंकर रखा है ? क़तर ए दरिया[6] का हिसाब के वास्ते चीरना, बेहिसाब है। मक़सूद[7] उर्फ़ी का ये है कि जितने मोती दरया मे हाथ आये वो बख़्श दिये और बख़्शिश का ज़ौक़[8] बाक़ी रहा। चूंकि क़तरे में बिलक़ुव्वत[9] इस्तेदादे मोती[10] हो जाने की है, तो इस एहतिमाल[11] से हर क़तर ए दरया को चीर डाला कि अगर मोती हाथ आये तो वो साइलो[12] को दिये जाये। पहले मिस्रे मे हिर्स का सेर[13] कर देना, मुआफ़िक़ मुसल्लमाते शोअरा[14] के मुम्तने[15] और उसका वक़[16] मे आना इग़राक़[17] दूसरे मिस्रे मे ब एहतियाते इस्तेदाद बिलक़ुलव्वत कतरे को चीर डालना और फिर इस तरह कि हरक़तरे को ये इग़राक़ से गुज़र कर तबलीग़[18] व ग़ुलू[19] है।

दाद का तालिब

—ग़ालिब

४

(१६ जून, १८६३ ई०)

तुम सलामत रहो हज़ार बरस
हर बरस के हों दिन पचास हज़ार

---

१. त्याग का आधिक्य। २. गली। ३. धूल भरे। ४. सम्मान। ५. असम्मानित। ६. समुद्र की बूंद। ७. अभीष्ट। ८. रुचि। ९. सामर्थ्य। १०. मोती मे परिवर्त्तित होने की शक्ति। ११. सन्देह। १२. प्रार्थी। १३. तृप्त। १४. कवियों की सर्वमान्य धारणा के अनुसार। १५. निषेधक। १६. अस्तित्व। १७. अतिशयोक्ति। १८. प्रचार। १९. अत्युक्ति।

आज मगल, १६ जून १८६७ ई०, बारह बजे इनायतनामा आया। सरनामा देख कर सफ़ेद ए सुबहे मुराद[1] समझा। नगा एक छोटी खस की टट्टी के पास बैठा हुआ था, खत पढ़ कर वो हाल तारी हुआ[2] कि अगर नगा न होता तो गिरीबाँ फाड़ डालता। अगर जान अज़ीज़ न होती तो सर फोड़ता और क्योंकर इस ग़म की ताब लाता कि मैंने अपने को खिचवा कर बसूरते तस्वीर आपकी खिदमत मे भेजा। लिफ़ाफ़ा अँग्रेज़ी इक़बाल निशान शहाबुद्दीनखाँ से लिखवा कर बैरग इर्साल[3] किया। इस फ़रमान मे उस लिफाफे की रसीद न पाई। ज़ाहिरा डाक पर डाकू गिरे। मेरे पैकरे बेरूह[4] के टुकड़े उड़ा दिए। बेताब होकर ये इबारत हज़रत को भेजी हुई लिफ़ाफ़े मे लपेट कर रवाना की। अब जब आप और लिफ़ाफ़े भेजेंगे तो मतालिबे बाक़ी[5] का जवाब मय औराके अशार[6] भेजूंगा। ज्यादा हद्दे अदब।

५

(११ अप्रैल, १८६८ ई०)

दर परस्तिश सुस्तम व दर काम जोई उस्तवार
बादशाह रा बन्द ए कम खिदमतो पुरखार हस्त[7]

हज़रत पीर व मुर्शिद बरहक़[8], रोज़ अफ़ज़ूनी काहिश[9] अब इस हद को पहुँची है कि—

तक़सीम जुज़्वे लायते जुज़्ज़ा मुहाल है[10]

---

१. लालसा के प्रभात का हलका प्रकाश। २. छा गया। ३. प्रेषित। ४. प्राणरहित चित्र। ५. शेष पृष्ठ का। ६. कविता के पृष्ठों के साथ। ७. भक्ति में आलसी और मतलब साधने में बहुत बढ़ा-चढ़ा हूँ। सम्राट् की सेवा कम करता हूँ किन्तु खाता खूब हूँ। ८. सच्चे। ९. नित्य विकासशील ह्रास। १०. जो अभेद्य है उसका बँटवारा असम्भव है।

आगे बादे ज़महरीर[1] ने लहू ख़ुश्क कर दिया था, अब आतिशे दोज़ख़[2] ने रहा-सहा जला दिया। कल इनायतनामा आया। आप जो रक़म फ़रमाते हैं[3] कि तूने मेरे ख़त का जवाब नहीं भेजा, मुझको बावस्फ़े इस्तेला ए निसियाँ[4] ख़याल मे आता है कि मै हज़रत के फ़रमान का जवाब लिख चुका हूँ। डाकिए अब डाकू हो गये हैं। अगर वो लिफ़ाफ़ा डाक मे तलफ़[5] हो गया तो कुछ बईद नहीं। मुतवक़्क़े हूँ कि उसका न पहुँचना मेरी ना रसाईए बख़्त[6] की तासीर समझा चाहिये। मै मुजरिम न ठहरूँ। ज्यादा हद्दे अदब।

रोज़े दो शम्बा, ११ अप्रैल १८६८ ई०।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

---

१. अत्यधिक ठंडी हवा। २. नरक की आग। ३. लिखते हैं। ४. विस्मरण की अत्यधिकता के रहते हुए भी। ५. नष्ट। ६. दुर्भाग्य।

मुंशी हीरासिंघ के नाम

१

(१८४८ ई०)

फ़र्ज़न्दे दिलबन्द[1] सआदतमन्द[2] मुंशी हीरासिंघ के हक़ मे मेरी दुआएँ क़ुबूल हों और उनके जितने मतालिब व मारब[3] है वो इनायते इलाही[4] से पूरे हों। भाई 'लबे साहल' की सनद[5] पर ये शेर है 'तालिब' आमिली का—

मुद्दते आँ—गदाए खूनी दिल
बूद तब खालए लबे साहल[6]

'लबे बाम', 'लबे फ़र्श', 'लबे गोर', 'लबे चाह', 'लबे दरया', 'लबे साह' बमानी किनारे के है, मुस्तामल[7] अहले ईरान। 'लबे बाम' उस मुक़ाम को कहते है जहाँ एक क़दम आगे बढाइये तो धम से अँगनाई मे आइये। पस 'लबे दरया' उसे समझिये जहाँ से कदम बढ़ाइये तो पानी मे जाइये। 'लबे साहल' वो हुआ जहाँ से आगे बढ़ें तो दरया मे गिरे। 'लबे दरया' से पाँव दरया मे रखा जाता है, जैसा नहाने के वास्ते, और 'लबे साहल' से दरया मे कूदते है, जिस तरह सुलतानजी की बावली मे 'लबे बाम' से तैराक कूदते है। इसी तरह तैराक

---

१. हृदय का टुकड़ा—पुत्र। २. आज्ञाकारी। ३. उद्देश्य। ५. ईश्वर की दया। ५. प्रमाण। ६. मै दीर्घ समय से दुखी बैठा हूँ। तबखाला की तरह मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। (तीव्र ज्वर के कारण होटों के आसपास फुन्सियाँ हो जाती है, उन्हे तबखाला कहते है)। ७. प्रयुक्त।

जहाँ दरया का पानी नशेब[1] मे होता है, वहाँ कड़ाड़े के किनारे पर से कूदते है। कडाडा 'साहल' और कडाडे का किनारा 'लबे साहल'। जो साहिब, कि, लबे साहल को सही नहीं जानते क्या वो 'तालिब' आमली को भी नही मानेगे ? और इस लफ़्ज़ पर ऐतराज़ करने का सबब ये है कि उन बेचारों ने सिवाय गुलिस्ताँ-बोस्ताँ के कोई फ़ारसी की किताब नही देखी। अगर मुद्दत तक कुदमा[2] की तसनीफ़ात[3] नज़र मे रखेंगे तो यकीन है कि देख लेंगे।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

२

(१४ जनवरी, १८६८ ई०)

नूरे चश्म[4] ग़ालिब गमे दीदा मुंशी हीरासिंघ को दुआ पहुँचे। तुम्हारा ख़त मुहर्रिरा[5] ११ जनवरी पहुँचा। दौरे का सफ़र, बारे, तमाम हुआ। अब जाडों के दिन आराम से काटो। घबराओ नहीं। साल भर पढाये जाओ, जब लडका शुदबुद से आगाह हो जाये, तब डिप्टी कमिश्नर मे तरक़्क़ी की दरख़ास्त करना। अगर नायब तहसीलदार हो जाओगे तो रफ़्ता-रफ़्ता ऐक्स्ट्रा असिस्टेंट होने की गुजाइश है। मदर्से के इलाक़े मे तो नौकर नही जो बाबू प्यारेलाल को तुम्हारी बदली का इख्तियार हो। ज़िन्हार[6], मैं इस बाब मे न बाबू साहब से कहूँगा और न ये ख़त तुम्हारा मुंशी जवाहरसिंघ को दिखलाऊँगा। नाहक़ उलझो क्यों ? इस उलझने से फ़ायदा क्या ? ख़ातिर जमा रखो—

के रहम गर न कुनद मुद्दई ख़ुदा बकुनद[7]

मैं वैसा ही हूँ जैसा तुम देख गये हो, और जब तक जीऊँगा ऐसा ही रहूँगा।

—ग़ालिब

---

१. ढलान। २. प्राचीन (कवि) ब० व०। ३. रचनाएँ। ४. नेत्र-ज्योति। ५. लिखित। ६. कदापि। ७. यदि मेरा प्रतिद्वन्दी दया नहीं करेगा तो ईश्वर करेगा।

बिहारीलाल 'मुश्ताक़' के नाम

१

(२६ फ़रवरी, १८६८ ई०)

सआदतमन्द बाकमाल मुशी बिहारीलाल बयुम्ने तासीरे दुआए गालिब[1] खस्ताहाल उम्र व दौलत व इकबाल फ़िरावाँ[2] हो। मुशी मनभावनलाल तुम्हारे वालिद माजिद का इन्तिकाल मूजिबे रज व मलाल[3] हुआ। अगरचे उस रहरवे जाद ए फना[4] से मेरी मुलाक़ात न थी, लेकिन तुम्हारे तन्हा और बेमुरब्बी[5] रह जाने का मैंने बहुत ग़म खाया। खुदा उनको बरूशे और तुमको सब्र अता करे।

—गालिब

२

(८ जून, १८६८ ई०)

बरखुर्दार बिहारीलाल,

मुझको तुमसे जो मुहब्बत है उसके दो सबब हैं, एक तो ये कि तुम्हारे खाल[6] फ़र्रुख फाल[7] मुशी मुकन्दलाल मेरे बड़े पुराने यार हैं, खुशखू[8], शिगुफ्ता रू[9], बजलागो[10]। दूसरे तुम्हारी सआदतमन्दी और खूबी और हिल्म[11] और बक़द्रे

---

१. गालिब के आशीर्वाद के फलस्वरूप भाग्यशालिता के साथ। २. आधिक्य। ३. दुःख और शोक का कारण। ४. मृत। ५. बिना अभिभावक। ६. मामा। ७. सौभाग्यशाली। ८. अच्छे स्वभाव वाले। ९. हँसमुख। १०. सुभाषी। ११. सहनशीलता।

हाल इल्म, उर्दू नज्म व नस्र में तुम्हारी तबा की रवानी और तुम्हारे क़लम की गुलफ़िशानी[1], मगर चूं कि तुमको मुशाहिद ए अखबारे अतराफ़[2] और खुद अपने मतबे[3] के अखबार की इबारत का शग़ले तहरीर[4] हमेशा रहता है, ब तक़लीद[5] और इन्शापरदाज़ों[6] के तुम्हारी इबारत मे भी इमला की ग़लतियाँ होती हैं, मैं तुमको जा बजा[7] आगाह करता रहता हूँ। खुदा चाहे तो इमला की गलती का मलेका[8] बिल्कुल ज़ायल[9] हो जाये। मगर बिहारीलाल इस नौनिहाल[10] बागे दौलत यानी हकीम गुलाम रज़ाखाँ के दवामे सुहबत[11] को अपने ताले[12] की या वरी समझो। ये दानिशमन्द सतूदा ख़ू ए अमीर[13] नामवर होने वाला और मरातिबे आला[14] को पहुँचाने वाला है। उसकी तरक़्क़ी के जिम्न[15] मे तुम्हारी तरक़्क़ी होनेवाली है।

बिया दामाने साहिबे दौलतेगीर
के मर्द अज़ साहिबे दौलत शवद पीर[16]

मियाँ सच तो यों है कि 'अकमलुल मताबे' 'अजमुल मताबे' भी है। हकीम गुलाम नबीखाँ मिन जुम्ला[17] ख़ूबाने रोज़गार[18] है। निको ख़ू ए[19] और निको किरदार[20] है। मीर फ़ख्रुद्दीन आज़ाद मनिश[21] और सआदतमन्द नौजवान है। कम गुफ़्तार

---

१. पुष्पवर्षण। २. आस-पास के समाचारपत्रों का अवलोकन। ३. मुद्रणालय। ४. लिखने का चस्का। ५. अनुसरण। ६. लेखक। ७. यत्र-तत्र। ८. अभ्यास। ९. नष्ट। १०. पौधा। ११. स्थायी संगत। १२. भाग्य। १३. उदार। १४. श्रेष्ठ पद (ब० व०)। १५. विषय। १६. सम्पन्न का आँचल पकड़, सम्पन्न व्यक्ति से ही मनुष्य को बड़प्पन मिलता है। १७. सब में से। १८. अपने समय के प्रतिष्ठित व्यक्ति। १९. श्रेष्ठ स्वभाव वाले। १०. सच्चरित्र। २१. स्वतन्त्र विचारक।

और मरज व मरंजाँ[1] हैं। तुम चारो शख़्स पैकर सिद्क़[2] व सफ़ा[3] और मेहर व विला[4] के अन्सर[5] हो। जहाँ आफ़रीं, तुम चारों साहबों को खुशनूद, दिलशाद और 'अकमलुल मताबे[6]' को बा रौनक़ और आबाद रखे।

—ग़ालिब

---

१. जो व्यक्ति स्वयं भी प्रसन्न रहता है और दूसरों को भी दुखी नहीं करता। २. मूर्त्तिमान् सत्य। ३. विशुद्धता। ४. दया-ममता। ५. तत्व। इस्लामी दर्शन पृथ्वी, जल, तेज और वायु को ही महातत्व मानते हैं, आकाश को नहीं। ६. मुद्रणालय नाम।

केवलराम 'होशयार' के नाम

ग़ालिब ख़ाकसार कहता है कि शोअराए ईरान कुल्लुहुम अजमईन[1] मुसल्लमुस्सुबूत[2] हैं और उनका कलाम सनद है। सुख़नवराने हिन्द[3] में अमीर ख़ुसरो देहलवी भी ऐसे ही हैं। अहले ईरान मे रूदकी व फिरदौसी से लेकर जामी तक और जामी से सायब व कलीम तक किसी ने लुग़त की कोई किताब[4] लिखी हो, कोई फ़रहग[5] जमा की हो तो हमे दिखाओ। उसको अगर मैं न मानूं और सनद[6] न जानूं तो मै गुनहगार। जितनी फ़रहगे अब मौजूद हैं, नाम उनके कहाँ तक लूं, मशहूर व ग़ैर मशहूर कुछ कम सौ रिसाले[7] होंगे। उन सब रिसालो के जामे[8] हिन्दी हैं। कोई अहले ज़बान[9] नही है। अशारे असातज़ ए ईरान[10] को माख़ज़[11] ठहरा कर जो लुग़ात[12] उनकी नज़्म मे देखे बमुनासिबते मुक़ाम[13] उन लुग़ात के मानी लिख दिए। इस्तिबाते मानी[14] का मदार कयास[15] पर। ये मैं नहीं कहता कि क़यास उनका सरासर ग़लत है, मेरा क़ौल ये है कि कमतर सही और बेशतर ग़लत है।

इन सब फ़रहग लिखने वालों मे ये दकन का आदमी[16] याने जामे 'बुरहान क़ातै' अहमक़ और ग़लतफ़हम और मऊजुज़्ज़हन[17] है। मगर किस्मत का अच्छा

---

१. पूर्णतया। २. प्रमाण सिद्ध। ३. भारत के कवि। ४-५. शब्द-कोष। ६. प्रमाण। ७. पुस्तिका। ८. सकलनकर्ता। ९. जिनकी मातृभाषा फ़ारसी हो। १०. ईरान के आचार्यों की कविता। ११. जिस ग्रथ से लेखन मे सहायता ली गई हो। १२. शब्द (ब० व०)। १३. स्थान के अनुसार। १४. अर्थ का निष्कर्ष। १५. अनुमान। १६. मुहम्मद हुसेन तबरेज़ी, सम्पादक, 'बुरहान क़ातै' (फ़ारसी का एक शब्द-कोष)। १७. मूर्ख।

है । मुसलमान उसके कौल को आयत और हदीस जानते हैं और हिन्दू उसके बयान को मतालिबे मुन्दरिज ए वेद[1] के बराबर मानते हैं ।

'गियाह' बकाफ़[2] फ़ारसी मकसूर[3] सब्ज़ घास को कहते हैं । 'गया' बकाफ़े फ़ारसी मकसूरिया[4] मफ़तूह[5] कोई लुग़त फ़ारसी नही है, हग़िज़ नही है। मौलवी रूम और हकीम सनाई के हात के लिखे हुए शेर किसने देखे हैं कि उन्होंने अपने हाथ से काफ पर दो मरकज़[6] और फ़तहा[7] बनाया हो । फ़रहगनवीसों की राय की तबाही और कयास की गलती है जो ऐसा समझे हैं । न गयाबा बमानी पहलवान है और न कारेगयाह कोई लफ़्ज़ है, न कोई लुग़त है ।

'के' बकाफ़े मफ़तूह[8] बरवज़न 'में' एक लुग़ते फ़ारसी है जू मानेन यानी दो मानी देता है । एक तो 'कब' यानी 'किस वक़्त' और दूसरे मानी इसके हैं हाकिम और मालिक के । 'अलिफ' जो इसके साथ आता है, वो कसरत[9] के मानी देता है । जैसे 'खोशा', 'बहुत खुश', 'बदा', 'बहुत बद', 'किया', 'बड़ा हाकिम'—

इश्क आँ बुज़्गी के जुम्ला औलिया
याफ़्तन्द अज़ इश्क़े ऊ कारे किया[10]
यानी वसबबे इश्क़ कारे बुज़ुर्ग याफ़्तन्द ।
सरफ़िरो बुरदेम ता वरसरवराँ सरवर शुदेम
चाकरी करदेम ता कारे कियाई याफ़्तेम[11]

---

१. वेदों से उद्धृत । २. ककार से । ३. इकार युक्त । ४. ईकारयुक्त । ५. आकार युक्त । ६. बिन्दु । ७. 'अ' की मात्रा । ८. 'का', आकार युक्त 'क' । ९. आधिक्य । १०. उस व्यक्ति का स्नेह प्राप्त कर जिसके स्नेह से बड़े-बड़े साधकों ने सिद्धि प्राप्त की । ११. मैंने बहुत सेवा की । इस सेवा का परिणाम यह हुआ कि हम सरदारों के सरदार बनाये । हमने नौकरी की, जिसका परिणाम यह हुआ कि बड़े-बड़े पद प्राप्त हो गये ।

यहाँ भी वो कारे बुज़ुर्ग यानी बड़ा। पस याये तहतानी[1] अगर मजहूल[2] है तो ताजीमी[3] है अगर मारूफ़ है तो मज्दरी है यानी बुजुर्गी का काम, हुकूमत का काम। वो 'किया' मुज़ाफ़[4] और मुज़ाफ़ इलैह[5] मक़लूब[6] है। यानी 'कियाए' वो और 'हाकिम' वो। 'कारे किया' मसला यानी 'कियाए कार' व 'मालिक कार'। जहाँ माक़ब्ल[7] इसके राए मसक़ूर[8] लाएँगे वहाँ 'कार' मोसूफ़[9] और 'किया' सिफ़त है। निहायत तहक़ीक़ व अस्ल हक़ीक़त ये है। फ़क़ीर ने जहाँ 'किया' के लफ़्ज़ पर खत्ते मुस्ततील[10] खीचा है, वो अलामते फ़तहा[11] है। दूसरा मरकज़[12] नही जो काफ़े फ़ारसी समझा जाये।

दाद का तालिब

—ग़ालिब

---

१. ऐसा 'ये' जिसके नीचे दो नुक्ते लगाये जाते है। २. 'ए' की ध्वनि देने वाला। ३. अभिवादनार्थक ४. जोड़ा गया, सम्बन्धित। ५. जिससे जोडा गया, सम्बद्ध। ६. उलटा हुआ ७. पहले। ८. सम्प्रदानकारक की विभक्ति—रा। ९. विशेष्य। १०. आयत रेखा। ११. दीर्घ 'आ' का चिह्न। १२. बिन्दु।

मौलवी करामतअली के नाम

फ़क़ीर असदुल्लाह जनाबे मखदूमी[1] मौलवी करामतअली साहब की खिदमत में अर्ज़ करता है कि आपकी तहरीर के देखने से याद आया कि आप यहाँ आये हैं और आप की मुलाक़ात से हज़[2] उठाया है। हल[3] मानी ए अशार की ये सूरत है कि हिन्दी के शेर मेरे नही, शोअराए लखनऊ मे से किसी के है, बल्कि अगलब[4] है कि नासिख़ के हों। अशारे फ़ारसी अलबत्ता मेरे हैं—

ख़ास्त कज़ मा रंजदो तक़रीबे रजीदन नज़ाश्त
जुर्मे ग़ैरज़ दोस्त पुवर्सीदेम व पुर्सीदन नदाश्त[5]

'दाश्तन' बमानी रखने के है, लेकिन अहले ज़बान बमानी 'बायस्तन' भी इस्तेमाल करते हैं। ज़ुहूरी—

गर अज़ीरे ज़ुल्फ़ो काकुल गुफ़्ताबाशम ख़ीश रा
गुफ़्ता बाशम, ई क़दर बरख़ीश पेचीदन न दाश्त[6]

मेरे शेर में पहले मिस्रे का दाश्त बमानी रखने के और दूसरे मिस्रे का दाश्त बमानी 'बायस्त' है। मफ़हूमे शेर[7] ये कि दोस्त ऐसा हीला ढूँढता था कि उसके ज़रिये से मुझ पर ख़फा हो। चाहता था कि आज़ुर्दा[8]

---

१. मान्यवर। २. आनन्द। ३. समाधान। ४. सम्भवतः। ५. वह चाहता था कि मुझसे अप्रसन्न हो किन्तु उसे कोई कारण नहीं मिला। मैंने उससे पूछा, प्रतिप्रेमी का क्या अपराध है? मुझे नहीं पूछना चाहिए था, यही उसकी अप्रसन्नता का कारण बन गया। ६. यदि मैं यह प्रश्न करता कि मैं उसकी पट्टियों और अलकों का बन्दी हूँ तो इस तरह आपत्ति मे न पड़ता। ७. शेर का तात्पर्य। ८. दुःखी।

हो, मगर सबब नहीं पाता था। क़ज़ारा[1] कुछ दिनों के बाद रक़ीब[2] से माशूक़ को मलाल हुआ। मेरी जो शामत आई, मैंने दोस्त से पूछा कि रक़ीब ने क्या गुनाह किया जो राँद ए दरगाह[3] हुआ? माशूक़ इसी गुस्ताखी को बहान ए इताब[4] ठहरा कर आजुर्दा हो गया। अब शाइर अफ़सोस करता है और कहता है—हाय—'पुर्सीदन न दाश्त' यानी 'पूछना न चाहिये था।'

देर ख़ान्दी सूए ख़ीश वजूद फ़हमीदम दरेग़
पेशज़ीं पायम ज़ेगर्दे राह पेचीदन न दाश्त

आशिक़ एक उम्र तक मुन्तज़र[5] रहा कि यार मुझको बुलावे, मगर उस अय्यार ने न बुलाया। रफ़्ता रफ़्ता मैं अपने ग़म से ऐसा ज़ार[6] व नातवाँ[7] हो गया कि ताक़ते रफ़्तार[8] न रही और गर्दे राह[9] से मेरे पाँव उलझने लगे। जब उसने ये जाना कि अब न आ सकेगा, तब बुलाया। आशिक़ कहता है कि तूने मेरे बुलाने में देर की और मैं इसकी वजह जल्द समझ गया कि तूने मेरे बुलाने मे इस वास्ते देर की कि इससे पहले मैं ऐसा ज़ईफ़ न था कि तू बुलाये और मैं न आऊँ। 'दरेग़' को ये न समझा जाये कि 'जूद फ़हमीदन' पर है या पहले से बीमार न होने पर है। दरेग़ है दोस्त की बेवफ़ाई और बेसबब आज़ार[10] देने और अपनी उम्र के तलफ़[11] होने पर—

मन बवफ़ा मुर्दम व रक़ीब बदरजद
नीमा लबश अंगबीं व नीमा तबरज़द

'अंगबीं' शहद को कहते हैं और 'तबरज़द' मिश्री को कहते हैं, इन मानों

---

१. संयोगवश। २. प्रतिप्रेमी। ३. घर से निष्कासित। ४. क्रोध का बहाना। ५. प्रतीक्षा करने वाला। ६. क्षीण, दुःखी। ७. निर्बल। ८. चलने फिरने की शक्ति। ९. मार्ग की मिट्टी। १०. कष्ट। ११. नाश।

में कि ये मानिन्दे क़न्द[1] और बताशों के, जल्द टूटने वाली नहीं । जब तक इसको तबर[2] से न तोड़ो मुद्दआ हासिल नहीं होता। 'बदर ज़दन' अगर चे लुग़वी मानी[3] इसके हैं—'बाहर मारना' यानी 'बदर'—'बाहर' और 'ज़दन'—मारना लेकिन रोज़मर्रा में इसका तर्जुमा है—'निकल जाना' । अब जब ये मालूम हो गया तो यो समझिये कि माशूक़ के होटों को मीठा कहते हैं और क़न्द और मिश्री और शहद से निस्बत देते हैं और अलबत्ता मक्खी मिठास की आशिक़ है, पस जो मक्खी कि मिश्री पर बैठी वो जब चाहे, बेतकल्लुफ़ उड जाये और जो मक्खी कि शहद पर बैठेगी, जब वो उड़ने का क़स्द[4] करेगी, पर व बाल उसके शहद मे लिपट जाएँगे और वो मर कर रह जाएगी । पस अब ये कहता है कि मेरे माशूक के होंट शीरीनी[5] मे मेरे वास्ते शहद हो गये और रक़ीब[6] के वास्ते मिश्री। यानी वो चाट कर, लुत्फ़ उठाकर, सही व सालिम चला गया और मै फँस कर वही मर कर रह गया—

दर नमकश बी व ऐतमाद नफ़ूज़श
गर ब मय अफगन्द हम ब ज़ख्मे ज़िगर ज़द

'ज़दन' लाज़मी[7] भी है और मुताद्दी[8] भी । लाजमी के मानी हिन्दी में 'लग जाना' और मुताद्दी के मानी 'मारना' । यहाँ जद लाजमी है। अब ये समझा चाहिये कि नमक शराब को बिगाड़ता है, यानी अगर शराब मे नोन डाल कर एक-आधा दिन धूप में रखे तो उसमे नशा जाता रहता है और वो सिरका हो जाता है और जख्म पर अगर डाले तो वो कटाव करता है और जख्म को बढ़ाता है। मक़सूद शाइर का ये कि तू मेरे माशूक़ के नमक को देख और देख कि उसे नमक के नुफ़ूज़[9] पर कितना भरोसा है । अगर वो

---

१. दानेदार शक्कर के समान । २. कुल्हाड़ा । ३. शाब्दिक अर्थ। ४. निश्चय । ५. मिठास । ६. प्रतिप्रेमी । ७. सकर्मक । ८. अकर्मक। ९. घुलनशीलता ।

इस नमक को शराब मे डाल देता है तो वो शराब में नहीं मिलता, ज़ख्मे जिगर[1] पर जा लगता है। यानी अगर बेमहल[2] भी करिश्मा करता है, तो भी वो अपना काम कर रहता है—

कीस्त दरीं खाना कज़ खुतूते शुआई
मेहरे नफ़्स रेज़ा हा ब रोज़ने दरज़द

ये खयाल है यानी एक घर मे उसका महबूब[3] बैठा हुआ है और उसने जान लिया है कि कौन है, मगर बतरीक़े तजाहुल[4] भोला बनकर पूछता है कि आया इस घर मे ऐसा कौन है कि मिह्र[5] यानी आफ़ताब ने अपनी साँस के टुकड़े फ़र्तेशौक़[6] से दरवाज़े के रोज़न[7] पर फेंक दिये है ? आफ़ताब के खुतूते शुआई[8] का रोजनों मे पड़ना, इन खुतूते शुआई का यानी सूरज की किरन का बसूरत साँस के टुकड़ों के होना ज़ाहिर है—

दाव ए ऊ रा बुवद दलीले बेंदिही
खन्द ए दन्दाँनुमा बा हुस्ने गुहरज़द

खन्द ए दन्दाँनुमा उस हँसी को कहते हैं जो तबस्सुम[9] से बढ़कर हो और उसमे दाँत, हँसने वाले के, दिखाई दें। माशूक़ मोतियों के हुस्न पर हँसा, और हँसता कोई उसी चीज पर है जिसको अपने नज़दीक ज़लील समझ लेता है। अस्ल मानी ये कि मेरा माशूक़ मोतियों के हुस्न पर हँसा। गोया उसने ये दावा किया कि मोती कुछ अच्छी चीज़ नही। अब दावे के वास्ते दलील ज़रूर है, सो शाइर ये कहता है कि मेरे माशूक़ के दावए पुर दलील बदीही[10] है, यानी हँसने मे उसके दाँत नज़र आये। मालूम हुआ कि वो हुस्न, जो लोग,

---

१. हृदय का घाव। २. अ-स्थान। ३. प्रेमी। ४. जान बूझ कर अनजान बनना, उपेक्षा के रूप में। ५. सूर्य। ६. रुचि की अधिकता। ७. छिद्र। ८. रश्मि। ९. मुसकान। १०. स्पष्ट रूप से तर्कयुक्त दावा।

मोती में गुमान करते थे वो लग़ो[1] है। हुस्न ये है कि जो माशूक़ के दाँतो में है। पस इसी दलील ने सबको देख लिया और चूँकि बदीही[2] थी, मान लिया—

गीरते परवाना हम बरोज़े मुबारक
नाला चे आतिश बबाल मुर्ग़े सहर ज़द

परवाने की ग़ीरत[3] दिन को भी मुबारक समझनी चाहिए। परवाने की ग़ीरत वो गीरत नहीं कि जो परवाने में हो या परवाने को हो, बल्कि वो ग़ीरत कि जो और को आती हो परवाने पर, यानी रश्क। हासिले मानी ये है कि मैं तो दिनरात इश्क़ मे जलता हूँ, रात को जो परवाना जलता हुआ देखता था, तो, मुझको उस पर रश्क आता था। लो वही ग़ीरत और वही रश्क जो परवाने पर शब[4] को था, अब दिन को भी मुबारक़ हो, यानी मेरे सुबह के नालों[5] से मुर्ग़े सहर[6] के परो में आग लग गई और मैं अपनी मस्ती और बेख़ुदी में ये नही जानता कि ये मेरे नाले के सबब से है। मुझको वो रंज और ग़ुस्सा ताज़ा हो गया जो रात को परवाने को देख कर खाता था। मुर्ग़ेसहर को जलते हुए देख कर जलता हूँ कि, हाय, ये कौन है जो मेरी तरह जलता है—

लश्करे होशम बज़ोरे मय न शिकस्ती
ग़म्ज़ ए साक़ी न खुस्त राहे नज़र ज़द

नज़र 'फ़िक्र' को भी कहते हैं और 'निगाह' को भी। यहाँ निगाह के मानी हैं। शाइर कहता है कि मै ऐसा न था कि शराब की ताब न लाता और शराब पीकर बेहोश हो जाता, मगर क्या करूँ कि पहले ग़म्ज ए साकी[7] ने

---

१. निरर्थक। २. स्पष्ट। ३. लज्जा। ४. रात। ५. रुदन। ६. प्रातःकालीन मुर्ग़ा। ७. मधुबाला के हावभाव।

निगाह को खीरा[1] और मग़लूब[2] कर दिया, फिर उस पर शराब पी गई। बेख़ुदी का इस्तेदाद[3] तो बहम पहुँचा ही गया था, नाचार होश जाते रहे—

जाँ बुते नाज़ुक चे जाए दावए ख़ूनस्त
दस्ते वय ओ दामने के ऊ बकमर ज़द

इस शेर का लुत्फ़ विजदानी[4] है, बयानी नहीं। मानी इसके ये हैं कि उस माशूक़ से कि वो बहुत नाज़ुक है ख़ून का दावा किया करे कि उसके वक़्ते अज़्मे क़त्ल[5], दामन गरदान ते वक़्त वो सदमा पहुँचा है कि उसका हात है और वो दामन कि जो उन्होंने गरदान कर कमर पर बाँधा है। ऐसा लचका कमर को पहुँचा है कि वो आप अपने दामन पर दादख़ाह[6] हो रहा है। पस कोई उससे ख़ून का क्या दावा करेगा—

बर्ग तरब साख़्तेम ओ बादा गिरिफ़्तेम
हरचे ज़े तबहे ज़माना बेरदा सरज़द
शाख़ चे बालद गर अर्मुगाने गुल आवुर्द
ताक चे नाज़द अगर सलाए समरज़द

शाइर कहता है कि ये रूईदगियाँ बमुक़तज़ाए तीनते ख़ाक हर तरफ़ ज़ाहिर हुआ करती हैं। मसलन गन्ना। अब कुछ ख़ाके को और हवा को यही मंज़ूर नहीं कि इसका रस निकले और उसका क़न्द बने। ये आदमी की दानशमन्दी है कि उसने इस घास में से ये बात पैदा की। पस इसी तरह अंगूर है और गुलाब के फूल हैं। शाख़े गुल[7] क्या जाने कि फूल में क्या ख़ूबी है और ताक क्या जाने कि मेरे फल में क्या हुनर है? हमने अपने ज़ोरे अक़्ल से अंगूर की शराब बनाई और फूलों को हर हर रंग से अपने काम मे लाये—

---

१. चकाचौंध। २. स्तब्ध। ३. पात्रता। ४. आनन्दात्मक, अनिर्वचनीय। ५. वध के निश्चय के समय। ६. साधुवाद पाने के इच्छुक। ८. फूल की शाखा।

मौलवी करामतअली के नाम

काम न बख़्शीदा गुनह चे शुमारी
ग़ालिबे मिस्की ब इल्तिफ़ात नयरज़द

ये गुस्ताख़ाना अपने परवरदिगार से कहता है कि जब इस आलम[1] में तूने मेरी दाद न दी और मेरी ख़ाहिशे पूरी न कीं तो बस अब मालूम हुआ कि मैं लायक़ इल्तिफ़ात[2] के न था। पस जब मैं लायक़ तवज्जोह के नहीं तो अब आलमे उक्बा[3] मे मेरे गुनाहों का मुआख़ज़ा[4] क्या ज़रूर है? जब हमारे मतालिब आपने हमको न दिये तो हमारे मआसी[5] का भी शुमार न कीजिए। जाने दीजिए। हममें इल्तिफात की अर्जिश[6] नहीं है। १२।

—ग़ालिब

---

१. संसार। २. दयापात्र, प्रेम के योग्य। ३. यमलोक ४. प्रतिकार। ५. पाप-समूह। ६. प्रतिष्ठा।

मुस्तफ़ाख़ाँ बहादुर 'शेफ़्ता' के नाम

(७ फ़रवरी, १८६५ ई०)

जनाब भाई साहब क़िब्ला,

यक़ीन है कि आप माल ख़ैर[1] अहने दारुल रियासत[2] मे पहुँच गये हों और ब जमीयते[3] खातिर रोजा रखते हों। सिवा पान के कोई खयाल और मौलवी अलताफ़ हुसेन के फ़िराक़[4] के सिवा कोई वजहे मलाल[5] न हो। खुदा करे तुमको याद आ जाये कि मुफ़्तीजी शिगुफ़्ती को शिगुफ़्त का मज़ीद अलैह[6] मुसल्लम[7] नहीं जानते थे। सिकन्दरनामे में देखा—

बसे दर शिगुफ़्ती नमूदन तवाफ़
इनाने सुखन रा कशद दर गज़ाफ़[8]

सहबाई[9] शफक़ सुबह को ग़लत और इस रंग को मख़सूस[10] ब शाम जानता था। मुहम्मद सैयद अशरफ़ माज़न्दरानी के कलाम मे नज़र पडा—

हमचू सुबह शफ़क़ आलूदा रुरक़श सुर्ख़ी सफ़ेद[11]

अब जो फ़क़ीर का ये मतला मशहूर हुआ—

---

१. सकुशल। २. राजधानी। ३. समूह के साथ। ४. वियोग। ५. शोक का कारण ६. जिस पर कुछ बढ़ाया गया हो। ७. प्रमाणित। ८. घर-घर घूमना अपनी कविता को नष्ट करना है। ९. मौलवी इमामबख़्श सहबाई, ग़ालिब का समकालीन, गोरों ने इसे फाँसी पर चढ़ाया। १०. विशेष। ११. उसकी आकृति सान्ध्य-लालिमा के समान श्वेत और लाल है।

मुस्तफ़ाख़ाँ बहादुर 'शेफ़्ता' के नाम

अज़ जिस्म ब जाँ नक़ाब ताकै
ई गंज दरीं ख़राब ताकै[1]

हज़रात को इसमे ताम्मुल[2] है, ख़राबा की जगह ख़राब को नहीं मानते। आया ये नहीं जानते कि लुग़ते अरबी अस्ल 'ख़राब' और 'ख़राबा' मज़ीद अलैह,[3] 'मौज' लुग़ते अरबीअस्ल, 'मौजा' मज़ीदअलैह है? मज़ीदअलैह जायज़ और लुगते अस्ली नाजायज़ क्यों हो? एक मिस्रा क़ुदमा[4] मे से किसी का है मगर पेश मिस्रा मुझे याद नही और ये भी नही मालूम कि किसका है—

चूं मेहर दर कुसूफ़म व चूं गज दर ख़राब[5]

मै ख़ुद कहता हूँ कि इसको न मानो, इस राह से कि मैं क़ायल का नाम नहीं बता सकता। ये मतला मिर्ज़ा मुहम्मदअली 'सायब' अलैहिर्रहमा का है और उसके दीवान मे मौजूद है—

बफ़िक्र दिल न फ़ुतादी ब हेच बाब दरेग़
बगज राह न बुर्दी दरीं ख़राब दरेग़[6]

---

१. आत्मा पर शरीर का आवरण कब तक? यह कोष इस जगल मे कब तक? २. आक्षेप। ३. जिस पर कुछ बढ़ाया गया हो। ४. प्राचीन (कवि)। ५. जिस तरह ग्रहण के समय सूर्य, और जंगल में छिपी हुई सम्पत्ति रहती है, उसी प्रकार की मेरी स्थिति है। ६. किसी द्वार पर साधना करने पर भी मुझे कुछ प्राप्त नहीं हुआ, जंगल में गड़े हुए खजाने की ओर कोई मार्ग मुझे नहीं ले गया।

गज व ख़राब[1], गज व ख़राबा, गंज व वीरान, गज व वीराना मुस्तामल[2] अहले ईरान है। इस बात मे मुतरद्दिद[3] होना महज़ अदम ऐतना[4] है। वस्सलाम।

सुबह सेशम्बा दहुम माहे सियाम[5], साले ग़ाफ़िर[6] बे अहले इस्लाम।

१० रमज़ान १२८१ मुताबिक़ ७ फरवरी १८६५ ई०।

---

१. निर्जन-स्थान। २. प्रयुक्त। ३. चिन्तित। ४. लापरवाही। ५. रमज़ान का महीना। ६. पापनाशक।

गुलाम बिस्मिल्लाह के नाम

मुशी साहब शफ़ी के मुकर्रम मज़हरे लुत्फ़ व करम[1] मुंशी ग़ुलाम बिस्मिलाह साहब सल्लमुल्लाह ताला[2]।

साहब ये नया ढंग है शिकायत का। अगर तुम्हारे कलाम मे इस्लाह[3] कम हो तो वो कलाम की ख़ूबी है, उसको उस्ताद की सहलअंगारी[4] क्यों समझो ? आपके मुन्सिफ़ साहब की ग़ज़ल में इस्लाह कम होती है। पस उनको चाहिये कि ख़ुश हों, न कि मुझसे गिला करें ? सुनिये हज़रत खत मे तदाख़ुल[5] बुरा है। अगर यहाँ की डाक मे कभी खत खुल गया तो मुझसे पचास रुपये लिये जावेंगे या क़ैद का हुक्म होगा। आइन्दा आप खत जुदागाना भेजा कीजिये। इस बाब में ताकीद जानिये। कोई हीला जवाज़[6] का आप की तरफ़ से मसमूअ[7] न होगा।

—ग़ालिब

---

१. आनन्द और दया के प्रकट होने का स्थान। २. ईश्वर सकुशल रखे। ३. संशोधन। ४. सुस्ती। ५. एक चीज़ का दूसरी चीज़ मे प्रवेश करना, मिश्रण। ६. औचित्य। ७. श्रुत।

अज़ीज़ुद्दीन के नाम

साहब,

कैसी साहबज़ादों की-सी बातें करते हो ! दिल्ली को वैसा ही आबाद जानते हो जैसी आगे थी ? क़ासिमजान की गली, मीर ख़ैराती के फाटक से फ़तहउल्ला-बेगख़ाँ के फाटक तक बे चिराग़[1] है। हाँ अगर आबादी है तो ये है कि गुलाम हुसेनख़ाँ की हवेली अस्पताल है और ज़ियाउद्दीनख़ाँ के कमरे मे डाक्टर-साहब रहते हैं और काले साहब के मकानों मे एक और साहब आलीशान इंग्लिस्तान तशरीफ़ रखते हैं। ज़ियाउद्दीनख़ाँ और उनके भाई मयक़बाइल[2] व अशायर[3] लोहारू मे । लोहारू मे लाल कुँवे के महल्ले मे ख़ाक उड़ती है। आदमी का नाम नहीं। तुम्हारे मकान मे जो छोटी बेगम रहती थी, उसके पास और लक्खी की दूकान पर उस इश्तिहार को भेजा। बेगम लाहौर गई हुई है। लक्खी की दुकान मे कुत्ते लोटते हैं । मौलवी सद्रुद्दीन साहब लाहौर, ईज़दबख़्श तुराबअली इन लोगों मे से मेरी मुलाक़ात नही । मैंने आप मुहर कर दी, हकीम अहसनुल्लाख़ाँ और मियाँ ग़ुलाम नजफ़ और बहादुर बेग और नबीबख़्शख़ाँ साकिन[4] दरीबा इनकी मुहरे हो गई । महज़र आपके पास भेजता हूँ । खत अज़ रू ए एहतियात बैरग भेजा है, पोस्ट पेड़ खत अक्सर तलफ़ हो जाते हैं । चुनाँचे क़ाज़ी अब्दुलजमील साहब का खत, जिसका आपने ज़िक्र लिखा है, आँखें फूट जायें, अगर मैंने देखा हो । आप उनसे मेरा सलामे नियाज़ कहिये और खत के न पहुँचने की उनको खबर पहुँचाइये।

—ग़ालिब

---

१. निर्दोष । २. सपरिवार । ३. स्वजन-समूह सहित । ४. निवासी ।

मुफ़्ती सैयद मुहम्मद अब्बास के नाम

क़िब्ला,

हज़रत का नवाज़िशनामा[1] आया, मैंने उसको हिर्ज़े बाज़ू[2] बनाया। आपका तहसीन[3] मेरे वास्ते सरमाय ए इज्ज़ व इफ़्तिख़ार[4] है। फ़क़ीर उमीदवार है कि ये दफ़्तर बेमानी, न सरसरी बल्कि सरासर देखा जाये। न पेशे नज़र[5] धरा रहे, बल्कि अक्सर देखा जावे। मैंने जो नुस्ख़ा वहाँ भिजवाया है, गोया कसौटी पर सोना चढ़ाया है, न हट धरम हूँ, न मुझे अपनी बात की पच है। दीबाचा[6] व ख़ात्मा मे जो कुछ लिख आया हूँ, सब सच है। कलाम की हक़ीक़त की दाद जुदा चाहता हूँ, तर्ज़े इबारत[7] की दाद जुदा चाहता हूँ। निगारिश[8] ज़राफ़त[9] से ख़ाली न होगी। गुज़ारिश लताफ़त से ख़ालो न होगी। इल्म व हुनर से आरी[10] हूँ लेकिन पचपन बरस से महवे सुख़न गुज़ारी[11] हूँ। मब्द ए फ़य्याज़[12] का मुझपर एहसाने अज़ीम[13] है, माख़ज़[14] मेरा सही और तबह[15] मेरी सलीम[16] है। फ़ारसी के साथ एक मुनासबत[17] अज़ली[18] व सरमदी[19] लाया हूँ, मुताबिक़ अहले पारस[20] के मन्तक़[21] का भी मज़ा ए अब्दी[22] लाया हूँ। मुनासबत ख़ुदादाद[23] तरबियते उस्ताद[24] से हुस्न व क़ुबा[25] तरकीब

---

१. कृपा-पत्र। २. भुजदड का ताबीज। ३. सन्तोष। ४. प्रतिष्ठा और गौरव की सम्पत्ति। ५. सामने। ६. भूमिका। ७. लेखन-शैली। ८. लेखन। ९. हास्य-व्यग। १०. रिक्त। ११. काव्यरचना मे तल्लीन। १२. कल्याणकारी। १३. महान् उपकार। १४. आकर-स्थल। १५. बुद्धि। १६. पूर्ण। १७. लगाव। १८. आरम्भ से विद्यमान। १९. शाश्वत। २०. इरानियों के अनुसार। २१. वार्त्तालाप। २२. चिरकालीन आनन्द। २३. ईश्वरदत्त। २४. गुरु की शिक्षा। २५. गुण-दोष।

पहचानने लगा, फ़ारसी के गवामिज़[1] जानने लगा। बाद अपनी तकमील के तलामिज़ा[2] की तहज़ीब का खयाल आया। 'क़ात ए बुरहान' का लिखना क्या था गोया बासी कढी मे उबाल आया। लिखना क्या था कि सहामे मलामत[3] का हदफ़[4] हुआ। है है ये तुनकमाया[5] मुआरिज़े अकाबिरे[6] सलफ़[7] हुआ। एक साहब फ़रमाते है कि 'कात ए बुरहान' की तरकीब गलत है, अर्ज़ करता हूँ कि हज़रत 'बुरहान क़ातै' व 'क़ात ए बुरहान' एक नमत[8] है। "बुरहान क़ातै" ने क्या लट्ठा नैनों नैनसुख कता[9] किया है जो आपने उसको 'क़ाते'[10] लक़ब[11] दिया है ? "बुरहान" जब तक गैर की किसी बुरहान[12] को क़ता न करेगी, क्योकर "बुरहाने क़ातै" नाम पायेगी ? "बुरहाने क़ातै" की सेहत[13] मे जितनी तक़रीर कीजिएगा वो "क़ात ए बुरहान" की सेहत के सुबूत के काम आएगी। 'कतए तारीख' का क्या कहना ! गोया ये किताब माशूक और क़ता उसका गहना है। जनाब नवाब साहब का नियाज़मन्द और बन्द ए फ़र्माबरदार हूँ। बाद अर्जे सलाम, शेर के पसन्द आने का शुक्रगुज़ार हूँ। आपके इल्म व फ़ज्ल[14] व फ़हम व इदराक[15] की जो तारीफ की जाये वो हक[16] है लेकिन मेरे शेर की तारीफ़ सिर्फ खरीददारी ए दुकान वे रौनक है। १२।

---

१. भावार्थ, सूक्ष्मार्थ २. शिष्य। ३. डाँट-डपट के तीर। ४. लक्ष्य। ५. अकिंचन। ६. असाध्य-रोग ७. जीर्ण। ८. शैली। ९. काट-छाँट १०. काट करने वाला। ११. विरद। १२. युक्ति। १३. शुद्धि। १४. ज्ञान और कृपा। १५. सूझ-बूझ। १६. यथार्थ।

अब्दुलग़फ़ूरख़ाँ 'निसाख़' के नाम

जनाब मौलवी साहब क़िब्ला,

ये दरवेशे गोशानशी[1] जो मौसूम[2] ब असदुल्लाह और मुतख़ल्लिस[3] ब गालिब है, मुकर्रमते हाल[4] का शाकिर[5] और आइन्दा अफ़ज़ाइशे इनायत[6] का तालिब[7] है। 'दफ़्तरे बेमिसाल' को अतय ए कुबरा[8] और मुहब्बते उज़मा[9] समझ कर याद आवरी का एहसान माना। पहले इस क़द्र अफ़ज़ाई[10] का शुक्र करता हूँ कि हज़रत ने इस हेचमीरज़ हेचमदाँ[11] को क़ाबिले ख़िताब[12] व लायके अता ए किताब[13] जाना। मै दरोग़गो[14] नही, ख़ुशामद मेरी ख़ू[15] नही। दीवान फैजे उनवाँ इस्मे बा मुसम्मा[16] है। 'दफ़्तरे बेमिसाल' इसका नाम बजा[17] है। अल्फ़ाज़ मतीन, माना बलन्द मज़मून उम्दा, बन्दिश दिल पसन्द। हम फ़कीर लोग एला ए कलमतुलहक़[18] मे बेबाक व गुस्ताख़ है। शेख़ इमामबख़्श तर्जे जदीद[19] के मूजिद[20] और पुरानी नाहमवार[21] रविशों के नासिख[22] थे। आप उनसे बढ कर बसीग ए मुबालग़ा[23] बेमुबालगा[24]

---

१. एकान्तसेवी, वैरागी। २. संज्ञान्वित। ३. काव्यनामवाला। ४. वर्तमान दया। ५. कृतज्ञ। ६. भावीवृद्धिशील कृपा। ७. इच्छुक। ८. महान् दान। ९. अत्यधिक प्रेम। १०. आदर-सम्मान। ११. तुच्छ। १२. सम्बोधन के योग्य। १३. पुस्तक भेट के योग्य। १४. असत्यभाषी। १५. स्वभाव। १६. नामधेय। १७. उचित। १८. सच्चाई को उठाने मे। १९. नयी शैली। २०. आविष्कारक। २१. दुरूह। २२. व्याख्याता। २३. अत्युक्ति अलंकार के विषय मे। २४. यथार्थ मे।

नस्साख़[1] है। तुम दाना ए रुमूज़े उर्दू ज़बान[2] हो—सरमाय ए नाज़िश कलमखे हिन्दुस्तान[3] हो।

ख़ाकसार ने इब्तदा ए सिने तमीज़[4] मे उर्दू ज़बान मे सुख़नसराई[5] की है, फिर औसत उम्र[6] मे बादशाहे देहली का नौकर होकर चन्द रोज़ उसी रविश पर ख़ामा फ़रसाई की है[7]। नज़्म व नस्रे फ़ारसी का आशिक और माइल[8] हूँ। हिन्दुस्तान मे रहता हूँ मगर तेग़े अस्फ़हानी[9] का घायल हूँ। जहाँ तक ज़ोर चल सका, फ़ारसी ज़बान मे बहुत कुछ बका, अब न फ़ारसी का फ़िक्र, न उर्दू का ज़िक्र, न दुनिया मे तवक़्क़ो, न उक़्बा[10] की उम्मीद। मैं हूँ और अन्दोहे नाकामी ए जावीद[11] जैसा कि ख़ुद एक क़सीद ए नात[12] की तशबीब[13] मे कहता हूँ—

चश्मम कुशूदा अन्द ब किरदार हाए मन
ज़े आइन्दा ना उमीदम व अज़ रफ़्ता शर्मसार[14]

एक कम सत्तर बरस दुनिया मे रहा, अब और कहाँ तक रहूँगा ? एक उर्दू का दीवान हज़ार-बारह सौ बैत[15] का, एक फ़ारसी का दीवान[16] दस हजार कई सौ बैत का, तीन रिसाले नस्र[17] के, ये पाँच नुस्ख़े मुरत्तब हो गये,

---

१. व्याख्याता। २. उर्दूभाषा के रहस्य को जानने वाले। ३. भारत के लिए गर्व करने योग्य सम्पत्ति। ४. युवावस्था के प्रारम्भ मे। ५. काव्य-रचना। ६. आयु का मध्यभाग। ७. लेखनी चलाई है। ८. आसक्त। ९. इस्फहान (ईरान का एक नगर) की तलवार। १०. यमलोक। ११. असफलता का स्थायी शोक। १२. हजरत मुहम्मद की प्रशंसा मे लिखी गई कविता। १३. उपमा। १४. लोग मेरे आचरण से मुझे सावधान कर रहे हैं। मैं भविष्य के लिए निराश हूँ और अपने पिछले आचरण पर लज्जित हूँ। १५. एक शेर। दो चरण। १६. ग़जल-संग्रह। १७. गद्य।

अब और क्या कहूँगा ? मदह[1] का सिला[2] न मिला, ग़ज़ल की दाद न पाई, हरज़ागोई[3] में सारी उम्र गँवाई । बक़ौले तालिब आमिली अलैहिर्रहमा[4]--

लब अज़ गुफ़्तन चुनाँ बस्तम के गोई
दहन बर चेहरा ज़ख़्मे बूद बेह शुद[5]

सच तो यों है कि क़ुव्वते नातिक़ा[6] पर वो तसर्रुफ़[7] और कलम मे वो ज़ोर न रहा, तबीयत मे वो मज़ा, सर मे वो शोर न रहा । पचास-पचपन बरस की मश्क़[8] का मलेका[9] कुछ बाक़ी रह गया है । इस सबब से फ़ने कलाम[10] मे गफ़्तगू कर लेता हूँ । हवास का भी बक़िया इस क़दर है कि मारिज़े गुफ़्तार[11] मे मुताबिक़े सवाल[12] जवाब देता हूँ । रोज़ व शब[13] ये फ़िक्र रहती है कि देखिये वहाँ क्या पेश आता है और ये बाल-बाल गुनहगार बन्दा क्योंकर बख़्शा जाता है । हज़रत से ये इल्तिमास[14] है कि आप जो इहदा[15] के बादी[16] और मुझको इर्सालिनामा की[17] सबील के हादी हुए हैं, जब तक मैं जीता रहूँ नामा व पयाम[18] से शाद[19] और बाद मेरे मरने के दुआ ए मगफरत[20] से याद फ़रमाते रहियेगा । वस्सलाम बालफ़ुल एहतिराम ।

---

१. प्रशसा । २. प्रतिफल । ३. बक-बक । ४. भगवान की दया उन पर हो । ५. मैंने बोलने से अपने मुँह को बन्द कर लिया है। ऐसा प्रतीत होता है कि मुँह मेरी आकृति पर एक घाव था जो अच्छा हो गया है। ६. वाक्शक्ति । ७. क्षीणता । ८. अभ्यास । ९. अभ्यासजन्य योग्यता । १०. काव्यकला । ११. वार्त्तालाप के समय । १२. प्रश्न के अनुसार । १३. दिन-रात । १४. प्रार्थना । १५. भेंट । १६. प्रारम्भकर्त्ता । १७. पत्र भेजने की । १८ पत्र और सन्देश । १९. प्रसन्न । २०. ईश्वर से क्षमा मिलने की प्रार्थना ।

मर्दानअलीख़ाँ 'राना' के नाम

१

ख़ाँ साहब आलीशान मर्दानअलीख़ाँ साहब को फ़क़ीर ग़ालिब का सलाम। नज़्म व नस्र देखकर दिल बहुत ख़ुश हुआ। आज इस फ़न मे तुम यकता हो, ख़ुदा तुमको सलामत रखे। भाई, 'जफा' के मुअन्नस[1] होने में अहले देहली[2] व लखनऊ को वाहम इत्तिफाक़ है, कभी कोई न कहेगा कि जफ़ा क्या, हाँ बंगाले मे जहाँ बोलते है कि 'हथिनी आया' अगर जफ़ा को मुज़क्कर[3] कहें तो कहें, वर्ना सितम व ज़ुल्म व बेदाद मुज़क्कर और जफ़ा मुअन्नस है। बेशबाव शक[4] वस्सलाम वल इक्राम। १२।

२

ख़ाँ साहब मुशफ़िक़ आलीशान को मेरा सलाम। कल तुम्हारा इनायतनामा पहुँचा। रामपूर का लिफ़ाफ़ा आज रामपूर को रवाना हुआ। काग़ज़े अशार मैंने देख लिया, कही इस्लाह की हाजत[5] न थी, 'नाला दर····नाल ए दिल' बना दिया।

नवाब साहब उर्दू का तज़्किरा[6] लिखते है, फ़ारसी ग़ज़ल तुमने बेफ़ायदा लिखी। देखो साहब, तुमने अपने मस्कन[7] का पता लिखा, सो मैंने दूसरे दिन तुम्हारे ख़त का जवाब रवाना किया। मुंशी नवलकिशोर साहब यहाँ आये थे। मुझसे मिले, बहुत ख़ूबसूरत और ख़ुशसीरत[8] सआदतमन्द और माक़ूल पसन्द आदमी हैं। तुम्हारे मद्दाह[9] और मैं उनका सनाख़ाँ[10]। ख़ुदा तुमको और उनको सलामत रखे।

---

१. स्त्रीलिंग। २. दिल्ली-निवासी। ३. पुल्लिग। ४. असन्दिग्ध। ५. आवश्यकता। ६. परिचय। ७. घर। ८. सुस्वभाव। ९. प्रशंसक। १०. प्रशंसा करने वाला।

हकीम ग़ुलाम मुर्त्तज़ाख़ाँ के नाम

(११ मार्च, १८६५ ई०)

खाँ साहब जमीलुल मनाकिब[1] हकीम ग़ुलाम मुर्त्तज़ाख़ाँ साहब, दर्दमन्द का सलाम। ख़ूब याद कीजिये कि मैंने कभी किसी अम्र में आपको तकलीफ़ नही दी। अब एक तरह की इनायत का सायल[2] हूँ। हामिल हाज़ा उल मकतूब[3] पंडित जैनरायन मेरा ये ख़त लेकर हाज़िर होते हैं। इनके बुज़ुर्ग नवाब अहमदबख़्शख़ाँ की सरकार मे मनासिबे आलिया[4] और ओहदए हाए जलीला[5] रखते थे। अब मौक़ा ये आया है कि ज़ुस्तज़ूए नौकरी[6] मे पटियाले आते हैं। आपको मेरे सर की क़सम, जहाँ तक हो सके सई[7] करके इनको मुआफ़िक़[8] इनकी इज़्ज़त के कोई मन्सब, कोई ओहदा दिलवा दोगे तो मैं ये जानूंगा कि तुमने मुझे नौकर रखवा दिया है। बड़ा एहसानमन्द हूँगा।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१. यशस्वी। २. प्रार्थी। ३. पत्र-वाहक। ४. उच्चाधिकार। ५. उच्च-पद। ६. नौकरी की खोज। ७. प्रयत्न। ८. अनुकूल।

हकीम ग़ुलाम रज़ाख़ाँ के नाम

(१८६५ ई०)

नूरे दीदा[1] व सुरूरे दिल[2] व राहते जान[3], इक़बाल निशान हकीम ग़ुलाम रजाख़ाँ को ग़ालिब नीमजाँ[4] की दुआ पहुँचे। तुमसे रुख़सत होकर और तुम्हें ख़ुदा को सौपकर रवान ए रामपूर हुआ। मौसम अच्छा था। गरमी गुज़र गई थी, जाड़ा अभी चमका न था। आलमे एतिदाले आब व हवा[5], साया[6] व सरचश्मा[7] जा बजा। आराम से रामपूर पहुँचा। नवाब साहबे हाल[8] बमुक़तजा ए अले बलदो सिर्रुनले अबी[9] हुस्ने अख़लाक[10] में नवाब फिरदौस आरामगाह[11] के बराबर बल्कि बाज़शेवा[12] व रविश मे उनसे बेहतर है। ब मुजर्रिदे[13] मसनदनशीनी[14] के ग़ल्ले का महसूल यक क़लम[15] माफ़। अलीबख़्श ख़ानसामा को बीस हज़ार रुपये बाबत मतालिबे सरकारी बख़्श दिया। मुफ़स्सल[16] हालात बज़्ल व नवाल[17] इन्दुल मुलाक़ात[18] ज़बानी कहूँगा।

सुनो साहब, मैं फ़क़ीर आज़ादा केश[19] हूँ, दुनियादार नहीं, मक्कार नही, ख़ुशामद मेरा शिआर[20] नही। जिसमे जो सिफ़ात[21] देखता हूँ, वो बयान करता

---

१. नेत्र-ज्योति। २. हृदय के हर्ष। ३. आत्मा की शान्ति। ४. अर्धमृत। ५. जलवायु समशीतोष्ण। ६. छाया। ७. झरना। ८. वर्तमान नवाब। ९. पुत्र अपने पिता की अनुकृति होता है। १०. शिष्टाचार। ११. स्वर्गवासी। १२. ढग। १३. साथ ही। १४. राज्यारोहण। १५ नितान्त। १६. विस्मृत। १७ मुक्तहस्तता और दानशीलता। १८. भेट के समय। १९. स्वतत्र आचरण करने वाला। २०. स्वभाव। २१. विशेषताएँ।

हूँ। नवाब साहब तो घर बैठे मुझे सौ रुपये महीना देते हैं, तुम मुझे क्या देते हो, जो तुम्हारे बाब मे मेरा अक़ीदा ये है कि अगर बमसल[1] मेरा कोई सुलबी बेटा[2] ऐसा होता जैसे तुम तो मै उसको अपना फ़ख्र व शरफ़[3] जानता। इल्म व अक़्ल व सिद्क़[4] व हिल्म[5] के जामे[6]। तवर्रो[7] व ज़ुहद[8] व तक़्वा[9] के हावी। इल्मे अखलाक़[10] मे हुकमाए रूहानी[11] ने सआदत[12] के जो मदारिज[13] लिखे हैं, वो सब तुममे पाये जाते हैं। परवर्दगार[14] तुमको उम्रे तबई[15] अता करे और दौलत व इक़बाल शुमार से ज्यादा दे। इन्शा अल्लाह कि हमचुनीं खाहद बूद[16]।

---

१. लोकोक्ति के अनुसार। २. औरस-पुत्र। ३. बड़प्पन। ४. सच्चाई। ५. गाभीर्य। ६. सग्राहक। ७. संयम। ८. इन्द्रिय। ९. परहेजगारी। १०. शिष्टाचार का ज्ञान। ११. अध्यात्मशास्त्र के जानने वाले विद्वान् १२. शुभकारिता। १३. दर्जे। १४. परमात्मा। १५. स्वाभाविक आयु। १६. ईश्वर ने चाहा तो ऐसा ही होगा।

प्यारेलाल 'आशोब' के नाम

१

(३ अप्रैल, १८६६ ई०)

शफीक़े मुकर्रम बाबू प्यारेलाल साहब को सलाम, कल रुक़्क़ा मय मसविदा बाबू चन्दूलाल साहब के पास पहुँच गया होगा। यक़ीन है कि आपकी नजर से गुज़रा होगा और आप मसविदा करने पर मुतवज्जेह[1] हुए होंगे। जल्दी नहीं। आप बग़ौर अच्छी तरह ताम्मुल[2] से लिखिये। जब साफ़ हो जाएगा, मुझे दीजियेगा। मैं अपनी मुहर करके डाक मे भिजवा दूँगा। अभी डिप्टी-कमिश्नर बहादुर के पास से आया हूं, वो कहते थे कि कल लार्ड साहब आयेंगे और परसों शिमले को तशरीफ़ ले जाएँगे। बतरीक़े इत्तिला आपको लिखा है, ये मंज़ूर नहीं कि अर्ज़ी आज तैयार हो जाये और कल मैं आप दूँ। डाक मे इर्साल करना मज़ूर है।

राकिम[3]

—असदुल्लाह् खां 'ग़ालिब'

२

क्यो साहब हमसे ऐसे ख़फ़ा हो गये कि मिलना भी छोड़ा ? ख़ैर मेरी तक़सीर[4] माफ़ करो और अगर ऐसा ही गुनाहे अज़ीम[5] है कि कभी न बख़्शा जाएगा तो वो गुनाह मेरा मुझ पर जाहिर कर दो ताकि अपने क़ुसूर पर इत्तिला पाऊँ। बरख़ुर्दार[6] हीरासिंघ तुम्हारे पास पहुँचता है और ये तुम्हारा दस्तगिरफ़्ता[7] है। रुहतक मे तुमने उसे नौकर रखवा दिया था। ख़ैर, वहाँ

---

१. ध्यान देने वाला। २. सोच-विचार। ३. लिखने वाला। ४. अपराध। ५. महापातक। ६. सुपुत्र। ७. बन्दी।

की सूरत बिगड़ गई। अब ये ग़रीब बहुत तबाह है और उमूरे माश मे सख्त दिलतंग। तुम्ही दस्तगीरी[2] करो तो ये संभले, वर्ना इसका नक्शे हस्ती[3] सफहे दह्र[4] से मिट जाएगा।

इनायत का तालिब

—ग़ालिब

३

एक अलिफ़ बेश नही सैक़ले आईना हनोज़
चाक करता हूँ मै जब से कि गिरीबाँ समझा

पहले ये समझना चाहिये कि 'आईना' इबारत फ़ौलाद के आईने से है वर्ना हलबी[5] आईनो मे जौहर कहाँ और उनको सैक़ल कौन करता है। फ़ौलाद की जिस चीज़ को सैक़ल करोगे बेशुबा पहले एक लकीर पड़ेगी उसको 'अलिफ़े सैक़ल' कहते हैं। जब ये मुकद्दमा मालूम हो गया तो अब इस मफ़हूम[6] को समझिये—

चाक करता हूँ मै जब से कि गिरीबा समझा

यानी इब्तदा ए सिने तमीज़[7] से मश्क़े जुनूँ[8] है अब तक कमालेफ़न[9] हासिल नहीं हुआ। आईना तमाम साफ़ नहीं हो गया। बस वही एक लकीर सैक़ल की जो है, सो है। चाक की सूरत अलिफ़ की-सी होती है और चाके जेब आसारे जुनूँ[10] ही से है।

—ग़ालिब

---

१. आय का विषय। २. सहायता। ३. अस्तित्व। ४. युग का पृष्ठ। ५. हलब से आया हुआ। हलब दर्पण के लिए प्रसिद्ध था। ६. तात्पर्य। ७. वयस्कता के आरम्भ में। ८. पागलपन। ९. कला की पूर्णता। १०. पागलपन के लक्षण।

४

(३० जनवरी, १८६८ ई०)

फ़र्ज़न्दे अर्जमन्द इक़बाल बुलन्द बाबू मास्टर प्यारेलाल को ग़ालिब नातवाँ[1] नीमजाँ की दुआ पहुँचे। लाहौर पहुँचकर तुमने मुझे ख़त न भेजा। उसकी जितनी शिकायत करूँ बजा है। तुम नहीं जानते कि मुझे तुमसे कितनी मुहब्बत है। मैं तुम्हारा आशिक़ हूँ और क्योंकर न आशिक हूँ ? सूरत के तुम अच्छे, सीरत[2] के तुम अच्छे। शेवा व रविश[3] के तुम अच्छे। खालिक़[4] ने खूबियाँ तुममें कूट-कूट कर भर दी हैं। अगर मेरा सुलबी फ़र्ज़न्द[5] ऐसा होता तो मैं उसको अपना फ़ख्रे खानदान[6] समझता और तुम जिस कौम और जिस खानदान में हो उस कौम और उस खानदान के ज़रिय ए इफ़्तिख़ार[7] हो। खुदा तुमको सलामत रखे और उम्र व दौलत व इक़बाल व जाह[8] व जलाल[9] अता करे।

मियाँ तुमको याद है कि मैंने तुमको साबिक़ इससे नूरे चश्म मिर्ज़ा यूसुफअलीखाँ के बाब में कुछ लिखा है। मेरे इस्तिलाले हवास[10] का हाल तुम जानते हो। खुदा जाने उस वक़्त किस खयाल में था और मैं क्या लिख गया। जो कुछ लिखा वो सहलअंगारी[11] थी, अब जो कुछ लिखता हूँ, ये रास्त-गुफ़्तारी[12] है। मुख्तसर ये, यानी, मिर्ज़ा यूसुफ़अलीखाँ 'अज़ीज़' बड़े आली

---

१. निर्बल। २. स्वभाव। ३. रंग-ढंग। ४ सृष्टिकर्त्ता। ५. औरस-पुत्र। ६. कुल-गौरव। ७. गौरव का कारण। ८. प्रतिष्ठा। ९. प्रताप। १०. मति-भ्रम। ११. सुस्ती। १२. वार्त्तालाप।

ख़ानदान और बड़े बुज़ुर्ग क़ौम के हैं। शाइर भी बहुत अच्छे हैं, शेर ख़ूब कहते हैं। साहबे इस्तेदाद[1] हैं। इल्म उनका अच्छा है। ये भी गोया अहले इल्म व फ़ज़्ल[2] में से हैं और तरक़्क़ी के क़ाबिल हैं। नूरेचश्म मौलवी नसीरुद्दीन को मेरी दुआ कहना।

मुहर्रिरा ३० जनवरी १८६८ ई०।

---

१. विद्वान् २. ज्ञानी और प्रतिष्ठित।

गोबिन्दसहाय के नाम

१

(२९ दिसम्बर, १८५९ ई०)

बरख़ुर्दार,

बहुत दिन हुए मैंने तुमको खत लिखा है। अब इस ख़त का जबाब ज़रूर लिखो और जल्द लिखो। दो सवाल हैं तुमसे—एक तो ये कि यहाँ मशहूर है कि नवाब गवर्नर जनरल बहादुर इलाहाबाद से कानपुर आ गये, कोई कहता है आवेंगे। इसका हाल जो कुछ तुमको मालूम हुआ, लिखो। दूसरा सवाल ये है कि दो किस्म की अँग्रेजी शराब, एक तो कास्टेलन और एक ओल्डटाम। ये मैं हमेशा पिया करता था और ये दोनों क़िस्म बीस रुपये, हद चौबीस रुपये दर्जन आती थी। अब यहाँ पहले तो नज़र नही आती थी, अब पचास रुपये और साठ रुपये दर्जन आती है। वहाँ तुम दरियाफ्त करो कि उसका निर्ख क्या है और ये भी मालूम करो कि बतरीक़े डाक पहुँच सकती है या नही ? ये दोनों अम्र दरियाफ़्त करके मुझको जल्द लिखो। अगर ब कीमते मुनासिब[1] हाथ आये और उसका भेजना मुमकिन हो तो यहाँ से रुपये की हुंडवी भेज दूँ और तुम खरीद कर बैलगाडी की डाक पर रवाना कर दो। जाडों मे मुझको बहुत तकलीफ़ है, और ये गुड-छाल की शराब मैं नहीं पीता, ये मुझको मज़रत[2] करती है और मुझे उससे नफ़रत है। ज़रूरी जवाब तलब।

चहारशम्बा, २९ दिसम्बर १८५९ ई०।

—अज़-ग़ालिब जाँ ब लब[3]

---

१. उचित मूल्य से। २. हानि। ३. जिसके प्राण होठों पर आ गये हों।

२

(जनवरी, १८६५ ई०)

साहब, तुमको दुआ कहता हूँ और दुआ भी देता हूँ। शराब की क़ीमत के दो ख़त भेजे। भाई, कास्टेलन और ओल्डटाम दोनों चौबीस रुपये दर्जन हमेशा लिया करता था, अब यहाँ मँहगी मिलती है। मैंने तुमसे पूछा, जब वहाँ भी इस क़ीमत की मिलती है तो मेरा मक़दूर नहीं। मैं समझा था कि शायद वहाँ अरज़ाँ[1] हो। ख़ैर इसको जाने दो। रोटी ही मिले जाये तो ग़नीमत है। महीने भर की रोटी का मोल एक दर्जन की क़ीमत है।

---

१. सस्ती।

शाह करामतहुसेन हमदानी बिहारी के नाम

१

शाह साहब को ग़ालिब नातवाँ[1] का सलाम पहुँचे। सूफ़ियों की इस्तिलाह[2] मे मुहावरत व मुसामरत[3] और मर्तबे[4] है जो कामिलीन[5] और उर्फ़ा[6] को हासिल होते है। मेरा शेर पढ़ो--

जब तक दहाने ज़ख्म[7] न पैदा करे कोई
मुश्किल कि तुझसे राहे सुखन वा करे कोई

मतलब ये है कि शाहिदे हक़ीक़ी[8] के साथ इस मामूली लब व दहन[9] से बातचीत नही हो सकती, बल्कि इसके लिए दहाने ज़ख्म पैदा करना चाहिये। यानी जब तक दिल तेगे इश्क[10] से मजरूह[11] न हो, ये मर्तबा हासिल नही हो सकता।

शाहिदे हक़ीक़ी का जो मामला ग़ैर मुश्शाक़ के साथ है, उसको तग़ाफ़ुल[12] के साथ और उश्शाक़[13] के मामले को निगाह के साथ ताबीर[14] किया जाता है। जैसा कि काबो रुबाई मे लिखता है--

ऐ जाहिदो आशिक़ अज़ तो दरनाला व आह
दूरे तो नज़दीके तो दर हाले तबाह
कस नीस्त के जाँ अज़ तो सलामत बरद
आँ रा ब तग़ाफ़ुलकुशी ईरा ब निगाह[15]

---

१. निर्बल। २. परिभाषा। ३. नश्वर और अनश्वर के मध्य वार्त्तालाप। ४. पद। ५. सर्वज्ञ (ब. व.) ६. आत्मज्ञ। ७. घाव का छेद। ८. सच्चा साक्षी। ९. होंठ और मुँह। १०. प्रेम की तलवार। ११. घायल। १२. उपेक्षा। १३. प्रेमी (ब. व.)। १४. कल्पित। १५. हे प्रेमिका! धार्मिक और प्रेमी दोनों प्रकार के व्यक्ति, दोनों तुम्हें पुकार रहे हैं। तुमसे निकट रहने वाले हों या दूर रहने वाले, दोनों बर्बाद है। कोई व्यक्ति ऐसा नहीं है जो तुमसे बच सका हो। जो निकट रहते है उन्हें दृष्टि से और दूर रहने वालों को उपेक्षा से नष्ट करती हो।

शाह करामतहुसेन हमदानी बिहारी के नाम

करने गये थे उससे तग़ाफ़ुल का हम गिला
की एक ही निगाह कि बस ख़ाक हो गये

मतालिब ये है कि हमने उसके तग़ाफ़ुल से तंग आकर शिकायत की थी और उसकी तवज्जोह की तो एक ही निगाह में हमको फना कर दिया।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२

(२२ फ़रवरी, १८६४ ई०)

शाह साहब, मेरी एक रुबाई सुनो—

कहते हैं कि अब वो मर्दुम आजार नही
उश्शाक़[1] की पुर्सिश[2] से उसे आर[3] नही
जो हाथ कि ज़ुल्म से उठाया होगा
क्योंकर मानूं कि उसमे तलवार नही

ये रुबाई आशिक़ाना है, मगर मज़मून बिल्कुल नया है। ज़ुल्म से हाथ उठाना उससे दस्तबरदार होना और उसको तर्क करना है। बाकी अल्फ़ाज़ के माने ज़ाहिर है।

दूसरी रुबाई सुनो—

हम गरचे बने सलाम करने वाले
करते हैं दिरग[4] काम करने वाले
कहते हैं कही खुदा से अल्लाह अल्लाह
वो आप है सुबह-शाम करने वाले

---

१. प्रेमी (ब. व)। २. पूछ-ताछ, आदर-सत्कार। ३. घृणा, लज्जा। ४. विलम्ब।

देखो तुमने ऐसी शोख़ी[1] कहीं नहीं देखी, ये बिल्कुल नई बात है और मेरा हिस्सा है। मतलब ये है कि हम हरचन्द दरबार के बाइख़्तियार[2] लोगों को झुक-झुक कर सलाम करते हैं, मगर वो हमारी कामख़ाई मे दिरंग व लैतोला[3] करते हैं। हम अपने दिल मे कहते हैं आओ ख़ुदा ही से कहें। फिर दिल मे ख़याल आता है कि अल्लाह-अल्लाह करो वो तो आप ही सुबह-शाम करने वाले हैं। सुबह-शाम करना लैतोलाल करने को कहते हैं। चूंकि शाम को सुबह करना और सुबह को शाम करना ख़ुदा का काम है। तो ख़ुदा के निस्बत कहा जा सकता है कि वो सुबह-शाम करने वाले हैं। ज़्यादा वद्दुआ।

नजात का तालिब

—ग़ालिब

---

१. चपलता। २. अधिकारी। ३. टालमटौल।

'सफ़ीर' बिलगिरामी के नाम

१

(२८ नवम्बर, १८६३ ई०)

मौलवी सैयद फ़र्ज़न्दे अहमद 'सफ़ीर' को इस पीरे हफ़्तादसाला[१] की दुआ पहुँचे। आज मैंने लेटे-लेटे हिसाब किया कि ये सत्तरहवाँ बरस मुझे जाता है, हाय—

सिने उम्र[२] सत्तर हुए शुमार बरस
बहुत जीऊँ तो जीऊँ और तीन-चार बरस

नाम ए मुहब्बत अफ़्ज़ा[३] को देख कर आँखों मे नूर, दिल मे सुरूर[४] आया और क़िस्सा 'सरोरोशे सुखन' उसके दूसरे दिन पहुँचा। क़िस्सा देखा। आपके जौहरे तबा की लमानी[५] और फ़िक्र की दरख्शानी[६] बहुत जगह पर पसन्द आई। अगरचे वो क़िस्सा तो बच्चों के सुलाने की कहानी है, मगर मेहनत की गई है। हाँ, अगर फ़साने अजायब का मुकाबिला है तो क्या-क्या है। अभी देखता हूँ, आइन्दा उसकी इत्तिला दी जाएगी। इसमे जा बजा 'लाचार' देखा है। 'ला' का लगाना कातिब[७] की जहालत[८]। हाय, खुदा की मार कातिबाने नाहंजार[९] पर। ये मेरा 'दीवान' और 'पज आहग' और 'मेहरे-नीमरोज़' सत्यानास करके छोड़ दिया।

---

१. सत्तरवर्षीय वृद्ध। २. आयु के वर्ष। ३. प्रेमवर्धक-पत्र। ४. आनन्द, नशा। ५. चमक। ६. चमचमाहट। ७. लिखनेवाला। ८. मूर्खता। ९. अज्ञ लिखनेवाले।

लो, बस अब मैं नवाब ज़ियाउद्दीन से बातें कर रहा हूँ। तुम्हारे ख़त के जवाब ने इतनी देर तक उनको चुपका बिठा रखा और वो भी तुमको सलामे इश्तियाक़ आमेज़[1] पहुँचाते हैं।

नज़ात का तालिब
—ग़ालिब

२

(२१ अप्रैल, १८६५ ई०)

ब इलाके मेहर व मुहब्बत नूरे चश्म[2] सुरूरे दिल[3] और रिआयते सयादत[4] मख़दूम[5] मौलवी सैयद फ़र्ज़न्दे अहमद सफ़ीर तूलल्लाहो उम्रहू[6]—

अशारे गुहरबार[7] देख कर दिल बहुत खुश हुआ। सब अच्छे हैं, मगर जो मेरे दिल मे उतर गये हैं वो तुमको लिखता हूँ—

हाय वो लब हिला के रह जाना
अभी कुछ बात कर नहीं आती

वर्क़ हैं जोशिशे मज़मूने गिर्या[8] से बादल
बसाने[9] ज़ाला[10] है हर नुक़्त ए किताब मे आब
कभी हों गर्म, कभी सर्द, हस्ब मौक़ा व वक़्त
'सफीर' आग में हूँ आग और आब मे आब[11]

---

१. प्रेमपूर्ण अभिवादन। २. प्रेम के कारण सुपत्र। ३. हृदय का आनन्द। ४. सैयद होने के विचार से। ५. सेव्य। ६. चिरंजीवी। ७. मुक्तावर्षी कविता। ८. रुदन। ९. मनाने। १०. ओला। ११ पानी मे पानी।

'सफ़ीर' बिलगिरामी के नाम

आरिफ़ाना[1] और मुवह्हिदाना[2] मज़मून और बालिग़ाना[3] अल्फ़ाज़—

तुम सलामत रहो क़यामत तक
सिह्हतो लुत्फ़े तबा रोज़ अफ़्ज़ूँ[4]

२५ ज़ीक़ादा १२८१ हि.
मुताबिक़ २१ अप्रैल १८६५ हि.।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

---

१. विद्वत्त पूर्ण। २. पक्के मुसलमान की भाँति। ३. प्रौढ। ४. स्वास्थ्य और नित्य आनन्द वृद्धिशील।

अब्दुलहक़ के नाम

न भाई, ये न समझो कि सुलतान बमानी मसदर[1] आता है। सलतनता अगर चे मिनहैसुलक़यास[2] सही है लेकिन टकसाल बाहर है। खल्दल्लाहो[3] मुल्कहू व सुलतानहू लिखते हैं। मुन्शियाने[4] ईरान व रूम व हिन्द सब यों ही लिखते आये हैं। ज़मान बमानी ज़ामिन और बमानी ज़मानत, सुलतान बमानी पादशाह और बमानी सल्तनत। इसमे कुछ ताम्मुल न करो। किसकी मजाल है कि इस पर हंस सके। लेकिन मलिकहू व सुलतानहू अलामते मुज़क्कर[5] है। अगर मलिकेहा व सुलतानेहा बन जाये तो बेहतर है। वर्ना खैर, यों ही रहने दो। हम से कोई पूछेगा तो हम कह सकते हैं कि बरिआयते शुकोहे सल्तनत[6] हमने तानोस[7] की रिआयत न की और सच तो यों है कि अगर कातिब सुघड हो तो हाए हव्वज़ का शोशा[8] मिटा देना दुश्वार नही है। बन सके तो बनवा दो और सुलतानहू को खुदा के वास्ते मत बदलना। बुलग़ाए अरब व अजम[9] का क़रारदाद है। बाद इस सब तहरीर के अर्ज़ है कि परसों पचशम्बा को अर्ज़ी लिखी हुई मेरे पास आ जाये।

—ग़ालिब

---

१. मूल (धातु-शब्द)। २. अनुमान के अनुसार। ३. जरामरण मुक्त, जो कभी नष्ट नही होता। ४. गद्य-लेखक। ५. पुल्लिग का चिह्न। ६. राज्य की शान-शौकत की दृष्टि से। ७. स्त्रीलिंग। ८. चिह्न। ९. अरब और ईरान के आलंकारिक शैली के लेखक-कवि।

शेख़ लतीफ़अहमद बिलगिरामी के नाम

मियाँ लतीफ,

मिजाज़ शरीफ, ग़ालिब गोशानशी की दुआ। तुम्हारा मसविदा आया। कमतर जगह इस्लाह की पाई। रविशे तहरीर[1] भी मुझे पसन्द आई। दिल ख़ुश हुआ। लेकिन--

हुशदार के नतुवाँ बयक आहग सरोदन
नाते शहे कौनेनो मदीहे कै वो जमरा[2]

सैयद इब्ने[3] हसनखाँ साहब वहाँ मौजूद, मै यहाँ महज़ वुजूदे बेवुजूद[4]। वो तो मेरे नज़दीक अल्लामा[5] है और जवान है, मै उनके नज़दीक एकमुश्त उस्तुखाँ[6], वो भी बोसीदा[7] और नातवाँ। अगर खाँ साहब वारस्ता मिज़ाज[8] है तो सैयद गुलाम हुसनैन क़द्र सही वो तो मेरे क़द्रदाँ भी है और शागिर्द भी है। अगर कुछ भी अपने दिल व दिमाग़ मे क़ुव्वत पाता तो अपनी तबीयत को आपसे इस्लाहदरेग़[9] न करता। क्या लिखूं और क्या कहूँ? नूर आँखों से जाता रहा और दिल से सुरूर[10]। हाथ मे राशा[11] तारी[12] है। कान समाअत[13] से आरी[14] है--

---

१. लेखन-शैली। २. सावधान, ईरान के दो बादशाह। जमशीद और खुसरो की प्रशसा मे और हजरत मुहम्मद की नात (मगलाचरण मे प्रशसा) एक ही रंग मे नही कहे जा सकते। ३. पुत्र। ४. अनस्तित्व का अस्तित्व। ५. महापडित। ६. अस्थिपंजर। ७. जीर्ण। ८. स्वच्छन्द विचार वाले। ९. संशोधन करने से बचता। १०. आनन्द। ११. कम्पन। १२. प्रभाव। १३. श्रवण। १४. रिक्त।

इताबे अरूसां दरामद ब जोश
सुराही तेही गश्तो साक़ी खमोश

फ़ख्रे इजाद व तकवीन[2] मौलाना फ़ज़लहक़ ऐसा दोस्त मर जाये, ग़ालिब नीममुर्दा[3] नीमजाँ रह जाये—

मरते हैं आरज़ू मे मरने की
मौत आती है पर नहीं आती
आगे आती थी हाले दिल पै हंसी
अब किसी बात पर नहीं आती

अगर जवान होता और बीमार तो आपसे दुआए खैरियत चाहता। अस्सी बरस का बुड्ढा होने आया हूँ, दुआए मग़फ़रत का उम्मीदवार हूँ।

शराब कमबख्त अब भी छूटती नहीं। नमाज़ का अब भी आदी होता नही—

जानता हूँ सवाबे ताअतो ज़ुहद[4]
पर तबीअत इधर नही आती
काबा किस मुँह से जाओगे 'ग़ालिब'
शर्म तुमको मगर नहीं आती

नजात का तालिब
—ग़ालिब

---

१. वधुओं का क्षोभ बढ़ गया, सुराही खाली है और मधुबाला मौन। २. संगठन और सृजन के गौरव। ३. अर्धमृत। ४. भक्ति और धार्मिकता का पुण्य।

मौलवी ज़ियाउद्दीनख़ाँ 'ज़िया' के नाम

१

बख़िदमत वाला साहबे मुअज्ज़म[1] मुसल्लम उल्मा ए अरब व अजम[2] मौलवी ज़ियाउद्दीनख़ाँ साहबे 'ज़िया' देहलवी नबीए[3] नवाबे साबिक़ बस्ती दारापूर---

जनाब मौलवी साहब,

मैंने अय्यामे दबिस्ता नशीनी[4] म शरहे माता आमिल[5] तक पढ़ा। बाद उसके लह्व[6] व लाब[7] और आगे बढ़कर फ़िस्क़ व फ़िजूर[8] व ऐश व तरब[9] में मुन्हमिक[10] हो गया। फ़ारसी ज़बान से लगाव और शेर व सुख़न का ज़ौक़ फ़ितरी ब तबई[11] था। नागाह एक शख़्स कि सासाने पंजुम[12] की नस्ल में से, माहाज़ा मन्तक[13] व फ़लसफ़ा[14] मे मौलवी फ़ज़्ले हक़ मरहूम[15] का नज़ीर और मोमिन[16] व सूफ़ी साफ़ी था, मेरे शहर[17] मे वारिद[18] हुआ। और लतायफ़े फ़ारसी बहुत और ग़वामिज़े फ़ारसी[19] आमेख़्ता ब अरबी[20], इससे मेरे हाली हुए। सोना कसौटी पर चढ़ गया। ज़हन मुअव्वज[21] न था। ज़बाने-

---

१. श्रेष्ठ और महान् व्यक्ति। २. अरब और ईरान के विद्वानों में प्रामाणिक। ३. पौत्र। ४. पाठशाला मे पढ़ते समय। ५. एक पुस्तक। ६. खेलकूद। ७. राल टपकाना। ८. दुराचार। ९. आनन्द-उल्लास। १०. तल्लीन। ११. स्वाभाविक। १२. ईरान का सायान नामक राजकुल। इस कुल का पाँचवा उत्तराधिकारी बहराम (द्वितीय)। १३. तर्क। १४. दर्शनशास्त्र। १५. स्वर्गीय। १६. धार्मिक। १७ अर्थात् आगरा। १८. आगत। १९. फ़ारसी-भाषा की गूढताएँ। २०. अरबी से मिश्रित। २१. वक्र, टेढ़ा।

दरी[1] से पैवन्दे अज़ली[2] और उस्ताद बेमुबालिग़ा जामास्पे अहद और बुर्ज़ज[3] मेहरे अस्त था। हक़ीकत इस ज़बान की दिलनशी व ख़ातिरनशाँ हो गई।

अहले पारस जो कदमे आलिम के क़ायल हैं, वो मिस्ले हुनूद[4] के आफ़रीनिशे आलम[5] का आगाज़ व अजाम[6] व सरोबुन[7] नहीं बताते। हमने मज़हब के मुताबिक़ भी कीवमर्स[8] व गैहुम[9] को दो-चार हज़ार बरस से कम न गुज़रे होंगे। तालला[10] और नुजूम और तिब[11] और फिक़ा[12] और इशादी[13] कौन-सा इल्म और कौन-सा फ़न होगा जो इस गिरोह में न होगा। सिकन्दर जब ईरान पर मुसल्लत[14] हुआ तो अरस्तू ने किताब खान ए दारा से बहुत से उलूम।[15] यूनाना ज़बान में नक़्ल किये। अल्लाह् अल्लाह् इस गिरोह का देखिये जिनका कलाम इल्मे हिकमत[16] में हुकमा ए यूनान[17] का माख़ज़[18] हुआ। अगर अबूअली सीना क़ाबूस व शमगीर के किताब खाने से कुतुबे हुकमा ए यूनानिया लेकर मतालिबे हिकमी[19] ज़बाने अरब में न करता तो अकाबिरे अरब[20] में सिवाय मसायले फ़क़ी शरइयया[21] इल्मे माक़ूल[22] का निशान न पाया जाता।

दो-तीन हज़ार बरस क़ब्ल आज से, कि, अरब व अजम[23] बेगान ए हमदिगर[24] थे, अहले पारस अपने मतालिबे इल्म बल्कि उलूमे मतनूआ[25] को

---

१. दरी-फ़ारसी भाषा की एक शाखा। २. जन्म जात। ३. नौशेरवाँ का मंत्री। ४. हिन्दुओं की भाँति। ५. ससार की उत्पत्ति। ६. आदि अन्त। ७. आदि अन्त। ८. नूह की सन्तान और प्रथम राजा। ९. प्रभृति। १०. जीव-शास्त्र। ११. चिकित्सा-शास्त्र। १२. धर्मशास्त्र। १३. कविता-पाठ, गायन। १४. विजयी, घेरा डालने वाला। १५. ज्ञान (ब. व.), शास्त्र। १६. आयुर्वेद, विज्ञान। १७. यूनान के वैज्ञानिक, चिकित्सक। १८. आकर। १९. वैज्ञानिक विषय। २०. अरब के प्रतिष्ठित जन। २१. धर्मशास्त्र की चर्चा। २२. विज्ञान। २३. ईरान। २४. परस्पर अपरिचित। २५. मूल विषय।

किस ज़बान मे शुरू किया करते थे और तालीम व ताल्लुम[1] सवाल व जवाब का मदार कि न अलफ़ाज पर होगा ? बेशुबा वो अलफ़ाज़ पारसी होंगे। जब ख़लीफ़ ए सानी[2] के अहद मे यज्दे जर्द[3] मारा गया और पारस पर आराब[4] मसल्लत[5] हुए, 'दुरफ़शे कावियानी'[6] का जवाहर आमेज़ चमडा पारा पारा होकर गाज़ियाने इस्लाम[7] पर बट गया। किताबख़ाने पारसी के, क्या बादशाही और क्या और, रिआया के चूल्हे मे झोंके गये, यानी उनसे हमाम गरम हुए, जैसा कि मैंने एक जगह इस वाके को फ़ारसी इबारत मे लिखा है, वही हाज़ा किताबख़ाने द्वारा पारसियाँ अफ़रोज़ीना गिलखन गरमा बा हाए बग़दाद शुद । हमाना अहकामे आतिश परस्ती हम ब आतिश बाज़गश्त[8]।

अगरचे बलाग़ते ख़ास[9] अहले अरब के हिस्से मे आई, लेकिन फ़साहत[10] में अहले पारस भी आराब[11] के शरीक हैं। बिलजुम्ला[12] आयाने अजम[13] व बुलग़ाए अरब[14] मे इम्तिज़ाज[15] व इख़्तिलात[16] व मेहर ब मुहब्बत व क़ुर्ब[17] व खाबत[18] पैदा हुए। इख़्तिलाफ़े मज़हब[19] उठ गया था और रियासत व सियासत

---

१. अध्ययन-अध्यापन । २. हज़रत फ़ार के आज़म। ३. सासानी वश का अन्तिम राजा । ४. अरब लोग । ५. विजयी । ६. ईरान के काव-नामक लुहार का झंडा, इस झंडे के नीचे फियानी राज्य को नष्ट किया गया था । ७ इस्लाम के धर्म योद्धा । ८. पारसियों की समस्त पुस्तके बगदाद के चूल्हों मे झोंकी गई । अग्नि-पूजा के विधान अग्नि मे ही चले गये । ९. विशेष प्रक र की आलकारिक शैली। १०. सरल, स्वाभाविक व मुहावरायुक्त भाषा, जिसमे कृत्रिमता नहीं होती । ११. अरब लोग । १२ किबहुना । १३. ईरान के प्रतिष्ठित जन। १४. अरब के अलंकार शास्त्री । १५. मिश्रण । १६. मेल-मिलाप । १७. निकटता । १८. सम्पर्क । १९. धार्मिक विरोध ।

ब सलाह ब सवाबदीद फ़रीक़ैन[1] होने लगे। तबीअते थी दर्राक[2] फ़ारसी व अरबी को बाहम[3] रब्त देकर एक उर्दू पैदा किया। सुभान अल्लाह् वो ज़बान निकली कि न निरी फ़ारसी मे वो खज़ाना, न निरी अरबी मे वो ज़ौक़। ज़बाने फ़ारसी के क़वाइद के कुतुब[4] ख़ाकिस्तर[5] हो गये थे। इसमे तुर्रा ये कि अरबी के कवाइद के बड़े बड़े जलीलुलक़द्र[6] रिसाले मुरत्तब हो गये थे और होते जाते थे। बेचारा फारसी ज़बान ग़रीबुल वतन[7] बे सरो सामान[8]। न उसकी कोई फ़रहग[9], ना उसके क़वानीन का कोई रिसाला, न इल्मे पारसी का कोई आलिम बाक़ी। दो-चार हज़ार लुगत[10] व इस्म[11] व मसल[12] ज़बानज़द[13] अहले अस्र[14] होगे। फारसी का हर्फ़ कहाँ? फ़ारसी का नुमू[15] कहाँ। फ़ारसी ज़बान अराब[16] की लौंडी, जो चाहा नाम रख दिया। ज़वउन्नहार[17] कहकर पुकारा, शम्सुन्नहार[18] कह कर याद किया। ओ लौंडी छोकरी कह कर बुला लिया। सो भी जो अकाबिरे फ़रीक़ैन[19] मूजिदे ज़बान उर्दू[20] हुए थे, वो तस्मीय ए क़वाइदे फ़ारसी[21] की तरफ़ मुतवज्जेह नही हुए। ८००–९०० हिजरी मे हवसनाक[22] लोग फारसी के फ़रहग[23] लिखने पर मतवज्जेह हुए। न एक, न दो, बल्कि हज़ार-दर हज़ार फ़रहगे फ़राहम हो गई। यहाँ तक कि कतील नौमुस्लिम लखनवी और ग़यासुद्दीन मुल्ला ए मकतबदार[24] रामपूरी और कोई रोशनअली जौनपूरी और कहाँ तक कहूँ

---

१. दोनों पक्षो के परामर्श के अनुसार। २. कुशाग्र (बुद्धि)। ३. परस्पर। ४. किताबे। ५. भस्म। ६. बड़ा प्रतिष्ठा वाले। ७. प्रवासी। ८. अकिंचन। ९. शब्द-कोश। १०. शब्द। ११. नाम। १२. लोकोक्ति। १३. प्रसिद्ध। १४. समकालीन। १५. विकास। १६. अरब के लोग। १७. सवेरे का प्रकाश। १८. प्रभात का सूर्य। १९. दोनों ओर के महत्प्रतिष्ठ (लेखक)। २०. उर्दू-भाषा के आविष्कारक। २१. फ़ारसी व्याकरण के आरम्भकर्त्ता। २२. लालची। २३. कोश। २४. चटसाल का अध्यापक।

कौन-कौन, जिसके जी मे आई वो मुतसद्दी[1] ए तहरीरे क़वाइदे इंशा[2] हो गया। मै उन सब को या उनमे से फ़लाँ धीमाँ को अपना मुता[3] क्योंकर जानूं और किस दलील से उनके तहक्कुम[4] को मानूं।

पारसीया ने साबिक़[5], जो जानते न थे कि फ़ाइल[6] किसको कहते है और जमा[7] किस मज़े का नाम है, अम्र का सीगा[8] कौन जानवर है और इस्मे जामिद[9] किस किस्म के पत्थर को कहते हैं, उन्होंने कभी न कहा होगा दाना व बीना सीग ए इस्मे फ़ाइल[10] और नालाँ व गिर्यां सीग ए फाइल या हालिया है। एक जमात ने कह दिया है कि अलिफ़-नून इफादा मानी ए फ इलीयत[11] करता है। एक सफ[12] पुकार उठी कि अलिफ़-नून हालिया है। ख़ुदा जाने अहले पारस अपनी ज़बान मे सोग ए अम्र को क्या कहते होंगे और अलिफ़ फ़ाइल का उनकी लिसान[13] मे कौन होगा। आखिर ये फ़न उमूरे दीनी[14] मे से तो नही है कि जो इमामे आज़म[15] के क़ौल को न माने वो मुर्तद[16] है। क़ुव्वते क़यास का माद्दा औरों मे था, हमको मब्दए फ़य्याज़[17] से ये क़ुव्वत अता नही हुई और फिर अलिफ़-नून हालिया के वुजूद के ऐतराफ़[18] मे, मै ही मुनफ़रिद[19] नही हूँ, बक़ौल तुम्हारे और अशख़ास भी है। सवाल इस क़दर है कि अलिफ़ नून हालिया मौजूद है या नही। साइल[20] का जवाब वही

---

१. भाषा के व्याकरण लिखने वाला लिपिक। २. जिसके आदेश का पालन किया जाये। ३. हुक्म जताना। ४. पूर्ववर्त्ती पारसी। ५. कर्त्ता (व्याकरण)। ६. बहुवचन। ७. कर्मकारक। ८. ऐसी सज्ञा जो किसी अन्य शब्द से न बनी हो। ९. कर्त्ताकारक। १०. कर्तृत्व के अर्थ मे वृद्धि करने वाला। ११. पक्ति। १२. भाषा। १३. धार्मिक विषय। १४. इमाम अबू खलीफ़ा का विरद। १५. परित्यक्त, इस्लाम धर्म से च्युत। १६. उदार ईश्वर। १७. स्वीकार करना। १८. एकाकी। १९. प्रार्थी।

तमाम हुआ । यहाँ तुमने फ़रमाया कि साबिक़ीन[1] उफ़्ताँ व खीज़ाँ को अलिफ़ नून हालिया लिख गये, लाहिक़ीन[2] ने कहा कि ये अलिफ़ नून फ़ाइल का है। खैर एक तरद्दुद अगर पैदा हुआ तो तस्मिया[3] मे पैदा हुआ । मुताख़िरीन[4] का क़ौल मुत्तकद्दमीन[5] के कलाम का नासिख[6] और अलिफ-नून हालिया के बुजूद का मबत्तिल[7] तो नही हुआ। बहरहाल यही लिख दो कि बाज़ लोग इस अलिफ नून को फाइल का अलिफ नून बताते है और बाज अलिफ नून हालिया कहते है। किस्सा मुख्तसर कागजे इस्तिफ़्ता[8] मय दस्तखते हज़रात या बेदस्तखत कल मेरे पास भेज दीजिये ।

थोडी तकरीर अगरचे खारिज़ अज़ मबहस[9] है, लेकिन इस वास्ते वो तक़रीर तहरीर मे लाता हूँ कि फिर मुझे कुछ लिखना न पडे । अहले पारस के मन्तक मे रवाँ व दवाँ[10] मय नज़ायर के बहुत है। किसी इस्म के साथ मुख्तस[11] नहीं । अहले अरब ने, बल्कि, तोबा तोबा उनको क्यों मुत्तहिम[12] करूँ, फरहग निगाराने हिन्द[13] ने ये नाम मुआफ़िक़ अपने क़यास के रखे । हम इफ़ादए मानी फाइलीयत के कयास को नही मानते । अलिफ़ नून हालिया कहने वालों की हम मुताबिकते राय[14] की है फ़ारसी मे इस्मे फ़ाइल दो सूरत पर है या गोयन्दा या गोया । सीग़ा हाए अम्र के[15] माबाद जो अलिफ नून है वो हालिया है। हाँ फेल का एक तवह्हुम[16] सा गुज़रता है, सो अगर बा अमान[17] नज़र देखिये तो वैसा ही एक वहम माक़ूलियत का भी पाया जाता है। पस नज़र इस बात पर कि फ़ इलीयत की हालत और मफ़ूलीयत[18] की हालत मान[19] पाये

---

१. पूर्ववर्ती । २. परवर्ती । ३. नामकरण। ४. बाद मे आने वाले । ५. पूर्ववर्त्ती । ६. रद करने वाला । ७. छिपाने वाला । ८. जिस कागज पर मुफ्ती से निर्णय माँगा गया हो। ९. विवाद से रहित। १०. प्रवाहित, प्रचलित । ११. सीमित, विशेष। १२. आरोप लगानेवाला । १३. भारतीय कोशकार । १४. सहमति । १५. कर्मकारक । १६. भ्रान्ति । १७. शान्ति-पूर्वक । १८. कर्मत्व (व्याकरण)। १९. शीघ्र, तत्क्षण ।

जाते ही ये अलिफ़ नून हालिया है और अपने वुजूद के इस बात[1] मे क़वाइदे नहवे अरबिया[2] का मुहताज नही। खास 'उफ़्तादन' मे देखो कि ना 'उफ़्तन्दा' मुस्तामल[3] है, मिस्ले गोयन्दा, ना 'उफ़्ताद' मसमूअ[4] व मौजूद है मसले गोया। 'उफ़्ताँ' सीगए फ़ाइल कहाँ से आगया? और दूसरी दलील ये है कि 'उफ़्ताँ' तो हम इस्मे फ़ाइल[5] जब मानते कि 'उफ़्ताद' बयफ़्त' बमाने अम्र अहले ज़बान यानी जो मालिके मलका उर्दू ए फ़ारसी व अरबी है, उनकी नज्म व नस्र मे आया होता। अस्ल माद्दा 'उफ़्ताँ' जो 'उफ़्त' है मौजूद नही। 'उफ़्ताँ' कहाँ से बमानी फ़ाइल निकल आया? मगर हाँ गिरने की हालत जिस पर तारी हो वो उफ़्ताँ है, अज रू ए हालत बहस्बे फ़ेल[6]। मीरन्दा कहो, मर्दन से क्यों न बनाया। सीग ए फाइल मतरूक[7] रहा। सिर्फ़ सीग़ ए मफ़ऊल[8] यानी मुर्दा पर कनाअत[9] की और ये जो क़िब्ला अहले सुखन फ़िरदौसी तूसी अलैइर्रहमा के हाँ आया है--

ममीराँ कसे रा व हर्गिज़ ममीर[10]

मजाज़[11] है अम्र भी तादिया[12] भी। मुताक़िखरीन[13] मे से मिर्ज़ा अब्दुल क़ादर बेदिल कहता है--

बमीरा ऐ सरकशे ना पाक ता यक दम बियासाई[14]

बल्कि उर्दू मे भी गिराँ जाँ आदमी को कहते हैं, ऐ फ़लाँ के फ़लाँ मर चुक। सौदा कहता है--

---

१. प्रमाणित करना। २. अरबी की कारक प्रक्रिया। ३. प्रयुक्त। ४. श्रुत। ५. कर्तृवाचक सज्ञा। ६. क्रिया के अनुसार। ७. व्यक्त। ८. कर्मकारक। ९ सन्तोष। १०. तुम किसी को कष्ट मत दो, तुम किसी को कष्ट दोगे तो कोई दूसरा तुम्हें भी कष्ट देगा। ११. लाक्षणिक, भ्रम। १२. प्रेरणार्थक क्रिया, अकर्मक क्रिया को सकर्मक बनाना। १३. परवर्ती। १४. तुम इस तरह कब तक अत्याचार करोगे, कुछ तो अराम करो।

जीता रहेगा कब तलक ऐ खिज्र[1] मर कही

ये सब बतरीक़े मजाज़[2] है। खुलासा ये कि अलिफ़ नून फ़ाइल न फ़ारसी बहस मे था, न फ़ारसी आमेख्ता[3] ब अरबी मे है। क़यास को मैं मानता नही। अलिफ़ नून जहाँ इस्मा ए जामिद[4] के आगे है, जमा का है। जहाँ सीग़ा हाए अम्र के आगे है, हालिया है। वस्सलाम ब उलूफ़े एहतराम। पहला रुक्का बाद पढ़ने के या नक़्ल लेने के इस्तिफ़्ता[5] के काग़ज़ के साथ मुझको वापिस मिल जाये।

नजात का तालिब
—ग़ालिब

२

(२७ फ़रवरी, १८६६ ई०)

जनाब मौलवी साहब,

करम अज़ शुमा कमी अज मा[6] अच्छों के साथ सब भला करते हैं, बुरों के साथ नेकी करना जवाँमर्दी है। अगर अपाहिज न होता, फ़ौरन आपके पास पहुँचता। अब मुतवक्के[7] हूँ कि आज इस वक़्त या और वक़्त मगर आज ही आप तशरीफ़ लाये और ज़रूर तशरीफ लाये। शाम तक चश्मे बराह हूँगा[8]।

इनायत का तालिब[9]
—ग़ालिब

---

१. एक अमर पैगम्बर। २. लाक्षणिक। ३. मिश्रित। ४. ऐसा शब्द जो किसी दूसरे शब्द से नहीं बनता। ५. मुफ़्ती से फ़तवा माँगना। ६. आपकी ओर से बड़ी दया है, किन्तु मेरी ओर से त्रुटियाँ है। ७. आशान्वित। ८. प्रतीक्षा करूंगा। ९. कृपाकांक्षी।

मौलवी ज़ियाउद्दीनखाँ 'ज़िया' के नाम

(जुलाई, १८६२ ई०)

मखदूम मुकर्रम क़ाज़ी मुहम्मद नूरुद्दीन हुसेनखाँ बहादुर की खिदमत मे अर्ज़ है कि बरखुर्दार मिर्ज़ा शहाबुद्दीनखाँ बहादुर ने ये अजज़ा[1] मुझको दिये। नज़्म से मैंने बिल्कुल कतै नज़र की, कामिल साहब की ये नस्र जो आग़ाज़ में है, उसको भी नही देखा। सिर्फ़ आपकी नस्र को देखा और उसको मुआफिक़ हुक्म[2] आपके बाज़ जा दुरुस्त कर दिया। बाज मोआक़े[3] पर मन्शाए इस्लाह[4] लिख दिया है। मुझको ये पाया नही कि आपकी नस्र मे दखल करूँ। ब फ़ावाए अल अम्रो फ़ौक़ुल अदब[5] हुक्म बजा लाया हूँ। मर्हबा[6] आफरी[7] ब खुदा खूब नस्र लिखी है। अल्लाह सुभानहू, आपको मदारिजे आला[8] को पहुँचावे और सलामत रखे।

मरक़ूम ए दोशम्बा जुलाई १८६२ ई०।

खुशनूदी ए अहबाब का तालिब[9]
--गालिब

---

१. अंश (ब. व.)। २. आज्ञानुसार ३. अवसर (ब. व.)। ४. सशोधन का कारण। ५. आदेश का पालन शिष्टाचार से बढ़कर है। ६. धन्य। ७ साधु-साधु। ८. श्रेष्ठ पद। ९ सम्बन्धियों की प्रसन्नता चाहने वाला।

सूफ़ी मुनीरी के नाम

जुब्दे ए औलाद[1] हज़रत खैरुल अनाम क़िब्ला व काबा मजमूअ अहले इस्लाम[2], हज़रत पीर व मुर्शिद आली मुक़ाम की खिदमत मे फ़क़ीर ग़ालिब की बन्दगी क़ुबूल हो। अपने अबुल आबा[3] के बूढ़े गुलाम को आपने इतना क्यों शर्माया कि वो बेचारा शर्म से पानी-पानी हुआ जाता है। काफ़ी था उन अशार का भेज देना और हक व इस्लाह[4] की इजाजत देना। मेरी मदह[5] आपके गुलामों को मूजिबे नग व आर[6] और मेरे आबा व अजदाद[7] को ज़रियए इज्ज़ व इफ़्तिखार[8] बेग़ायते[9] तकल्लुफ़ व तमल्लुक़[10] आपका कलाम मोजिज़े[11] निजाम है। लफ़्ज उम्दा, तरकीब अच्छी, मानी बुलन्द। फ़क़ीर अपना हाले ज़ार[12] लिखता है। इकहत्तर बरस की उम्र, पाँव से अपाहिज, कानों से बहरा। दिन-रात पड़ा रहता हूँ। दो सतरे लिखी, बदन थर्राया, हर्फ़ सूझने से रहा, क़ुव्वते साक़ित[13] हवास मुख्तल[14], ग़िज़ा क़लील[15] बल्कि अक़्ल[16]—

उम्र भर देखा किये मरने की राह
मर गये पर देखिये दिखलाये क्या

---

१. सन्तान मे शिरोमणि। २. मुस्लिम समुदाय के लिए। ३. बाप-दादा ४. कम करना या सशोधित करना। ५. प्रशसा। ६. अपमान और लज्जा का कारण। ७. बाप-दादा। ८. प्रतिष्ठा और गौरव। ९. अत्यधिक। १०. खुशामद। ११. आश्चर्यजनक। १२. दुःख पूर्ण स्थिति। १३. लुप्त। १४. विकृत। १५. अल्प। १६. अत्यल्प।

अय्यामे शबाब[1] मे कि बहरेतबा[2] रवानी पर था, जी मे आया कि गज़वात[3] साहबे ज़ुल्फ़क़ार[4] लिखना चाहिये। हम्द[5] व नात[6] व मन्क़बत[7] व सार्क़ीनामा व मुग़नीनामा लिखा गया। दास्ताँ तराज़ी[8] की तौफ़ीक़[9] न पाई। नाचार उस आठ-नौ सौ शेर को छपवा लिया। अग़लात[10] बुरहान क़ातै अज़रू ए इन्साफ़[11] निकाले और उसका एक रिसाला मुरत्तब किया, 'क़ातए बुरहान' उसका इस्म[12] और 'दुरफ़िशे कावयानी'[13] उसका इल्म। उन दोनों रिसाल ए मतबूअ[14] को एक पार्सल मे और हज़रत के भेजे हुए औराक[15] भी उस पार्सल मे और ये ख़त जुदागाना डाक मे भिजवा दिया। और तवक़्क़ो रखता हूँ कि इसकी रसीद रोज़े वुरूद[16] या दूसरे दिन लिखी जाये।

---

१. युवावस्था। २. रुचि का सागर। ३. इस्लाम के ऐसे धर्मयुद्ध जिनम हज़रत मुहम्मद ने साथ दिया था। ४. हजरत अली, बद्र के युद्ध मे हज़रत मुहम्मद ने हज़रत अली को ज़ुल्फ़क़ार नामक तलवार दी थी। ५. प्रशसा, ईशस्तुति। ६. हजरत मुहम्मद की प्रशसा। ७. महात्माओ का गुणगान, हजरत अली मुहम्मद के साथियों की प्रशसा मे मगलाचरण। ८. कथा-निर्माण। ९. सामर्थ्य। १०. अशुद्धियाँ। ११. न्याय की दृष्टि से १२. नाम। १३. काव नामक लुहार का झडा, इस झडे के तले एकत्रित होकर सैनिकों ने फ़ियानी-शाशन समाप्त किया था। १४. मुद्रित पुस्तिकाएँ। १५. पृष्ठ। १६. प्राप्ति का दिन।

मुंशी नवलकिशोर के नाम

मुशी साहब जमीलुल मनाकिब[1] जनाब मुशी नवलकिशोर साहब को दौलत व इक़बाल वजाह व जलाल[2] रोज़ अफ़जूँ[3] नसीब हो । चूँकि अहबाब कामयाबी व शादकामी[4] से शाद[5] होते हैं, इस वास्ते मुझे इन दिनों यावरी ए इक़बाल[6] से एक अम्र खुशी का पेश आया है। आपकी खुशी के वास्ते लिखता हूँ, बल्कि नज़रे हमदिगर के इत्तिहाद पर तुमको तहनियात[7] देता हूँ।

आपको मुबारक हो कि आखिरे माहे गुज़िश्ता को जो हज़रत फ़लक रिफत[8] नवाब मुअल्ला अल्क़ाब[9] लेफ़्टट गवर्नर बहादुर क़लम रवे पजाब[10] देहली मे तशरीफ़ लाये तो सेशम्बा के दिन ३१ मार्च १८६३ ई० को इस गुमनाम गोशानशीन को याद फरमाया और अज़राहे बन्दा पर्वरी[11] कमाले इनायत[12] से खिल्लत अता किया। सुभान अल्लाह जो लोग मुतअल्लिक[13] हैं लेफ्टट गवर्नर पजाब से वो क़िस्मतो के कितने अच्छे हैं। जनाब नवाब मुअल्ला अल्क़ाब[14] के मकारिमे अखलाक़[15] वो रूह अफ्ज़ा[16] कि जिससे मुर्दा ज़िन्दा हो जाये। साहबे वाला मनाक़िब[17] तामस डगलस फ़ोरसायथ साहब बहादुर सेक्रेटर के कलमात[18] शफकत आमरेज़[19] वो रूह आसा[20] कि जिसको सुनकर बीमार शिफ़ा[21] पाये। मै शादमाँ[22] आया बल्कि बूढा गया जवान आया। सच है--

---

१. यशस्वी। २. प्रताप, ठाट-बाट। ३. नित्य विकासशील। ४. सफलता ५. प्रसन्न। ६. सौभाग्य की अनुकूलता। ७. बधाई। ८. महान् प्रतिष्ठा वाला। ९. श्रेष्ठ व्यक्ति। १०. पजाब-प्रदेश। ११. भक्तवत्सलता। १२. दयापूर्वक। १३. सम्बन्धित। १४. श्रेष्ठ व्यक्ति। १५. शीलयुक्त कृपा। १६. आत्मा को हर्ष प्रदान करने वाले। १७. उच्चकोटि के यश से युक्त। १८. वचन। १९. दयापूर्ण। २०. आत्मा की मनौती। २१. स्वास्थ्य। २२. प्रसन्न।

मुंशी नवलकिशोर के नाम

बज़ारे चुनी शहरयारे चुनाँ
जहाँ चूं न गीरद क़रारे चुनाँ[1]

लफ़्टेट गवर्नर बहादुर और साहब सेक्रेटर बहादुर का क्या कहना है, आफ़ताब[2] व माहताब[3] हैं। मगर पडित मनफूल सिंघ साहब मीर मुंशी भी दयानत[4] व अमानत व कारपर्दाज़ी[5] व मज़लूम नवाज़ी[6] मे इन्तिख़ाब[7] हैं। ये न मुबालगा है, न ख़शामद है, बयाने वाक़ई है। शाइराना सुख़नसाज़ी को मैंने दख़ल नही दिया है, वो लिखा है जो सच और वाजबी है।

दनामे दौलत सरकार अंग्रेजी का तालिब रजूर नातवाँ
—असदुल्लाहख़ां 'ग़ालिब'

---

१. जब शासक ऐसा है और मत्री भी ऐसा है तो ससार की व्यवस्था ऐसी क्यों न होगी। २. सूर्य। ३. चाँद। ४. ईमान। ५. व्यवस्थापकी। ६. पीडितों पर दया करने वाले। ७. चुने हुए।

मुहम्मद हुसेनख़ाँ के नाम

१

(११ अप्रैल, १८६७ ई०)

मुश्फ़िक़[1] मुकर्रम[2] जनाब मुहम्मद हुसेनख़ाँ साहब को फ़क़ीर ग़ालिब का सलाम पहुँचे। असदुल्लाह हर हफ़्ते 'दबदबए सिकन्दरी' के मुआइने से सुरूर उठाता है। रामपूर के हालात पढ़कर निहायत खुश है। एक रुबाई आपको इस मुराद से भेजता हूँ कि 'दबदबए सिकन्दरी' मे जहाँ रामपूर का आप लफ़्ज़ लिखते हैं, पहले ये रुबाई लिख दिया कीजिए और अलद्वाम[4] इसका इल्तिजाम[3] रहे, यानी हर अख़बार में इस मुक़ाम पर ये रुबाई लिखी जाया करे और वो रुबाई ये है--

आँ कीस्त के जिस्मे मुल्क रा जाँ बाशद ?
आँ कीस्त के हमसरे सुलेमाँ बाशद
आँ कीस्त के अजुमश बफ़र्मा बाशद
कसनीस्त मगर कल्बे अलीख़ाँ बाशद[5]

और एक क़ता इस मुराद से लिखता हूँ कि जहाँ रामपूर की नुमाइश-गाह का ज़िक्र लिखो, इस इबारत के ख़ात्मे पर ये क़ता लिख दो और अगर

---

१. दयालु, मित्र। २. पूज्य, आदरणीय। ३. सदैव ऊपर। ४. अनिवार्यता। ५. वह कौन व्यक्ति है जो देश रूपी शरीर के लिए प्राण के समान है। वह कौन है जो सुलेमाँ के समान है। वह कौन है जिसके आदेश को तारे भी मानते हैं ? कोई नहीं, अगर है तो कल्बे अलीख़ाँ है।

ये क़ता नुमाइशगाह के ज़िक्र के बाद पहुँचे तो उसकी इत्तिला लिखकर, लिख देना। ये क़ता एक ही बार लिखा जाएगा—

नुमाइशगहे दर ख़ुरेशाने ख़ीश
बरारास्त नव्वाब अ़ाली जनाब
बशब ज़ुहरा व मह क़नादीले सक़्फ़
बुवद पेशकारश बरोज़ अ़ाफ़ताब
ज़ ग़ालिब चू पुर्सीदा शुद साले आँ
चुनीं गुफ़्त आँ रिन्दखाना ख़राब
अज़ाँ जाके दर बज़्मे ऐशो सुरूर
ज़ बख़्शिश जहाने शुदा कामयाब
चू बीनी निहायत नदारत तरब
बुगो साले आँ बख़्शिशे बेहिसाब[1]

'बख़्शिशे बेहिसाब' के १२८५ होते हैं, जब तरब की 'बे' के अ़दद को दूर कर दीजिये तो १२८३ हि० होते हैं। फ़क़त।

मगर भाई साहब नवाब साहब से बग़ैर इजाज़त लिये और कहे हर्गिज़ न छापना।

जवाब का तालिब
—ग़ालिब

---

१. नवाबअ़ली जनाब ने अपनी प्रतिष्ठा के अनुकूल एक प्रदर्शनी की। उस प्रदर्शनी की छत मे चाँद और शुक्र कदील है और दिन मे सूर्य उसका कार्यकर्त्ता है। जब शराबी ग़ालिब से उस प्रदर्शनी की तिथि पूछी गई तो उसने यह कहा—उनकी गोष्ठी हर्ष-विभोर है और उनके पुरस्कार से संसार निहाल हो रहा है। उस हर्ष का कोई अन्त नहीं है। उसकी तिथि क्या है—"बख़्शिशे बेहिसाब"।

२

(२५ अप्रैल, १८६७ ई०)

खाँ साहिब मुश्फ़िक़े मुकर्रम[1] मुहम्मद हुसेनखाँ हब क. ग़ालिब का सलाम पहुंचे। आगे मैंने एक खत मय एक कता और रुबाई के भेजा है। यकीन है कि आप नवाब साहब से इजाजत लेकर उसको मुआफ़िक मेरी खाहिश के छाप दे।

राकिम[2]

—असदुल्लाह् खाँ

३

(१० मई, १८६७ ई०—२५ अक्टूबर, १८६७ ई०)

शफ़ीके मुकर्रम मुहम्मद हुसेनखाँ साहब को फ़क़ीर असदुल्लाह्खां का सलाम। आपका मेहरबानी नामा[3] पहुँचा। मतालिब दिलनशी हुए। ७४ की उम्र हुई, अगर सिनेतमीज़[4] १४ बरस रखिये तो साठ बरस का नेक व बद, स्याह व सफ़ेद का तजुर्बेकार हूँ और हक़ीक़त हर बात की कमा हक़्हू[5] फ़ौरन ज़हन मे आ जाती है। वल्लाह बिल्लाह सुम्माबिल्लाह[6] तुम्हारा खत पढ़ते ही मुझको यक़ीन आ गया। आप भी इसको यक़ीन समझियेगा। अब जो तुमको दोस्ते सादिक़ुल विला[7] जाना तो हक़ीक़त लिखता हूँ।

(सभवतः यह पत्र अधूरा रह गया)।

---

१. प्रतिष्ठित मित्र। २. लिखने वाला। ३. कृपा-पत्र। ४. समझने की आयु। ५. ठीक-ठीक। ६. भगवान, फिर भगवान। ७. सच्चा मित्र।

मौलवी नोमान अहमद के नाम

१

५ सितम्बर, १८६६ ई०)

अत्रे रहमत[1] सलामत । याद आवरी[2] का शुक्र बजा लाता हूँ। क्यों इतनी मेरी तारीफ की जो मैं अपने को इसके लायक नही पाता हूँ । हर्गिज़ ऐसा नही कि खुदा ने मुझसे पहले कोई ऐसा न पैदा किया हो। ग़ायते माफीउल बाब[3] ये है कि सुखनवराने गुज़िश्ता[4] का तर्ज़ शनास[5] और उन नाज़ुक खयालों का पैरो हूँ और मदद ए फ़य्याज़[6] से मुझको उनकी तकलीद[7] मे पायए तहक़ीक मिला है और मैं साहबे तर्ज़े जदीद[8] हूँ ।

अब यहाँ एक बात सच कहता हूँ । आप बावर करे । वल्लाह मेरे ईज़ाद किये हुए तर्ज़ मे आपसे बेहतर नस्र[9] किसी ने नही लिखी । न ये मुबालगा है, न तमल्लुक़[10] । खालिसन लिल्लाह आप सच इर्शाद करे कि बाज़ अशखास जो इस रविश पर चलते है, बाआँ कि[11] खुश रफ्तार नही लेकिन मुझको बुरा जानते हैं और बुरा कहते है । ये हके नाशनासी[12] और ना इन्साफ़ी है या नही ? इसका जवाब ज़रूर लिखिये ।

जो 'क़ातए बुरहान' मे कही-कही सह्वे तबई[13] वाक़े था, नाचार उसकी तरमीम[14] व तकमील के वास्ते इसी नुस्खे में कुछ बढ़ाया और एक दीबाचा और

---

१. दयाघन । २. स्मरण करना । ३. इस बात का तात्पर्य । ४. पिछले कवि । ५. शैली को पहचानने वाला । ६. ईश्वर, कल्याण का उद्भवस्थल । ७. अनुसरण । ८. नयी शैली का आविष्कर्त्ता । ९. गद्य । १०. चाटुकारिता । ११. यद्यपि । १२. सत्य को मानना । १३. स्वाभाविक त्रुटि । १४. संशोधन ।

लिखा और इस रिसाले का 'दुरफ़िशे कावियानी' नाम रखा। कल एक शम्बा है, पार्सल डाक में रवाना नहीं हो सकता। परसों दोशम्बे को भेजूँगा। इसके सिवा पुर्सिश[1], जिसका ख़त मे वादा है, उसका मुन्तज़िर और जल्द पहुँचने का आरज़ूमन्द हूँ। आइन्दा खानी, नवाबी या जो और अलफ़ाज़ इस्म के साथ मामूल[2] हो उन पर इत्तिला पाऊँ।

—असदुल्लाह

इस पत्र के लिफाफे पर पता इस प्रकार दिया गया है—

मुक़ाम महेवा, परगना महोली, ज़िला सीतापूर, पहुँचकर हज़रत फ़लक-रफ़त मखदूम मुकर्रम व मुअज्ज़म जनाब नेमान अहमद साहिब ताल्लुकदार ज़ाद मज्दहू[3] की ख़िदमत मे मक़बूल हो।

जवाब का तालिब

—ग़ालिब

२

(अक्तूबर, १८६६)

मौलाना व बिल फ़ज़्ल औलाना[4]

फ़कीर में जहाँ और ऐब हैं एक ये भी ऐब है कि झूट नही बोलता। हुक्काम से ब सबबे रियासत खानदानी के इलाक़े के अक्सर मुलाक़ात रहती है और मुआमलात भी आ पडते हैं। कभी खुशामद किसी की नहीं की। भला हज़रत से झूट क्यों बोलता? और आपकी खुशामद क्यों करता? ऐसा आमी[5] भी नहीं कि वल्लाह बिल्लाह[6] तकिये कलाम जानता हूँ। मोहिदा[7] को

---

१. पूछ-ताछ। २. नियमानुसार प्रयुक्त। ३. पवित्र। ४. हमारे मौलाना योग्यता में ऊँचे हैं। ५. सामान्य व्यक्ति, नगण्य व्यक्ति। ६. पहले पत्र में 'वल्लाह-बिल्लाह' का प्रयोग किया गया था। उसी की ओर संकेत है। ७. ईश्वर की एकता।

और वाव को क़समिया जान कर अज़ रू ए क़सम कहता हूँ कि नस्र के इस शेव ए खास[1] में और मुद्दइयों से आप बेहतर हैं। आपको अपना हमफ़न[2] और हम ज़बान समझ कर अपना दर्दे दिल आपके सामने कहा था, आपने ग़मखारी न की बल्कि और उल्टा आप मुझसे मलूल[3] हुए। खैर ये भी मेरे बख्त[4] की बरगश्तगी[5] थी कि हज़रत के जहन ने मेरे खिलाफ़े मक़सूद की जिहत[6] इन्तिक़ाल[7] किया। बरसों से खुतूत फ़ारसी मे लिखने छोड दिये। अब शाहज़ादा बशीरुद्दीन नबीर ए टीपूसुलतान[8] मग़फ़ूर[9] के सिवा किसी को फ़ारसी खत नहीं लिखता और ये मुआफ़िक उनके हुक्म के है और वो मुताअ[10] है और मैं मुतीअ[11]। बहत्तर बरस की उम्र, हवास मसलूब[12] कवामुजमहिल बसारत[13] मे जोफ़[14]। हात मे राशा[15], निसयान मस्तूली[16]। ए लो, आपका खत आया, पढ़ा। जवाब और वक्त पर हवाले करके खत मय सरनामा रख छोड़ा। आज जो जवाब लिखने बैठा, खत नहीं मिलता। न बक्स मे, न किताबों मे, न ताक़ में, हैरान कि अब क्या करूँ। बारे, जो कुछ याद आ गया, उसका जवाब लिखा।

क़िरान[17] के बाब में अर्ज़ ये है कि जुहा[18] व मुश्तरी[19] का एक बुर्ज[20] और दर्जे व दक़ीक़े[21] में बराबर होना क़िरानुस्सादैन[22] है और ये क़िरानाते जुज़इया[23] में से है और अक्सर वाक़े होता है और ये क़िरान जब सल्तनते मौऊद[24]

---

१. विशेष ढंग। २. समव्यवसायी। ३. खिन्न। ४. भाग्य। ५. प्रतिकूलता। ६. ओर। ७. स्थानान्तरण। ८. टीपू सुलतान का पौत्र। ९. स्वर्गीय। १०. जिसका आदेश माना जाय। ११. आज्ञाकारी। १२. विनष्ट। १३. दृष्टि। १४. निर्बलता। १५. कम्पन। १६. विस्मरण बलशाली। १७. दो ग्रहों का एक राशि पर आना। १८. शुक्र। १९. बृहस्पति। २०. राशि। २१. बिन्दु। २२. शुभ योग। २३. आंशिक योग। २४. जिसके लिए वचन दिया है।

नहीं । अगर किसी बादशाह के हंगामे विलादत[1] ये क़िरान आ पड़ा होगा, बशर्ते आँ कि बुर्जे ताला[2] मे या औतादे सलासा[3] या माइले औताद[4] मे वाक़े हुआ कि नज़र उसकी तालेमौऊद[5] पर हो तो वो इफ़ादए सेहत[6] व ऐश व इशरत करता है, और बस। वो क़िरानात और है जो मूजिबे तग़य्युरे[7] ओज़ाए आलम[8] व इन्तिक़ाले सल्तनत[9] होते है। अजाँ जुम्ला[10] एक ये क़िरान न था कि ज़ुहल[11] व मिर्रीख़[12] सरतान[13] मे फ़राहम हुए है। सरासर हिन्दुस्तान की ख़ाक उडा दी।

किस्मा मुख़्तसर, जो बादशाह साहबे क़िरान कहलाता है, ब ऐतबारे इफ़राते जाह व जलाल[14] व क़ुव्वते हाल कहलाता है। तालेविलादत[15] मे क़िरानुस्सादैन[16] वाक़े होना ज़रूरी नही। 'साहबे क़िरान' मुरादिफ़ शाहन्शाह[17] है, सो भी सिर्फ सलातीने तैमूरिया[18] मे दो शख़्श साहबेक़िरान कहलाते है, अमीर तैमूर और शाहजहाँ ततब्बो ए कलामे असातिज़ा[19] से मालूम होगा कि 'खाकानी' ने अपने आपको साहबेक़िरान लिखा है। इसी तरह फ़क़ीर ने भी लिखा है—

सजदगर नर्वासन्द साहबे क़िरानम[20]

---

१. जन्मकाल। २. भाग्य-स्थान (जन्म-पत्र)। ३. त्रिक (जन्मपत्र)। ४. कोण की ओर आकर्षित। ५. जिस भाग्य का वचन दिया गया है। ६. स्वास्थ्यकारी। ७. परिवर्तन के कारण। ८. ससार का रग-ढग। ९. शासन का परिवर्तन। १०. उन सब मे से। ११. शनि। १२. मंगल। १३. कर्क राशि। १४. शान-शौकत की अधिकता की दृष्टि से। १५. जन्म-स्थान। १६. दो शुभग्रहों का योग। १७. सम्राट् का पर्यायवाची। १८. तैमूरवशी शासक। १९. आचार्यों की कविता का अनुसरण। २०. यदि मुझे वे लोग साहबे किरान (शुभयोग मे उत्पन्न) समझे तो यह उचित है।

और बयान मुद्दते तौक़ीअ नवीसी[1] इल्लत[2] नही है साहबे क़िरान कहलाने की।

शम्बा अशुम अक्तूबर १८६७ ई०।

—असदुल्लाह्

: गालिब :
: १२७८ :

३

(१९ अक्तूबर, १८६६ ई०)

हज़रत, आपको अपने हाल पर मुतवज्जेह पाकर और माइले तहक़ीक़[3] जानकर कुल चार सवाद[4] मैंने बसवीले पार्सल रवाना किये है—

(१) दाफ़े हिज़यान—मुसन्निफ इसके मौलवी नजफ़अली मज़मउल बहरैन इल्मे फ़ारसी व अरबी सबबे तालीफ़[5] ये कि एक शख़्से आमी[6] ए फ़ुज़ूल ने अपनी शुहरत के वास्ते 'क़ाते बुरहान' के मतालिब के रद मे एक किताब लिखी। 'मुहर्रिके क़ाते' उसका नाम रखा। इबारत मुहमल[7], मक़ासिद पोच। मौलवी नजफ़अली ने मुन्सिफ़ाना[8] उसकी रद मे एक रिसाला लिखा, मौसूम[9] ब दाफ़ए हिज़यान-फ़ारसी ए क़दीम की तर्ज़ पर।

(२) दूसरा रिसाला सवालते अब्दुलकरीम। ये शख़्स तालिबे इल्म[10] साकिने[11] देहली है।

---

१. राजा के आदेशों को लिखने की अवधि। २. कारण। ३. जाँच की ओर आकर्षित। ४. मसविदे। ५. लेखक। ६. रचना का कारण। ७. साधारण आदमी, तुच्छ मनुष्य। ८. निरर्थक। ९. न्यायपूर्वक। १०. नामधेय। ११. विद्यार्थी। १२. निवासी।

(३) इसके[1] ख़ात्मे पर इस्तिफ़्ता[2] है, जिसको मैंने तीसरा सवाद शुमार किया है।

(४) चौथा लतायफ़े ग़ैबी। ये रिसाल ज़बाने उर्दू में है। इसका हाल इसके मुशाहदे[3] से खुलेगा।

और पार्सल से कई दिन पहले एक ख़त भेजा है। उसके जवाब का भी तलबगार हूँ।

—असदुल्लाह् ख़ेदस्तगाह[4]

नज़र ब एहतियात[5] ये ख़त बेरंग भेजा है। क़ुसूर माफ़।

४

(१७ दिसम्बर, १८६६ ई०)

क़िब्ला, आज ख़याल आया कि नाम ए मरक़ूमा[6] ३१ अक्तूबर के बाद कोई ख़त मेरे हज़रत का नहीं आया। इसमें मेरी भेजी हुई किताबों की रसीद और आपका आज़िमे[7] अकबराबाद होना मुन्दरिज[8] था। अकबराबाद का हंगामा तमाम हुआ। ग़ालिब[9] है कि आप भी अपने दारुल रियासत[10] मे पहुँच गये होंगे। अजब है कि वहाँ पहुँच कर भी आपने याद न किया।

लिल्लाह उलहम्द[11] कि इक़बाल निशान, अली दूदमान[12] मौलवी सुलेमान अहमदख़ाँ की नवीदे सेहत[13] अज़ रू ए मकतूब[14] मालूम हो गई। फ़क़ीर की

---

१. अर्थात् सवालाते अब्दुलकरीम के। २. मुफ़्ती से किसी विषय पर निर्णय माँगना। ३. निरीक्षण। ४. असमर्थ। ५. सावधानी की दृष्टि से। ६. लिखित पत्र। ७. पहुँचना। ८. लिखित। ९. संभवतः। १०. राज्य की राजधानी। ११. ईश्वर की प्रशंसा है। १२. कुलीन। १३. स्वास्थ्य-प्राप्ति। १४. पत्र से।

दुआ है, बेरिया[1] उनको पहुँचे। मैं हस्बुल हुक्म[2] खत बेरंग भेजता हूं। मगर तरीक़े अहवत[3] ये है कि आपके खुतूत भी बेरंग रवाना हुआ करें। फ़िल जुम्ला[4] इसमे तलफ़[5] होने का अँदेशा कम है।

जानता हूं कि आप शेर कहते होंगे। अगर मेरा गुमान सच्च है तो, जैसा कि, नस्र से मुतमत्ते[6] हुआ हूँ, नज्म से भी बहरा अन्दोज़[7] हूँ। दोशम्बा १७ दिसम्बर १८६६।

—नाम ए ग़ालिब बेअदब[8]

---

१. बिना किसी बनावट के। २. आदेशानुसार। ३. अच्छा उपाय। ४. सब मिला कर। ५. नष्ट। ६. लाभान्वित। ७. सम्पत्तियुक्त, सौभाग्यशाली। ८. अशील ग़ालिब का पत्र।

नवाब कल्बे अलीख़ाँ के नाम

(२७ जुलाई, १८६८ ई०)

हज़रत वली नेमत[1] अब्रे रहमत[2] सलामत,

बाद तस्लीम[3] मारूज़[4] है, आज शहर मे शुहरत है कि हज़रत अमीरुल मुस्लमीन ने मुफ़्ती सद्रुद्दीन मरहूम की ज़ोजा[5] को पान सौ रुपये मुफ़्तीजी की तजहीज़ व तक़फ़ीन[6] के वास्ते रामपूर भेजे है। फ़क़ीर को भी तवक़्क़ो ठहरी कि मेरा मुर्दा बे गोर[7] व कफ़न न रहेगा। जैसा कि जलाल असीर कहता है—

ज़ुर्अे लुत्फ़तो बादज़ मा बमा ख़ाहद रसीद[8]

मैंने कल एक ख़त नवाब मिर्ज़ाख़ाँ को लिखा है। ख़ुदा जाने वो हज़रत की नज़र से गुज़रे या न गुज़रे। इस ख़त मे, मैंने ज़ोजए मुफ़्तीजी का हाल ये लिखा है कि वो लावलद[9] है और साठ रुपये किराये के मकान उसके तहत मे है। अमीनुर्रहमान उसका भांजा है। मुफ़्तीजी का कोई नही।

अब मै अपनी हक़ीक़त अर्ज़ करता हूँ। आखिर उम्र मे तीन इल्तिमासे[10] है आप से—एक तो ये कि हजार-बारह सौ रुपये कर्ज़ रखता हूँ, चाहता हूँ कि मेरी ज़िन्दगी मे अदा हो जाये। दूसरी इल्तिमास ये कि हुसेनअलीख़ाँ की शादी आपकी बख़्शिशे ख़ास से हो जाये। और (तीसरी इल्तिमास ये कि) ये सौ रुपया महीना जो मुझे मिलता है, उसके नाम पर उसके हीनहयात[11]

---

१. स्वामी, अभिभावक। २. दयाघन। ३ अभिवादन के पश्चात्। ४. निवेदन। ५. पत्नी। ६ अन्त्येष्टि। ७. बिना कवर। ८. मेरी मृत्यु के पश्चात् आपकी कृपा होगी। ९. नपूता, पुत्रहीन, सन्तानहीन। १० प्रार्थना। ११. आजीवन।

करार पाये। ये दो ख्वाहिशें (अन्तिम दो इच्छाएँ) ख्वाह[1] मेरी ज़िन्दगी मे, बाद जाबाद इ जा पाये।

तुम सलामत रहो क़यामत तक
दौलतो इज्ज़ो जाह रोज़ अफ़ज़ूँ[2]

रोज शम्बा, ५ रबीउस्मानी (१२८५ हि०)।
२७ जुलाई १८६८ ई०।

अर्जदाश्ते दौलतख्वाह
—असदुल्लाह्

---

१. चाहो तो। २. सम्पत्ति, प्रतिष्ठा और सम्मान, नित्य वृद्धिशील हों।

अज्ञात व्यक्तियों के नाम

[ग़ालिब के कुछ ऐसे पत्र हैं, जिनसे पत्र प्राप्त-कर्त्ता का पता नहीं चलता। इस प्रकार का एक पत्र प्रथम-भाग में भी छापा गया है।]

१

जनाबे आली,

ये ख़त फ़तहपूर से आपके नाम आया है। मैं उस वक्त हाज़िर न हो सका, ख़त पहुँचता है, इसको मुलाहज़ा करके जब इसका जवाब मुझको दीजियेगा तो मैं फ़तहपूर रवाना हो जाऊँगा।

शादी पादशाह के फ़र्ज़न्द की और बज्मगाह[1] दीवाने ख़ास। रुक्के लिखे जाएँगे सम्सामुद्दौला की तरफ़ से। सम्सामुद्दौला अमीर है और उमरा[2] बाहमदिगर[3] तरीक़ए फिरोतनी[4] का मसलक रखते हैं, यानी तशरीफ़ लाइये और मुझको ममनून[5] कीजिये। पस अब मैं रुक्के की इबारत में क्या अलफ़ाज़ सर्फ़ करूँ? तशरीफ़ शरीफ़ और क़ुदूम[6] मैमनत लुज़ूम[7] को दीवाने ख़ास से मुबाअदते[8] महज़ और फिर दाई[9] सम्सामुद्दौला। अगर शहज़ादे और दीवानेख़ास के लायक़ अलफ़ाज़ लिखे जाये तो हज़रात मकतूबअलै[9] बुरा मानेंगे कि हमको सम्सामुद्दौला ने क्या लिखा है। अगर मुतवाज़ियाना[10] इबारत

---

१. उत्सव-स्थल। २. अमीर (ब. व.)। ३. परस्पर। ४. विनम्रता का व्यवहार। ५. अनुगृहीत। ६. पदार्पण। ७. कल्याणकारी (चरण)। ८. निमंत्रणकर्त्ता। ९. पत्र-प्राप्तकर्त्ता। १०. अनुरोधयुक्त, सम्मानयुक्त।

लिखी जावे तो कस्रे शाने सल्तनत[1] है। अब आप मुझको हिदायत कीजिये कि क्या निगारिश[2] का अन्दाज़ हो। वस्सलाम।

—असदुल्लाह्

२

(१८५४ ई०)

मियाँ,

वो अर्ज़ी का क़ाग़ज, अफ़्शाँ[3] किया हुआ और अर्ज़ी का मसविदा मैंने लाला जुगलकिशोर को परसों दे दिया है। तुमने भी देखा होगा और यक़ीन है कि वो अपने घर मे उसको लिख रहे होंगे और अगर तुम्हारे पास आ जाये तो उनको कह देना कि जल्दी करे और नक़्शा तहरीर का, क़ाग़ज़ सादा पर, मुझको और तुमको दिखला ले। फिर उसके मुआफ़िक़ और उसको अफ़्शानी[4] काग़ज़ पर लिखे। ज़्यादा-ज़्यादा।

—ग़ालिब

३

दीगर अज़खीशम खबर न बूद तकल्लुफ़ बरतरफ़
ई क़दर दानम के 'ग़ालिब' नाम यारे दाश्तम[5]

हुजूमे ग़म[6] से फ़राग नहीं, अगरचे गोशानशीं व खानमाँ खराब[7] हूँ, लेकिन बहस्बे राबित ए अज़्ली[8] कसीरुल अहबाब[9] हूँ। अतराफ़ व जवानिब[10] से

---

१. राज्य के सम्मान मे त्रुटि। २. लेखन। ३. सुनहरा या रुपहरा चूर्ण। ४. चमकदार। ५. इसमे तकल्लुफ नहीं है कि मुझे आत्मीय-जनों का कुछ पता नहीं है। मै इतना ही जानता हूँ कि ग़ालिब ही एक मेरा मित्र है। ६. दुःखाधिक्य। ७. जिसका घर नष्ट हो गया हो, अभागा। ८. दैवयोग से। ९. जिसके मित्र अधिक हों। १०. आस-पास।

ख़ुतूत आते हैं, इधर से भी उनके जवाब लिखे जाते हैं। जो अशार वास्ते इस्लाह[1] के आते हैं, बाद इस्लाह भेज दिये जाते हैं।

इन साहबों में से अक्सर ऐसे हैं कि न मैंने उन्हें, न उन्होंने मुझे देखा है। मुहब्बते दिली और निस्बते रूहानी[2] सही लेकिन साहबाने बलादे दूरदस्त[3] क्या जाने मेरा हाल क्या है? हफ़्ताद व यकसाला[4] उम्र की किताब में से फ़स्ले आख़िरी[5] की हक़ीक़त ये है कि दस-पन्द्रह बरस से ज़ोफ़े सामिआ[6] व किल्लते इश्तिहा[7] में मुब्तिला हुआ और ये दोनों इल्लतें रोज़ अफ़्ज़ूं रहे। हिस्से हाफ़िज़ा[8] का बुतलान[9] अलावा। ज़ूं ज़ूं उम्र बढ़ती गई, ये अमराज़ बढ़ते गये। क़िस्सा मुख़्तसर[10] अब समिआ[11] का हाल ये है कि एक तख़्ता काग़ज़ मय दवात क़लम सामने धरा रहता है, जो दोस्त आते हैं, पुर्सिशे मिज़ाज[12] के सिवा और कुछ कहना होता है, वो लिख देते हैं, मैं उनकी तहरीर का जवाब जबानी देता हूँ।

ग़िज़ा की हक़ीक़त ये है कि सुबह को आठ-दस बादाम का शीरा सेहपहर[13] को सेर भर गोश्त का पानी, दो घड़ी दिन रहे दो या तीन तले हुए कबाब। निस्यान[14] हद से गुज़र गया। राशा[15], दौराने सर[16], ज़ोफ़े बसर[17] ये यारानेनौ आमदा[18] हैं। मीर तक़ी मरहूम[19] का मत्ला[20] विरदे ज़बां[21] है—

मशहूर हैं आलम में मगर हों भी कहीं हम
अल क़िस्सा न दर पै हो हमारे के नहीं हम

---

१. संशोधन के लिए। २. आत्मिक सम्बन्ध। ३. दूर के नगरों में रहने वाले। ४. ७१ वर्ष। ५. अन्तिम अध्याय। ६. श्रवण-शक्ति की निर्बलता। ७ भूख न लगना। ८. उपाधियाँ। ९. स्मरण-शक्ति। १०. नाश। ११. बात संक्षेप में। १२. श्रवण-शक्ति। १३. कुशल-प्रश्न। १४. तीसरे पहर। १५. विस्मृति। १६. कम्पन। १७. सिर के चक्कर। १८. दृष्टि-मान्द्य। १९. नवागन्तुक मित्र। २०. स्वर्गीय। २१. गजल का पहला शेर। २२. जप।

खत बक्स मे या किताब में रख देता हूँ और भूल जाता हूँ, आगे लेटे-लेटे खत लिखता था, अब राशा यों भी नहीं लिखने देता।

साहबे 'अकमलुल अखबार' और साहबे 'अशरफ़ुल अखबार' ने जो हमेशा मुझसे मिलते-जुलते रहते हैं, अज़रूए मुशाहदा[1] मेरे कलाम की तसदीक करके उसी ऐतजार[2] को अपने अखबार मे छापा है। कल दीगर साहबा ने मतबा[3] और राकिमाने अखबार[4] अगर इसी इबारत को अपने अखबार के औराक मे दर्ज करेंगे तो फकीर उनका एहसानमन्द होगा।

इस निगारिश[5] की शुहरत से मकसूद ये है कि मेरे अहबाब मेरे हाल से इत्तिला पाये। अगर खत का जवाब या इस्लाही गज़ल देर मे पहुँचे तो तक़ाजा और अगर न पहुँचे तो शिकायत न फ़रमाये। मैं दोस्तो की खिदमत गुजारी मे भी कभी कासिर[6] नही रहा, और खुशी ए खुशनूदी से काम करता रहा, जब बिल्कुल निकम्मा हो गया, न हवास बाक़ी रहे, न ताक़त, फिर अब क्या करूँ? बकौल खाजा वजीर--

मैं वफ़ा[7] करता हूँ लेकिन दिल वफा करता नहीं

अगर किसी साहब को मेरी तरफ़ से कुछ रज व मलाल हो तो खालिसन-लिल्लाह, माफ़ फरमाये। अगर जवान होता तो अहबाब से दुआए सेहत का तलबगार होता, अब जो बूढा हूँ तो दुआए मगफ़रत[8] का ख्वाहाँ[9] हूँ।

--गालिब

जनाब बाबू साहब, जमालुल मनाकिब[10] अमीमुल एहसान[11] सलामत,

नियाजे मेहर की शाना[12] व दुआए दरवेशाना क़ुबूल फ़रमाये। एक दिन

---

१. निरीक्षण के अनुसार। २. क्षमायाचना। ३. अन्य मुद्रणालयों का स्वामी। ४. समाचारपत्रों के लेखक। ५. लेखन। ६. वञ्चित। ७. प्रतिज्ञा-पालन, निर्वाह। ८. प्रलय दिवस पर क्षमा की प्रार्थना। ९. इच्छुक। १०. अच्छे यशवाले। ११. अधिक उदार। १२. स्नेह के कारण प्रेमपूर्वक विनय।

तफ़क़्क़ुदनामा[1] और दूसरे दिन नुस्खए ऐजाजे हगामा पहुंचा। नज़र इस तक़दीम व ताख़ीर[2] पर ख़त को फूल और किताब को फल समझा। फूल से निशाते ताज़ा[3] और फल से लज़्ज़त बे अन्दाज़ा पाई। 'जामे जम' जहाँ नुमा होगा मगर क्या जानिये क्या होगा, बल्कि इसमे तरद्दुद है कि न होगा या होगा। जामे जहाँनुमा ये किताब है जिससे हर दीदावर[4] बहयाव[5] है। यहाँ तो मैं मदह[6] से क़ासिर[7] रहा। ये मैंने क्या कहा, जिस तरह हर दीदावर पढकर हज़[8] उठा सकता है, नाबीना[9] भी सुनकर लुत्फ़ पा सकता है, फ़ैज़[10] इस किताब का आम है, 'जामे जहाँनुमा' इसका सच्चा नाम है।

असिस्टट कमिश्नर साहब बहादुर की खिदमतगुज़ारी और इशाअते इल्म में मददगारी ज़रियए अज्रे इफ़्तिख़ार[11] है मगर फ़क़ीर मे तीन ऐब है— सत्तर बरस की उम्र, कानो से बहरा, हमेशा बीमार है। आमद व रफ़्ते दवाम[12] मे क़ासिर और जो तहरीर वहाँ से आया करेगी इस मशविरत[13] मे हाज़िर रहेगा। ये नही कि न जाऊँगा मगर हस्बुल तलब[14] या हस्बे ज़रूरत कारगुज़ार व फ़रमाँ बरदार रहूँगा। बहर सूरत ताज्जुब है कि असिस्टंट बहादुर ने मुझे याद क्यों न किया, बुला क्यों न लिया। यक़ीन है कि जब आप ये ख़त अपने नाम का हज़रत की खिदमत मे भिजवा देगे तो वो मुझे बे तकल्लुफ़ बुला लेगे। फ़क़्त।

इनायत का तालिब[15]

—ग़ालिब

---

१. कृपा-पत्र। २. शीघ्रता और विलम्ब। ३. नया हर्ष। ४. पारखी। ५. सौभाग्यशाली। ६. प्रशंसा। ७. असमर्थ। ८. आनन्द। ९. अन्धा। १०. लाभ। ११. गौरव की वर्षा का कारण। १२. नित्य आना-जाना। १३. परामर्श। १४. आवश्यकतानुसार। १५. कृपाकांक्षी।

परिशिष्ट—

१

पत्र-लेखक

२७ दिसम्बर १७९७ ई० को आगरा मे मिर्ज़ा असदुल्लाह बेग 'ग़ालिब' का जन्म हुआ था ।

ग़ालिब के दादा कोकान बेग सलजूती तुर्क थे । सपरिवार समरक़न्द से चलकर भारतवर्ष आये और यही बस गये । पिता अब्दुल्लाहबेग का विवाह आगरा-निवासी खाजा गुलामहुसेनखाँ कुमेदान की लड़की इज्जतुन्निसा बेगम से हुआ था । गालिब की बहन का नाम छोटी रवानम और भाई का नाम मिर्ज़ा यूसुफ़खाँ था । पिता अन्तिम दिनों मे अलवर के महाराज के यहाँ नौकर थे । आपसी सघर्ष मे १८०३ मे अलवर के निकट राजगढ़ नामक स्थान पर मारे गये । पिता की मृत्यु के समय ग़ालिब की आयु पाँच वर्ष की थी ।

अब्दुल्लाहबेग के भाई नसीरुल्लाहबेग मराठों की ओर से आगरा मे सूबेदार थे । जब अंग्रेजों ने आगरा पर अधिकार कर लिया तो वहाँ कमिश्नर का कार्यालय खुला । कमिश्नर लार्ढ लेक ने नसीरुल्लाहबेग को चार सौ सवारों का नायक बनाया । एक हजार सात सौ रुपये मासिक पर उनकी नियुक्ति हुई थी । मासिक वेतन के अतिरिक्त सौनक और सूसा (इस समय मथुरा जिले मे स्थित) का इलाका जागीर के रूप मे मिला । मासिक वेतन और जागीर से इन्हें लाख-डेढ़ लाख रुपये की आय होती थी ।

पिता की मृत्यु के पश्चात् ग़ालिब अपने भाई-बहन के साथ चाचा के पास चले गये । ग़ालिब को चाचा का सरक्षण पूरे तीन वर्ष भी नही मिल

सका। १८०६ ई० में नसीरुल्लाहबेग की मृत्यु हो गई। वेतन बन्द हो गया, जागीर छीन ली गई। उत्तराधिकारियों को दस हजार रुपये वार्षिक मिलने लगे। उत्तराधिकारी थे—नसीरुल्लाहबेग की माँ, उनकी तीन बहनें, ग़ालिब, उनके भाई और उनकी बहन।

नसीरुल्लाहबेग का विवाह फीरोजपुर झिरका के रईस अहमदबख्शखाँ की बहन से हुआ था। मृत्यु के पश्चात् उनके परिवार को जो दस हजार रुपये की वार्षिक वृत्ति दी गई, उसे झिरका फ़ीरोजपुर की रियासत से जोड दिया गया था। नवाब ने दस हजार के स्थान पर पाँच हजार रुपये वार्षिक कर दिये और इस पाँच हजार मे दो हजार का साझीदार खाजा हाजी को बनाया गया। खाजा हाजी ग़ालिब के परिवार से सम्बन्धित नही था। वह नसीरुल्लाह-बेग के रिसाले मे एक अधिकारी था। तीन हजार का बँटवारा इस प्रकार हुआ—

१५०० रुपये वार्षिक नसीरुल्लाह की माँ और उनके आश्रित।
१५०० रुपये वार्षिक मिर्ज़ा ग़ालिब और उनके छोटे भाई।

इस बँटवारे के कारण गालिब को ६२॥ रुपये मासिक मिलने लगे।

मिर्ज़ा गालिब का विवाह फीरोजपुर झिरका के रईस अहमदबख्श की बेटी से हुआ था। वे पत्नी के साथ आगरा से दिल्ली चले आये और यही रहने लगे। जब सरकारी वृत्ति से काम न चला तो उन्होंने अपने चाचा को दी गई दस हजार रुपये की वृत्ति पाने के लिए प्रयत्न प्रारम्भ किया। उन दिनों ईस्टइंडिया कम्पनी का प्रमुख-केन्द्र कलकत्ता मे था। १८२७ मे कलकत्ता पहुँच कर ग़ालिब ने कम्पनी के अधिकारियों के सामने दो बाते रखी—

(१) नसीरुल्लाहबेग की मृत्यु के पश्चात् अँग्रेजों ने दस हजार रुपये की जो वृत्ति बाँधी थी, वह बहाल रहे। इस वृत्ति का सम्बन्ध फीरोजपुर झिरका की रियासत से न रखा जाये।

(२) ख़ाजा हाजी को दो हजार रुपये की वार्षिक वृत्ति देना उचित नहीं है। यदि फीरोजपुर के अधिकारी ख़ाजा हाजी को कुछ देना चाहते हैं तो अपने पास से दें।

पुराने कागज-पत्र देखने से पता चला कि लार्ड लेक ने ही वृत्ति दस हजार से घटाकर पाँच हजार कर दी थी और उन्हीं के आदेश से ख़ाजा हाजी को दो हजार रुपये वार्षिक दिये जा रहे थे, अतः ग़ालिब के प्रार्थना-पत्र पर विचार नहीं किया गया।

ग़ालिब के छोटे भाई यूसुफ़अली पागल हो गये। १८५७ में उनकी मृत्यु दिल्ली में हुई।

ग़ालिब ने बचपन में अरबी-फ़ारसी की शिक्षा पाई थी। दादा की मातृभाषा तुर्की थी। पिता भी तुर्की बोलते थे। जब ग़ालिब १३-१४ वर्ष के थे, हरमज्द नामक पारसी इनके यहाँ रुका। मुसलमान बनने के बाद इस व्यक्ति ने अपना नाम अब्दुस्समद रख लिया था। अब्दुस्समद फ़ारसी, अरबी और दर्शन-शास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे। वे दो वर्ष तक ग़ालिब के यहाँ रहे, इस अवधि में ग़ालिब ने उनकी नई और पुरानी फ़ारसी का अध्ययन किया।

मिर्ज़ा अब्दुलक़ादर 'बेदिल' की रचना पढ कर उर्दू में कविता लिखने लगे। आगे चलकर फ़ारसी में लिखने की प्रवृत्ति हुई। दिल्ली में रहते समय मुगल दरबार में स्थान पाने का प्रयत्न किया किन्तु बहुत समय तक सफलता नहीं मिली। अकबरशाह पर एक कसीदा लिखा। १८३७ में अन्तिम मुगल-सम्राट् अबूज़फ़र सिराजुद्दीन गद्दी पर बैठे। इन पर भी कई कसीदे लिखे, किन्तु किसी का ध्यान नहीं गया। काले साहब और हकीम अहसानुल्लाहखाँ के कारण मुगल सम्राट् ने १८५० में इन्हें तैमूरी-वंश का इतिहास लिखने का काम सौंपा। नज्मुद्दौलादबीरुलमुल्क की उपाधि मिली। ५० रुपये मासिक

वेतन मिलने लगा। सृष्टि के आरम्भ से हुमायूं तक का हाल प्रथम खंड में लिखा गया। पुस्तक का नाम रखा गया महरे नीमरोज़। दूसरे खंड में हुमायूं के पश्चात् का इतिहास लिखा जाने वाला था। इस खंड का नाम 'माहे-नीममाह' प्रस्तावित किया गया, किन्तु यह लिखा नहीं जा सका।

अन्तिम मुगल सम्राट् बहादुर शाह (द्वितीय) इनके प्रशंसक थे। सम्राट् अपने निवास-स्थान पर कवि-सम्मेलन आयोजित करते थे। ग़ालिब ने अपनी श्रेष्ठतम गजलें इन सम्मेलनों में सुनाई और सम्राट को व्यक्तिगत रूप से सुनाई।

रामपुर के शासक ग़ालिब से अपनी कविता संशोधित कराते थे। वहाँ से इन्हें वृत्ति मिलने लगी। अन्तिम दिनों में इसी वृत्ति के कारण गालिब जीवन-यापन कर सके।

१८५७ के विद्रोह के समय गालिब दिल्ली में रहे। १८५७ के पश्चात् ग़ालिब अपने चाचा की वृत्ति तथा प्रतिष्ठा को पाने के लिए बहुत प्रयत्नशील रहे, किन्तु उन्हें आंशिक सफलता ही मिल सकी।

मिर्ज़ा गालिब के सात बच्चे हुए। कोई बालक १५ महीने से अधिक जीवित नहीं रहा।

७३ वर्ष की आयु में १५ फरवरी १८६९ को दिल्ली में ग़ालिब का देहान्त हुआ। एक वर्ष पश्चात् उनकी पत्नी की मृत्यु हुई।

ग़ालिब की रचनाएँ निम्न प्रकार हैं--

(१) कुल्लियात नज़्मे फ़ारसी--फ़ारसी कविताओं का संकलन।

(२) कुल्लियात नस्रे फ़ारसी--फ़ारसी गद्य का संकलन। इस संकलन में निम्नलिखित पुस्तकें हैं--

(१) पंज आहंग—फ़ारसी का व्याकरण।

(२) मेहरे नीमरोज़—सृष्टि के आरम्भ से हुमायूँ तक का वृत्तान्त।

(३) दस्तम्बो—१८५७ के विद्रोह के सम्बन्ध मे गालिब के संस्मरण।

(३) दीवाने उर्दू—ग़ालिब की उर्दू-कविताओं का संग्रह।

(४) नुस्ख़े हमीदिया—गालिब की प्रारम्भिक उर्दू-कविताएँ।

(५) सबदची—फारसी की ऐसी कविताओं का सग्रह, जो फ़ारसी के कविता-संग्रह मे नही छप सकीं या जो संग्रह के प्रकाशन के पश्चात् लिखी गईं।

(६) मुत्तफ़रक़ाते ग़ालिब—ग़ालिब के फ़ारसी गद्य-पद्य का संग्रह।

(७) इन्तखाबे गालिब—रामपुर नरेश कल्बे अलीखाँ के लिए तैयार किया गया एक सकलन। इसमे ग़ालिब की उर्दू-फ़ारसी की चुनी हुई रचनाएँ संकलित है।

(८) क़ातै बुरहान—'बुरहान क़ातै' नामक फ़ारसी शब्द कोष की त्रुटियों के निदर्शन मे इस पुस्तक की रचना हुई। इस पुस्तक के लिए ग़ालिब को बहुत बुरा-भला कहा गया।

(९) तेगे तेज़—कातै बुरहान के सम्बन्ध मे उर्दू मे लिखी गई पुस्तिका।

(१०) नुकाते रुक़ाते ग़ालिब—'पंज आहग' नामक फ़ारसी व्याकरण का उर्दू-अनवाद।

(११) क़ादिरनामा—बच्चों की पाठ्य-पुस्तक।

(१२) लताइफे ग़ैबी—'क़ातै बुरहान' से सम्बन्धित वाद-विवाद पर लिखी गई पुस्तक।

(१३) सवालाते अब्दुलकरीम—क़ातै बुरहान' से सबधित वाद-विवाद पर लिखी गई पुस्तक ।

(१४) गिले गाना—सिराजुद्दीन अहमद के आग्रह पर ग़ालिब ने अपनी उर्दू-फ़ारसी रचनाओ का संकलन 'गिले गाना' के नाम से प्रकाशित किया था ।

गालिब ने अपने जीवन मे मित्रों और सम्बन्धियो को सैकड़ो पत्र लिखे । आरम्भ मे वे फ़ारसी मे पत्र-लिखा करते थे किन्तु सन १८४८ से उर्दू मे पत्र लिखने लगे । पत्र-लेखन मे गालिब को असाधारण सफलता मिली है । हिन्दी और उर्दू मे कोई अन्य लेखक ऐसा नही है जिसकी इस क्षेत्र मे गालिब के साथ तुलना की जा सके । ग़ालिब के पत्रो के कई सकलन प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमे से कुछ प्रमुख संग्रहो का परिचय यहाँ दिया जाता है—

(१) ऊदे हिन्दी—गालिब की मृत्यु से चार मास पूर्व ग़ालिब के पत्रों का यह सकलन प्रकाशित हुआ था । ग़ालिब ने स्वय इसकी पांडुलिपि देखी थी ।

(२) उर्दू ए मुअल्ला (प्रथम भाग)—गालिब के जीवन काल में यह संग्रह छपने लगा था, किन्तु मृत्यु के पश्चात् प्रकाशित हुआ ।

(३) उर्दू ए मुअल्ला (द्वितीय भाग)—उर्दू ए मुअल्ला (प्रथम भाग) में जो पत्र नही छप सके, उन्हे मौलाना हाली ने दूसरे भाग मे प्रकाशित किया । १८९९ में उर्दू ए मुअल्ला के दोनों भाग एक साथ प्रकाशित हुए ।

(४) नादिर खुतूते ग़ालिब—करामत हुसेन 'करामत', हमदानी बहादुर, सग़ीर बिलगिरामी और सूफ़ी मुनीरी के नाम लिखे गये पत्रो का सग्रह ।

(५) मकातिबे गालिब—रामपुर-नरेश को लिखे गये पत्रों का संग्रह ।

(६) नादिराते गालिब—मुंशी नबीबख़्शखाँ 'हकीर' को लिखे गये पत्रों का संग्रह ।

(७) खुतूते ग़ालिब (प्रथम भाग)—मौलवी महेश प्रसाद द्वारा सम्पादित तथा हिन्दुस्तानी एकेडेमी द्वारा प्रकाशित ।

(८) खुतूते गालिब (दो-भाग)—सम्पादक गुलाम रसूल 'महर', प्रकाशक—किताब मंजिल, लाहौर ।

(९) गालिब के पत्र (प्रथम भाग)—गालिब के पत्रों का हिन्दी संस्करण, प्रकाशक—हिन्दुस्तानी एकडेमी, इलाहाबाद ।

गालिब के जितने पत्र अब तक भिन्न-भिन्न संकलनों में छपे है, उनके अतिरिक्त अभी बहुत से पत्र प्रकाश में नहीं आये है । समय-समय पर उनके अप्रकाशित-पत्र नियतकालिक पत्रों में छपते रहते हैं ।

गालिब ने अन्य लेखकों और कवियों की रचना के लिए भूमिकाएँ भी लिखी थी । ये भूमिकाएँ गालिब के काव्य सम्बन्धी दृष्टिकोण को प्रकट करती हैं । भूमिकाओं की भाषा पत्रों की भाषा से भिन्न है । उसमें अरबी-फ़ारसी के शब्द और फारसी के ढंग के समासित पद अधिक प्रयुक्त हुए हैं ।

२

पत्र-प्राप्तकर्त्ता

[प्रथम खंड]

(१) **मुंशी हरगोपाल 'तफ़्ता'**—१७९९ ई० मे मुंशी हरगोपाल 'तफ़्ता' का जन्म हुआ। ये मूलत: उत्तर प्रदेश के बुलन्दशहर जिले के सिकन्दराबाद के निवासी थी। वहीं कुछ दिनों तक कानूनगो रहे। कुछ समय के लिए भरतपुर चले गये, जहाँ उन्हें बन्दोबस्त विभाग में काम मिला था।

तफ़्ता मुख्य रूप से फ़ारसी के कवि थे। जीवन काल मे फ़ारसी गजलों का एक सग्रह लाहौर से प्रकाशित हुआ था। 'तफ़्ता' गालिब से दो वर्ष ही छोटे थे किन्तु जीवन भर ग़ालिब का आदर करते रहे। ग़ालिब उनकी कविता सुधारा करते थे। तफ़्ता और ग़ालिब मे केवल गुरु और शिष्य का ही सम्बन्ध नहीं था, तफ़्ता परिवार के एक सदस्य के समान थे। इसीलिए ग़ालिब, तफ़्ता को मिर्ज़ा तफ़्ता कहा करते थे। तफ़्ता को लिखे गये एक पत्र मे ग़ालिब ने लिखा है—

"मुझको इस पर नाज़ है कि मै हिन्दुस्तान मे एक दोस्ते सादिक़ुलविला (सच्चे प्यार वाला मित्र) रखता हूँ, जिसका हरगोपाल नाम और तफ़्ता तख़ल्लुस है।"—"**ग़ालिब के पत्र**" पृष्ठ १२०

तफ़्ता की मृत्यु-तिथि के सम्बन्ध मे निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। कुछ लोगों का विचार है कि उनका निधन सन् १८७९ ई० मे हुआ।

अब तक गालिब के जितने पत्र प्रकाशित हुए है, उनमे 'तफ़्ता' के नाम सब से अधिक पत्र है। काल की दृष्टि से तफ़्ता के नाम लिखे गये पत्रों का विवरण इस प्रकार है—

सन् १८५२	५ या ६
सन् १८५३	११ या १२
सन् १८५४	४ या ५
सन् १८५६	१
सन् १८५७	१
सन् १८५८	३४
सन् १८५९	१४
सन् १८६०	९
सन् १८६१	५ या ६
सन् १८६२	४ या ५
सन् १८६३	९
सन् १८६४	४
सन् १८६५	८

गालिब के फारसी पत्रों मे सन् १८४८ ई० का एक पत्र है, जो तफ़्ता के नाम लिखा गया है।

सन् १८५५ का कोई पत्र नहीं हैं। इसी प्रकार १८५६ और ५७ मे एक-एक पत्र ही लिखा गया। कुछ लोगों का विचार है कि इन वर्षों मे भी ग़ालिब ने अधिक पत्र लिखे होंगे, किन्तु तफ़्ता ने उन्हें सुरक्षित नही रखा। यही बात उन वर्षों पर लागू होती है, जिनमे गालिब के पत्रों की सख्या कम है।

२. **मुंशी जवाहरसिंह 'जौहर'**—जवाहरसिह छज्जूमल के पुत्र थे और छज्जूमल से गालिब की गाढ़ी मित्रता थी। ग़ालिब जवाहरसिह को अपने बेटे

की तरह प्यार करते थे। ये फ़ारसी में कविता लिखते थे। इनकी नियुक्ति तहसीलदारी पर हुई थी। गालिब की मृत्यु से पहले ही इन्होंने राजकीय सेवा से अवकाश-ग्रहण कर लिया था।

गालिब के पत्रों का सकलन गालिब के जीवन काल में 'उर्दू ए मुअल्ला' के नाम से प्रकाशित हुआ था। जवाहरसिंह ने इस सकलन के सम्पादन में सहयोग दिया था। इनके नाम लिखे गये पत्रों की संख्या ३ है।

३. **सैयद बदरुद्दीन अहमद**––सैयद साहब फकीर के नाम से ये प्रसिद्ध थे। इनका काव्य नाम काशिफ़ था। अब तक इनके नाम पर लिखे ग़ालिब के ५ पत्र प्रकाशित हो चुके हैं।

४. **काजी अब्दुलजमील 'जुनून'**––जुनून का जन्म १८३५ ई० में रायबरेली में हुआ। यह ग़ालिब के शिष्य थे। अँग्रेजों की ओर से खानबहादुर की उपाधि मिली थी। सकलन में इनके नाम लिखे गये पत्रों की सख्या ३० है।

५. **नवाब अनवरद्दौला सादुद्दीनखाँ 'शफक'**––कालपी (उ० प्र०) के रईस। इनके सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है। पत्र सख्या २१।

६. **सैयद यूसुफ़ मिर्जा**––गालिब, यूसुफ़ मिर्ज़ा को अपनी सन्तान की तरह प्यार करते थे। इनके पिता हुसेन मिर्जा को १८५७ के विद्रोह में बहुत कष्ट उठाने पड़े थे। पत्र संख्या १२।

७. **मिर्ज़ा यूसुफअलीखाँ 'अजीज'**––अजीज़ के पिता नजफ़अलीखाँ की जायदाद अलीगढ़ में थी। जायदाद चले जाने पर अजीज़ के दिन कठिनाई से बीतने लगे। वे अलीगढ़ से दिल्ली चले आये और अध्यापन का काम करने लगे। ग़ालिब के निर्देशन में यह कविता करते थे। ग़ालिब इन्हें आर्थिक सहायता दिया करते थे। पत्र संख्या ३।

८. **मीर अहमदहुसेन 'मयकश'**—दिल्ली निवासी, ग़ालिब के प्रिय शिष्यों में से एक। यह फ़ारसी और उर्दू, दोनों में कविता लिखते थे। १८५७ ई० में इन पर विद्रोहियों को सहायता देने का आरोप लगाया गया और फाँसी की सजा दी गई। पत्र सख्या २।

९. **सैयद गुलामहुसनेन 'क़द्र' बिलगिरामी**—उत्तरप्रदेश के बिलगिराम के निवासी, १८३२ ई० मे जन्म। आरम्भिक शिक्षा समाप्त करके यह लखनऊ चले गये। जब १८५६ मे लखनऊ की नवाबी समाप्त हो गई तो अपने गाँव लौट आये। विद्रोह के समय अपने गाँव मे थे। विद्रोह के पश्चात् जब शान्ति स्थापित हुई तो शिक्षा-विभाग मे काम करने लगे। ग़ालिब के कहने पर कुछ समय तक लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस मे नौकर रहे। अन्तिम दिनो मे लखनऊ के किंग कालेज मे फारसी के प्राध्यापक थे। पत्र संख्या २२।

१०. **नवाब मुहम्मद यूसुफअलीखाँ बहादुर**—गालिब के समकालीन रामपुर-राज्य के शासक तथा कविता के क्षेत्र मे गालिब के शिष्य। गालिब इनकी कविता का सशोधन किया करते थे। इन्ही की मासिक वृत्ति के कारण बुढापे मे गालिब ने जीवन-यापन किया। पत्र सख्या ३७।

११. **हकीम गुलाम नजफअलीखाँ**—मूलत. शेखूपुर (उ० प्र०) के निवासी। हकीम अहसनुल्लाहखाँ के कारण ये दिल्ली में बस गये थे। ग़ालिब इनके साथ आत्मीयता का व्यवहार करते थे। पत्र संख्या २३।

१२. **मीर मेहदीहुसेन 'मजरूह'**—मीर मेहदी 'मजरूह' मीरहुसेन निगार के पुत्र थे। विद्रोह के दिनों मे यह दिल्ली छोड कर पानीपत चले गये। कुछ समय तक अलवर मे नौकरी की और वहाँ से रामपुर गये। एक गजल-सग्रह इनका प्रकाशित हुआ। यह गालिब के शिष्य थे। गालिब इनसे अत्यधिक स्नेह करते थे। गालिब ने इन्हे जो पत्र लिखे हैं वे सादगी, आत्मीयता और पत्र लेखन

की दृष्टि से उच्चकोटि के है। इन पत्रों मे ग़ालिब के स्वभाव की अकृत्रिमता और सचाई प्रकट हुई है। पत्र संख्या ५०।

१३. **मिर्ज़ा शहाबुद्दीन अहमदखाँ 'साकिब'**——ग़ालिब के निकट सम्बन्धी, नवाब जियाउद्दीन अहमदखाँ 'नय्यर' के पुत्र। ग़ालिब ने कविता के क्षेत्र में नय्यर को अपना उत्तराधिकारी बनाया था। ९ अप्रैल १८६९ को साकिब की मृत्यु हुई। पत्र सख्या ९।

१४. **मिर्ज़ा हातिमअली बेग 'मेहर'**——मिर्ज़ा हातिमअली बेग 'मेहर' के परदादा नादिरशाह के साथ इस्फहान से भारत आये और यही बस गये। पिता मिर्ज़ा फैजअलीबेग अँग्रेजों के शासन में तहसीलदार थे। १८१५ ई० मे इनकी लखनऊ मे जन्म हुआ। यह उर्दू के प्रसिद्ध कवि हातिमअली 'नासिख' के शिष्य थे। १८५७ के विद्रोह के समय सात अँग्रेजों को इन्होने शरण दी। पुरस्कार स्वरूप मोतियों की माला, बाईस पार्चे की खिलत और एक सुसज्जित घोड़ा तथा दो गाँव जागीर मे मिले। १८७९ मे एटा मे इनकी मृत्यु हुई। इन्होंने बहुत कुछ लिखा किन्तु १८५७ के विद्रोह मे अधिकांश रचना नष्ट हो गई। इस हानि के सम्बन्ध मे इन्होंने लिखा है——

इस अहद मे हर इक ता चर्खे कुहन लुटा
औरों का ज़र लुटा मेरा नक़्दे सुखन लुटा

इनकी पत्र सख्या १८ है।

१५. **जैनुल आबदीनखाँ (कल्लन मियाँ)**——रामपुर-नरेश के निकट सम्बन्धी। इन्होने अपनी कविता ग़ालिब से सशोधित करानी चाही थी किन्तु ग़ालिब ने इनकी प्रार्थना स्वीकार नही की।

१६. **मिर्ज़ा अलाउद्दीन अहमदखाँ 'अलाई' और 'नसीमी'**——फीरोजपुर सिरका के शासक अहमदबख्शखाँ के दो बेटों——अमीनुद्दीनखाँ और ज़ियाउद्दीनखाँ को लोहारू का इलाका मिला। अमीनुद्दीनखाँ के पुत्र अलाउद्दीन अहमदखाँ

अलाई लोहारू के उत्तराधिकारी बने। अरबी-फ़ारसी के अच्छे विद्वान् थे। इन्होंने तुर्की भाषा का एक कोश तैयार किया। ग़ालिब ने इन्हें कविता के क्षेत्र में अपना द्वितीय उत्तराधिकारी घोषित किया था। ग़ालिब की पत्नी के यह निकट सम्बन्धी थे। १८७४ ई० में इनकी मृत्यु हुई। इन्होंने ग़ालिब के पत्रों को बहुत सँभाल कर रखा। पत्र संख्या ५६।

१७. **मुंशी शिवनारायण 'आराम'**—आराम आगरा के रहने वाले थे। इनके दादा बंसीधर ग़ालिब के लँगोटिया यार थे। आराम के परदादा ग़ालिब के नाना के मित्र थे। आराम का अध्ययन दिल्ली कालेज में हुआ था। कुछ समय तक ये दिल्ली कालेज में अध्यापक भी रहे। यह उर्दू, फ़ारसी और अँग्रेजी के अच्छे ज्ञाता थे।

शिवनारायण 'आराम' ने 'मुफ़ीदे खलायक़' नाम से आगरा में एक मुद्रणालय खोला था। १८५७ के विद्रोह के सम्बन्ध में ग़ालिब के संस्मरण 'दस्तम्बो' नाम से यहीं छपे। 'दस्तम्बो' फ़ारसी में लिखा गया था।

आराम अपने प्रेस से 'मुफीदे खलायक' नाम से उर्दू-पत्र प्रकाशित करते थे। आफताब आलमताब, मयारुरशोअरा और बग़ावते हिन्द नामक पत्र भी आराम के मुद्रणालय में छपते थे इनकी। १९८४ में मृत्यु हुई। पत्र संख्या ३४।

[द्वितीय-खंड]

१८. **मुंशी नबीबख्श 'हक़ीर'**—यह आगरा के निवासी थे और बचपन से ही ग़ालिब से परिचित थे। अलीगढ में सिरश्तेदार रहे और १८५८ ई० में राजकीय सेवा से अवसर ग्रहण किया। अवकाश प्राप्ति के पश्चात् आगरा में बस गये। १८६० ई० में इनका निधन हुआ।

बहुत दिनों तक हकीर के नाम लिखे हुए पत्र प्रकाश में नहीं आये थे। कुछ समय पूर्व 'नादिराते ग़ालिब' नाम से प्रकाशित हुए हैं। पत्रों से ज्ञात

होता है कि ग़ालिब और हक़ीर मे पर्याप्त घनिष्ठता थी । पत्र संख्या ७० ।

१९. **मुंशी अब्दुललतीफ़**––मुशी अब्दुललतीफ़ मुशी नबीबख्श 'हकीर' के पुत्र थे और हकीर के कारण ग़ालिब ने इन्हे दो पत्र लिखे थे ।

२०. **नवाब अमीनुद्दीन अहमदखाँ**––१८वी शती मे कासिमखाँ, आलिमखाँ और आरिफखाँ समरकन्द से भारत आये । सभवत ग़ालिब के दादा कोकान बेग भी इनके साथ आये हो और उनमे परस्पर कोई सम्बन्ध भी रहा हो । कासिमखाँ का परिवार दिल्ली मे रहा । उनके दो पुत्र थे––शर्फुद्दौला फैजुल्लाबेगखाँ और कुदरतुल्लाबेगखाँ । दूसरे भाई की सन्तान का पता नही । तीसरे भाई आरिफ़खाँ के चार बेटे थे––फख्रुद्दौला दिलावरुलमल्क नवाब अहमदबख्श, नवाब इलाहीबख्शखाँ मारूफ़, मुहम्मदअलीखाँ और नबीबख्शखाँ । नवाब अहमदबख्शखाँ ने अपनी योग्यता से फीरोजपुर झिरका (गुडगाँवा, पजाब) की रियासत और लोहारू की जागीर पाई । इनकी दो बेगमे थी––एक मेवनी और दूसरी उनकी स्वजाति की । मेवनी मे नवाब शम्सुद्दीनखाँ और दूसरी बेगम मे नवाब अमीनुद्दीनखाँ और नवाब जियाउद्दीन अहमदखाँ 'नय्यर' का जन्म हुआ । मेवनी से जन्म लेने के कारण बेगम के दोनो पुत्र शम्सुद्दीन अहमदखाँ को अपने समकक्ष नही मानते थे । आपस मे उत्तराधिकार के लिए सघर्ष, हुआ । सघर्ष समाप्त करने के लिए राज्य दो भागो मे विभक्त हुआ । शम्सुद्दीन अहमदखाँ को फीरोजपुर और अन्य दोनो बेटो को लोहारू की जागीर मिली । अमीनुद्दीन अहमदखाँ की मृत्यु १८६९ ई० मे हुई । उनके पुत्र अलाउद्दीन अहमदखाँ 'अलाई' लोहारू के उत्तराधिकारी माने गये । नवाब अमीनुद्दीन अहमदखाँ ग़ालिब की पत्नी के निकट सम्बन्धी थे । पत्र संख्या ६ ।

२१. **नवाब जियाउद्दीन अहमदखाँ 'नय्यर'**––नवाब अमीनुद्दीन अहमदखा के परिचय मे समरकन्द मे आने वाले जिन तीन भाइयों का उल्लेख किया गया है, उनमे से आरिफखाँ के चार पुत्रो मे से एक नवाब अहमद बख्शखाँ का उल्लेख

हुआ है, उनकी मुस्लिम बेगम से जियाउद्दीन अहमदखाँ का जन्म हुआ था। बड़े भाई अमीनुद्दीनखाँ के साथ इन्हें लोहारू की जागीर मिली। बड़े भाई जागीर के स्वामी थे, और छोटे भाई को मासिक वृत्ति मिलती थी। यह उर्दू में 'नय्यर' और फ़ारसी में 'रश्शा' नाम से लिखते थे। ग़ालिब को ये बहुत प्रिय थे। उन्होंने नय्यर को कविता के लिए अपना उत्तराधिकारी (प्रथम) बनाया था। पत्र-संख्या १।

२२. **मिर्ज़ा क़ुर्बानअलीबेगखाँ 'सालिक'**—लोहारू के आलमअलीबेगखाँ के पुत्र क़ुर्बानअलीबेगखाँ 'सालिक' उर्दू के कवि थे। ये कुछ समय तक अलवर में वकालत करते रहे, फिर हैदराबाद चले गये। हैदराबाद में ही उनकी मृत्यु हुई। पत्र-संख्या २।

२३. **मिर्ज़ा शम्शादअली बेगखाँ 'रिज़्वाँ'**—लोहारू के मिर्ज़ा आलमबेग खाँ के पुत्र और मिर्ज़ा क़ुर्बानअलीबेगखाँ 'सालिक' के छोटे भाई थे। इसीलिए ग़ालिब के निकट सम्बन्धी थे। यह उर्दू में कविता लिखते थे। पत्र-संख्या २।

२४. **मिर्ज़ा बाकरअलीखाँ 'कामिल'**—जब ग़ालिब के अपने बच्चे जीवित नहीं रहे तो उनकी पत्नी ने अपनी बहन के पुत्र मिर्ज़ा जैनुलआबदीनखाँ 'आरिफ़' को पुत्र मान लिया था। आरिफ़ के दो पुत्र थे—बाकरअलीखाँ 'कामिल' और हुसेनअलीखाँ 'शादाँ'। हुसेनअलीखाँ ग़ालिब के पास रहते थे। १८५६ ई० में जैनुलआबदीन की असमय में मृत्यु हुई तो बाकरअली भी दिल्ली में ग़ालिब के पास रहने लगे। ग़ालिब के समय में ही ये अलवर में नौकर हुए। वहाँ के महाराज से भी परिचय था। ग़ालिब की मृत्यु के पश्चात् ये नौकरी छोड़ कर व्यापार करने लगे। भर जवानी में इनका देहान्त हो गया। पत्र-संख्या ३।

२५. **मीर सरफ़राज हुसेन**—मीर सरफ़राज हुसेन मीर हुसेननिगार के पुत्र और ग़ालिब के प्रिय शिष्य मीर मेहदी के भाई थे। पत्र-संख्या २।

२६. **मीर अफ़ज़लअली (मीरन)**—इनके सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है। ग़ालिब के पत्रों से ज्ञात होता है कि ये मर्सिया बहुत अच्छे ढंग से पढ़ते थे। पत्र-संख्या ३।

२७. **ख़ाजा गुलामगौसख़ाँ 'बेख़बर'**—बेख़बर के पूर्वज काश्मीर के रहने वाले थे। इनके दादा काश्मीर से तिब्बत की राजधानी ल्हासा गये, वहाँ से नेपाल। इनके पिता का नाम ख़ाजा हुज़ूरुल्लाह था। १८२४ ई० में 'बेख़बर' का जन्म हुआ। इनका परिवार नेपाल से चलकर वाराणसी में रुका। यहीं बेख़बर का अध्ययन हुआ। बेख़बर के मामा उत्तरप्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल के मीर मुंशी थे, उन्हीं के कारण १६ वर्ष की आयु में बेख़बर को नौकरी मिली। उन दिनों उत्तरप्रदेश के राज्यपाल आगरा मे रहते थे, अतः बेख़बर वाराणसी से आगरा आ गये। मामा के अवकाश ग्रहण करने पर ये मीर मुंशी बने। इस पद से १८८५ ई० में अवकाश प्राप्त किया और इलाहाबाद मे बस गये। १९०४ ई० में देहान्त हुआ। ये उर्दू और फ़ारसी दोनों में कविता लिखते थे। पत्र-लेखन में इन्हे विशेष सफलता मिली। इनके पत्रों का संकलन 'उर्दू ख़ुतूते इंशा बेख़बर' नाम से प्रकाशित हुआ है। ग़ालिब के पत्रों का संकलन 'ऊदे हिन्दी' इन्ही के निरीक्षण में सकलित और प्रकाशित हुआ था। पत्र-संख्या २५।

२८. **हकीम जहीरुद्दीन अहमदख़ाँ**—हकीम गुलाम नजफ़ख़ाँ का परिचय ऊपर दिया जा चुका है। जहीरुद्दीन अहमदख़ाँ उन्ही के पुत्र थे। पिता के कारण ग़ालिब इन्हें अपने परिवार का एक सदस्य मानते थे। पत्र-सख्या २।

२९. **नवाब हुसेन मिर्ज़ा**—हिसामुद्दीन हैदर की गिनती दिल्ली के प्रतिष्ठित रईसों मे होती थी। उनके दो पुत्र थे—मुज़फ़्फ़रुद्दौला सैफ़ुद्दीन हैदरख़ाँ और मुईनुद्दौला ज़ुलफ़िकारुद्दीन हैदरख़ाँ ज़ुलफ़िकारजंग। दूसरे पुत्र हुसेन मिर्ज़ा के नाम से प्रसिद्ध हुए। हुसेन मिर्जा के बड़े भाई मुज़फ़्फ़रुद्दौला विद्रोह के समय

बहादुरशाह के साथ थे। जब बादशाह पकड़े गये तो ये अलवर भाग गये। वहाँ से पकड़ कर मँगाये गये और गुड़गाँवा मे गोली से मार दिये गये। हुसेन मिर्ज़ा किसी तरह भाग कर पानीपत पहुँचे। वहाँ से वेश बदल कर लखनऊ गये। जब अँग्रेजों ने सभी लोगों को क्षमा-प्रदान की तो दिल्ली पहुँचे। पैत्रिक सम्पत्ति अँग्रेजों के अधिकार में चली गई थी। उस समय हैदराबाद के प्रधान मन्त्री सालारजग थे। उन्होंने हुसेन मिर्जा को हैदराबाद बुलाया, किन्तु वहाँ जाने से पहले वे पागल हो गये। बुढ़ापा पागलपन में बीता। इनका १८९० ई० मे देहान्त हुआ। ग़ालिब के पास अपनी रचनाएँ ठिकाने से नही रहती थी। उनके दो साथी उनकी कविताओं को जमा किया करते थे--एक जियाउद्दीन अहमदख़ाँ 'नय्यर' और दूसरे हुसेन मिर्ज़ा। हुसेन मिर्ज़ा को ग़ालिब अपने भाई के समान मानते थे। पत्र-सख्या ६।

३०. **नवाब सज्जाद मिर्ज़ा**--हुसेन मिर्ज़ा के ज्येष्ठ पुत्र। इनका ग़ालिब के साथ पारिवारिक सम्बन्ध था। पत्र-संख्या २।

३१. **नवाब मीर गुलाम बाबाख़ां**--नवाब मीर गुलामबाबाख़ाँ छोटे साहब के नाम से प्रसिद्ध थे। ये सूरत के रईस थे। अकबर के समय में इनके पूर्वज सूरत मे बसे थे। १८३४ ई० में इनका जन्म हुआ। अँग्रेज सरकार ने ख़ानबहादुर और सी. आई. ई. की इन्हें उपाधि दी थी। इनका १८९३ ई० में देहान्त हुआ। पत्र-संख्या १०।

३२. **नवाब इब्राहीमअलीख़ां**--ये बड़ौदा में रहते थे। सम्भवतः बड़ौदा राज्य ने इन्हें जागीर भी दी थी। अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं। पत्र-संख्या ५।

३३. **हकीम सैयद अहमदहसन मौदूदी**--ये ३ मार्च १८३१ ई० को उत्पन्न हुए। १८५९ ई० में हज के लिए जा रहे थे कि मार्ग में ही देहान्त हो गया। मृत्यु के समय इनकी ३० वर्ष की आयु थी। ये अरबी और फ़ारसी के अच्छे ज्ञाता थे। पत्र-संख्या ११।

३४. **तफ़ज्जुल हुसैनख़ाँ**—इनके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त नहीं है। पत्र-संख्या १।

३५. **मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह'**—पिता मुंशी अब्दुल्लाख़ाँ औरंगाबाद के रईस थे। मियाँ दादख़ाँ 'सय्याह' की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी, इसीलिए औरंगाबाद से बम्बई होते हुए सूरत पहुँचे। सूरत के रईस नवाब मीर गुलाम बाबाख़ाँ ने इन्हें अपने पास रखा। गुलाम बाबाख़ाँ के यहाँ नौकरी करते समय ये दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, बनारस और कलकत्ता की यात्रा करके सूरत लौटे, अरब और ईरान की यात्रा की। इनका काव्य नाम 'सय्याह' (यात्री) बहुत सार्थक था। 'क़ातै बुरहान' के विवाद के सम्बन्ध में सय्याह के नाम से 'लतायफ़े ग़ैबी' नामक पुस्तक छपी। कुछ लोगों का विचार है कि इस पुस्तक के रचयिता स्वयं ग़ालिब थे। कारणवश वह पुस्तक सय्याह के नाम से छपी। 'सय्याह' फ़ारसी और अरबी दोनों के कवि थे। १९०७ ई० में इनका बम्बई में देहान्त हुआ। पत्र-संख्या ३५।

३६. **मीर हबीबुल्लाह 'ज़का'**—नेल्लूर (पहले मद्रास और इस समय आन्ध्र-प्रदेश में) के निवासी। पूर्वज बीजापुर से नेल्लूर गये थे। १८२८-२९ में 'ज़का' का जन्म हुआ। पिता का नाम हाफ़िज मुहम्मद मीरा था। पाँचों भाइयों में ये सबसे छोटे थे। मद्रास में अरबी और फ़ारसी का इन्होंने अध्ययन किया। उर्दू और फ़ारसी दोनों में ये कविता लिखते थे। फ़ारसी के विद्वान् थे।

सुदूर दक्षिण में रहते हुए भी ग़ालिब के भक्त थे। ग़ालिब से मिलने की उत्कट लालसा रहती थी। बिना बोले दिल्ली के लिए चल पड़े। मार्ग में हैदराबाद आया तो यहाँ अच्छी नौकरी मिल गई और यहीं बस गये। हैदराबाद में रहते समय ग़ालिब से पत्र-व्यवहार प्रारम्भ हुआ। उर्दू और फ़ारसी दोनों में व्यगात्मक कविता लिखते थे। १८७४ ई० में हैदराबाद में इनका देहान्त हुआ। पत्र-संख्या १५।

३७. **चौधरी अब्दुल ग़फ़ूर 'सुरूर'**—मारहरा (जिला-एटा, उत्तर प्रदेश) के रईस। फ़ारसी के अच्छे कवि और ग़ालिब के पत्रों का संकलन 'ऊदे हिन्दी'

नाम से प्रकाशित हुआ था। इस संकलन का आरम्भिक अंश 'सुरूर' के संकलन के आधार पर तैयार हुआ था। आयु में ग़ालिब से एक वर्ष बड़े थे। पत्र संख्या २६।

३८. **साहबे आलम मारहरवी**—ये मारहरा (एटा, उत्तरप्रदेश) के निवासी, चौधरी अब्दुलग़फ़ूर के बड़े पुत्र थे। पत्र-संख्या ५।

३९. **शाहआलम**—ये मारहरा (एटा, उत्तरप्रदेश) के निवासी साहबे आलम के पुत्र और चौधरी अब्दुलग़फ़ूर 'सुरूर' के पौत्र थे। पत्र-संख्या २।

४०. **अब्दुल रज्जाक 'शाकिर'**—ये अपने को 'जाफ़री अल हैदरी' लिखते थे और वकील थे। ग़ालिब ने इन्हें जो पत्र लिखे हैं, उनमें से किसी पर तिथि लिखी हुई नहीं है। कुछ पत्रों में तिथि का उल्लेख मिलता है। पत्र-संख्या १०।

४१. **शाहजादा बशीरुद्दीन**—ये मैसूर के टीपू सुलतान के पौत्र और राज कुमार शुक्रुल्लाह के पुत्र थे। अरबी और फारसी के अच्छे ज्ञाता थे और कलकत्ता में रहते थे। पत्र-संख्या ५।

४२. **मुन्शी हीरासिंह**—गालिब के मित्र छज्जूमल के पुत्र और जवाहर सिंह के भाई। पत्र-संख्या २।

४३. **बिहारी लाल 'मुश्ताक'**—दिल्ली निवासी मुन्शी मनभावनमल के पुत्र। ये हकीम गुलाम रज़ाखाँ के प्रेस 'अकमलुल मताबे' में नौकर थे। पत्र-संख्या २।

४४. **केवलराम 'होशयार'**—ये दिल्ली में रहते थे, इसीलिए ग़ालिब से घनिष्ठता थी। पिता सुलतानसिंह बेगम समरू की सेना में बख्शी थे। केवलराम फ़ारसी, उर्दू और हिन्दी के अच्छे ज्ञाता थे। पिता के कारण बेगम समरू की सेना में इन्हें भी काम मिल गया। बाद में नौकरी छोड़कर अध्यापक बन गए। कुछ समय तक जेल में कैदियों को पढ़ाया करते थे। उत्तरप्रदेश में शिक्षा-विभाग के डिप्टी इन्सपेक्टर भी रहे। अन्तिम दिनों में चाँदपुर

(उ० प्र०) में प्रधानाध्यापक थे। ये उर्दू और फ़ारसी में कविता करते थे। पत्र-संख्या १।

४५. **मौलवी करामतअली**—इनके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी। पत्र-संख्या १।

४६ **मुस्तफाखाँ बहादुर 'शेफ़्ता'**—अँग्रेजों ने शेफ़्ता के पिता को दिल्ली के निकट होडल-पलवल जागीर मे दिए थे। जागीर से तीन लाख रुपए की आय थी। पिता के मरने पर जागीर छीन ली गई और 'शेफ़्ता' को २५ हजार रुपए वार्षिक की वृत्ति मिलने लगी। ये १८३५ ई० मे हज को गए और लौटने पर यात्रा का विवरण लिखा। ये उर्दू और फारसी के कवि थे।

१८५७ के विद्रोह के कारण अँग्रेजों ने इन्हें गिरफ़्तार किया और वार्षिक वृत्ति बन्द कर दी। नीचे की अदालत से सात साल की सजा हुई, किन्तु अपील मे छूट गए। जहाँगीराबाद का इलाका इन्हे मिल गया। इनका १८६९ ई० मे देहान्त हुआ। पत्र-संख्या १।

४७. **गुलाम विस्मिल्लाह**—इनके सम्बन्ध मे जानकारी उपलब्ध नही हो सकी। पत्र-सख्या १।

४८. **अजीजुद्दीन**—जानकारी उपलब्ध नही। पत्र-संख्या १।

४९. **मुफ़्ती सैयद मुहम्मद अब्बास**—इनके जीवन का अधिकाँश समय लखनऊ में बीता। वाजिदअलीशाह ने मुफ़्ती बनाया। विभिन्न विषयों पर तीन सौ पुस्तकें इन्होंने लिखी हैं। फ़ारसी मातृभाषा थी। पत्र-सख्या १।

५०. **अब्दुल ग़फूरखाँ 'निसाख़'**—निसाख़ के पिता कलकत्ता की अदालत सदर दीवानी में नौकर थे। निसाख़ बिहार-बंगाल में डिप्टी कलेक्टर रहे। इन्होंने 'तज़्किरा सुखन व शोअरा नामक ग्रन्थ लिखा था। पत्र-संख्या १।

५१. **मर्दान अलीखाँ 'राना'**—'राना' महाराज कपूरथला के दरबार में थे। इससे अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। पत्र-संख्या २।

५२. **हकीम गुलाम मुर्तजाखां**—इनके सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त नही हो सकी। पत्र-संख्या १।

५३. **हकीम गुलाम रजाखां**—परिचय अनुपलब्ध। पत्र सख्या १।

५४. **प्यारेलाल 'आशोब'**—इनकी वंश परम्परा राजा टोडरमल तक पहुँचती है। १८३८ ई० में दिल्ली में इनका जन्म हुआ। दिल्ली कालेज में शिक्षा पाई और गुडगांवा में प्रधानाध्यापक थे।

१८६६ ई० मे पंजाब के राज्यपाल सर मेकलोड ने दिल्ली मे दरबार किया तो ये भी बुलाए गए थे। जब राज्यपाल से मिलने के लिए गालिब उठकर चले तो वृद्धावस्था के कारण काँपने लगे। प्यारेलाल 'आशोब' ने आगे बढकर सहारा दिया और ग़ालिब को राज्यपाल तक पहुँचाया। राज्यपाल ने आशोब के बारे में ग़ालिब से पूछा—"क्या तुम्हारे पुत्र हैं?" गालिब ने कहा—"पुत्र तो नही है, किन्तु पुत्र से अधिक प्रिय है।"

ये दिल्ली से लाहौर चले गए, जहाँ इनकी नियुक्ति स्कूलों के इन्स्पेक्टर के पद पर हुई। पजाब की शालाओं के लिए कई पाठ्य-पुस्तके लिखी। १८९५ ई० मे इन्होंने राजकीय सेवा से अवकाश-ग्रहण किया। पत्र-संख्या ४।

५५. **गोविन्द सहाय**—मूलतः दिल्ली के निवासी थे। इन्हें नौकरी के लिए आगरा जाना पड़ा। पत्र-संख्या २।

५६. **शाह करामत हुसेन हमदानी 'बिहारी'**—परिचय अनुपलब्ध। पत्र-संख्या २।

५७. **सफ़ीर बिलगिरामी**—परिचय अनुपलब्ध। पत्र-संख्या २।

५८. **अब्दुल हक़**—परिचय अप्राप्त। पत्र-संख्या १।

५९. **शेख़ लतीफ़ अहमद बिलगिरामी**—जानकारी प्राप्त नही। पत्र-संख्या १।

६०. **मौलवी ज़ियाउद्दीनख़ां 'ज़िया'**—ये दिल्ली के निवासी थे तथा दारापुर के रईस के पौत्र थे। एडिनबरा से एल्० एल्० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। पत्र-संख्या २।

६१ **सूफ़ी मुनीरी**—परिचय अप्राप्त। पत्र-सख्या १।

६२. **मुन्शी नवलकिशोर**—नवकिशोर प्रेस के संचालक तथा स्वामी और ग़ालिबकालीन भारत मे उर्दू के सबसे बड़े प्रकाशक। पुस्तकों तथा नियतकालिक पत्र के द्वारा इन्होंने उर्दू साहित्य के प्रसार का सफल प्रयत्न किया। मुन्शी नवलकिशोर ने हिन्दुओं के धार्मिक साहित्य तथा प्राचीन हिन्दी कवियों की रचनाएँ भी फ़ारसी लिपि में प्रकाशित की थीं। पत्र संख्या १।

६३ **मुहम्मद हुसेनख़ां**—परिचय अनुपलब्ध। पत्र-संख्या ३।

६४. **मौलवी नेमान अहमद**—परिचय अप्राप्त। पत्र-संख्या ४।

६५. **नवाब कल्बे अलीख़ां**—जानकारी उपलब्ध नहीं। पत्र-संख्या १।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१	हकीर	हक़ीर (सर्वत्र यही रूप चाहिए)
१	५	क़ुतुब	क़ुतुब
२	४	सादाविए	सौदाविए
२	१२	बहस्बे पानी	पानी बहस्बे
३	७	बादशाहा ने	बादशाह ने
४	१७	क़ुतुबे तवारीख़	क़ुतुबे तवारीख़
६	५	निगाश्तए व	निगाश्तए नहुम व
१२	१	तुले उम्र	तूले उम्र
१८	६	डाँ	हाँ
२३	५	ख़ुलासा मे है	ख़ुलासा मे है
२३	७	लाये	लाए
३४	२	अरायज़	अरायज़ नवीसी
३४	१६	दोम्फ़ीरोज़ाँ	दो फीरोज़ाँ
३५	१६	रगेजाँ	रगेजाँ हो गईं
३६	१०	मेराज	मेराज की
३८	१	क़दर	क़द्र
४१	३	परवरदिगार	परवर्दगार
४१	४	माल वा दौलत	माल व दौलत
४३	१	वक़्त ग़िज़ा	वक़्ते ग़िज़ा
४३	३	मोरग़ूब	मरग़ूब

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
४८	७	न नासम के कीस्त	न शनासम के कीस्त
४९	६	ऊँचे	उंचे
५१	२	गुरेज़या	गरेज़पा
५१	१९	ज़ायदुवन्नूर	ज़ायदुल नूर
५२	३	माहे मरी	माहे क़मरी
५४	१४	छठीं	छटी
५६	७	नज्जफ़ अलीखाँ	नजफ़ अलीखाँ
६५	२	ईयाँ	ईमाँ
६७	६	हुजूरने हुक्म के	हुजूर ने हुक्म दिया कि
६९	१६	तपन	तप न
६९	१७	पाँचवी	पाँचवाँ
७६	२०	आज़दंगी	आज़ुर्दगी
७८	११	ब तर्फ़े के	बतर्फ़े माशूक़ के
७८	१२	रवाहानश	खाहानश
८०	१७	हममश्रवो	हममश्रबो
९०	टिप्पणी ५	राज्याधिकारी	हकीम ब. व.
१०७	७	खुसून	खुसूसन
१०८	६	आपने	अपने
१०९	४	तो ये महीने	तो य दो महीने
११२	१४	ऐ शम्बा	सेशम्बा
११५	१६	बऐ नहीं	ब ऐनही
११९	टिप्पणी १२	संयोगवश	सहमति से
१२५	१०	फ़लकज़ादों	फ़लकज़दों
१२७	१३	फैज़ल्लाखाँ	फैज़ुल्लाखाँ

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
१३६	१५	बद्दुआ	वद्दुआ
१५६	९-१०	कहते उनकी भी कोई है कि	कहते हैं कि चीफ़्-सेक्रेतर
१५८	१७	नुस्क़े	नुस्खे
१६०	३	मज़न्नए	नमतना
१६०	१४	अताया	अता या
१६८	१	नूरुन अली नूर	नूरुन्नला नूर
१७०	४	ताखीर	ताख़ीर
१७०	१४	मगफर	मगफ़ूर
१७३	१६	मुकालिया	मुकालिमा
१७४	३	मतवज्ज़ेह	मुतवज्जेह
१७६	१८	अलैउर्रहम	अलैइर्रहमा
१८०	७	मुस्ताक़	मुश्ताक़
१८२	४	बिनाबेब	ब नाबे
१८४	१५	आयेरूता	आमेरूता
१८५	१८	मुकर्दम	मुक़द्दम
१८५	१८	क़ुल्ब	कुल्ब
१८७	६	अक़्साये	अक़्सामे
२१६	७	सैदानी	सैयदानी
२१८	५	जवदाँ	जावदाँ
२२१	१३	नेमम	नेमत
२२४	८	अलीशान	आलीशान
२२५	टिप्पणी २	इर्शाद हुसों	'इर्शाद हुसेनखाँ'
२२६	५	उम्मले	उम्मते

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
२४१	१	बेगार ए महज़	बेगान ए महज़
२४१	८	ताख़िजे	ताख़िजे
२४१	९	कुज्ज़ात	क़ज़्ज़ात
२४१	१८	वख़िजा	ब तख़िज़ा
२४७	१४	शैफ़ुल हक़	सैफ़ुल हक़
२४८	१२	मुशविरा	मशविरा
२४९	७	साटफ़िस	साफ़िस
२५२	१०	नस्सोख़	निसाग़ (?)
२५४	१	वागुज़ार	वागुज़ाश्त
२५४	२०	क़तरा तारीख़	क़तए तारीख़
२५४	२२	तिमवाले	तम्सील
२५५	१	फ़रुखी	फ़र्रुखी
२५६	१	इसी पते से ख़त	इसी पते से ख़त भेजा था।
२५७	१०	गाह गाह	पेड़ ख़त गाह गाह
२५७	१०	ताइफ़े ग़ैबी	लताइफ़े ग़ैबी
२६२	१५	१८५६	१८६५
२६४	१०	बाबा	बाब
२७८	८	आर्मुगा	अर्मुगाँ
२८१	३	माकुतिब फ़ीगो	माकुतिब फ़िया
२८१	४	बकमाल तीबे ख़ातिर	बकमाले तय्यबे ख़ातिर
२८४	८	रोज़ा	रोज़
२८४	१८	दिरंगवर्ज़ा	दिरंगदारी
२८५	११-१२	हुक्काम ऐ	हुक्काम से
२८६	२	मुन्तलै	मुत्तलै

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
२८७	७	बसब्बे	बसबबें
२८७	९	का काफ़िया	क़ाफ़िया
२८७	टिप्पणी ११	लिखी……होती है	लिखा जाता है, ई उच्चरित होता है।
२९१	१२	निस्दान	निसियान
२९२	१	वे	बे
२९४	१२	जीस्न	ज़ीस्तन
२९५	१४	सुरूबरे	सूरूरे
३०१	१०	व शर्ते आ	बशर्ते आँ
३०१	१३	अक़बाल	अक़्वाल
३०१	२१	साहज़ादे	शाहज़ादे
३१०	१५	तावीज़े बाज़	तावीज़े बाज़ू
३११	१५	नज़ावर	नज़ायर
३१५	२	इग़राक़ाह	इग़राक़
३२०	११	मुरज्जज़	मुरज्जज़ (अन्य स्थलों पर भी)
३२०	१३	असातिज़रा फ़न	असातिज़ए फ़न
३२१	८	कलेमे	कल्मे
३२३	१९	अम्मा व सब्र	अम्मा ब सब्र
३२५	१४	सुखे	सुर्ख़
३२६	५	मे सखुकावन्दे नेमत	मेरा ख़ुदावन्दे नेमत
३२६	१७	शहर मेवे	शहद मेवे
३३२	३	आज़ अफ़लाक	अज़ अफ़लाक
३३३	१४	ग़र्बव शुमाल	ग़र्ब व शुमाल

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
३३६	१०	पहले शिकायत	महले शिकायत
३४२	२	मुशदिफ़	मुरादिफ़
३५५	५	दुश्मन व आरिज़	दुश्मन ब आरिज़
३५७	१०	वाख़दूम	मख़दूमे
३६०	२	मुफ़र्रद ऐ	मुफ़र्रद मे
३६३	५	असल	अमल
३६३	१२	रूद की	रूदकी
३६४	२	मुम्मतने	मुम्तने
३६४	४	अमसाला	अमसाल
३६४	८	दारुल जरवे	दारुल ज़रबे
३६४	१७	अलैइर्रहमात	अलैइर्रहमता
३६५	१०	नस्तर	नश्तर
३६६	१०	हीश	होश
३६८	१३	आफ़ताव बहयल	आफ़ताब बहमल
३७१	२	जुदामाना	जुदागाना
३७२	१-२	हाए हन्मज़	हाए हव्वज़
३७३	२	दीदर	दीदए
३७३	१६	ऐतवार	ऐतबार
३७५	१२	काम	कम
३७७	४	क़ुतुबख़ाने	कुतुबखाने
३७७	६	वद	बद
३८०	७	को मज़कूर	जो मज़कूर
३८०	८	सोमजामे	मोमजामे
३८०	१३	हीर परताब	तीर परताब

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
३८४	३	मस्शम	मस्तम
३८६	१२	मुख्वज	मुरव्वज
३९२	२	वर्ग	बर्ग
३९४	४	आप रहते	आप कहते
४१७	९	पुवर्सीदिम	पुर्सीदिम
४२८	टिप्पणी १	निर्दोष	निर्दीप
४३६	३	सुरूबरे	सूरूरे
४३६	टिप्पणी १६	विस्मृत	विस्तृत
४५०	९	तानोस	तानीस
४५४	५	वग़ैहुम	वग़ैरहुम
४५५	८	द्वारा	हाए
४५९	१	इस बात	इस्बात
४५९	६	मालिके मलका	मालिके मलेका
४६४	५	तहनियात	तहनियत
४६४	१५	आमरेज़	आमेज़